ऐतिहासिक पुरातत्त्वीय नई शोध का ग्रंथ-

विदिशा-वैभव

: लेखक : शोधकर्ता : प्रकाशक :

श्री राजमल जैन मड़वैया, पुरातत्त्वान्वेषक

[भूतपूर्व मार्गदर्शक-शासकीय जिला पुरातत्व संग्रहालय]

विदिशा (म० प्र०)

प्रतियां	दीपावली	मूल्य
१०००	सन् १९६९	बारह रुपया

[जैनेन्द्र प्रेस, ललितपुर (झाँसी) उ० प्र० में मुद्रित]

॥ प्रशस्तिः ॥

जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र, आर्यखण्ड, मालवदेश स्थित विदिशा नगर, मध्यप्रदेश, भारतीय गणतन्त्र राज्यावसर में पांच वर्ष के राज्यकाल में अभिमानी दलबदलू नेताओं के हिंसक प्रवृत्तिमय भावनाओं को जीवित बनाने वालों के समय राज्यों के विलीन हो जाने पर सभी वर्गों में खान-पानादि का विचार न रखने वाले मानव के धार्मिक छह कर्तव्यों को तिलांजलि देने वाले सुधार का ढिढोरा पीटने वाले काल समय में कार्तिक कृ० १५ सोमवार वीर निर्वाण संवत् २४९५ विक्रम संवत २०२६ में दिगम्बर जैनाचार्य कुन्दकुन्दानुयायी, सरस्वती गच्छ, मूल संघ, बलात्कारगण, परवार जाति, भारूमूर भारिल्ल गोत्री विदिशा निवासी ने 'विदिशा वैभव' लेखक राजमल मड़वैया पुत्र श्री धर्मचन्द्र जी, काका जी श्री भगवानदास जी पूर्वनिवासी बानपुर जिला झांसी उ० प्र० ने अपने पूर्वजों की स्मृति में लोकोपकारार्थ जीवन में घटने वाली अनुभवी घटनाओं को मानव-जीवन में तुलनात्मक ज्ञानवर्द्धनार्थ लिखी। जनता, राजा प्रजा धर्मप्रेमी आत्मज्ञानी सभी को मंगलकारी हो।

'विदिशा वैभव' ग्रन्थ श्री दादे बंशीधर जी पिता श्री धर्मचन्द्र जी काका जी श्री भगवानदास जी माता जी श्रीमती पार्वतीबाई विदिशा को पुण्यस्मृति में श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, सार्वजनिक लायब्रेरी, विश्वविद्याल स्थान..........ग्राम .... जिला ......प्रांत..........को

सादर सप्रेम भेंट।

भोज और भोपाल

पुरातत्व अन्वेषक श्री राजमलजी मड़वैया द्वारा लिखित खोजपूर्ण ग्रथ—भोज और भोपाल अभी अप्रकाशित है। जिन्हे भी इसमे रुचि हो वे मड़वैया पुरातत्व सग्रहालय विदिशा में पधार कर देख सकते हैं। और उसके प्रकाशन की व्यवस्था कर सकते हैं।

इस ग्रन्थ का लागत—मूल्य

विदिशा वैभव ग्रन्थ के प्रकाशन आदि मे करीब १२०००) बारह हजार रुपया व्यय हुये हैं। अतः प्रचार हेतु इसका लागत मूल्य १२) बारह रुपया ही रखा गया है।

विदिशा वैभव

प्रारम्भिक विषय सूची

विदिशावैभव—विषय सूची

— चित्र सूची —

विदिशा वैभव ग्रन्थ लिखने का उद्देश्य

(१) भारत के पूर्व पुरातत्व के विद्वानों ने बड़ी लम्बी शोध की है, किन्तु वह हमारी मातृ-भाषा हिन्दी में नहीं है। और वह भी जो की है उसमें मूर्ति के प्रत्येक अंगों का मानव जीवन से क्या संबंध है जिन्हें पूर्व जैनाचार्यों ने सांकेतिक चिन्हों से अलंकृत किया है, भाव स्पष्ट नहीं किये, जिससे हमारे विश्वविद्यालयों के छात्र और विद्वानों को अन्धकार ही रहा है। इस कमी की पूर्ति के लिये अपनी सेवा प्रस्तुत करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

(२) यह विषय अछूता रहा है। इसी में सरस्वती का निवास है।

(३) भावी सन्तति के लिये ज्ञानवर्द्धन तथा धार्मिक शिक्षा मिले।

(४) विश्वविद्यालयों में विद्याविलासियों को ज्ञानवर्द्धन; धर्मप्रचार, सांस्कृतिक निधियों के महत्व और उनकी सुरक्षा के लिये आवश्यक्ता प्रतीत हो।

(५) पुरातत्वीय शोधकार्य के विद्यार्थियों, पर्यटकों, लेखकों, तीर्थयात्रियों, को सहायक हो सके।

(६) पूर्व भारतीय महापुरुषों का उज्वल भविष्य; अनुपम कला; संस्कृति की सुरक्षा के लिये शासकीय अधिकारियों को गौरव प्रदान हो और वह इन कलाकृतियों के महत्व को समझें अपनी स्वार्थ बर्बरता को त्याग करें; तथा व्यापार को बन्द कर भारतीय संग्रहालयों में परमार्थ की भावना रखकर अपने इष्टदेव को धर्म और कर्तव्यों को मानकर ज्ञान का प्रचार करें।

(७) इन भारतीय कलामय मूर्तियों में जो जलचर, थलचर, नभचर पशु, पक्षी आदि के जो सांकेतिक चिन्ह दिये हैं उनका मानव जीवन से क्या संबंध है, गुण और दोष क्या हैं, उनसे किस प्रकार से लाभ लिया जा सकता है।

(८) इन प्राचीन कलाकृतियों के चोर, विनाशकर्ता, सत्तारूढ़ राज्याधिकारी हैं; जिनका सप्रमाण उल्लेख इस पुस्तक में दिया है। वे उत्तरदायी हैं।

(९) इन्हीं कारणों से प्रेरणा मिलने से पुस्तक लिखने का सौभाग्यावसर मिला है। वे धन्यवाद के पात्र हैं, क्यों कि उन्होंने अपने कर्तव्यों को राज्याधिकार प्राप्त होते हुए भी अपने पुरुषार्थ में कृपणता की है। क्या ऐसे व्यक्तियों से देश का हित हो सकता है?

लेखक-परिचय :—

परम लोकोपकारी दिगम्बर जैनाचार्योपदेशित अगाध विद्यासागर के मध्य पूर्व महापुरुषों की अक्षुण्णनिधियों को विनाश के मार्ग पर न देख सकने के तदुपरांत भ्रष्टाचारी शासकों के सताये जाने पर सद् विवेकी विद्वानो की अति प्रेरणा से तथा परोपकारी स्व० श्री विहारीलाल जी सुवर्ण-कार जौहरी, पं० बलराम जी शास्त्री नगर जीवन रक्षक वैद्य के जीवनदान मिलने पर मानव के जीवनोपयोगी आध्यात्मिक-मनोविज्ञान, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक आदि को देशी और विदेशी जनता के लाभार्थ मानव मात्र एक है और विचार अनेक हैं। कालान्तर में घटने वाली मूक और सांकेतिक पुरातत्वीय साहित्य जन-जन के शिक्षा के उपयोग में आवे। इसलिये कि :—

जो इतिहासिक ग्रन्थ शोधपूर्ण लिखे गये हैं वह पाश्चात्य भाषा अंग्रेजी में ही हैं जिसे हिन्दी भाषी नही समझ सकते हैं इस कमी की पूर्ति के लिये राजमल जैन मड़वैया ने शोध कर लिखा है। त्रुटि रहना आवश्यक है चूंकि विशेष शिक्षा प्राप्त नही, किन्तु अनुभव के आधार पर मानव जीवन में घटने वाली घटनाओ को समाज और राजकीय विभागाधीन वरिष्ट अधिकारियो के अनधिकृत मूर्तियो की चोरियो, भ्रष्टाचार, और विनाश के षडयन्त्रो से व्यथित होकर सुरक्षा की दृष्टि और मूर्तिनिर्माण के उद्देश्यो को जनता के समक्ष लाना आवश्यक समझकर आत्मीयता के साथ लिखागया है। और यह भी ध्यान आया कि लक्ष्मी चचल है, मरने के वाद यही पड़ी रहती है, केवल मानव की अचल सपत्ति देदीप्यमान सत्कीर्ति हैं।

स्थानीय जिले के अधिकारी वर्ग

जिलाध्यक्ष जिला विदिशा (म प्र) श्री व्ही० पी० सिंह महोदय हैं। आपने प्राचीन काल की गणधरो की ३ मूर्तियाँ गोतम सुधर्माचार्य, जम्बू स्वामी जिनपर ब्राह्मी लिपि में प्रशस्ती खुदी हुई है जिन मूर्तियो पर रामगुप्त महाराजा का उल्लेख है। इस लिपि को श्री कृष्णदत्त जी वाजपेई महोदय अध्यक्ष प्राचीन इतिहास विभाग विश्वविद्यालय सागर द्वारा पढा गया है। इसका उल्लेख हितवाद भोपाल दिनांक १०-२-६९ मे प्रकाशित हुआ है। यह आपकी ही महती कृपा से वच सकी है। देखो-साप्ताहिक हिन्दुस्तान दिल्ली ३० मार्च ६९।

आप राजवंश के क्षत्रिय कुल के न्यायप्रिय प्रशासक हैं। आपका गरीब जनता के साथ उत्तम व्यवहार है। किन्तु दल वदल नेताओ के राज्यपरिवर्तनो और पक्षपातो से परेशान हैं। ऐसे प्रशासक विरले ही होते हैं। आप सात्विक वृत्तिके देव पूजक हैं। प्रातः काल ८ वजे से रात्रि को १० बजे तक पूर्णरूप से स्वयं कार्य करते हैं और दूसरो को भी मार्गदर्शन देते हैं। ऐसे प्रशासकों से ही भारतीय कला की रक्षा और न्याय मिलना सभव है।

श्रीमान् के० डी० वाजपेई विश्वविद्यालय सागर की सम्मति।

PROF K D BAJPAI
Rabindranath Tagore Professor &
Head of the Department of Ancient
Indian History, Culture & Archaeology

University of Sagar
SAGAR (India)
7 February 1964

Sri Rajmal Jain Madvaiya has been personally known to me for the last several years I have always found him keenly interested in the collection of ancient coins, inscriptions and sculptures He, has by his careful search, saved many relics of the past from destruction. He was responsible for salvaging quite a large number of valauble remains from the bed of the river Betwa near Vidisha Some of these, including the colossal Yaksha and Yakshi figures, are now preserved in the local Government Museum at Vidisha.

In the collection of coins made by Sri Madvaiya I could find valuable local coins of Vidisha, of the Nagas and of king Ramagupta. The scholarly world should feel grateful to him for saving from oblivion the important coins of Ramagupta alongwith others. He has also discovered some valuable inscriptions of the Gupta and early Medieval periods, which have thrown welcome light on the history of India.

Sri Madvaiya is genuinely interested in the ancient history of Vidisha and the region around. He has himself written a good account of the ancient sites visited by him. He is at present busy with the compilation of a history of Vidisha. I have no doubt that he will continue the useful work of not only collecting antiquites but also of interpreting them.

I wish him success in life.

—K. D. Bajpai.

कृष्णदत्त वाजपेयी
टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति
तथा पुरातत्व विभाग

सागर विश्वविद्यालय
सागर (म० प्र०)
दिनांक ७-२-१९६९

श्री राजमल मड़वैया द्वारा लिखित 'विदिशा वैभव' पुस्तक के प्रारम्भिक छपे फर्मे देखे। लेखक ने विदिशा के इतिहास की पृष्ठभूमि में भारतीय धर्म और समाज का व्यापक पर्यवेक्षण किया है। विभिन्न कथाओं, जनश्रुतियों तथा प्रचलित--अप्रचलित काव्य के उद्धरण स्थान--स्थान पर देकर रोचकता उत्पन्न की गई है। अनेक प्राचीन मूर्तियों की व्याख्या लेखक ने अपने ढंग से करने का प्रयास किया है। इसमें उसे कहां तक सफलता मिली है; यह विचारणीय है।

विदिशा प्राचीनकाल में एक समृद्ध नगरी थी। यह पूर्वी मालवा प्रदेश की राजधानी एक दीर्घकाल तक रही। मौर्य, शुंग, सातवाहन, नाग तथा गुप्त वंश के राजाओं ने इसे अपने-अपने काल में सजाया-संवारा। उनकी परम्परा को कालांतर में परमार राजवंश में जारी रखा। विदिशा तथा उसके आसपास के क्षेत्र में किये गये उत्खननों तथा अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि विदिशा का न केवल राजनीतिक महत्व था अपितु धर्म, साहित्य, स्थापत्य और मूर्तिकला के विकास की दृष्टि से यह नगर भारत में शताब्दियों तक प्रसिद्ध रहा। बौद्ध तथा जैन धर्म एवं वैष्णव, शैव और शाक्त धर्म यहाँ साथ-साथ विकसित होते रहे। सहिष्णुता तथा समन्वय की भावना यहां एक दीर्घकाल तक विद्यमान रही।

श्री मड़वैया ने विदिशा तथा उसके आस-पास के क्षेत्र का विस्तृत सर्वेक्षण किया है। उनकी इस पुस्तक से विदिशा की प्राचीन कलाकृतियों पर प्रकाश पड़ सकेगा।

—कृष्णदत्त वाजपेयी।

Ramagupta Inscriptions Identified

(By A Staff Reporter)

BHOPAL, Feb 9 Two inscription of Ramagupta till now regarded as the "Mysterious ruler" of the Imperial Gupta Dynasty, have been identified by Prof. K D Bajpai, Head Department of Archaeology University of Sagar These inscriptions have recently been discovered at Besnagar near Vidisha town (Madhya Pradesh).

Prof Bajpai told 'The Hitavada' today that the three inscribed 'Jaina Tirthankara' images bearing Gupta inscriptions were unearthed from a mound on the bank of river Bes (ancient Vidisha), while levelling of the mound was is progress The timely action of Shri Rajmal Madvaiya, a local enthusiast, and of Shri V. P. Singh, Collector of Vidisha rescued these rare images from going into oblivion. Two of these clear inscriptions of Gupta Brahmi script and refer to the installation of Tirthankara images during the reign of Maharajadhiraja Ram Gupta, he said.

Prof. Bajpai feels that this is an outstanding archaelogical discovery of the decade and has finally proved the historicity of Ramagupta Four types of coins of this ruler, he said obtained from Vidisha and Eran (dist. Sagar) have recently been published by him, who has pointed out that these coins are issued in Eastern Malwa by Ramagupta, the elder brother of Chandragupta Vikramidya of the Imperial Gupta dynastry.

The new inscriptions bear the name of Ramagupta, whith full inperial title of maharajadhiraja. This has proved that he belonged to the royal family of the Guptas, Prof. Bajpai said.

卐

GOVERNMENT OF MADHYA PRADESH
EDUCATION DEPARTMENT.

Memo No. 2244/2043/xx/cc Dated Bhopal, the 7th July, 1960

From,

Shri V. B. Billore, Under Secretary.

To,

Shri R. N. Bajpai,
Chief Resident Officer,
Birla Bros. (Private) Ltd.
Madhya Pradesh, Bhopal.

Subject—Construction of a temple at Bhopal by Hindustan charity Trust and attaching a maseum-request for collection of antiquities.

Sir,

I am directed to refer to your letter dated the 8th June, 1960 on the above subject and to say that the antiquities can be collected on the following conditions :—

(1) That images lying in open, and not from any area under the Central or the Provincial Archaeological Department may be collected, only from around Bhopal.

(2) That there should be no religious background for collecting these cultrral relics.

(3) That there should be provision for well looking after them.

(4) They should be open for inspection by officers of the Archeological department and also for taking photographs of them.

(5) That they should be handed over the State Department of Archaeology, if and when required and a demand for them is made.

(6) And finally, a regular record to be kept and information to be sent to the State Department of Archaeology.

Yours faithfully,
Sd/- V. B Billore,
UNDER SECRETARY
To
Government of Madhya Pradesh
Education Department.

लेखक का जीवन-चरित्र

वंश-परिचय

लेखक का नाम—राजमल, राशि नाम—मोहनलाल; जन्म संवत विक्रमी १९६८, आश्विन कृ० १४-११ बजे दिन पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र, द्वितिय चरण, ग्राम खेरुआ, जिला भेलसा, ग्वालियर राज्यान्तर्गत हुआ। यह ग्राम दक्षिण से पश्चिम की ओर सहोदरा नदी के किनारे बहने वाली पर बसा हुआ है। यह नदी आगे १ मील पर बेतवा नदी मे मिल जाती हैं। पूर्व और उत्तर दिशा में दो बगीचे हैं। यहा मगलवार को हाट भरती थी। यहां के मुख्य जमीदार का नाम मर्दनसिह जी रघुवंशी था। इनके वंशजो की अविवेकता के कारण हाट भरना वन्द हो गया।

यह लेखक की ननिहाल है। यही पर जन्म हुआ था। नाना का नाम प्रानचन्द। यह दो भाई थे। छोटे भाई का नाम गनेशराम जी था। इनकी दो पुत्रिया थी। बड़ी का नाम प्यारीबाई और छोटी का नाम पार्वतीबाई था। माता श्री पार्वतीवाई का एक भाई मोतीलाल है। इनमें उदारवृत्ति, जाति स्नेह, वंश परम्परा का गौरव नाम का कोई अंश भी नहीं है। यह कृपणवृत्ति के मानव तो हैं ही। वर्तमान मे विदिशा मे रहते हैं। त्रिवेणी के घाट पर इनकी सतियां हैं। यह परवार छोबरमूर फागुन गोत्री जैन हैं।

गनेशराम जी के तीन पुत्र क्रमशः दुलीचन्द्र जी, छोटेराम जी और सोमतराय। यह वर्तमान मे मंडी गुलाबगंज में व्यापार करते हैं। बड़े और मझले भाई का उत्तम स्वभाव है। गनेशराम जी का लेखक पर बड़ा स्नेह था, बड़ी उदारवृत्ति थी।

लेखक के आजे (दादे) श्री वंशीधर जी मड़वैया के दो पुत्र बड़े धर्मचन्द्र जी पिता थे और अनुज भ्राता श्री भगवानदास जी। यह बाल ब्रह्मचारी रहे।

यह बुन्देलखण्ड के बानपुर नामक ग्राम तहसील महरौनी जिला झाँसी मे हैं। यहां के राजा महाराजा मर्दनसिह बड़े बहादुर थे। इनको इनके वंशजों द्वारा राज्य का प्रलोभन देकर गिरफ्तार कराया और वह वहीं पर मार दिये गये। इनका एक किला बानपुर मे आज भी बना है। और इनके गगनचुंबी महल चन्देरी मे आज भी बने हुये हैं।

विक्रमी सवत १८०० के लगभग आर्थिक और पारिवारिक विपत्तियों के कारण वंशीधर जी अपने दो पुत्र और पत्नी तथा दो पुत्री माया और कंचन को साथ लेकर दुखित अवस्था मे आये और सर्वप्रथम खुरई मे श्रीमत सा० के यहा ३ गजरथ एक साथ निकले थे। श्री जिनेन्द्र पच--कल्याणक प्रतिष्ठा बड़े धूमधाम से हो रही थी।

भाग्यवशात रतनचन्द्र जी बड़कुर के लघुभ्राता का सम्बन्ध होना था। यह श्री वंशीधर जी को सपरिवार रायसेन लिवा लाये और पाणिग्रहण सस्कार हुआ। इनके वंश में दीपक जलाने वाला भी नही है।

द्वितीय पुत्री कचनबाई गुलगांव में परिणाई गई। यह वंश भी समाप्त हो चुका है। यह ताराचन्द्र मन्नूलाल के नाम से प्रसिद्ध थे। (गुलगाव परिचय) यह स्थान सम्राट अशोक को जैन

श्रेष्टि ने पुष्पहार भेंट में प्रथम मिलन में सगाई के वक्त प्रदान किया था। इस कारण से इसका नाम गुलगांव रखा गया था। लड़की को एरन देने से ग्राम एरन और सिर पर टीका देने से सिरचम्पा और रत्न संचयपुर (सांची) पर भगवान नेमिनाथ का समवशरण आने से उस स्मृति में राज्याश्रय द्वारा आचाय परम्परा के अनुसार जो दरबाजों पर मूर्तियाँ चारों ओर उत्कीरित हैं वह भगवान नेमिनाथ के जीवन की चरित्रावलि है।

भगवान नेमिनाथ का वंश परिचय, यहां आने का कारण, सम्राट अशोक की ससुराल में पढ़िये।

रायसेन का संक्षिप्त इतिहास—

यह रायसेन विदिशा से दक्षिण दिशा में है। यह भोपाल राजधानी का एक जिला है। यहाँ से चारों दिशाओं में मोटरों के लिये पक्की सड़के बनी हैं—(१) सागर (२) बरेली (३) विदिशा सांची (४) भोपाल को मार्ग हैं।

रायसेन में १ किला हैं। इसके पश्चिमी पहाड़ी पर भगवान राम के चरण एक चट्टान में उत्कीरित हैं। किवदन्ती है कि भगवान राम बनवास के समय यहां आये और शयन किया था। इस कारण से इस नगर का नाम रामशयन से रायसेन हुआ।

इस किले में प्राचीन खंडहर हैं। दर्शनीय स्थान बारह दरी, इत्रदान, बाहर महल डोहला और एक मस्जिद है जोकि पूर्व मे जैन मन्दिर था जिसे मुगल राज्य में मस्जिद बना लिया गया, उसमें जैन मन्दिर के प्रमाणस्वरूप बेदी बनी है। और शिलालेख भी साक्षी दे रहे हैं।

इस किले से उत्तर की ओर पहाड़ी है जिसपर एक बड़ी भारी गुफा है। किंवदन्ती है कि यहां बालमीकि ऋषि रहते थे। उन्हें उनके गुरु का आदेश था कि सीता के पुत्र तुम्हारी कुटी में जन्म लेंगे और तुम उन्हें अपनी धनुर्विद्या सिखाना।

कालांतर में सीता का राम के द्वारा वनवास हुआ और सीता जी बराई खास नामक स्थान पर कृतान्तवक्र सेनापति के द्वारा छोड़ी गई। इसी के निकट राजा नल ने दमयंती को सोता छोड़ा था। यह स्थान आज भी राजा नल की पहाड़ी के नाम से विख्यात है।

इन पहाड़ियों के बीच में लोहे की कीट के बड़े बड़े ढेर लगे हैं। इससे यह भी जान पड़ता हैं कि पूर्वकाल में यहां लोहे का उत्पादन भी रहा हैं। रायसेन से पूर्व की ओर रामगढ़—जामगढ आदि स्थान भी हैं। रामगढ में देवों ने अयोध्या नगरी बसाई थी। और उस नगरी में राम, लक्ष्मण, सीता ने वनवास के समय कुछ समय निवास किया था। (पश्चात्)

वीरपुर वनछोड़ में बाँस भिडे हैं जहां शंबुक खरदूषण का पुत्र चन्द्रहास खड्ग सिद्ध कर रहा था। लक्ष्मण वहां गये और वहाँ देवोपनीत चन्द्रहास खड्ग लटकती देखी, लक्ष्मण ने हाथ बढाया। वह हाथ में आते ही उन्होने अनजाने में वह खड्ग उसी बांसभिड़े पर मार दी, बाँसभिड़ा कट गया और उसमें बैठा शंबुक भी मारा गया।

सूर्पनखा रावण की बहिन ने जब आकर देखा कि मेरे पुत्र का सिर कटा पडा है, तो विलाप करने लगी और धैर्य के साथ कर्णपिशाची विद्या से पूछा कि मेरे पुत्र का मारने वाला कौन है ? विद्या ने सब बातें कह सुनाई। पश्चात्

सूर्पनखा एक विद्याधर की पुत्री थी। उसने अपना स्वरूप बदला और उन प्रतापी शूरवीर बालको को देखने चल पड़ी ।

मार्ग में लक्ष्मण जी के रूप और सौन्दर्य को देखकर बिह्वल हो उठी और काम पीडा उसे जाग्रत हो गई ।

उसने अपना स्त्री चरित्र दिखाने के लिए कुमारी का रूप बनाया और अपने साथ पाणिग्रहण के लिये कहा किन्तु लक्ष्मण जी ने कहा कि मेरे से सुन्दर तो मेरे बड़े भाई श्री रामचन्द्र जी हैं । यह सुनते ही उसके मुंह में पानी आ गया और तत्काल ही राम के पास पहुंच गई किन्तु राम ने कहा कि मेरे साथ तो एक नारी है लक्ष्मण जी से ही विनती करो । हताश होकर लक्ष्मण जी से आग्रह करने लगी किन्तु मर्यादापुरुषोत्तम ने अपने शील की रक्षा करते हुये अति होने पर उसकी नाक काटदी ।

दौड़ी भागी अपने पति खरदूषण के पास गई और उसने अपना स्त्री चरित्र फैलाया । इधर तो पति को लड़ाया और भागी दौड़ी गई भाई रावण के पास । वहां से भाई को ले आई । भाई ने कर्णपिशाची विद्या से पूंछा कि यह कौन हैं और क्या है ? इनका पूरा परिचय कर्णपिशाची विद्या ने दिया ।

बीच मे यह बात और रह गई है कि जब खरदूषण लड़ने को आया तो राम जब युद्ध क्षेत्रमें आने लगे तो लक्ष्मण ने कहा कि मैं अकेला ही बहुत हूं, जरूरत पड़ेगी तो सिंहनाद करूंगा तभी आना ।

वह बात कर्ण पिशाची की ने सुनकर उसने झूठा सिंहनाद किया और राम जब युद्धक्षेत्र में पहुचे तो लक्ष्मण ने कहा कि तुम क्यो आये ? जाओ धोखा हैं ।

इधर रावण ने सीता का हरण किया और सीता बिलाप करती जा रही थीं । जटायु को मार डाला था सीता अपने आभूषणो को यत्र तत्र बिखेरती जा रही थीं जिससे पति को सकेत हरण का मिल सके किन्तु एक विद्याधर सुग्रीव की स्त्री सुतारा को दूसरे विद्याधर ने हरण करना चाहा उस पर लक्ष्मण जी ने विजय पाई और सुतारा के शील को बचाया इसकारण से सुग्रीव से मित्रता हुई और इसी कारण से पवनंजय और हनुमान से । कुछ शोध करने के पश्चात सीता का पता लगा और युद्ध की तैयारी हुई । इसी बीच में जामवन्त जी से मुलाकात हुई । यह वही जाम गढ है जो पूर्व मे बता चुके हैं। पाताल लंका यह पचमढी है । यह सम्पूर्ण शोधकार्य हमने (लिखक ने) किया है । जो ग्रन्थो और घटनाओं को प्रमाणित करती है ।

पश्चात् नारद जी के द्वारा जब कि सीता लंका से वापिस आगई और राम ने अपनी मर्यादा तथा न्यायपरंपरा को जीवित रखने की जिज्ञासा से सीता का परित्याग किया था । अन्त मे सीता ने कृतान्तवक्र सेनापति को यही सन्देश भेजा था कि जैसा तुमने मुझे त्यागा है धर्म को नहीं त्यागना ।

विद्वज्जन ! यह क्षेत्र ऐसे अनुपम साहित्य से भरा पड़ा है। यदि मुझे शासन या समाज अथवा किसी संस्था का सहयोग मिले तो लेखक :—

नई खूबी नई आदत, नये अरमान पैदा कर ।
तू अपनी खाक से, इक दूसरा इन्सान पैदा कर ॥

इस नाशवान शरीर से ऐसी अनुभूतियां हमारे देश के लिये मिलतीं। प्रान्त का तथा राजधानी और संस्कृति का दुर्भाग्य है कि कोई भी सर्वविद् शिक्षासंस्थायें और उनके संचालकों का ध्यान इस ओर नहीं है। यदि है तो केवल लक्ष्मी जी की ओर सरस्वती को महती कृपा का अनुचित ढंग से काम विकारादि में उपयोग किया जा रहा है। आत्मज्ञान के साधन अध्यात्म की ओर नहीं है। वैसे हमने इसमें यह विवेचन किया है कि राम कौन है और रावण कौन है। आध्यात्मिक रामायण देखें पृष्ठ १६ पर। ऐसी पुण्य भूमि :—

तेरी खूबी तेरी इज्जत, तेरा इकबाल दूना हो ।
तू औरों के लिये, नेकी का नमूना हो ॥

इसी भावना को लेकर विधाता ने मुझे जन्म दिया और इस कर्तव्य को पूरा करने की जिज्ञासा रखता हूँ।

मर्द मैदां देखते हैं, मर्द मैदां कौन है ।
पर जनाने झाँकते हैं, मेरी गुइयाँ कौन है ॥

धन्य है उन वीतरागी पुरुषों को जिन्होंने :—

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार ।
पर माया जिनने ठगी, उनको बहु बलिहार ॥

यदि सरस्वती है तो उसकी बहिन लक्ष्मी दासी बनकर प्रतिक्षण चरणों में लोटेगी। यदि सरस्वती का साथ नहीं, कुमता से नेह लगा तो गाँठ की भी चली जावेगी।

पाठकगण यह भी ध्यान रखें कि :—

जितने भी तीर्थंकर हुए हैं क्षत्रियों में से ही हुये। इन्हीं की मान और मर्यादा को जो आज जैन कहलाते हैं कुबेर की तरह रक्षा कर रहे हैं। धर्म कोई ऐसी वस्तु नहीं जो दूसरों (मूर्खों) की निन्दा से अपवित्र हो जावे। यह भी ध्यान रखें कि श्रीमान आई०जी सा० पुलिस विभाग श्री रुस्तम जी ने लेखक का पुरातत्वीय निजी संग्रहालय देखा और दिनांक २–७–५९ को अपनी सम्मति भी प्रदान की है। जोकि दर्शक पुस्तिका पृ० ५ पर है।

पुलिस के वरिष्ठाधिकारी और अन्यान्य अधिकारी वर्ग किसी भी उत्तम कार्य में हाथ इसलिये नहीं बटाते कि उसमें स्वार्थसिद्धि नहीं हो पाती।

वीर पुरुष अपनी अपने देश की राष्ट्रीय निधियो की रक्षा मे जीवन की आहुती देता है। और नंगा भूखा, कामी पुरुष काम वासनाओ की पूर्ति के लिये श्वान के चरित्र से भी पतित हो जाता है। इन कारणो से इस पुस्तक को लिखने का अवसर प्राप्त हुआ।

आभार एवं अन्य ज्ञातव्य

(१) मे अपने श्री वि० श्री० वांकणकर आचार्य भारतीय कला भवन माधव नगर उज्जैन का आभारी इसलिये हूँ कि आपने दिनाक १ मार्च सन् ६० को निजी पुरातत्व सग्रहालय का अवलोकन किया और उसकी दर्शक पुस्तिका मे अपने विचार दिये हैं। इससे मुझे विदिशावैभव ग्रन्थ लिखने का अवसर मिला। मैं आपका आभार मानता हूँ। प्रतिलिपि निम्न हैं।

उदयगिरि विदिशा गुफा न० ५ की बाराह मूर्ति के संबध मे मडबैया जी की कल्पनाये कुछ नाविन्य हैं। उन्होने विभिन्न तात्विक गुत्थियो को सुलझाने की नई प्रणाली अपनाई है। यह अध्ययन करने योग है।

मैं स्वयं इस विषय में अधिकृत वाणी से कुछ कहने मे असमर्थ हूँ। क्यों कि मेरा अभ्यास कम है। पर सभवतः नवीन दृष्टिकोणों के अभ्यास से अगम्य मूर्ति-चित्रो का कुछ अर्थ अवश्य निकल सकता हैं।

राजमल जी से मेरी हार्दिक विनती है कि उन्हों को अपनी सब बातें लेखबद्ध कर प्रकाशित करना चाहिए। अन्यथा यह ज्ञान अपने तक सीमित रहेगा। ज्ञान परलोक हिताय के लिये लेखनी विधायक मार्ग पर चलना चाहिये।

वि०श्री वाकणकर
आचार्य भारती कला भवन
माधव नगर उज्जैन (मालवा)

(२) यह अवैधानिक अनधिकृत चेष्टा नहीं है तो क्या है?

जब कि पुरातत्व विभाग शासन ने नियुक्त किया है तो पुलिस के अधिकारियो को क्या अधिकार है जो अपने बगलो पर जैन और अन्य प्राचीन प्रतिमाओ को लाकर रखते हैं? क्यो कि वर्तमान मे जो भी विध्वस कार्य हो रहे हैं उसमें स्वार्थ निहित है। यही कारण है कि लेखक की 'पुलिस रिपोर्टों' पर मूर्तिचोरो से रुपया लिया गया हैं और अपराधियो को बिना जमानत छोड़ा गया हैं। देखिये पुलिस रिपोर्ट क्रमांक ४३९ दि० ६-३-६८। दर्शक पुस्तिका पृष्ठ ६। हमने लिया तुम भी लेना, देने वाले को जाने देना। जिस देश में इस प्रकार का व्योपार चल रहा हो वहां की जनता क्या सुखी रह सकती है? कदापि नहीं। यही घटना लेखक के साथ प्राचीन सास्कृतिक निधियों के संबंध मे हुई हैं।

(३) एक नमूना केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के डिप्टी डायरेक्टर जनरल दिल्ली का अवलोकन कीजिये।

श्री राजमल जी मड़वैया ने आज अपना पुरातत्व संबंधी संग्रह अपने घर पर तथा विदिशा विश्राम गृह में दिखलाया। उन्होंने बहुतही सुन्दर मूर्तियां एकत्रित की हैं। तथा शिलालेख भी महत्वपूर्ण हैं। उनके द्वारा संग्रहीत प्राचीन सिक्के अध्ययनीय हैं।

मैं उनके उत्साह एवं जिज्ञासा की प्रशंसा करता हूँ।

१३-१-५९

ब्रजवासीलाल
डिप्टी डायरेक्टर जनरल
भारतीय पुरातत्व विभाग दिल्ली।

खेद क्यों ?

श्री ब्रजवासी लाल जी डिप्टी डायरेक्टर जनरल महोदय का शुभागमन दिल्ली से विदिशा हुआ। विश्रामगृह पर कमरा नं० ३ दि० २७ दिसम्बर ६८ को सायंकाल मिलने से मना कर दिया।

चपरासी ने पूछा किसलिये मिलना चाहते हो? तो जो चित्र मैंने ड्राइंग पेपर पर बनाये थे वताये उसने कहा कि यह एक नया पैसा देवाल नहीं मैं लाखों रुपया दिल्ली के मूर्ति खरीददार व्यापारियों से दिला दूंगा उसमें मुझे भी मिलजायगा। चपरासी ने कई दुकानदारों के नाम भी बताये। मुझे यह जानकर दुख हुआ कि जब ऐसे केन्दीय शासन में जो विभाग से पुरातत्वीय वस्तुओं की चोरियां हुई हैं इस बड़े पैमाने के लोगों की ही सहायता और विना भेद के नहीं होतीं।

अतएव मैंने उन मूर्तियों के बारे में मिलना आवश्यक समझा कि जो वेतवा नदी पर तीन गणधरों की मूर्तियां हजारी लाल सुनार की भूमि से निकली थीं जिनपर ब्राह्मी भाषा में लेख हैं। पढ़ने की चर्चा करना थी इसलिये मुझे कुछ अपनी युक्ति से ५ मिनिट का समय मिला और मैंने चपरासी का पूरा वयान समक्ष में किया। किन्तु श्रीमान ने एक शब्द भी नहीं कहा। चुपचाप सुनते रहे।

खेद है जो आज भारत में मूर्तियों का विध्वंस हो रहा है किस पर इसका उत्तरदायित्व है? पाठक समझ लेंगे। क्या यह प्रामाणिक नहीं माना जा सकेगा?

मुश्किल है मिलना चोर का, जब घर के ही सब चोर हैं।
कैसे चलेगा राज जब, सारे ही रिश्वतखोर हैं॥

श्री ब्रजवासीलाल जी का चुप रहना कोई रहस्य अवश्य रखता है।

केन्द्रीय आर्ट पर्चेज कमेटी का नमूना भी देखिये।

आर्ट पर्चेज कमेटी नेशनल म्यूजियम जनपथ नई दिल्ली के सचिव श्रीमान् बेनर्जी महोदय की सेवा में पत्रांक दिनांक ५ जनवरी १९६८ को दिया था उसके उत्तर में पत्र नं० १८-१६-६७ र० स० दि० ११ मार्च १९६८ में लिखते हैं:—

(१) भविष्य में सहयोग देने का आश्वासन। जब तक यह पूर्णरूप से शायद कुछ भी न बच सके।

(२) विभाग के मन्त्री महोदय श्री शेरसिंह सा० जो राज्य मन्त्री हैं जब वे दि० २२-१-६८ को विदिशा पधारे थे। और विदिशा का जिला पुरातत्व संग्रहालय देख रहे थे मार्ग प्रदर्शन करते समय मूर्तियां शासन को भेट करने, सग्रहालय के लिये, संग्रह करने, और चोरों से बचाने के लिये आवेदनपत्र दिया और उनकी सेवा मे यह प्रस्ताव रखा कि श्रीमान जी यदि सुरक्षा चाहते हैं तो १ वर्ष की अवधि के लिये सेवक को अवसर प्रदान करें तो कार्य किस तरह किया जाता है ? सुरक्षा किस तरह की जा सकती है ? पात्रता क्या है ? अनुभव और ज्ञान कितना है ? बता सकूंगा और हजारों की संख्या मे मूर्तियों का संग्रह शासन को पर्यटको और शोधकार्य करने वाले छात्रों को ज्ञानार्जन के लिये मिल सकेगा। जिसका उत्तर आज तक नही है।

(३) अब आपका ध्यान मध्य प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग भोपाल की ओर भी आकर्षित करते हैं।

मध्य प्रदेश सरकार के शिक्षा सचिवालय पत्राक २२४४।२०४३। १० १० सी सी दिनांक ७ जौलाई सन् १९६० को :—श्री व्ही० बी० बिल्लोरे अवर सचिव ने एक आदेश श्री आर० एन० बाजपेई चीफ रेजीडेन्ट आफीसर विरला ब्रदर्स (प्रायव्हेट) लिमिटेड भोपाल को दिया। जिसका विषय हैं।

विषय—हिन्दुस्तान चेरेटरी ट्रस्ट द्वारा भोपाल में एक मन्दिर व उसके सम्बन्धित संग्रहालय के लिये प्राचीन कलाकृतियां एकत्रित करने के सम्बन्ध मे। प्रतिलिपि अंग्रेजी मे संलग्न है।

प्रिय महोदय,

(१) प्रातीय पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित क्षेत्र के अतिरिक्त भोपाल के आस पास के खुले मैदान में पड़ी हुई अरक्षित मूर्तियां एकत्रित की जा सकती हैं।

(२) इन पुरातत्वीय संस्कृतियो के संग्रह में धार्मिक भेदभाव नहीं होना चाहिये।

(३) इनकी देखभाल का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिये।

(४) पुरातत्व विभाग के अधिकारी इन्हें जब चाहे देख सकेंगे व इनके चित्र वगैरह भी ले सकेंगे।

(५) यदि पुरातत्व विभाग को आवश्यकता हुई तो उनके मांगने पर यह मूर्तियां विभाग को दे देनी होगी।

(६) इन कलाकृतियो का नियमित अभिलेख रखा जाना चाहिये और इनकी सूचना प्रादेशिक पुरातत्व विभाग को दी जाना चाहिये।

अंग्रेजी ट्रांस्लेशन—

हस्ताक्षर
व्ही० वी० बिल्लोरे
अवर सचिव मध्य प्रदेश सरकार
शिक्षा विभाग

वी० ४-७-६०

ध्यान रहे कि—

श्री आर० एन० बाजपेई महोदय ने मड़वैया कुटीर पर कई चक्कर लगाये इसलिये कि वह मड़वैया को बिड़ला मन्दिर पर पुरातत्वीय संग्रहालय निर्माण करना था। तीन मास तक मड़वैया ने उपरोक्त कथित आदेशानुसार नौकरी की। भोपाल के आस पास के क्षेत्र में कोई ऐसी स्मृति नहीं मिली। और कोरत्वाई में मामा करनसिंह सा० के यहां ३ मूर्तियां रखी थीं मांगी गई और वह लाई गई। श्री आर० एन० बाजपेई महोदय ने उन मूर्तियों को कलकत्ता के लिये ले गये। जब वह मूर्तियाँ वहां न रखी गई तो हृदय में बैचेनी हुई। और पूछ ताछ की तो उन्होंने अश्लील-बाणी का उपयोग किया। लेखक ने इस कांड की रिपोर्ट पुलिस विभाग व पुरातत्व विभाग और इनके बिड़ला जी आदि को दी, किन्तु खेद है कि किसी ने भी कोई अपराध की जांच के लिये क़दम नहीं उठाया, क्योंकि :—

भ्रष्टाचारी राज में शासकगण को चैन।
रिश्वत के व्योपार की सीधी खुल गई लैंन ॥

की पुष्टि करता है।

इस सम्बन्ध में एक पत्र :—

संस्कृति विहार—

श्री राजमल जी मड़वैया, पुरातत्व अन्वेषक विदिशा।

प्रिय महोदय,

आपका कृपा पत्र मिला, जो श्री बिड़ला जी तक पहुँचा दिया गया है। हमें इस बात का खेद है कि भोपाल में आपके साथ सज्जनोचित व्यवहार नहीं किया गया। इस विषय में उक्त व्यक्ति से जवाब मांगा गया है। श्री चिरंजीलाल जी, शर्मा जी से भी मैंने आपके विषय में बात चीत की थी। उन्हीं के सुझाव पर हम आपको संस्कृति विहार रांची में आपकी योग्यता के अनुकूल काम देने पर विचार कर रहे हैं।

संस्कृति विहार रांची एक शुद्ध संस्था हैं। जो भारतीय संस्कृति के अध्ययन, शोध प्रचार के हेतु बिड़ला जन कल्याण ट्रस्ट द्वारा स्थापित की गई है। आशा है कि इस संस्था में आपको अपनी योग्यता एवं रुचि के अनुकूल वातावरण मिलेगा। संस्कृति विहार की ओर से एक अच्छा सांस्कृतिक संग्रहालय बनाया जा रहा है। क्यों कि यह आपकी रुचि का विषय है।

इसलिये हम आपको उक्त संग्रहालय के अधिकारी के पद पर रखने के लिये तैयार हैं। यदि आप इस कार्य को निःस्वार्थ संस्कृति सेवा का कार्य मान कर मात्र निर्वाह के लिये दोसौ रुपये मासिक पारिश्रम स्वीकार करने के लिए तैयार हों आपसे यह आशा की जाती है कि आप इस कार्य को संस्कृति सेवा का पुनीत कार्य मानकर अपने निजी मूर्ति संहग्र तथा अन्य साधनों से मूर्तियां उपलब्ध कर संग्रहालय को अपनी योग्यता के अनुरूप एक अनुपम संग्रहालय बनाने में अपना पूरा योगे दान देंगे।

रांची एक आदिवासी क्षेत्र है। जहाँ दिन प्रतिदिन ईसाइयत का प्रकोप बढ रहा हैं। इस प्रकोप से अपनी पुनीत सस्कृति को बचाने के उद्देश्य से संस्कृति विहार के अन्तर्गत आप जो भी संस्कृति सेवा करेंगे, उसका देश के भवितव्य निर्माण की दृष्टि से बहुत ऊंचा मूल्य होगा।

संस्कृति विहार के प्रशिक्षणार्थियों तथा अन्य जन समाज के लिये भारतीय संस्कृति एवं जैन धर्म पर आपके व्याख्या भी करवाना चाहते हैं। मूर्ति संग्रह तथा प्रचार के निमित्त जाने पर मार्गव्यय संस्कृति विहार की और से मिला करेगा। हमारे विहार के माननीय राज्यपाल चार बार हमारे कार्यक्रमो मे पधार चुके हैं। संस्कृति विहार, रांची में आ जाने पर आपकी कला प्रेम की भावना माननीय राज्यपाल जी तथा माननीय विड़ला जी के ध्यान में शीघ्र ही आजायेगी तथा आपके कला विकास का भावी मार्ग खुल जाने की आशा है। कृपया लौटती डाक से पत्रोत्तर देवें।

संस्कृति सेवा में आपका ही

हरवंशलाल ओबराय

आंनी डायरेक्टर

एकाडेमी आफ इंडियन कलचर, रांची।

इस पत्र से भी साफ स्पष्ट होता है कि केवल दो सौ रुपया में अपना ईमान बेचदें और अपना निजी संग्रह इनहे देदें। यह नही लिखा कि आप एकबार आकर अपनी कला, विद्याविलासिता, अनुभव का मार्ग दर्शन करावें। क्या यह भी एक विचित्र बात नही है?

ध्यान देने की बात यह भी हैं कि :—

गतवर्षो में श्री बाजपेई ने आज तक कितना संग्रह कहाँ कहाँ से किया क्या इसकी सूचना पुरातत्व विभाग को दी है? क्या पुरातत्व विभाग ने माहिती ली है? और जैन धर्म या हिन्दू धर्म की मूर्तियां जो विड़ला मन्दिर पर थी वह कहां गई? आशापुरी, कागपुर आदि से जो मूर्तियाँ लाई गई हैं वह कहा हैं? क्या शासन के अधिकारी वर्ग इस बात का प्रत्युत्तर देने की कृपा करेंगे? यह एक नमूना समक्ष मे हैं।

लेखक का एक अनूठा सांस्कृतिक प्रेम का नमूना यह है कि :—

(७) विदिशानगर मे कोई संग्रहालय नही था। लेखक के सतत् प्रयत्नो से खुलवाया गया नेशनल म्यूजियम भारत सरकार जनपथ नई दिल्ली से दि० २२ जून १९६० को एक मेमोरेन्डम निकला था जो जिलाधीश महोदय मडल विदिशा के द्वारा सग्रहालय की जानकारी चाही गई थी। उसमें लेखक ने सभी सत्य बाते स्पष्ट की थी और जो डायरेक्टरी भारत सरकार की ओर से प्रकाशित हुई है उसके पृष्ट ५१ पर जो उल्लेख है संलग्न हैं कृपया पढिये।

मडवैया पुरातत्व सग्रहालय मड़वैया कुटीर विदिशा द्वारा भेजे गये पत्र की प्रति लिपि :—

पत्र क्र० ९२

दि० २६-६-६०

श्रीमान् असि० डायरेक्टर महोदय,

नेशनल म्यूजियम भारत सरकार नई दिल्ली।

विषय—सरक्युलर परिभाषा सांस्कृतिक संपत्ति पत्र दि० २२ जून ६०

महोदय,

उपरोक्त कथित सरक्यूलर वैज्ञानकि गवेषणा और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली ने एक सलाहकार समिति दि० १७ म ६० को बुलाई थी उसका जो सरक्यूलर भेजा गया है। उस संबंध में अनुरोध है कि जो संपत्ति जिसे तीन श्रेणियो में विभक्त किया है। प्रमुख मात्रा मे अरक्षित और अव्यवस्थित दशा में पड़ी नष्ट हो रही है।

विदिशा—भोपाल एवं निकटवर्ती क्षेत्रों में विखरी हुई असीम पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री के संबंध में हार्दिक रुचि तीक्ष्ण दृष्टि व गहन जानकारी रखने वाले एक व्यक्ति यहां है सर्व विदित है।

शासन यदि चाहे तो उनके वारे मे सूचनाये आपको सेवा में प्रस्तुत करदी जावेगी। पदाधिकारियों की अकर्मण्यता के कारण विदिशा म्यूजियम आज प्रायः नहीं के बराबर ही अवशिष्ट है। किन्तु स्वार्थ पूर्ति न करने और अनैतिक रूप से जो मुद्रायें ली गई और ४० मूर्तियाँ दी गई उनकी रसीद मांगी गई। नौटिस दिये गये। इस कारण से लेखक को २१ मास को सेवा काल के पश्चात् सेवा मुक्त किया गया।

विनाश कार्य प्रचुर मात्रा में हो रहा था। शासक वर्ग का ध्यान नहीं था। इस कारण वस्तुओं के विनाश से जो भी वस्तु अर्थाभाव होते हुए बचाई जा सकी संग्रह की गई हैं। जिसका लाभ सभी पुरातत्व प्रेमी अनुसंधानकों के लिये उपलब्ध है।

(१) संग्रहालय मड़वैया कुटीर ऐसे सुलभ मार्ग पर हैं जिसका लाभ प्रत्येक व्यक्ति ले रहा है। और शुभ सम्मतियां प्राप्त हो रही है। यह संग्रहालय स्वयं के स्वावलंवन पर निर्भर है।

(२) विदिशा के दर्शनीय स्थल उदयगिरि की गुफायें, विजय मन्दिर खामबाबा, लुहांगी, हिल, दिगम्बर जैन परवार बड़ा मन्दिर, चौवेजी का मन्दिर, बालाजी का मन्दिर, जयेश्वर महादेव के निकट बावड़ी मे शिलालेख पर सुरक्षा चिन्ह आवश्यक है तथा दर्शनीय नदी वेत्रवती के घाट।

(३) मड़वैया संग्रहालय के लिये शासन भूमि देवे या विजय मन्दिर को ही संग्रहालय के लिये दिया जाकर शासन के आधिपत्य में मिला लिया जावे।

(४) पाषाण की भग्न मूर्तियां शिलालेखों के अवशेषों की सूची शासन में दी जा चुकी हैं।

(५) ताम्र मुद्रायें लगभग ५ हजार के हैं।

(६) यह विदिशा नगर की शोभा है। विदिशा नगर में ही रहेगी।

(७) हमारे नगर का पुरातत्वीय संग्रह बाहर जाना अपराध घोषित किया जावे।

(८) विदिशा के या भोपाल अथवा रायसेन के संग्रहालयों को सम्पन्न करने के आदेश प्रदान किये जावें।

विनीत—

राजमल जैन मड़वैया

संग्रहालयाध्यक्ष मड़वैया कुटीर, विदिशा।

भ्रष्टाचार विभाग (शिकायत मंडल) मध्य प्रदेश भोपाल

क्र० १०२६ / २०६ / ५६ दि० ६ फरवरी ५६

श्रीयुत राजमल जैन मडवैया विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग के अधिकारियो के विरुद्ध भ्राष्टाचार की शिकायत।

आपका दिनांक १ फरवरी १९५७ का आवेदन पत्र प्राप्त हुआ।

यह पत्र मंडल के समक्ष उचित कार्यवाही के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है। आगे जो कार्यवाही होगी, उसकी सूचना आपको भेज दी जावेगी।

—मि० ला० शर्मा।

शिकायत मंडल मध्य प्रदेश

क्र० १३६६ / २०६ / ५७-२ भोपाल दिनांक १ फरवरी ५८ / १४ माघ १८७९

प्रति

श्री राजमल जैन मडवैया

विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग ग्वालियर गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर के हेड क्लर्क जगमोहन के विरुद्ध रिश्वत मागने के सम्बन्ध में शिकायत।

निर्देश—आपका आवेदन पत्र दि० १--२--५७।

उपरोक्त शिकायत की जांच की गई परन्तु उसमें आपके द्वारा लगाये गये आरोप सिद्ध नहीं पाये गये। अतः खेद है कि मंडल द्वारा तत्सम्बन्ध में आगे कार्यवाही सम्भव नहीं है।

रा० ग०

निबंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश

यह कार्यवाही मे न तो रिकार्ड देखा गया और न शिकायत करने वाले से पूछा ही गया जिसने अपराध किया, क्या वह सत्य कह सकता है ? कोई साक्ष्य भी नही लिये गये। पक्षपातपूर्ण एवं अपराधो को प्रोत्साहन देने के लिये यह जवाब दिया गया। आज तक कोई ध्यान नहीं दिया गया।

क्रमांक २३३८ / २०६ / ५७-१ भोपाल दिनाक २३ मार्च १९५७।

प्रति,

श्री राजमल जैन मडवैया

विदिशा (भेलसा)

विषय—पुरातत्व विभाग ग्वालियर गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर के हेड क्लर्क जगमोहन जी के विरुद्ध रिश्वत मांगने के सम्वन्ध मे शिकायत।

निर्देश—आपका दिनांक २५-२--५७ का आवेदन पत्र।

विषयातर्गत शिकायत पर जांच जारी है। जिसके परिणाम की सूचना आपको यथा समय दी जावेगी।

—मि० ला० शर्मा

निबंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश

क्रमांक २३३९ / २०६ / ५७-७ भोपाल २३ मार्च १९५७। प्रति पुलिस महानिरीक्षक मध्य प्रदेश भोपाल को मंडल के ज्ञाप क्र० ११९३ / २०६ / ५७-१ दिनाँक १३-२--५७ को अनुवृति में अग्रेषित। इस सम्बन्ध में की गई कार्यवाही की सूचना को देने की कृपा करें।

मि० ला० शर्मा
निवंधक शिकायत मंडल, मध्य प्रदेश।

सामान्य प्रशासन विभाग

(राज्य सतर्कता आयोग)

क्र० ५६९८ / २६५७ / ६४ / १-५-६४ भोपाल दिनांक २१--११--१९६४

प्रति, श्री राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा।

विषय—भ्रष्टाचार।

संदर्भ—आपका आवेदन पत्र दि० ११--८-६४।

आपका उपरोक्त आवेदन पत्र इस कार्यालय में प्राप्त हुआ। राज्य सतर्कता आयोग के निर्णय के अनुसार आपका आवेदन पत्र महानिरीक्षक पुलिस भोपाल को आवश्यक कार्यवाही के लिए भेजा गया है। आप कृपया इनसे संपर्क स्थापित करे।

रा० ना० मुले १२-११
मुख्य कार्यपालन अधिकारी के लिये
राज्य सतकर्तता आयोग (म० प्र०) भोपाल

खेद है कि अनेकों रिमाइन्डर किये और बारम्बार मिले किन्तु भ्रष्टाचार और पक्षपात का ही बोलबाला है।

बागड ही खेत खाने लगे तो उसकी रक्षा कौन करे!

कहना कुछ और, करना कुछ और, लिखना कुछ और

(दोहा)

कह कर करना कठिन है, कह जानत सब कोय।
बिना कहे जो करत है, चतुर जानिये सोय॥

श्री हरिहर त्रिवेदी साहब इन्दौर संग्रहालय के संग्रहाध्यक्ष थे। उस समय पर दिया गया

पत्र, जिसकी प्रतिलिपि—

भेलसा निवासी श्री राजमल जी मडवैया से परिचय करके अत्यन्त आनन्द हुआ। आप पुरातत्व के प्रेमी हैं। और भेलसा के आस पास के प्राचीन स्थान, मूर्तियां, लेख आदि की आपको सविस्तार जानकारी है। आपने पुरातत्व का जो काम आज तक किया है उसकी जानकारी से

मैं स्वयं को लाभान्वित मानता हूँ। प्राचीन विदिशा में आज भी अमूल्य सामग्री दिखाई देती हैं। और इसका सग्रह एवं प्रकाशन उपयुक्त है।

श्री राजमल जी की कीर्तिस्तंभ की योजना सराहनीय है। और स्वतंत्र भारत में आशा हैं यह योजना सत्वर ही कार्यरूप मे परिणित होगी। मैं राजमल जी की इस योजना को शीघ्र कार्यरूप मे देखने का उत्सुक हूँ।

—हरिहर त्रिवेदी

दि० २२--१२–१९५३

सहायक संचालक स० भा० पुरातत्व विभाग
एवं संग्रहाध्यक्ष इन्दौर (म० प्र०)

न्याय और सिद्धांत की रक्षा सदैव करो

श्री उपसंचालक महोदय प्रधान कार्यालय पुरातत्व एवं सग्रहालय विभाग गूजरी महल दुर्ग ग्वालियर म० प्र० शासन।

सुविधायें देने तथा बिल पेमेन्ट करने सम्बन्धी।

(१) उपरोक्त प्रकरण के संदभ में निवेदन है कि श्रीमान् के समक्ष पत्र क्र० ५३/२ दिनांक २३--५--५८ प्रेषित कर विनय की थी कि पत्र के अनुसार सुविधायें दिये जाने की अनुमति दी जावे तो वडी कृपा होगी।

(२) हमारे एक भी बिल के द्रव्य का भुगतान नही हुआ है।

(३) हमारे निगेटिव फोटो के बिल जो कि पुरातत्व विभाग की संरक्षित संपत्ति थी जिस मे मूर्तिया तोड़ी जा रही थी उन बिलों के द्रव्य का भुगतान नही हुआ, न वह वापिस ही लौटाये गये।

सवसे श्रेष्ठ मनुष्य वह है जो अपनी, अपने समाज; राष्ट्र, बिभाग; और संस्कृति की उन्नति के लिये सब से अधिक परिश्रम करता है।

मेरा जीवन भारतीय संस्कृति की निधियो के लिये संरक्षणार्थ अर्पित है। संभव है यदि सुविधायें उपलब्ध न हुई और प्रोत्साहन नही दिया गया तो त्यागपत्र दे दूं।

अतएव पूर्ण आशा है कि श्रीमान सुविधायें प्रदान करते हुए विलो के द्रव्य का भी भुगतान शीघ्र कराकर अनुग्रहीत करें।

विनीत—

राजमल मड़वैया मार्गदर्शक
जिला पुरातत्व संग्रहालय, विदिशा।

जा० नं० ९४७
२३-६

मूलतः वापिस कर लिख जाता है कि इस प्रकार के सिद्धान्त के वाक्य एवं आत्मश्लाघा के प्रवचन का उपयोग शासकीय पत्रों में न किया जावे। अन्यथा उन पत्रों पर कोई विचार नहीं किया जावेगा तथा सर्विस टिकिट के द्रव्य का आकार आपके वेतन से काटा जावेगा।

हस्ताक्षर अंग्रेजी

हस्ताक्षर अंग्रेजी
एच० व्ही त्रिवेदी २०-६-५८
उप संचालक पुरा० एवं संग्रहालय म. प्र. ग्वालियर

✻

कार्यालय मार्गदर्शक जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग म० प्र० शासन विदिशा

क्र० ३ दिनांक १ जनवरी १९५८

नोटिस

नोटिस अज तरफ राजमल पुत्र धर्मचन्द्र जी जैन मड़वैया निवासी विदिशा म० प्र० मार्गदर्शक जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग विदिशा।

बनाम

श्री हरिहर विट्ठल जी त्रिवेदी महोदय, उपसंचालक पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग मध्य प्रदेश शासन; सदर मंजिल भोपाल।

इस नोटिस द्वारा आपको सूचित किया जाता है कि मैंने आपको दिनांक १८ अप्रेल १९५८ को बमुकाम डाकबंगला विदिशा पर आपके मौखिक आश्वासन पर १९३ ताम्र मुद्रायें तथा १२ रजत मुद्रायें ऐसी १७५ प्राचीन अप्राप्त मुद्रायें एवं ४० खंडित पाषाण प्रतिमायें विदिशा जिला पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग को सम्पन्न बनाने हेतु दी हैं।

वह अपने अध्ययन हेतु तीन मास की अवधि के लिये वापिस करने का वायदा करके ले गये थे। जिन्हें इस समय तक आपने पत्र क्र० ८ / १-८-५७, ३६ / ८-५-५७, ६२ / २६-९-५७, ६८ / ७-१०-५७, १०३ / १५-११-५७, १३५ / ६-१२-५७, ६५ / २५-६-५८, १०६ / १०-९-५८, ११० व रजि० / २९-९-५८, ५३४ / ११-९-५८ तथा श्री नायबअली खाँ अन्डर सेक्रेट्री महो० शिक्षा विभाग भोपाल की सेवा में देने के उपरांत भी वापिस नही की और न मेरे किसी भी पत्र का अथवा नोटिस का जवाब देने का कष्ट किया। इससे स्पष्ट है कि उपरोक्त वस्तुयें हड़प जाने की आपकी नियत है।

अतएव आपको सूचित किया जाता है कि यह नोटिस मिलने के आठ दिन बाद तक यदि उपरोक्त वस्तुये वापिस न की अथवा उनकी वैधानिक रसीद न भेजी तो मजबूरन मुझे आपके अवैधानिक कार्यवाही के कारण कानूनी कार्यवाही करना अवश्यंभावी होगा व उसके बाबत होने

पाले समस्त खर्चे की भी जिम्मेदारी आप पर होगी। व मेरे हर्जे खर्चे के तथा नुकसान के भी आप जिम्मेदार होंगे। इति।

प्रतिलिपि सूचनार्थ एवं उचित कार्यवाही हेतु सेवा मे प्रस्तुत हैं।

विनीत—

राजमल जैन मड़वैया मार्गदर्शक

जिला पुरातत्व एवं सग्रहालय विभाग

म० प्र० शासन विदिशा

रजिस्टर्ड-पोस्टल रजिस्ट्री क्र० व दिनांक

६२९ दि० १२-१-५९ चीफ सेक्रेट्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल

६३० दि० १२-१-५९ श्री मुख्य मन्त्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल

६३१ दि० १२-१-५९ श्री डायरेक्टर पुरातत्व एवं शिक्षा विभाग म० प्र० शासन भोपाल

६३२ दि० १२-१-५९ श्री हरिहर विट्ठल त्रिवेदी उपसचालक पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग म० प्र० शासन भोपाल

७३२ दि० १६-२-५९ श्री एल० सी० गुप्ता शिक्षा सचिव म० प्र० शासन भोपाल

७३३ दि० १६—१५९ श्री एच० एस० कामथ मुख्य सचिव म० प्र० शासन भोपाल

७३४ दि० १६-२-५९ श्री पं० कैलाशनाथ जी काटजू मुख्य मंत्री महोदय म. प्र. शासन भोपाल

पुलिस रिपोर्ट

श्री स्टेशन आफीसर महोदय, पुलिस स्टेशन विदिशा।

जावक पत्र क्र० दि० १०-६-५९ रपट क्र० ६०३ दि० १०-६-५९ व वक्त ९ बजे रात दी गई। श्री महीलाल जी सवइन्स्पेक्टर पुलिस कोतवाली विदिशा।

सूचनार्थ प्रतिलिपि—

जावक क्र० १८ दिनांक १०-६-५९ श्री डी० आई० जी० पुलिस भोपाल

जावक क्र० २० दिनांक १९ ६-५९ श्री सुप्रि० सा० पुलिस विदिशा।

अमानत में खयानत पुलिस रिपोर्ट

पुलिस कोतवाली थाना शाहजहानाबाद भोपाल धारा ४०६ के अपराध में।
दि० ३०-७-५९

क्रमांक ६३ दि० १६-१०-५९ जांच कुनिन्दा।

श्री दीनदयाल हेड कानिस्टविल चौकी वड़ा वाजार विदिशा।

सिक्के प्राप्त करने का पोष्ट कार्ड—

९९ रामबाग इन्दौर सिटी दिनांक १२-९-५५

६८/२१ टी० टी० नगर भोपाल दि० ३१-१-५९।

हस्ताक्षर हरिहर त्रिवेदी साक्ष्य स्वरूप हैं।

क्रमांक ३०९४

डिपार्टमेंट आफ आर्कआलाजी
सेन्टर सर्किल भोपाल
दिनांक १०--९-५४

श्री राजमल जैन मड़वैया
विदिशा (म. प्र.)

महोदय,

आपके दो पत्र प्राप्त हुए। मध्य भारत सरकार भेलसा में संग्रहालय निर्माण का निश्चय कर चुकी है। इसलिऐ हमारे विभाग द्वारा भेलसा में दूसरा संग्रहालय करना उचित नहीं होगा।

यदि आप अपना संग्रह सांची के संग्रहालय में रखना चाहे तो हम उसका प्रवन्ध कर सकते है। और इसमें कोई आपत्ति नहीं दीखती क्यों कि प्राचीन कला में सांची का विदिशा (भेलसा) से घनिष्ठ संबंध रहा था।

हस्ताक्षर अंग्रेजी
८-९-५४

भवदीय—
कृष्णदेव सुपरन्टेन्डेन्ट
डिपार्टमेन्ट आफ आर्कआलाजी
सेन्टर सर्किल भोपाल

कलेक्टर कार्यालय डिस्ट्रिक्ट भेलसा

क्रमांक ९३५९

$\frac{२}{५४-।-२४}$
दिनांक २-८-५५

श्री राजमल मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक भेलसा

विदिशा नगरी में संग्रहालय निर्माण बाबत

वि० वि० उपरोक्त विषय में आपके पत्र तारीख ८-७-५५ के उत्तर में लिखा जाता है कि आर्कआलाजिकल विभाग सेन्ट्रल गवर्नमेंन्ट के अधीन हो जाने से यह प्रश्न यहां हल नहीं हो सकता है।

सेन्ट्रल गवर्नमेंट के पुरातत्व अधिकारी भोपाल से यहां आते हैं उनसे मिल कर आप कारवाई कर सकते हैं। इति।

फाटक २–८

हस्ताक्षर अंग्रेजी
कलेक्टर डिस्ट्रिक्ट भेलसा।

प्राय मिनिस्टर सेक्रेट्रीएट, इण्डिया।

पत्र सं० ८-२-६० हि०

न्यू दिल्ली दि० २ नवम्बर १९६०, ११ कार्तिक १८८२ शक

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनांक १८ अक्टूबर १९६० प्राप्त हुआ।

(२) प्रधानमंत्री जी के भोपाल दौरे का कार्यक्रम प्रदेशीय अधिकारियो के हाथ में है। विदित होता है कि आपने मुख्यमंत्री महोदय मध्य प्रदेश सरकार को पत्र लिखा है। आप अपनी उल्लिखित प्रार्थना के बारे मे उन्ही से सम्पर्क करें।

(३) जहां तक भोपाल में संग्रहालय स्थापित करने का आपके सुझाव का संबंध हैं। मामला मिनिस्ट्री आफ साइंटिफिक रिसर्च एन्ड कल्चरल आफेयर्स नई दिल्ली के ध्यान मे लाया जा रहा है।

भवदीय—
प्राणनाथ माही
प्रधान मन्त्री जी के निजी सचिव

श्री राजमल जैन मडवैया
पुरातत्व अन्वेषक विदिशा

संयोजक, विदिशा संग्रहालय समिति विदिशा।

शील मध्य प्रदेश शासन

मु० म० स १०७३–६०
मुख्यमंत्री जी के निज सचिव
मध्य-प्रदेश भोपाल
दिनांक १५-१२-६०

महोदय,

भोपाल नगर मे सग्रहालय स्थापित किये जाने के विषय मे मुख्यमंत्री जी को संबोधित आपका पत्र क्रमाक २३१ दिनांक १२ दिसम्बर १९६० प्राप्त हुआ। मुझे आपको सूचित करने का आदेश हुआ है कि आप संचालक पुरातत्व विभाग से मिलिये। वे इस सबध मे उचित कार्यवाही करेंगे।

भवदीय—
सराफ
१४–१२–६०
मुख्यमंत्री जी के निजी सचिव
(म० प्र०)

श्री राजमल जन मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक, मार्ग प्रदर्शक
व्यवस्थापक संग्रहालय समिति विदिशा

प्रतिलिपि क्रमांक पत्र ३४७४। २३४५—२० सी० सी० दिनांक २७ जौलाई १९६२ । अन्डर सेकेट्री (म० प्र०) शासन शिक्षा विभाग भोपाल संबोधित कलेक्टर जिला विदिशा ।

राजमल मड़वैया

उपरोक्त विषय में कृपया आप अपने अर्द्ध शासकीय पत्र क्रमांक २५३९-–जनरल दिनांक १–२-:६२ संबोधित श्री देवी सहाय डिप्टी सेकेट्री शिक्षा विभाग का अवलोकन करने का कष्ट करें इस सिलसिले में निवेदन हैं, कि आर्केआलाजिकल वस्तुओं, जो श्री मड़वैया के कथित आधिपत्य में हैं, की सूची उनसे प्राप्त की जा कर इस विभाग को भेजी जावे ताकि इस विभाग द्वारा उनका मूल्यांकन किया जा सके। सूची में प्रत्येक ऐसी वस्तु का प्रथक २ संबंधित विस्तृत विवरण, प्रकार, इतिहास तथा दिनांक आदि २ अंकित किया जाना आवश्यक हैं। ताकि उनके पूर्व इतिहास की खोज में और अधिक सहायता मिल सके।

हस्ताक्षर
अन्डर सेकेट्री म० प्र० शासन

कार्यालय कलेक्टर, जिला विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक २०९५६ । जन० ६२ विदिशा दिनांक १७-८-६२

प्रतिलिपि श्री राजमल मड़वैया विदिशा की और भेजी जाकर शासनादेशानुसार सूची शीघ्र मंगाई जावे। इति।

हस्ताक्षर अंग्रेजी
वास्ते कलेक्टर, जिला विदिशा (म. प्र.)

प्रत्युत्तर पत्र क्र० ५९० दिनांक १८ अगस्त १९६२ को कार्यालय कलेक्टर जिला विदिशा के आवक क्र० ६२९४ दिनांक २०-८-६२ रिसीव्ड कराया गया संलग्न १—

प्रार्थी का पत्रांक ५९१ दिनांक १८–८–६२ जो कि पुरातत्व विभाग (म. प्र.) शासन का क्षेत्र हैं विध्वंस किया जा रहा है क्या संरक्षा के आदेश दिये गये। देखिये कार्यालय कलेक्ट्रेट विदिशा आवक क्र० ६३४३ दिनांक २०-८-६२ आजतक जो शासन सुरक्षा के आदेश प्रसारित नही कर सकता हैं वह मड़वैया के पुरातत्वीय वस्तुओं को शासन में लेकर क्या करेगा ?

जिलाध्यक्ष जिला विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक २४१३५/जन० दिनांक २१ सितम्बर १९६२

श्री राजमल मड़वैया विदिशा

विषय—पुरातत्वीय संग्रह को शासन को सुपुर्द करना।

सन्दर्भ—आपका पत्र क्रमांक ५९० दिनांक १८-८-६२।

उक्त विषय में आपको सूचित किया जाता है कि शासन से कोई भी आपके पास सूची तैयारी करने को नहीं भेजा जा सकता है। यदि आप अपने पास की पुरातत्वीय वस्तुओं को

शासन को देना चाहते हैं तो आपका कर्तव्य हो जाता है कि आप स्वयं सूची तैयार कर प्रस्तुत करे। इति

शर्मा २६-९

हस्ताक्षर अंग्रेजी
जिलाध्यक्ष विदिशा

कार्यालय जिलाध्यक्ष (जिला विदिशा) म० प्र०

क्र० २२७३७ जन० ६२ दिनांक ११ सित० १९६२

श्री राजमल मड़वैया विदिशा

विषय :—पुरातत्वीय वस्तुएं, स्थल आदि के सरक्षण के लिये कमीशन नियुक्त होने के संबंध में।

प्रसग :—आपका पत्र क्रमांक ५९३ दिनाक १५–८–६२।

उत्तर में सूचित किया जाता है कि इस सवध मे आप डायरेक्टर महोदय से परस्पर पत्र व्यवहार करें। इति।

शर्मा ८—९

हस्ताक्षर अंग्रेजी
वास्ते जिलाध्यक्ष, जिला विदिशा (म. प्र.)

उत्तर पत्र क्र० ५९७ दिनाक १२-९-१९६२ अवलोकन करेंगे।

कार्यालय उप मंत्राणी शिक्षा विभाग मध्य प्रदेश

क्रमाक ५९२ भोपाल दिनांक २–७–६३

श्री राजमल मड़वैया
पुरातत्व अन्वेषक विदिशा। (म० प्र)

विषक :— मध्य प्रदेश की राजधानी मे पुरातत्वीय सामग्री का भोपाल नगर मे सग्रहालय निर्माण के लिए। उपरोक्त विषयक आपका प्रार्थना पत्र मा० उप मंत्राणी शिक्षा विभाग को सबोधित प्राप्त हुआ। आदेशानुसार आपसे निवेदन है कि आप इस विषय मे श्री सचिव, शिक्षा विभाग से आकर मिलें।

मिले-अवकाश नही उत्तर मिला दि० ७-९-६३
समय—२ बजकर १० मिनिट पर

द शं० शुक्ला
निजी सहायक

पोष्टकार्ड नं० १

मुख्य मंत्री सचिव मध्य प्रदेश भोपाल

क्र० २६७० आ. दिनाक ११-५-५९ प्रार्थी का पत्राक १२-१४-२-५९

पोष्टकार्ड न० २

क्र० ८७९४ आ. दिनांक २५-९-५९ प्रार्थी का पत्राक ५८ व दि० २६-८-५९

पोष्टकार्ड नं० ३

क्र० ९०३८ दि० २६-१०-६० प्रार्थी का पत्राक १५-१०-६० है।

महोदय,

आपका पत्र दिनांक (उपरोक्त) मुख्य मंत्री म० प्र० को प्राप्त हुआ उसे आवश्यक कार्यवाही के लिये शिक्षा सचिव (म० प्र०) भोपाल को भेज दिया गया है।

इस संबंध में आप कृपया उनसे पत्रव्यवहार करें।

रूपसिंह

मुख्य मंत्री के निज सचिव मध्य प्रदेश के लिये

संबंधित प्रकरण में रजिस्ट्री पोष्टल क्र० १८८ दिनांक २३-१०-६३ भेजी गई।

राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा में श्री राजपाल महोदय मध्य-प्रदेश शासन भोपाल से मिलने के लिये प्रार्थना की गई और दिनांक २८-११-६१ को मिलने की स्वीकृति प्राप्त हुई। भेट में प्रार्थना पत्र क्र० ४७२ दि० २८ नव० ६१ प्रस्तुत किया जिसका उत्तर क्र० ३७०८। रा. स. राज भवन भोपाल २९ नव० १९६१.

प्रति- राजमल जैन मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा

महोदय,

आपका पत्र संख्या ४७२ दि० २८ नव० १९६१ श्री राजपाल महोदय को भेजा हुआ प्राप्त हुआ। यह पत्र शिक्षा मंत्री महोदय के विचार के लिये भेज दिया गया है।

खं० वो० रांगोले

राज्यपाल सचिव (म० प्र०)

क्या यह देश का दुर्भाग्य नहीं है कि प्रार्थी ने एड़ी से चोटी तक के अधिकारी वर्गों का ध्यान आकर्षित किया किन्तु किसी भी शासक ने प्रार्थी की बात नहीं सुनी और न परीक्षा ही की और न भोपाल में संग्रहालय निर्माण के लिए और न संरक्षण के लिये ही ध्यान दिया। यही कारण है कि देश, राष्ट्र, प्रान्त आदि की पुरातत्वीय सामग्री का विध्वंस हो रहा है।

राजमल जैन मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा मध्य प्रदेश

क्रमांक ५४२ दिनांक १० मई १९६२

सेवा में श्रीमती चन्द्रकला सहाय जी महोदया,
उप शिक्षा मंत्राणी, म. प्र. शासन, भोपाल

द्वारा श्रीमान् सुप्रिन्टेन्डेन्ट महोदय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग भारत सरकार सेन्टर सर्किल भोपाल मध्य प्रदेश।

विषय—विनाशकार्य रोकने, संग्रह करने, तृतीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत पुरातत्वीय

Subject—Offer of archaeological material to the Department of Archaeology etc.

Sir,

I am directed to refer to your letter dated 7 2-59 addressed to Shri Humanyan Kabir on the subject mentioned above and to say that it is not clear what sort of authority you desire to be vested with for the presevation of art objects. The Government of India have already approached all the State Government in India to take action to preserve unprotected loose sculptures.

As regards the utillzation of the protected achaeologial places at Vidisha by the Chairman and members of she Municipal Committee, it is presumed that you are refering to the State Protected monuments, because there has not been any such encroachment of property in so far as centrally protected monuments are concerned. If, so, you may approech the State Government in the matter

The question of construction etc, of the Distt. Archaeological Museum is the concern of the State Government who may be approached in the matter.

The theft of antiquities from Budhi Chanderi is already under investigation by the Central Government

In regard to your offer to donate your archaeologieal and historical collection to the Department of Archaeology, I am to request you to let this Ministry know the terms and conditions on which you are prepared to do so.

Regarding the setting up of a museum at Bhopal, you may please approach the State Government in the first instance

Yours faithfully,
(D. L. SONDHI)
Under Secretary.

REM.—The Museum is in the formative stage and valuable material to form tthe museum has been collected together to be arranged when the building is got ready. Shri Rajmal Jain who is incharge of this Museum under the Director of Museums and Archaeology, Madhya Pradesh, is locally collecting some sculptures, coins and other antiquities. He is also trying to bring the collection together, enrich this museum and make it worthy of this ancient locality.

पत्र सं० ८–२–६० हि० | नई दिल्ली २ नवम्बर १९६०

प्रिय महोदय, | ११ कार्तिक १८८२ शक०

आपका पत्र दिनांक १८ अक्टूबर, १९६० प्राप्त हुआ। प्रधान मन्त्री जी के भोपाल दौरे का कार्यक्रम प्रदेशीय अधिकारियों के हाथ में हैं। विदित होता है कि आपने मुख्य मन्त्री महोदय, मध्य प्रदेश सरकार को पत्र लिखा है। आप अपनी उल्लिखित प्रार्थना के बारे में उन्हीं से सम्पर्क करे।

जहां तक भोपाल में संग्रहालय स्थापित करने का आपकेसुझाव का सम्बन्ध है; यह मामला मिनिस्ट्री आफ साइंटेफिक रिसर्च एण्ड कल्चरल अफेयर्ज; नई दिल्ली के ध्यान में लाया जा रहा हैं।

भवदीय—

—प्राणनाथ राही

प्रधान मन्त्री जी के निजसचिव

डिप्टी चीफ इंजीनियर

पी० डब्लू० डी० बी० एण्ड आर० ब्रांच म० प्र०

श्री राजमल मड़वैया जी विदिशा वाले (भेलसा) का निजी संग्रह पुरातन मुद्रा, मूर्ति व कीर्ति दर्शन करने का सौभाग्य दिनांक ३१–३-६२ को प्राप्त हुआ। शासकीय संग्रहालयों से कहीं अधिक विशेषतापूर्ण अनोखी चीजें व बातें देखने सुनने को मिली।

यह सम्पति देश की क्या वरन विश्व की है जिससे ज्ञान व गौरव प्राप्त कर मनुष्य मात्र अपनी समझ को बढावे और दूसरों के जीवन प्रयास को भी जाने और जीवन के शिप्रोदर की निरन्तर खटपट के सिवा भी चरम लक्ष्य क्या है उसे सुने और सुनकर उस ओर अग्रसर हो।

तो यद्यपि श्री मड़वैया जी कच्चे छोटे मकान में गन्दी नालियों से घिरे रहते हैं परन्तु उस अद्वितीय पंकज प्रेरणा से उसी तरह कीचड़ व जल से ऊपर विकसित हो रहे हैं; जैसे कमल खिलकर देखने वालों की ही न केवल नयनानन्द देता हैं। वरण अपने को भी भगवान् के चरण कमलों की ओर अर्पन करने को तैयार कर रहा हैं।

श्री शीतलनाथ पूजा

(कविवर पं० मनरङ्गलाल कृत)

स्थापना (गीता छन्द)

है नगर भद्दिल भूप द्रढ़रथ, सुष्टु नंदा ता त्रिया,
तजि अचुत दिवि अभिराम शीतलनाथ सुत ताके प्रिया।
इक्ष्वाकुवंशी अंक श्रीतरु, हेमवरण शरीर है,
धनु नवे उन्नत पूर्व लख इक, आयु सुभग परी रहे।

सोरठा

सो शीतल सुखकंद, तजि परिग्रह शिवलोक गे,
छूट गयो जगधंद, करियत तो आह्वान अब।

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र अत्रावतरावतर संवौषट् (इत्याह्वाननम्) अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्) अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (इति सन्निधीकरणं)

※

अष्टक

(गीता छन्द)

नित तृषा पीड़ा करत अधिकी, दाव अबके पाइयो,
शुभ कुम्भ कंचन जड़ित गंगा, नीर भरि ले आइयो।
तुम नाथ शीतल करो शीतल, मोहि भव की तापसों,
मै जजों युगपद जोरि करि मो; काज सरसी आपसों।

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युरोगविनाशनाय जलम्।

जाकी महक सों नीम आदिक, होत चन्दन जानिये,
सो सूक्ष्म घसि के मिला केशर, भरि कटोरा आनिये ॥तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनम्।

मैं जीव संसारी भयो अरु, मरयो ताको पार ना,
प्रभु पास अक्षत ल्याय धारे, अखय पदके कारना ॥तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् नि०।

इन महन मोरी सकति थोरी, रह्यो सब जग छाय के,
ता नाश कारन सुमन ल्यायो, महा शुद्ध चुनाय के ॥तुम०

ओ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामवाणविनाशनाय पुष्पम् ।

क्षुध रोग मेरे पिंड लागो, देत माँगे ना घरी,
ताके नसावन काज स्वामी, ले चरू आगे धरी ॥तुम०

ओं ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् ।

अज्ञान तिमिर महान अन्धा-कार करि राखो सबै,
निज पर सुभेद पिछान कारण, दीप ल्यायो हूं अबै ॥तुम०

ओ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपम् ।

जे अष्टकर्म महान अतिबल, घेरि मो चेरा कियो,
तिन केर नाश विचारिके ले, धूप प्रभु ढिग क्षेपियो ॥तुम०

ओं ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

शुभ मोक्ष मिलन अभिलाष मेरे, रहत कब की नाथ जू,
फल मिष्ट नाना भांति सुथरे, ल्याइयो निज हाथ जू ॥तुम०

ओ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

जल गन्ध अक्षत फूल चरु, दीपक सुधूप कही महा,
फल ल्याय सुन्दर अरघ कीन्हों, दोष सों वर्जित कहा ॥तुम०

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।

✳

पंचकल्याणक

(गाथा छन्द)

चैत वदी दिन आठें, गर्भावतार लेत भये स्वामी ।
सुर नर असुरन जानो, जजहूँ शीतल प्रभू नामी ॥

ओ ह्री चैत्रकृष्णाष्टम्या गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यंम् ।

माघवदी द्वादशि को, जन्मे भगवान सकल सुखकारी ।
मति श्रुत अवधि विराजे, पूजों जिनचरण हितकारी ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यंम् ।

द्वादशि माघ वदी में, परिग्रह तजि वन बसे जाई ।
पूजत तहां सुरासुर, हम पूजत यहां गुण गाई ॥

ओं ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

चौदशि पौष वदी में, जगगुरु केवल पाय भये ज्ञानी ।
सो मूरति मनमानी, मैं पूजों जिनचरण सुखखानी ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

आश्विनसुदि अष्टमि दिन, मुक्ति पधारे समेदगिरि सेती ।
पूजा करत तिहारी, नशत उपाधि जगत की जेती ॥

ओं ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यम् ।

卐

❀ जयमाला ❀

(त्रिभंगी छन्द)

जय शीतल जिनवर, परम धरमधर, छविके मंदिर शिव-भरता ।
जय पुत्र सुनन्दा के गुणवृन्दा, सुखके कंदा, दुख-हरता ॥
जय नासादृष्टी, हो परमेष्ठी, तुम पदनेष्ठी, अलख भये ।
जय तपो चरनमा, रहत चरनमा, सुआचरणमा, कलुष गये ॥

(सृग्विणी छन्द)

जय सुनन्दा के नन्दा तिहारी कथा, भाषि को पार पावे कहावे यथा ।
नाथ तेरे कभी होत भव-रोग ना, इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग ना ॥
अग्नि के कुण्ड में बल्लभा राम की, नाम तेरे बची सो सती काम की ।
नाथ तेरे कभी होत भवरोग ना, इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग ना ॥
द्रोपदी चीर बाढ़ो तिहारी सही, देव जानी सबों में सुलज्जा रही ॥नाथ०
कुष्ट राखो न श्रीपाल को जो महा, अब्धि तें काढ़लीनों सितावो तहां ॥नाथ०
अंजना काटि फांसी गिरो जो हतो, औ सहाई तहां तो बिना को हतो ॥नाथ०
शैल फूटो गिरो अञ्जनीपूत के, चोट ताके लगी ना तिहारे तके ॥नाथ०
कूदियो शीघ्रही नाम तो गायके, कृष्ण काली नथो कुण्ड में जायके ॥नाथ०
पांडवा जे घिरे थे लखागार में, राह दीन्ही तिन्हें ते महाग्धार में ॥नाथ०

सेठ को शूलिका पै धरो देख के, कीन्ह सिंहासनं आपतो लेखके ।.नाथ०
जो गिनाये इन्हें आदि देके सबै, पाद-परसादतें भे सुखारी सबै ।।नाथ०
वार मेरी प्रभू देर कीन्हीं कहा, कीजिये दृष्टि दाया की मोपे अहा ।.नाथ०
धन्य तू धन्य तू धन्य तू मै नहा, जो महा पञ्चमो ज्ञान नीके लहा ।।नाथ०
कोटि तीरथ है तेरे पदों के तले, रोज ध्यावें मुनी सो वतावें भले ।।नाथ०
जानि के यों भली भांति ध्याऊँ तुझे, भक्ति पाऊँ यही देव दीजे मुझे ।।नाथ०

गाथा

आपद सब दीजे भार झोंकि, यह पढ़त सुनत जयमाल ।
होत पुनीत करण अरु जिह्वा, वरते तिन आनंद जाल ।।
पहुँचे जहँ कबहूँ पहुंच नहीं, नहिं पाई पावे हाल ।
नहीं भयो सो होय सबेरे, सु भाषत 'मनरङ्गलाल' ।।

सोरठा

भो शीतल भगवान, तो पद—पक्षी जगत में ।
हैं जेते परवान, पक्ष रहे तिन पर बनी ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

卐

उपदेशी लावनी

[हस्तलिखित ग्रन्थ श्री धर्मचन्द्र जी मडवैया बानपुर वालों ने गुलगांव स्टेट भोपाल में सावन सुदी ३ संवत् १९६१ में लिखी थी, उससे प्राप्त ।]

जगमणि नरभव पाय सयाने, निज स्वरूप ध्याना चहिये ।
जब तक शिव ना तब तलक नित, जिन गुणको गाना चहिये ।।१।।
आर्य क्षेत्ररु श्रावक कुल लहि, वृथा न ढड़काना चहिये ।
जप तप संयम नियम विना नहिं, काल न जाना चहिये ।।२।।
भ्रमे दीर्घ संसार अंत नहिं पाया, पार चित्त लाना चहिये ।
पुरुषारथ को क्यों नहिं करते, क्या कायर बन जाना चहिये ।।३।।
बार बार फिर मिलै न अवसर, यह शिक्षा अब माना चहिये ।
जब तक शिव न तब तलक नित, जिनगुण गाना चहिये ।।४।।
आप करौ परिणाम शुद्ध, औरों के करवाना चहिये ।
सदा धर्म लवलीन रहौ तुम, धरम न विसराना चहिये ।।५।।

धर्म समान मित्र नहिं जग में, यह उर में लाना चहिये ।
अघ सम रिपु ना ताह निज, अंग न परसाना चहिये ।।६।।
परदुख देख हंसो मति मन में, दया भाव लाना चहिये ।
जब तक शिव न तब को तलक, जिनगुण गाना चहिये ।।७।।
साधर्मी लखि हर्ष करो तुम, उर मलिन भाव हनना चहिये ।
अंगहीन को देख कभी तुम, भूल कर न खिजाना चहिये ।।८।।
निज पर की पहिचान करौ तुम, कभी नहीं डरना चहिये ।
मूर्ख ज्ञान विन भ्रमैं निरंतर, अब निज पर को पहिचाना चहिये ।।९।।
दुखी दरिद्री को दुःख देय कर, कभी न कलपाना चहिये ।
जब तक शिव न तब तलक, जिन गुण गाना चहिये ।।१०।।
गुणी बृद्ध की विनय करो, नित, मान विटप ठाना चहिये ।
पर विभूति को देख कभी मन, कभी न ललचाना चहिये ।।११।।
मिथ्या वचन कहो मत छल से, सुकृत का खाना चहिये ।
भक्ष अभक्ष तजो चित, नित, शील में निज साना चहिये ।।१२।।
'नाथूराम' निज शक्ति प्रगट कर, बनना शिवराना चहिये ।
जब तक शिव ना तब तलक, बिन गुण को गाना चहिये ।।१३।।

❀ भजन ❀

नाथ ! तोरी पूजा को फल पायो, मेरे यों निश्चय अब आयो ।।टेक।।
मेंढक कमल पाँखड़ी मुख ले वीर जिनेश्वर धायो ।
श्रेणिक गज के पगतल मूवो, तुरत स्वर्गपद पायो ।। नाथ ।।
मैनासुन्दरि शुभ मन सेती, सिद्धचक्र गुण गायो ।
अपने पति को कोढ़ गमायो, गंधोदक फल पायो ।। नाथ ।।
अष्टापद में भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो ।
अष्ट द्रव्य से पूजों प्रभु जी, अवधिज्ञान दरशायो ।। नाथ ।।
अंजन से सब पापी तारे, मेरो मन हुलशायो ।
महिमा भारी नाथ तुमारो, मुक्तिपुरी सुख पायो ।। नाथ ।।
थकी थकी हारे सुर नरपति, आगम सीख जितायो ।
देवेंद्रकीर्ति गुरू ज्ञान मनोहर, पूजा ज्ञान बतायो ।। नाथ ।।

मड़वैया वंश की पुण्य स्मृतियां

श्री दिगम्बर जैन धर्मानुरागी परमार वश क्षत्रिय कुल भूषण शुभचन्द्राचार्य पथानुगामी परवार जात्युत्पन्न भारूमूर भारिल्ल गोत्री मडवैया वंश कुल दीपक श्री खुमान तेर्जसिह के पूर्वज विक्रम सवत १६९६ मे कई भागो मे कालदोष के कारण बानपुर से बट गये। जिनका प्रभुत्व आज भी जबलपुर, ललितपुर, नरवर, चन्देरी, गुना, जखौरा, विदिशा, भोपाल आदि में पाया जाता है।

दो शाखा के मडवैया वंश ललितपुर में खुमान तेर्जसिह के आज भी मौजूद हैं। जिन्होने अपने द्रव्य को धर्मप्रभावना में व्यय किया है। यह है उनकी दानपरम्परा। जो आज सिंघई और श्रीमन्त के पदों से प्रख्यात हैं।

एक मड़वैया वंश नरवर से प्रारम्भ होकर चन्देरी और गुना में है। एक वंश टीकमगढ और सुजानपुरा मे है। एक वंश बानपुर मे और उसी वंश के विदिशा मे हैं तथा भोपाल मे हैं।

खुमान, तेर्जसिह जी ने अपने जीवनकाल में करकमलों द्वारा उपार्जित कमलनयनी लक्ष्मी का सदुपयोग करने हेतु ललितपुर में मोहल्ला सरदारपुरा मे बड़े मन्दिर जी में एक बेदी का निर्माण कराकर और वेदीप्रतिष्ठा कराकर सं० १६९६ मे श्री जी विराजमान किये। मेरु पर लेख स० १६९६ वर्षे भादों वदी ७ शनीवासरे भट्टारक पदमकोर्ति तत् शिष्य उपाध्यते मिदं शुभं भवतु समस्तसुखं।

✳

ललितपुर नगर में मोहल्ला कटरा में भूमि खरीद कर विक्रम स० १८५५ के लगभग नये मन्दिर का शिलान्यास (नींव भरवाई) किया और विक्रम सं० १८६१ में वेदी-प्रतिष्ठा, श्री १००८ भगवान पार्श्वनाथ की बिम्बप्रतिष्ठा एवं पचकल्याणक महोत्सव नगरवासी एवं गजरथ मे आने वाले समाज को आहार दान देकर महोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया गया।

✳

ललितपुर नगर मे १८९४ मे पुन: श्री जिनेन्द्र बिम्ब पचकल्याणक महोत्सव एवं गजरथ मडवैया वश के कुल दीपक श्री रामचन्द्र-लल्लन के द्वारा सम्पन्न हुआ।

✳

ललितपुर नगर मे सं० १९५५ मे तीन गजरथ एक साथ मड़वैया वश की ही प्रेरणा से चलाये गये थे। जिनके नाम श्री नोने साव बुद्धूलाल परवार गोत्र बाझल वीवी कुट्टम मूर उपनाम सिंघई दौलतराम मगनलाल, श्री मथुरादास जी पन्नालाल जी परवार उपनाम टडैया छोडा मूर कासल गोत्र।

श्री व्रजलाल जी वहोरन नायक कोछल्ल गोत्र बहुरिया मूर ने एक साथ गजरथ चलाकर ललिता नगरी की शोभा मे चार चाँद लगा दिये।

मड़वैया वंश कुलदीपक उदारचरित्र श्री सेठ पंचमलाल जी को कुछ लोगों ने बढ़ते हुये वैभवपूर्ण गौरव से ईर्षावश कलंकित करने के लिये एक षड़यन्त्र रच डाला।

इस समय इनकी आयु ५३ वर्ष की हो चुकी थी। इनकी पत्नी का स्वर्गवास हो चुका था और इन्हें विवाह करने के लिये वाध्य किया गया। तथा १४ वर्षीय एक कन्या जिनका नाम नौनी बाई था इनके पिता मूलचन्द जी गरीब थे उन्हें ४००० रुपया दिला कर इन नौनी बाई के साथ विवाह करा दिया। छः माह बाद अषाढ़ सुदी १४ सं० १९७६ को स्वर्गवास हो गया। श्री पंचमलाल जी ने अपने वंशज मौजीलाल जी के सुपुत्र बच्चूलाल जी को दत्तक पुत्र बना लिया। वह इनके कार्यभार को सुचारु रूप से चला रहे थे कि अचानक ही एक श्वान जोकि काम से पीड़ित था उसे भगाने के लिये पैर को आगे बढ़ाया ही था कि पैर मे एक ऐसा रोग उपस्थित हो गया जिससे वह स्वर्गवासी हो गये।

अब नौनी बऊ को इस घर की मालकिन देखकर अनेक प्रकार से विभिन्न लोगों द्वारा भड़काया और उकसाया जाकर कलंकित और बर्बाद करना चाहा किन्तु जिसका भविष्य उज्जवल होता है उसे सद्‌विचार वाले भी मिल ही जाते हैं। अतएव अब भाग्य ने पलटा खाया और वह शुभ दिन जिनेन्द्र भगवान के पंचकल्याणक महोत्सव का समय आ गया। वह संवत है १९७९। माघ सुदी ५ को रथयात्रा की फेरी थी।

श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी घर के मुखिया थे। इन्होंने अपनी मातेश्वरी नौनी बऊ के नाम, यश और कीर्ति को सार्थक बनाने के लिये ६२००० रुपया की गजरथ महोत्सव के लिये दान की घोषणा कर दी। बस क्या था, नगर में इसकी चर्चा सूर्य किरण के प्रकाश के समान दैदीप्यमान हो गई। अब देर ही क्या थी ! अपनी शेष आयु अल्प जानकर गजरथ चलाने के भाव प्रकट कर दिये। श्रीमान चुन्नीलाल जी ने नये मन्दिर मे एक बरंडा में वेदी बनवाई। कुछ समय बाद स्वर्गवासी हुये। इनके पुत्र बच्चूलाल जी सराफ डाडिम मूर बाझल्ल गोत्र ललितपुर निवासी व श्री खेतसिंह जी हरदास जी घी वाले गोलालारे जैन पंचरतन गोत्री ने गजरथ महोत्सव में एक एक रथ इन दोनों महाशयों ने भी चलाने की घोषणा कर दी और संवत १९७९ माघ सुदी ५ सोमवार के दिन गजरथ बड़ी धूम धाम से चलाये गये। इसमें ३ वेदियां बाहर से आये हुये विमानों के लिये बववाई गई थी जिन विमानों की संख्या लगभग १७५ के होगी। इन विमानों की विदाई में ८००० रु० और सामान अलहदा से लगा था।

जैन समाज के देश देशांतर के १७५००० दर्शक अन्य समाज सहित थे।

९ हाथी थे, तथा बैल और घोड़ों की संख्या का कोई लेखा नहीं।

इस महोत्सव को सम्पन्न करने में जिलाधीश अंग्रेज व डिप्टी कलेक्टर पेगम्बर बक्स थे जिनने अपनी कार्यकुशलता और राज्य व्यवस्था में एक अनोखा आदर्श उपस्थित किया था।

समाज के श्रीमान सेठ पन्नालाल जी सुखलाल जी टड़ैया चतुर और बुद्धिमान पुरुष थे। इन्होंने पूरा पूरा सहयोग दिया।

ललिता नगरी की जनता जनार्दन जमीदार काश्तकार तथा अन्य सभी समाज के लोगों ने भेदभाव रहित होकर जैन धर्म प्रभावना के इन कार्यों में पूरा पूरा सहयोग प्रदान किया। यह थी एकता, जिस काल मे ऐसी धर्मप्रभावना हो सकी।

सामाजिक प्रीतिभोज की एक रूपरेखा-मडवैया वंश के कुलदीपक श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी से विद्वेष की भावना रखने वालो द्वारा नीचा दिखाने और बर्बाद करने व बात बिगाड़ने के लिये पुन. षडयन्त्र रचा गया।

इनके द्वारा ३ लाख जनता का भोज देने के लिये अल्प समय में कहा गया किन्तु श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी ने श्री जिनेन्द्रदेव पर विश्वास रखकर के स्वीकृति दे दी। मिष्ठान्नादि भी तैयार करने के लिये जिम्मेदार कमेटियां बनाई, मुखिया लोगो को काम सुपुर्द किया गया, किन्तु ठीक समय पर कुछ गडबड़ी मचा दी। इस समस्या को समाज के सम्मुख रखा गया। विरोधियों को लज्जित होना पड़ा, किन्तु द्वेषबुद्धि धारको ने पीछा नहीं छोड़ा। समाज के भोज निमन्त्रण मे इनकी ओर से जो निमन्त्रण देना था वह दूसरो के नाम का उल्लेख कर दिया गया ताकि श्रीमंत सेठ बच्चूलाल जी की कीर्ति पर कालिमा लग जावे। इन्हे कुछ मित्रों से ज्ञात हुआ कि इन्होने अपनी व्यवस्था का कार्यभार चतुर प्रबन्धको के हाथ मे दे दिया जिससे विरोधियों को नीचा देखना पड़ा।

इस धार्मिक कार्यक्षेत्र में श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी मडवैया का १००००० रुपया खर्च उस समय हुआ था जबकि अनाज के भाव निम्नांकित थे:—

गेहूँ १६ सेर, चना २० सेर, उड़द २॥) मन, ज्वार २) मन, बाजरा मक्का १॥) मन; कुदई ८) रु० मानी, कुटकी ८) मानी, फिकार ५) मानी, समा ५) मानी, महुआ १।) मन, चावल ५) मन, तेल १५) मन, गुड़ १०) मन, घी १।) सेर, शक्कर १०) मन, दूध ५) मन, सोना २०) तोला, चादी ॥) तोला, तांबा ३०) मन, पीतल ३०) मन आदि, के भाव यह थे।

लोगो मे भ्रातृत्व था, एक दूसरे का सम्मान करते थे। मजदूरों को।) प्रति दिन, मजदूरनी को ≈) कारीगरो को १) प्रति दिन मिलता था। एक कमाता था समस्त परिवार सुख और शांति के साथ अपनी जीवनयात्रा चलाते थे। आज वर्तमान सं० २०२६ मे वस्तुओ के भाव निम्न प्रकार हैं:—

गेहूँ ४०) मन, चना ४६) मन, उडद ४२) मन, ज्वार ३२) मन, कुदई ५०) मन, कुटकी २४) मन, फिकार २१) मन, समा २०) मन, महुआ २२) मन, चावल ८०) मन, तेल २२०) मन, गुड ५०) मन, घी १३॥) किलो, शकर २)४० किलो, दूध २) किलो मे भी पानी, सोना २१४) तोला, चांदी ५॥) तोला, तांबा १५) किलो, पीतल ८) किलो, कांसा ३२) किलो।

आज वर्तमान शिक्षा का माध्यम विपरीत हो जाने, आहार विहार बिगड़ जाने से मानसिक वृत्तिया बिगड जाने के कारण स्वार्थलिप्सा बढ़ी। विकारता चरम सीमा पर चढ चुकी हैं। जनता ऐसी संकटकालीन स्थितियो से घबड़ा गई हैं। इसका मूल कारण आपस की फूट राज्यो का समाप्त होना निरकुशता का आना। जनता और प्रत्येक परिवार में फूट का होना अनेकानेक राज्यो का विलीनीकरण होने से इतर देशों के परिवारों ने राज्यसत्ता हथिया कर अपना घर बनाया और गरीब भोली भाली जनता को विभिन्न प्रकार के कानूनो और टेक्सो से इस प्रकार

जकड़ दिया है जिससे गरीब जनता एक शब्द भी उच्चारण नहीं कर सकती हैं, क्योंकि आपने देखा होगा कि भगवान शंकर के समस्त शरीर पर सर्पों के आभूषण हैं व अनन्त कहलाते हैं। अनन्त के अनेक अर्थ हैं। काल अनन्त है और यही कालचक्र अनन्तकाल से घूमता आ रहा है। ऐसी संकटकालीन स्थितियों की ओर दृष्टिपात करने के पश्चात यह निर्णय मान्य होना असम्भव नहो कि जिस काल विक्रम सम्बत् १९६९ में जो महान् कार्य हमारे मड़वैया वंश के कुलदीपक श्रीमन्त सेठ बच्चूलाल जी मड़वैया ने ललितपुर की जैन समाज के समक्ष आदर्शपूर्ण ऐसा महान कार्य किया जो न अब तक विक्रम संवत १९६९ के पश्चात् हुआ और न हो ही सकता है। क्योंकि—

खेत में उपजे सब कोई खाय, घर में आये घर बह जाय।

वह है आपसी फूट। इसी फूट ने हमारे देश का सर्वनाश किया है। मड़वैया वंश के उज्जवल रत्न ने क्षेत्रपाल जी में भी एक वेदीप्रतिष्ठा कराकर श्रीजी विराजमान किये हैं और आज भी निरन्तर दानशीलता इस मड़वैया वंश की प्रसिद्ध है। मड़वैया वंश का एक मन्दिर बानपुर में, एक पपौरा जी मे और एक चैत्यालय तथा पुरातत्व संग्रहालय विदिशा में विद्यमान है।

(मड़वैया वंश-वृक्ष पीछे के पृष्ठ पर देखिये)

लेखक का वन्शवृक्ष

सरस वंश रचना रची, बुधजन पढ़ि न हसन्त।
अल्पमति अनुसार यह, लिख्यो वंश विरतंत॥
पुरुषारथ लख लीजिये, सुधी सुधारियो भूल।
मन में द्वेष न राखिये, होय सबहि अनुकूल॥
बानपुर
विदिशा
चन्देरी
गुना
सुजान पुरा
टीकमगढ
वंश वृक्ष

इस ग्रंथ के लेखक
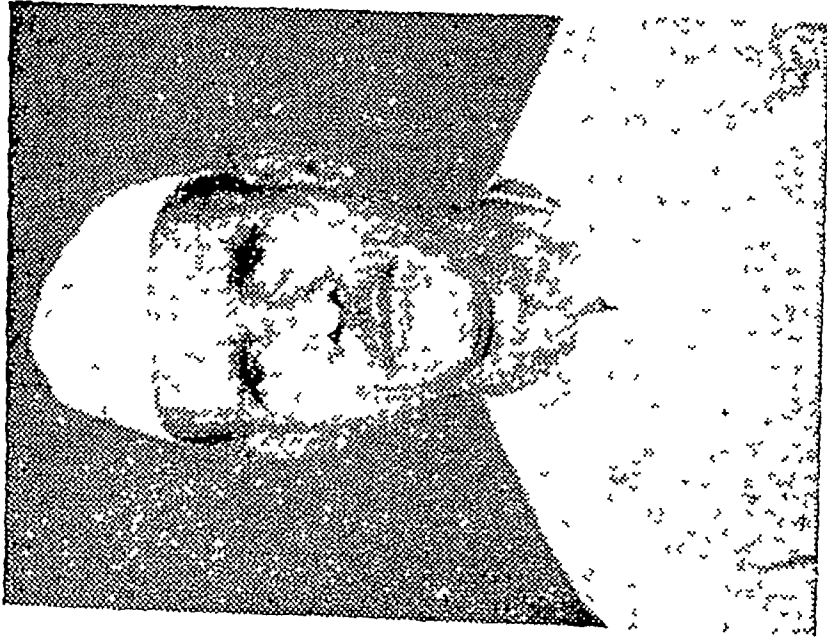
श्री राजमल जी मड़वैया

पुरातत्व-अन्वेषक

[जन्म: आश्विन कृ० १४ सं० १९६८]

लेखक की सहधर्मिणी

श्रीमती काशीबाई मड़वैया

ग्रंथलेखन में सजीव प्रेरणा

[जन्म: पौष, वि० सं० १९७३]

लेखक के पूज्य पिता जी

श्री धर्मचन्द जी मड़वैया
जन्म सं० १९३० [स्व० सं० श्रावण शु० ६
वि० सवत् २०१५]

लेखक के पूज्य काका जी

श्री भगवानदास जी मड़वैया
जन्म स० १९३९ [स्व० फाल्गुन शु० २
वि० सं० २०१४]

लेखक के सुपुत्र
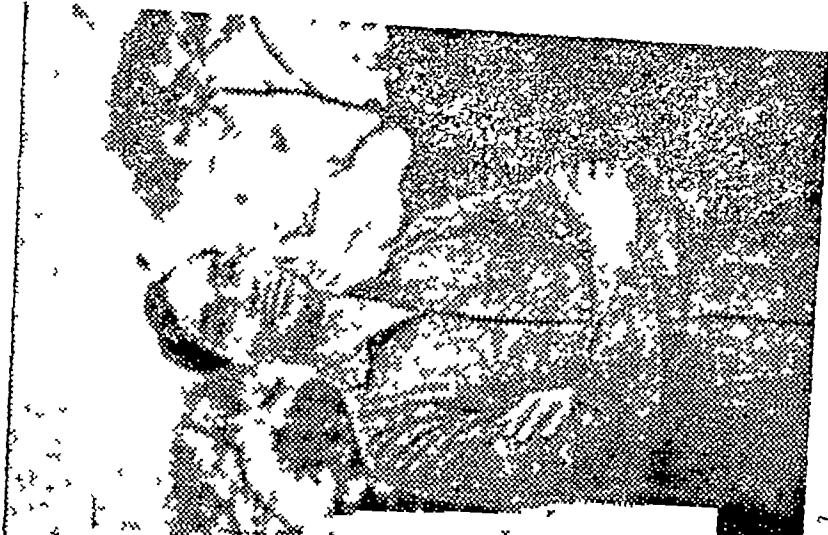
चि० जीवन प्रकाश मड़वैया
बी० कॉम, एल-एल० बी०

लेखक की पुत्रवधू तथा पुत्री

सौ० पद्मश्री (पुत्रवधू)
सौ० पूर्णिमा देवी (पुत्री)

लेखक की लघु पुत्री

सौ० प्रेमबाई जैन
(सिरोंज)
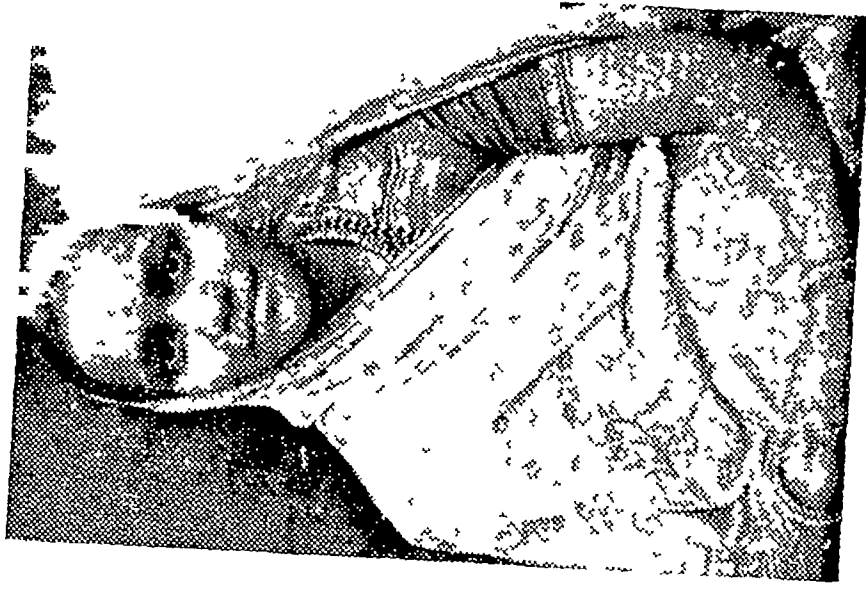
श्री सुधर्माचार्य गणधर प्रतिमा–प्रशस्ति

श्री जम्बूस्वामी गणधर प्रतिमा–प्रशस्ति

भ० महावीर के मुख्य २ गणधर

सम्राट् अशोक और सहधर्मिणी जैन श्रेष्ठिपुत्री असंधिमित्रा। वर (बंजारा), वधू (बंजूरा)

विवाहोपलक्ष में दहेज के रूप में गुलगांव (पुष्पहार) सिरचंपाग्राम- (बेंदा) एवं ऐरन- ग्राम (कर्णाभूषण) के रूप में जैन श्रेष्ठि द्वारा प्रदत्त किये गये। तोरण के उपलक्ष में सांची के तोरण द्वार में भगवान नेमिनाथ के समवशरण की रचना उत्कीर्ण है, जिसे बुद्ध-जीवनी कहते हैं। यह सम्राट् अशोक द्वारा स्मृति के रूप में निर्माण कराई गई।

ग्राम रावण में स्थित

काल भैरव
ग्राम - रावण
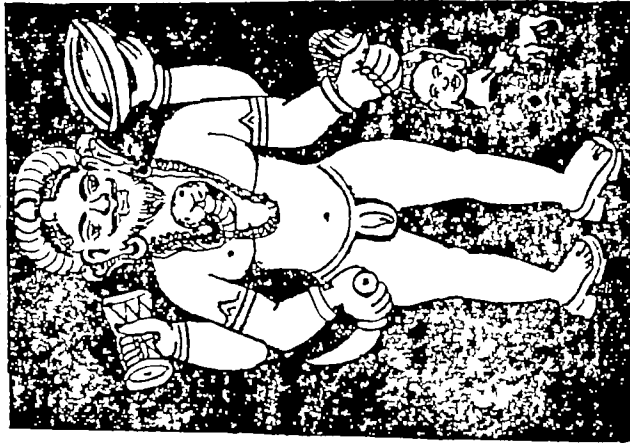
मडवैया
कला
विदिशा

काल-भैरव (नग्न रागी)
[पृष्ठ १२१, २८६, २८९]

卐

श्री अतिशयक्षेत्र देवगढ़ संग्रहालय में स्थित
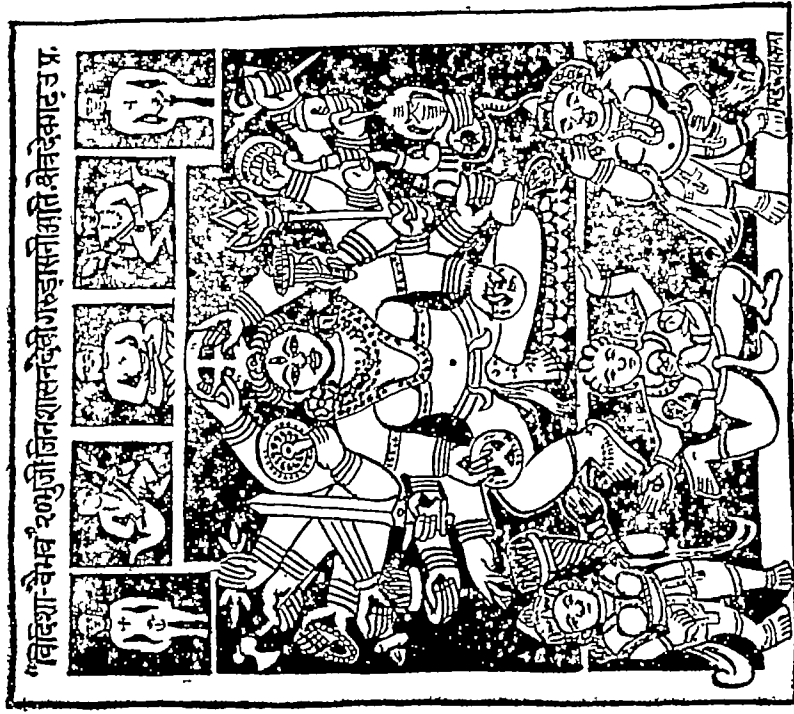
२० भुजी जिनशासनदेवी
(पृष्ठ २९६)

❀ ग्यारसपुर की अद्भुत कला-कृतियां ❀

कमठ उपसर्ग
१००८ भगवान १०वें तीर्थंकर शीतलनाथ जी की तपोभूमि मालादेवी दिगम्बर जैन मंदिर
ग्यारसपुर
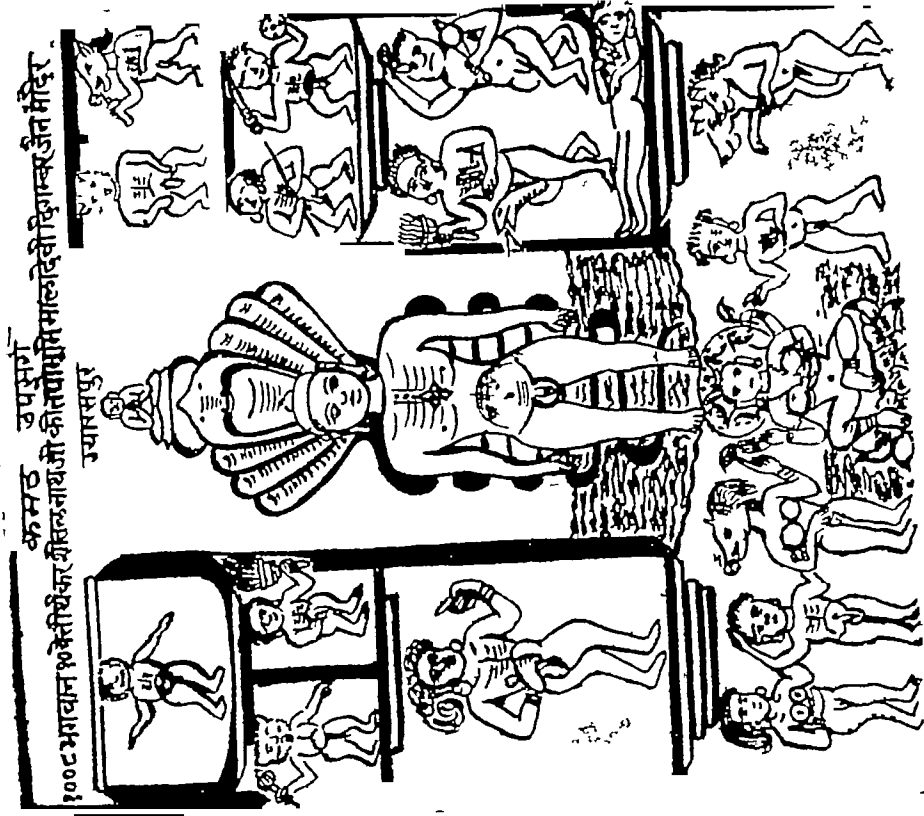
कमठ-उपसर्ग
(पृष्ठ २८६)
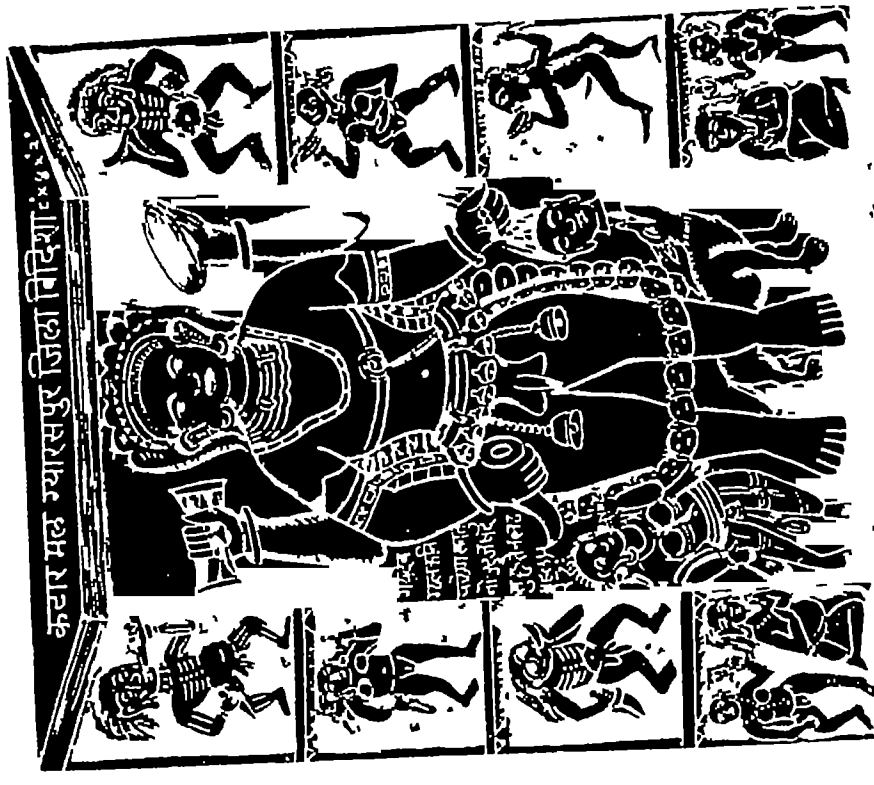
कटारमल-काल भैरव
(पृष्ठ १२१-२८६)

"विदिशा वैभव" जैन शासनकाल १४वीं शता में जैनाचार्यों की सांकेतिक संयमी जीवन [परिवार नियोजन] का साकार कलामय कथानक।

सहतीर न. १ — झाँई पौर किला अंदर विदिशा।

सहतीर नं. २

सहतीर नं. ३

सहतीर न. ४

झांई पौर के ४ शहतीर

(पृष्ठ १०९)

रावण

(पृष्ठ २८९)

❁ आदि ब्रह्मा ❁

"विदिशा वैभव"
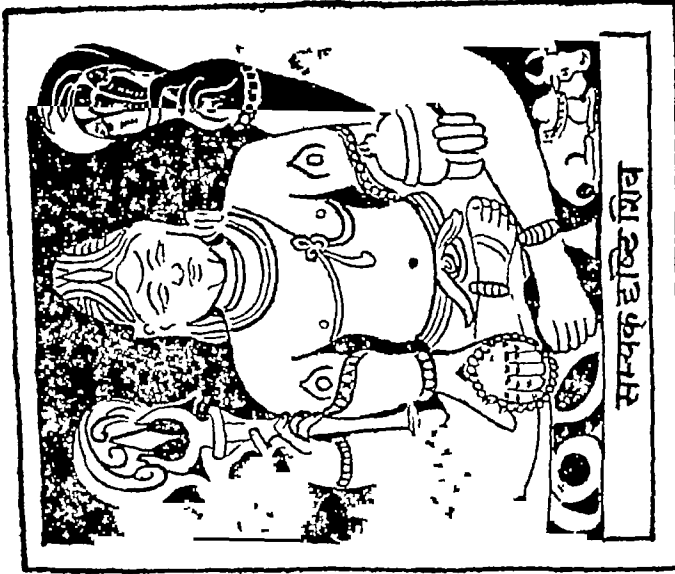
सम्यक दृष्टि शिव

मड़वैया कुटीर पुरातत्व संग्रहालय विदिशा म.प्र.

नागासन: काल आसन। वृष: धर्मारूढ़। पात्र: ज्ञानामृत। काम: सर्प। त्रिशूल: दर्शन, ज्ञान, चारित्र, ब्रह्मसूत्र = संयम की गांठ।

सम्यग्दृष्टि शिव

(पृष्ठ २१, ३१, ३६)

❁ गरुड़ ❁

विष्णु का वाहन गरुड़
"ज्ञान"

यौवनं धनसंपत्ति प्रभुत्वमविवेकता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥

काम नाग विषधाम नाशको गरुड कहे हो।
ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण।
इह परमामृत जन्म जरा मृत, रोग निवारण॥

मड़वैया कला

श्री गरुड़ जी [illegible] विदिशा
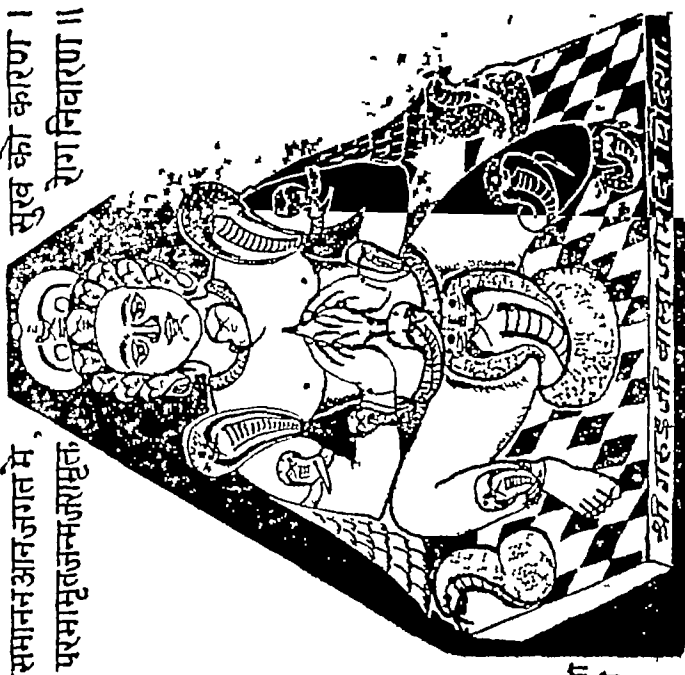
विष-रत्न

(पृष्ठ ४६)

❁ महिष-मर्दिनी ❁

द्वादश-भुजी
महिष मर्दिनी
उदय गिरी-विदिशा
गुफा न ६.
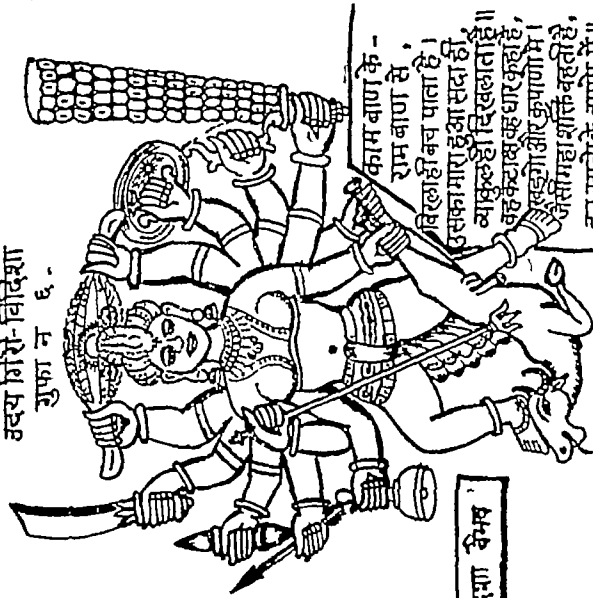
विदिशा वैभव

काम बाण के -
राम बाण से ,
विरला ही बच पाता है ।
उसका मारा हुआ सदा ही ,
व्याकुल ही दिखलाता है ॥
वह कटाक्ष वह धार कहाँ है ,
खड्गो और कृपाणो में ।
जैसी महा शक्ति बहती है ,
इन नयनो के बाणो में ॥
मडवैया कला विदिशा

उदयगिरि गुफा न० ६
(पृष्ठ १६८)

❁ शिव-परिवार ❁
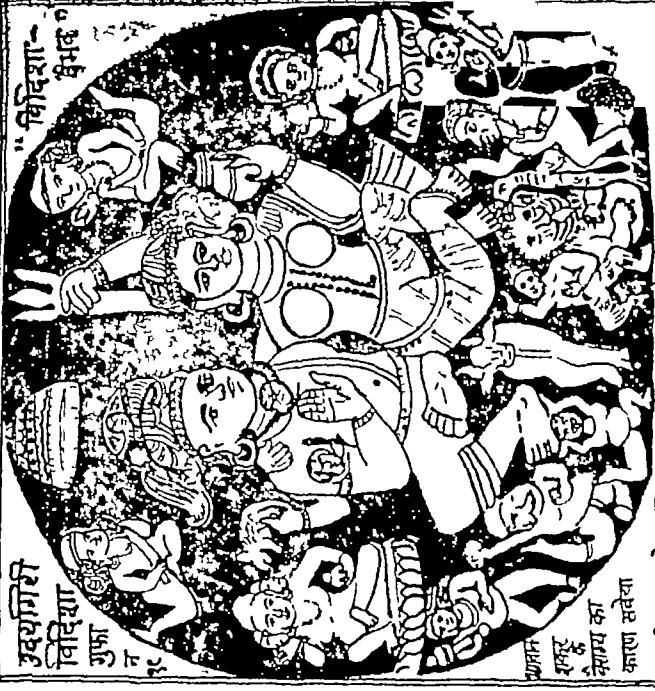
उदयगिरी
विदिशा
गुफा
न
१९

"विदिशा-
वैभव"

शंकर
के
वैराग्य का
कारण सवैया

आपको वाहन बैल बली, बनिता हू को वाहन सिंहहि पेखके ।
मूषक है सुत वाहन एक को, दूजो मयूर को पच्छ विशेखके ॥
भूषण है कवि चैन फणीन्द्र के, बैर परे सबते सब लेख के ।
तीनहू लोक के ईश गिरीश, सु जोगी भये घर की गति देखके ॥

मडवैया कला

उदयगिरि गुफा नं० १९
(पृष्ठ ५८, ११७)

उदयगिरि गुफा नं० ७ से १२

पृष्ठ ५२
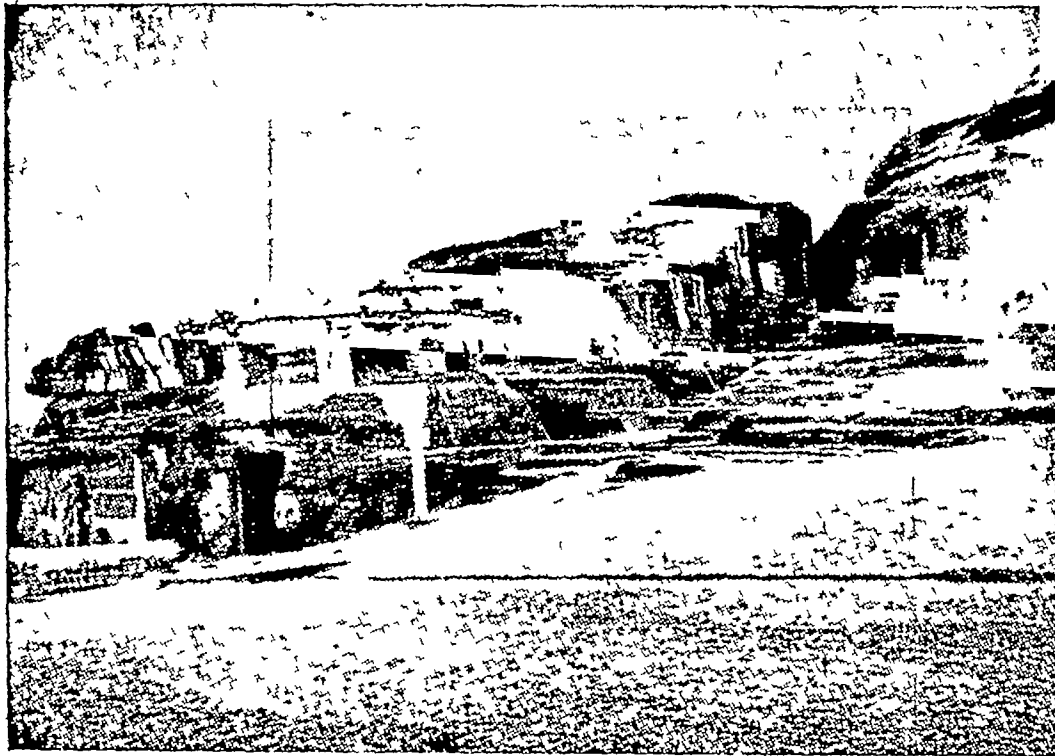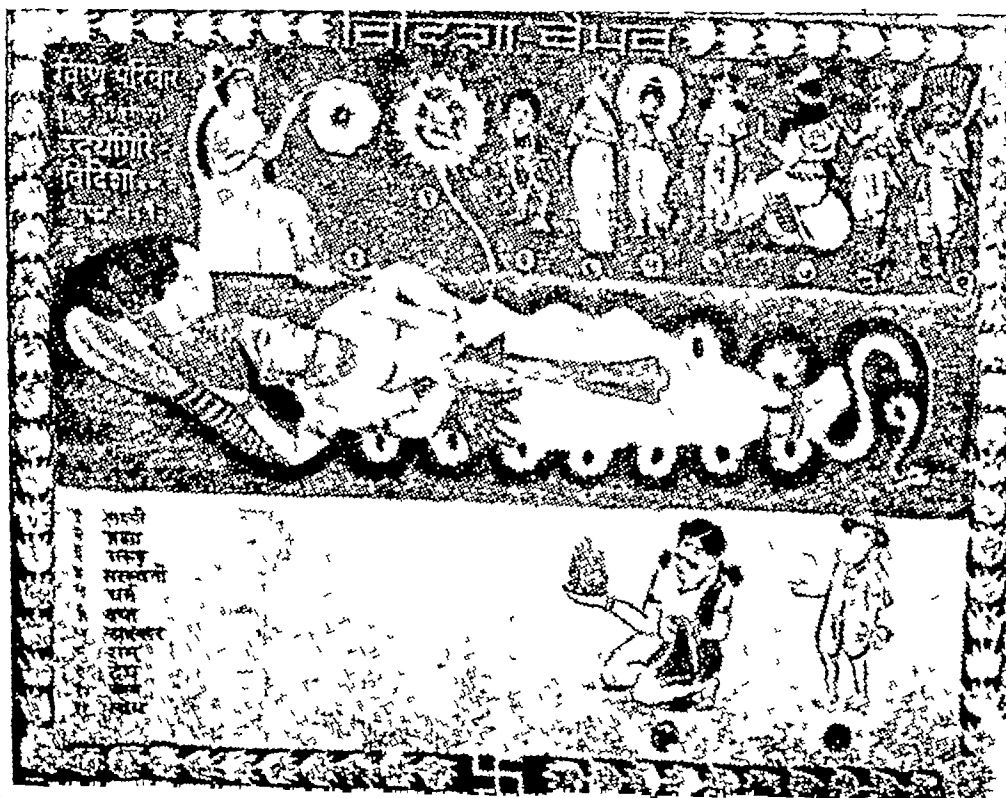
उदयगिरि गुफा नं० १३

पृष्ठ ७९

तथा २९९

शेषशायी विष्णु-परिवार

उदयगिरि गुफा नं० ५
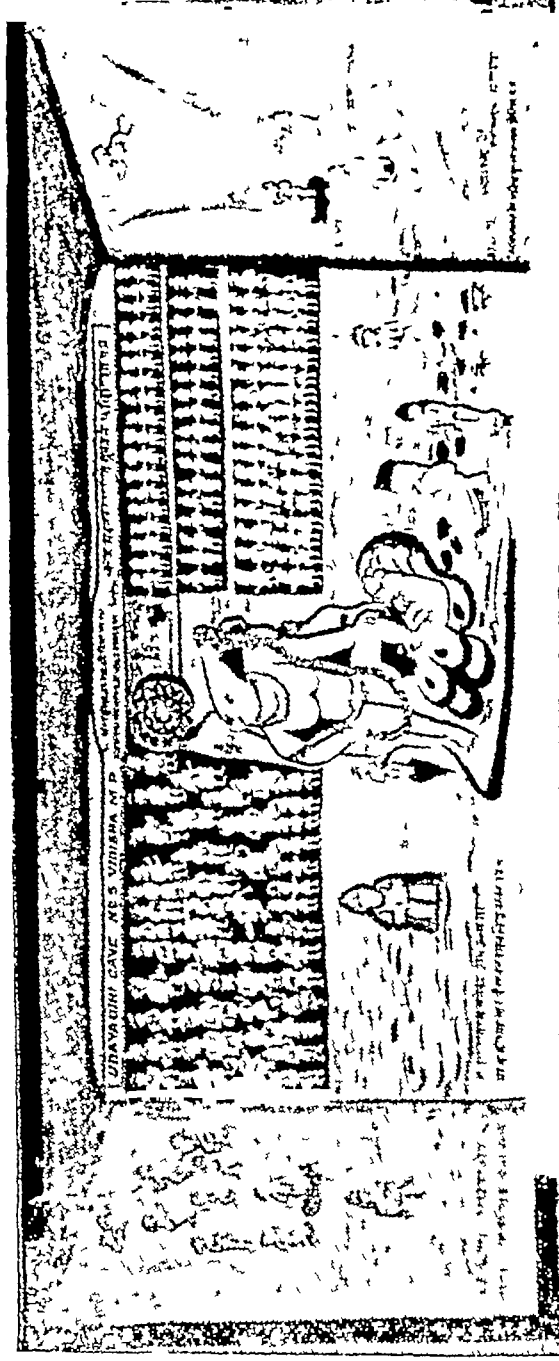
बाराह-अवतार

(पृष्ठ ५३, ६५, ६६)

❀ ग्यारसपुर की अद्‌भुत कला-कृतियां ❀

भगवान शीतलनाथ की तपोभूमि
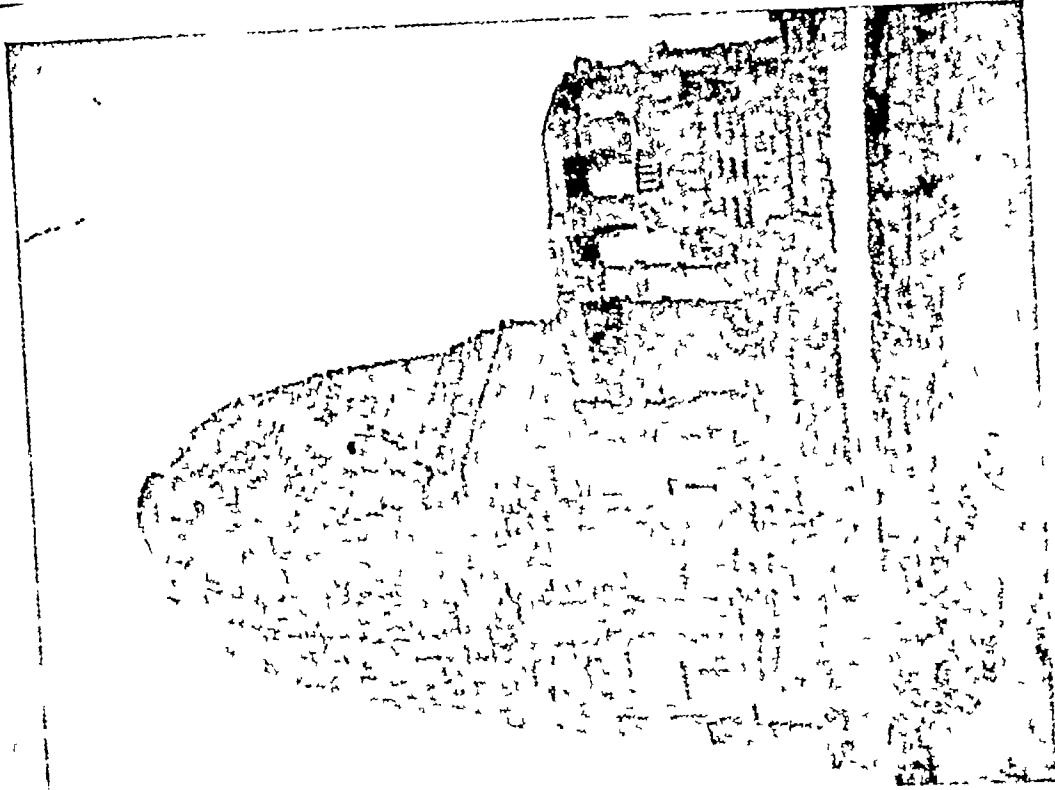
बाजरा मठ--जैन मन्दिर
(पृष्ठ २८३-२८६)
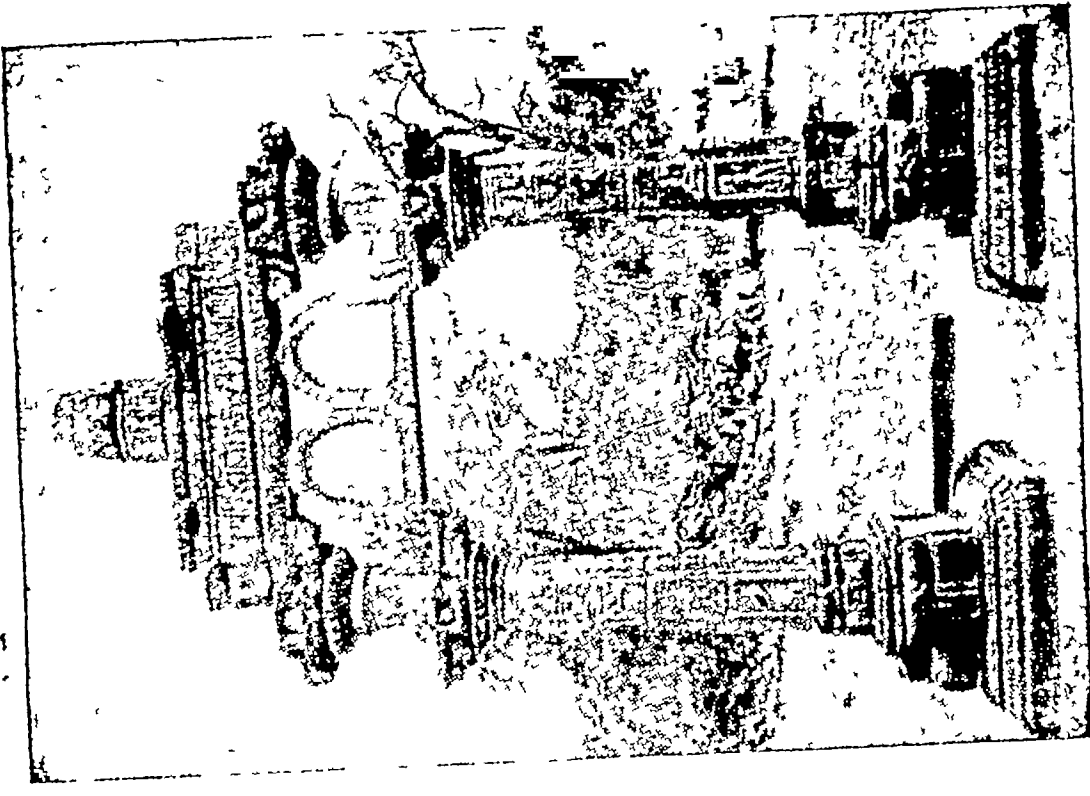
झूला--शीतलनाथ भगवान
(१०वें जैन तीर्थंकर) का जन्मोत्सव
(पृष्ठ २८१)

卐

[महाराजा कर्ण की दानमुद्रा]

कुबेर—यक्ष

(पृष्ठ २४० तथा २५५)

दशभुजी दुर्गा

[देखिये पृष्ठ १५०—अष्टभुजी दुर्गा]

卐

योगिनी चामुण्डा-भैरवी

(शौच धर्म, पृष्ठ १३४, १३६, १४८)

❀ श्री अतिशय क्षेत्र देवगढ़ की जैन कला-कृतियां ❀

भरतेश वैभव

(देखिये पृष्ठ २९६)

भूतकालीन-चौबीसी

भूतकाल-चौबीसी अतिशयक्षेत्र देवगढ़ ललितपुर उ.प्र.

पट नं. १			पट नं. २		
निर्वाण	सागर	महासाधु	शिवगण	उत्साह	ज्ञानेश्वर
विमलप्रभ	श्रीधर	सुदत्त	परमेश्वर	विमलेश्वर	यशोधर
अमलप्रभ	उद्धर	अग्नि	कृष्ण	ज्ञानमति	शुद्धमति
सन्मति	सिन्धु	कुसुमांजलि	श्रीभद्र	अति	आन्त

(दानवीर साहू शांतिप्रसाद जी जैन द्वारा निर्मित जैन पुरातत्व संग्रहालय देवगढ में स्थित २ चित्रपट)

[पृष्ठ २९६]

सम्राट सिकन्दर

सम्राट सिकन्दर ने पश्चिमदिशा से जब भारत पर आक्रमण किया तब यह कल्याण मुनि जिनकी दिशाये ही अम्बर है अर्थात् दिगम्बर अवस्था में अपनी शान्तिप्रिय निस्पृहता निःस्वार्थ और वीरता से तपोवल द्वारा जैन धर्म का प्रचार कर रहे थे। यह था प्राचीन जैन मुनियों का आदर्श।

कल्याण मुनि से सम्राट सिकन्दर की भेंट

भारत पर आक्रमण करते समय सिकन्दर ने दिगम्बर जैन साधुओं के उच्चादर्श, चारित्र और कठोर तपस्या के विषय में बहुत प्रशंसा सुनी थी। इससे उसके हृदय में जैन साधुओं के दर्शन करने की प्रवल उत्कंठा हो गई थी।

ईस्वी सन् पूर्व ३२३ में सिकन्दर अटक के निकट सिन्धु नदी को पार कर तक्षशिला मे आकर ठहरा। उस समय उसे ज्ञात हुआ कि यहाँ पर अनेक नग्न जैन साधु एकान्त स्थान मे तपस्या कर रहे है।

सिकन्दर ने अपना एक चतुर गुप्तचर जिसका नाम अंशक्रतस था जैन साधु को आदर के साथ पास लाने का आदेश देकर भेजा। अंशक्रतस ने जैन मुनि के निकट जाकर सम्राट के वीरत्व की प्रशंसा करते हुये कहा— मुनिराज सम्राट ने आपको आमन्त्रित किया है। आपको वह बहुत सा पारितोषिक भी देना चाहते है, निमन्त्रण स्वीकार कीजिये।

मुनिराज ने पारितोषिक यह कहकर ठुकरा दिया कि हमारे पास उसके सरक्षण का साधन नही, और हमे ऐसा पारितोषक नही चाहिये जो लूटकर लाया गया हो, कहकर ठुकरा दिया। अन्त में अस्वीकार करने की दशा में उस चतुर ने शिर काटने का भी भय दिखाया। यह बात श्रमण साधु सघ के आचार्य दौलामस जो कि सूखी घास पर लेटे हुये वार्तालाप सुन रहे थे। उनने उदासीनवृत्ति से उत्तर दिया।

(१) सबसे श्रेष्ठ राजा जो ईश्वर कहलाने का अधिकार रखता है वह कभी वलात् नही करता। वह ईश्वर नही लुटेरा है। और प्राणघातक--हिंसक है।

(२) उत्तम शासक प्रजा को हानि नही पहुंचाता, प्रजापालक होता है। उसने आत्म-विजय नही की। और दूसरों के दुखों का अनुभव नहां किया।

(३) वह प्रकाश--अन्धकार--जीवन--जल--मानवीय शरीर तथा आत्मा का बनाने वाला भी नही है। वह तो राक्षसी वृत्ति का एक हिंसक व्यक्ति है।

(४) सिकन्दर देवता नही है, उसकी एक दिन मृत्यु अवश्य होगी।

यह चार बाते कही और कहा कि जो पारितोपिक देना चाहता है वह सभी पदार्थ मेरे लिए निरर्थक है। इसलिये कि मैं घास पर सोता हूँ। चिन्तित वस्तु पास नही रखता जिससे मेरी त्याग तपस्या मे वाधा पड़े। स्वर्ण धन धान्य जो कि घातक और दुखदायी हैं, मिट्टी के समान हैं। यह वसुन्धरा इस प्रकार से पालन करती है जिस प्रकार से माता अपने वच्चे का। यदि सिकन्दर मेरा सिर काट लेगा तो मेरी आत्मा को नष्ट नही कर सकता। सिकन्दर का भय दिखाना, धमकी देना और यह अभिमान करना मेरे लिये मिथ्या और शक्तिहीन है।

जर--जोरू--जमीन—यह तो झगड़े की मूल है। ऐसी वस्तु नहीं चाहिये जिस से मृत्यु का भय उत्पन्न हो जावे।

मृत्योर्विभेषि किं मूढः भीत मृत्युर्न मुचति।

इसलिये हेनर जाओ और सिकन्दर से कहदो कि दौलामस को तुम्हारी किसी भी वस्तु की आवश्यकता नही, अत. वह (दौलामस) तुम्हारे पास नही आवेगा। यदि सिकन्दर कोई वस्तु मुझसे चाहता है तो वह हमारे समान वन जावे।

सिकन्दर के दूत अन्शकृतस ने आचार्य दौलामस की सव वाते ध्यानपूर्वक सुनी, फिर उसने सम्राट सिकन्दर के पास जाकर दुभाषिये के द्वारा आचार्य दौलामस की कही हुई सव बातें कह सुनाईं। बस, इसी वात पर सिकन्दर को आचार्य दौलामस का निर्भीक और नि.स्वार्थ उत्तर अमृत तुल्य लगा और वह दर्शन करने की प्रवल इच्छा कर वहाँ पर गया और विचारने लगा कि मैंने अनेक देशो पर विजय पाई, किन्तु इस वृद्ध नग्न साधु द्वारा परास्त हो रहा हू।

सिकन्दर ने आचार्य दौलामस की मुक्तकठ से प्रशसा की और मुनि को अपनी इच्छानुसार कार्य करने से नही रोका। किन्तु आचार्य दौलामस की भेट सिकन्दर से नही हुई।

सिकन्दर ने जैनाचार्य एव मुनियो के उच्चविचार व कठोर तपस्या पर प्रभावित होकर यूनान देश मे जैन धर्म के प्रचार के लिये ले जाना हितकारी समझ कालानस जिनका नाम कल्याण नामक मुनि था (यह दौलामस आचार्य के शिष्य थे) से विनय पूर्वक सिकन्दर आकर मिला।

सिकन्दर की प्रार्थना धर्मप्रचार के लिये सुनकर यूनान जाना स्वीकार कर लिया, परन्तु कल्याण मुनि का यूनान जाना आचार्य दोलामस को उत्तम न लगा। जव तक्षशिला से सिकन्दर अपनी सेना के साथ यूनान को लौटा तव कल्याण मुनि ने भी साथ में विहार किया। कौन कौन श्रावक मुनिके साथ गये उल्लेख नही मिला। —वीर वर्प ७ पृ० १७७ से

सिकन्दर की मृत्यु

यूनान को जाते हुये मार्ग मे बार्वालन नामक स्थान पर जून ३२६ ई० पूर्व दिन के तीसरे पहर ३२ वर्ष ८ मास की आयु मे महान विजेता सम्राट सिकन्दर मृत्यु की गोद मे सदैव को सो गया। उसकी इस आयु की भविष्य वाणी कल्याण मुनि ने पहिले ही करदी थी। अन्तिम समय सिकन्दर ने कल्याण मुनि के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की और कल्याण मुनि ने उसे दर्शन देकर धर्मोपदेश दिया।

सिकन्दर ने अपनी मृत्यु के पूर्व संसार को शिक्षा देने के लिये यह फरमान निकाला था कि मेरे मरने के समय अर्थी से बाहर मेरे दोनों हाथ खाली रखे जावें और मेरे जनाजे के साथ अनेक देशों की लूटी हुई समस्त सामग्री मर्घट तक ले जाई जावे, जिससे प्रजा अनुभव कर सके कि:—

दारा रहा न सिकन्दर सा बादशाह, इस तख्ते जमीन पै सैकड़ों आये चले गये ।

और यह संसार को दिखा दिया जावे कि अन्त में साथ सिवाय पुण्य और पाप के कुछ नही जाता । आत्मा अलग है, पुद्गल परमाणु अलग है ।

सिकन्दर के फरमान के अनुसार वैसा ही किया गया, जिसकी कहावत आज भी चल रही है।

सिकन्दर की अर्थी को चार राजवैद्यों ने इसलिये पहिले कन्धों पर रखा कि महान वैद्य भी मौत की चिकित्सा नही कर सकते । इसलिये सिकन्दर की शव--यात्रा की कहावत आज भी प्रसिद्ध है कि:—

सिकन्दर शहन्शाह जाता, सभी हाली वहाली थे ।
सभी थी संग में दौलत, मगर दो हाथ खाली थे ॥

यह थी कल्याण मुनि की धर्मप्रचार पद्धति और आदर्श त्याग का नमूना । सिकन्दर ने अनेक देशों को जीता । संसार की समस्त सामग्री सुखों को एकत्रित की परन्तु अंत में साथ कुछ भी न लेजा सका । परलोक जाते समय दोनो हाथ खाली रहे अपने जीवन में भलाई से उपार्जित किया गया द्रव्य, पुण्य और पाप ही उसके साथ गया ।

वर्तमान भारतीय शासकों से अनुरोध है कि सिकन्दर जब कुछ भी साथ नही लेगया तो क्या तुम अपने साथ लेजाने की कामना करते हो? क्या यह ध्यान में रखने योग्य बात नही है?

सिकन्दर की मृत्यु के बाद कल्याण मुनि ने आयु के अन्त में शान्तिमयी समाधि के साथ स्वर्ग प्राप्त किया । उनका शव बड़े सम्मान के साथ चिता पर रख कर जलाया गया । एथेन्स नगर में कल्याण मुनि के चरणचिन्ह मुख्य स्थान पर आज भी विद्यमान है । यह है जीवन के आदर्श का प्रतीक जो मरने के बाद सैकड़ो वर्ष बीत जाने पर आज भी जीवित है ।

मर गये जग में मनुज, जो मर गये अपने लिये ।
पर वे अमर जग में हुये, जो मर गये जग के लिये ॥

अन्शक्रतस कहते हैं कि मै पुनः स्वयं इन ऋषियो के साथ बात चीत करने के लिये भेजा गया था । क्योकि सिकन्दर ने सुन रखा था कि ये जैन साधु नग्न ही विहार करते रहते है, सर्दी, गर्मी, वर्षात की कठिनाइयो को शान्ति से ही सहते है विकारभाव नही होता, हितमित उपदेश कल्याणकारी ही देते हैं, बहुत बड़ी श्रद्धा के पात्र है और निमन्त्रित किये जाने पर दूसरों के पास नही जाते ।

(प्लुटार्च ए० एल० पी० ७१ देखिये)

अन्शक्रतस सिकन्दर द्वारा इनके पास भेजा गया था और उसका कथन है कि उसने तक्षाशिला शहर के वीस स्टेडिस की दूरी पर १५ मुनियो को विभिन्न मुद्राओं मे बैठे ध्यान करते ही देखा है। यह आसनो से नही हिले और शाम के समय शहर मे आ जाते थे। सूर्य की गर्मी आदि सहन करना अत्यन्त मुश्किल कार्य था, जो शान्तिपूर्वक सहते थे ।

कालानस ने उससे कहा-- यदि वह उसके किसी भी सिद्धान्त को सुनना चाहता है तो स्वय को उसके अनुकूल वनावे।

दिगम्बर शब्द की ग्रीक भाषा मे मेगस्थानीज के द्वारा उपयुक्त शब्द (जिम्नोसोफिस्ट) का अर्थ दिगम्वर जैन मुनियो से है। जो कि दिगम्बर जैनियो के (निगन्ठ) निर्ग्रन्थ के लिये लागू है।

आचार्य भद्रवाहु और मौर्यवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त

भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् श्री नन्दी, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, और भद्रवाहु यह पाँच द्वादशाग श्रुतज्ञान वेत्ता श्रुतकेवली हुये । कोटिपुर (बगाल) के निवासी थे। वाल्यकाल से ही गोवर्धनाचार्य के निकट रहकर शिक्षा प्राप्त की थी ।

श्री आचार्य भद्रवाहु के समय भारत के बहुभाग पर मौर्यवंशी सम्राट चन्द्रगुप्त का शासन था । जो कि पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ था। अग वग, मगध, काशी, कौशल, पाँचाल, मालवा, गुजरात, काठियावाड आदि पर चन्द्रगुप्त का राज्य था ।

सिकन्दर के सेनापति सेल्यूकस को युद्ध मे पराजय दी और उसकी पुत्री हेलना से चन्द्रगुप्त ने शादी की, जिसका सिर मडवैया सग्रहालय विदिशा मे मौजूद है। मूर्ति के सिर पर केशों मे कलाकार ने जो आभूषण निर्माण किये हैं वे बडे सुन्दर और मन-मोहक हैं । पश्चात् चन्द्रगुप्त ने अफगानिस्तान यानी कावुल कन्धारादि को भी अपने राज्य मे सम्मिलित कर लिया था ।

सम्राट चन्द्रगुप्त, आचार्य भद्रवाहु के परम पटु शिष्य थे। उन्होने इस विदिशा मे उदयगिरी पर ही अणुव्रत धारण कर जिनमार्ग स्वीकार किया जिसके प्रमाणस्वरूप उदयगिरी के शिलालेख स्मृतिरूप विद्यमान है।

सूरत से कीरति बड़ी, बिना पंख उड़जाय ।
सूरत तो जाती रहे, कीरति कभी न जाय ॥

आज उनका वैभव और कीर्ति, सूर्य के समान चमक रही है। जिस समय आचार्य भद्रवाहु जी से पचाणुव्रत धारण किये थे उसका मार्ग प्रदर्शन आचार्य श्री ने शेषशायी विष्णु की नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति, शेषनाग पर शयन और वाहन गरुड विरोधी को एक सूत्र में किस प्रकार बांधा। पुन्न कामदेव, स्त्री सरस्वती और लक्ष्मी के द्वारा सबोधन किया है । अर्थात् :—एक घर मे दो मते ।

हरि भक्ता होवे पती, भूत पूजनी जोय ।
घर में होवें दो मते, कुशल कहां से होय ॥

इनके द्वारा समुद्रमंथन जिसमें मूलभूत स्त्री के शरीर को समुद्र किस प्रकार बताकर विषयों से परागङ्‌ख किया है। उसका चित्रण गुफा नं० १९ के अमृत गुफा में बताया है कि देव कौन है, वह है हमारी पुण्य प्रकृति और दानव हमारी पाप प्रकृति। इन दोनों के द्वारा जो समुद्र-रूप स्त्री का मंथन हुआ और उसमें जो कन्यारूप रत्न प्राप्त हुआ उसमें ही १४ रत्न है जो समुद्र के मथने पर प्राप्त हुये है। पश्चात् यह बताया है कि संसार का संचालन किस प्रकार से होता है। और मानव अपने सुखो के लिये तीन वस्तुये दाँतों से पकड़ता है वह है तीनों चीजें झगड़े की मूल:—ज़र, जोरू, जमीन; जिस पर सारे संसार के झगड़े है। यह गुफा नं० ५ मे बताया गया है विरक्तता धारण कराई। इसी गुफा नं० ५ में राजा बलि के द्वारा ७०० सौ ऋषियों पर जो विपत्ति आई थी उसका निवारण भगवान् विशु या विशुकुमार मुनि ने रक्षा किस प्रकार की उसके लिये विक्रिया ऋद्धि द्वारा बलि को पराजित कर नरमेध यज्ञ विध्वंस किया इस प्रकार रक्षा की, जिस कारण रक्षावंधन पर्व प्रचलित हुआ इसमे किस प्रकार से क्या भाग छुपा है संबोधित किया है, वह भी इस पुस्तिका में बताया गया है।

गुफा नं० १ यह सूर्य गुफा है क्योंकि आचार्य भद्रवाहु स्वामी ने अपनी सूर्य के समान दैदी प्यमान विद्या, बुद्धि, पराक्रम एवं तपोबल द्वारा वरद्वाणी का विकास वाणी रूप गंगा से पवित्र करते हुये विवेक रूप अश्वारोही होकर, ज्ञान की चादर विछाकर पाषाण हृदयी चन्द्रगुप्त को अज्ञानान्ध भार से निकालकर निर्मल दर्शन, ज्ञान, चारित्र धारण कराया और गुफा नं० २० में भगवान् पार्श्वनाथ जिनश्रेष्ठ की विस्तृत सर्पफणों से युक्त प्रतिमा पर्वत की दीवाल में निर्माण कराकर प्रतिष्ठा कराई जो सबसे ऊंची गुफा है। जिस प्रकार मानव के शरीर का ऊर्ध्वभाग मस्तक जहाँ ब्रह्म (आत्मा) का निवास है। ठीक उसी प्रकार से तीनों लोकों में श्रेष्ठ सिद्धों का स्थान है। जिसमें समस्त संसार की विजय लक्ष्मी सुख एवं समृद्धिशाली चैतन्य स्वरूप सुख तथा शान्ति मिलती है। अपने कर्मों के क्षयार्थ पुण्य संपादन किया था। अणुव्रत धारण उसी उपलक्ष में कर जिनधर्म स्वीकार कर अपनी कीर्ति को दिगंत व्यापनी बनाया था। जिसे देखकर संसार के प्राणियो ने उत्कृष्ट अहिंसा धर्म हृदयगत किया था। यह थी आचार्य श्री की परम तपस्या, आदर्श और धर्म प्रभावना।

विदिशा से गमन के पश्चात आचार्य भद्रवाहु और सम्राट चन्द्रगुप्त राजधानी उज्जैन में पहुचे। जाते समय देर न हुई थी कि आचार्य श्री एक श्रावक के गृह पर आहार के निमित्त गये हुये थे कि एक दुध मु हा वालक पलने में पड़ा कहता है जाओ जाओ! और पूछा कहाँ जावे तो उत्तर मिला दक्षिण। तत्क्षण आचार्य ने उपवास रख कर सब को एकत्रित कर अवधिज्ञान द्वारा या निमित्त ज्ञान द्वारा यह प्रकट किया कि यहाँ पर १२ वर्ष का अकाल पड़ने वाला है यह हेतु चन्द्रगुप्त को सूचित करने जाने लगे। उस समय चन्द्रगुप्त को सूचित कर जाने लगे तब उस समय चन्द्रगुप्त भी साथ गये। मैसूर राज्य में जो कि श्रवणवेलगोला की पहाडी प्रसिद्ध है वहाँ पर जहाँ भगवान् बाहुवलि की ५२ गज ऊची आश्चर्य जनक विश्व की विभूति मूर्ति है उसके ऊपर की ओर चन्द्रगिरी पहाड़ी पर समाधिमरण पूर्वक स्वर्ग प्राप्त किया। उसी समय से इस पहाड़ी का नाम चन्द्रगिरी प्रसिद्ध हुआ। इस इतिहास के सूचक अनेक शिलालेख उस पहाड़ी पर विद्यमान हैं। इतिहासवेत्ताओ ने इसकी पुष्टि की है।

मेगस्थानीज के लिखित प्रमाण भी इसी वात की पुष्टि करते हुये मिलते है। सम्राट चन्द्रगुप्त ब्राह्मणो के प्रचारित वा ममार्गी सिद्धान्तो को न मान कर श्रमणो (जैन मुनियो) की भक्तिपूर्ण शिक्षाओ को मानता था।

डा० लक्ष्मीनारायण साहू एम० एम० एल० एल० डी० अध्यक्ष उडीसा साहित्य आकादी भुवनेश्वर उडीसा मे जैन धर्म पुस्तक के पृष्ठ २३ पर लिखते है :—

जैन धर्म की प्राचीनता के वारे मे ऐसा भी कहा जाता है कि दक्षिण भारत मे श्रुतकेवली भद्रबाहु अपने पट्टशिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य को और उनके जैन साधुओ को साथ लेकर सबसे पहले ई० पूर्व २९८ मे पहुचे थे।

सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ मि० विशेन्ट ए० स्मिथ 'भारत का प्राचीन इतिहास' तृतियावृत्ति पृष्ठ १४६ मे लिखते है कि जैन कथाओ मे उल्लेख है कि :—

"चन्द्रगुप्त मौर्य जैन था। जव भारत वर्ष का दुष्काल पडा तव चन्द्रगुप्त अन्तिम श्रुतकेवली आचार्य भद्रवाहु के साथ दक्षिण की ओर चला गया" आदि। —मि० ई० थामस

"महाराज चन्द्रगुप्त जैन धर्म के नेता थे। चन्द्रगुप्त के जैन होने मे शकोपशका करना व्यर्थ है। क्योकि इस वात का साक्ष्य कई प्राचीन प्रमाण पत्रो मे मिलता है। वे प्रमाणपत्र शिलालेख निस्सशय अत्यत प्राचीन है" आदि।

चरण—पादुका

"जिनशासनायानवरत—भद्रवाहु--चन्द्रगुप्त--मुनिपतिचरणमुद्राङ्कित विशालशी" १६२।

यानी, इस शिलालेख मे लिखा है कि चन्द्रगिरि पहाड़ी पर मुनिपति, भद्रवाहु और चन्द्रगुप्त के चरणचिन्ह अकित किये गये है।

" मउड घरेसु चरिमो, जिणदिक्ख धरदि चन्द्रगुप्ताय "—१४८। यतिवृषभाचार्य कृत तिलौयपण्णत्ति,

यानी—मुकुटधरो के अन्तिम जैन राजा सम्राट चन्द्रगुप्त ने जैन मुनि की दीक्षा धारण की थी। ईसा की ७ वी शताब्दी मे आचार्य हरिषेण रचित कथाकोष मे निम्नलिखित उल्लेख है :—

भद्रबाहुवचः श्रुत्वा चन्द्रगुप्तो नरेश्वरः। अस्यैव यौगिनः पार्श्वे दर्धो जैनेश्वरं तपः ॥३८॥

चन्द्रगुप्तमुनिः शीघ्रं प्रथमो दश पूर्विणाम्। सर्वसंघाधिपो जातो विशाखाचार्यसंज्ञकः ॥३९॥

अनेन सह संघोपि समस्तो गुरुवाक्यतः। दक्षिणापथदेशस्थ पुन्नाटविषयं ययौ ॥४०॥

अर्थ :—श्री आचार्य भद्रबाहु के वचन सुनकर सम्राट चन्द्रगुप्त ने भद्रबाहु के साथ जैनेन्द्री दीक्षा लेकर तप किया। चन्द्रगुप्त शीघ्र दशपूर्व पाठियो का अग्रेसर विशाखाचार्य नाम पाकर

मुनिसंघ का नायक बन गया। विशाखाचार्य का समस्त संघ गुरु आदेश से (भद्राबाहु आचार्य की आज्ञा से) —दक्षिणापथ देशवर्ती पुन्नाट जनपदों को गया।

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार सम्पादक कल्याण मासिक पत्र, (गोरखपुर) के पृष्ठ ८६४। १९५० पर :—

भारत सीमान्त से विदेशी सत्ता को सर्वथा पराजित करके भारतीयता की रक्षा करने वाले समृाट चन्द्रगुप्त ने जैनाचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी से दीक्षा ग्रहण की थी। उनके पुत्र विम्वसार थे। समृाट अशोक उनके प्रपौत्र थे। कुछ दिन जैन रहकर अशोक पीछे बौद्ध हो गये थे।

नोट :—यह बात विचारणीय है कि क्या शेरों की माँद में लड़ैये पैदा होते है? या शेरों का कुल, परम्परा आदि बदल जाती है? इसलिये यह बात कहाँ तक न्यायसंगत है। यह तो अपनी बात मनाने के लिये तथा भ्रम पैदा करने और पुस्तक को रोचक बनाने की दृष्टि से लिखी गई सी प्रतीत होती है। सत्य मानने योग्य नही।

"अशोक ने काश्मीर तक जैन धर्म का प्रचार किया था।"

बिवलिउटिया इन्डिका आइने अकवरी वालुअम २ प्रथम काल एच०एस० जरीत०

द्वितीय प्रकाशन कारेक्ट जदुनाथ सरकार रायल एसियाटिक सोसायटी १९४९ पृष्ठ ३७७

अशोक ने काश्मीर में जैन धर्म का प्रचार किया व ब्राह्मण धर्म जो कि वाममार्गी था और हिंसक था वहाँ से उच्छेद किया। अब्दुलफजल ने आइने अकबरी में लिखा है

साइन्स आफ कम्प्रेटिव रिलीजन्स वाई मेजर जनरल जे०एस०आर० फारलाँग :१८९७: पृष्ठ २० पर जैन और बौद्ध धर्म के मध्य में राजा अशोक का इतना कम भेद दीखता है कि उसने सर्व साधारण मे अपना बौद्ध होना बताया हो। इसलिए उसके कई शिलालेख वास्तव मे जैन समृाट के रूप में है।

श्री प० विजयमूर्ति एम० ए० शास्त्राचार्य दिल्ली शिलालेख ई० पूर्व २४२ अपने शिलालेख सग्रह (निणय सागर प्रेस बबई में छपा) भाग २ पृष्ठ ३ में लिखते है।

इसमे बताया है कि समृाट अशोक ने अपने राज्याभिषेक के २७ वे वर्ष में यह धर्म शासन लेख लिखवाया था। इसमे उसने अपने द्वारा नियोजित धर्ममाहात्म्य का उल्लेख किया है। ये माहात्म्य सघ आजीवक ब्राह्मण और निर्ग्रन्थो की देखरेख के लिये नियुक्त किये गये थे। यहाँ निर्ग्रन्थ शब्द से जैनो का तात्पर्य है। इस पर से मालूम पड़ता है कि उस समय के अनेक अग्रेसर धर्मो में जैन धर्म भी एक ही था।

श्रीमान प० इन्द्रलाल जी शास्त्री जयपुर लिखते हैं-- अशोक सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का पौत्र था। पूर्व मे चन्द्रगुप्त जैन नही था किन्तु उसने जिन दीक्षा आचार्य भद्रवाहु से (इस विदिशा नगरी में) धारण की थी। जिसे ऐतिहासिक विद्वान नि.संकोच मानते हैं कि चन्द्रगुप्त मौर्य जैन

था—तो उसका पोता अर्थात् नाती भी जैन ही होने में सन्देह नही रखता। जैन धर्म शेरों का धर्म है और शेरों का अर्थ हिंसक पशुओ से नही किन्तु उनके सद्‌गुणो से है। इसे वीर पुरुष ही धारण कर सकता है, कायर नही।

किन्तु कुछ भ्रम पैदा करने वाले जिन्होंने जैन धर्म के ग्रन्थो को समझा ही नहीं, पढा नहीं और इतिहास लिख दिया कि ऐतिहासिक लोगों का मत है कि अशोक पहले जैन अवश्य था परन्तु पीछे बौद्ध हो गया। यह सत्य पर कुठाराघात है।

देखिये—"निगण्ठेसु पिभेकटे वि या पटा हो हृति"

—दिल्ली फीरोजशाह कोटला पाली वाक्य अशोक स्तम्भ से।

सम्राट चन्द्रगुप्त के पौत्र सम्राट अशोक ने समस्त भारत को अपने आधीन करके निष्कण्टक एकछत्र राज्य किया। सम्राट अशोक २९ वर्ष तक जैन धर्मानुयायी रहा ऐतिहासिक पुस्तक आइने अकबरी मे इस वात की पुष्टि की गई है। (पश्चात् अशोक ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया इस विषय का समर्थन अन्य अनेक ऐतिहासिक उल्लेखो से जो मिलता है वह ऐसा है जैसा कि बकरी के गले मे थन, जो कि निरर्थक है। कतई मानने योग्य नही)थोडा ध्यान दीजिये—

शम दम अहिंसा सत्य भाषण, चाहता नहिं सर्वका।
सच्चा यही है तप कहीं, तप सुखाना देह का॥
है गर्व विद्या का जिसे, कुल का जिसे अभिमान है।
जग में प्रतिष्ठा मान हो, जिस मूर्ख को यह ध्यान है॥
सुन निज प्रशंसा हर्षता, धनके नशे में चूर है।
उसको परम पद सैकड़ो, लाखों कोसों दूर है॥
हिंसक प्रकृति मिथ्या वचन, चोरी करें व्यभिचार भी।
कपटी कभी करते नही, वर्णाश्रमी आचार भी॥
नहिं लोक से भय खावते, नहिं पास जावें लाज के।
होगे नरक का कीट ये, ग्राहक गिनों यमराज के॥
गोपाल भूखी मारते, सौगंध झूठी खावते।
कीडे मकोडे को नही, परिवार को ही सतावते॥
जानो भिखारी कल्लके, है भूप केवल आज के।
होगे नरक के कीट ये, ग्राहक गिनों यमराज के॥

औंधे लटकना नरक में, रोते हुये फिर जन्मना।
पग पीटते जीना यहां, फिर अन्त में मर जावना ॥
क्या लाभ ऐसे जन्म से, जंह दुक्ख बारम्बार हो।
निःसार यह संसार है, ईश्वर--भजन ही सार है ॥
पिटना पिटाना रात दिन, कहना उसी का मानना।
सहना सभी की घुड़कियां, भय हर किसी से खावना ॥
माता पिता धमकावते, आचार्य देता मार है।
इस बात को धिक्कार है, ईश्वर--भजन ही सार है।

※

समय का फेर

(वर्तमान और पूर्वकाल की खाद्य सामग्री का अन्तर्प्रदर्शन)

सुना करे थे राम राज्य में हम छब्बे कहलायेगे।
किन्तु न था मालूम कि चौबे से दुब्बे रहिजायेगे ॥
अन्न वस्त्र घृत दुग्ध मिले नहि, तरस गये सब भारत में।
चोरी ब्लैक घूंसखोरी से है, सबके मन आरत में ॥१॥

शासक ही हो गये विनाशक, फिर क्या पार वसायेगी।
नये नये कानून बने, जनता कैसे सुख पायेगी ॥
चढा भूत कन्ट्रौल शीस पर, क्या क्या नाच नचायेगा।
चार छटांक अन्न राशन में, कौन पेट भर खायेगा ॥२॥

छै सौ वर्ष पूर्व के सपने, जैसी बात वताता हूँ।
स्वर्णधरा इस वसुन्धरा के, वस्तुभाव वतलाता हूँ ॥
पौने दो आने मन गेहूँ, जौ मन भर एक आने में।
ज्वार वाजरा मक्की मिलती थी, मन भर पौनाने में ॥३॥

चने उडद और मूंग पाँच पैसे के मन भर मिलते थे।
तेल सवा रुपये मन, चावल तीनाने मन लाते थे ॥
सवा तीन आने मन गुड, मन खाँड पन्दरे आने मे।
तीसाने मन घी विकता था, फीरोजशाह जमाने में ॥४॥

और भाव तुम सुनो समय थे, बादशाह जो अकबर के।
उतर रहे है भाग्य दिनो दिन भारत के नर नारी के ॥
आठाने मन चावल गेहूँ, पाचाने अरु नौ पाई।
साताने मन दाल उर्द की, घी ढाई अरु छै पाई ॥५॥

ज्वार बाजरा छठाने मन, जौ तीनाने अरु दो पाई।
डेढ रुपये मन तेल खाँड, मन बाईस आने छै पाई ॥
हल्दी धनियाँ नमक मिर्च सब, पाँचाने मन लाते थे।
एक कमाता था घर में, सब बैठि कुटुम्बी खाते थे ॥६॥

सत्तर साठ बरस की बातें, हमे तुम्हे मालूम सभी।
उससे पहली बातें पूर्वज, कहा करे थे कभी कभी ॥
एक रुपये का चार सेर घी, पिता हमारे खाते थे।
हम भी बचपन मे रुपये का, दोय सेर घी लाते थे ॥७॥

एक रुपये मन बेझड, गेहूँ डेढ रुपये मन मिलते थे।
ज्वार बाजरा मक्की जौ, सब सवा रुपये मन तुलते थे ॥
दो ढाई रुपये मन दाले, चावल तीन रुपये मन मे।
बढिया गुड ढाई रुपये मन, खाँड आठ रुपये मन मे ॥८॥

वर्तमान के भाव देख कर, सब का दिल थर्राया है।
सभी लोग कहते है ऐसा, कठिन समय नहिं आया है ॥
सत्तर रुपये के मन चावल, मन गेहूँ के रुपये तीस।
उडद मूंग बाजरा मक्की, मन के लगते रुपये चौबीस ॥९॥

डेढ रुपये की सेर खाड, गुड सेर मिले एक रुपये मे।
आठ रुपये का एक सेर घी, भी नहिं अच्छा खाने मे ॥
एक रुपये मे सेर दूध, उसमे चौथाई पानी है।
"मक्खन" राम राज्य मे, कपडे की बन गई कहानी है ॥१०॥

(प० मक्खनलाल जी देहलीकृत

※

राशन

राशन पर कन्ट्रोल है, शासन पर कन्ट्रोल।
शासन पर कन्ट्रोल पूत बुढऊते उरझै ॥
रहै रार दिन रात, मामलौ नाही सुरझै।
कहत चन्द्र सु बनाय, डोलि गये सबके राशन ॥
बिना राशनिंग कार्ड न ढूढै पइहौ राशन ॥

(चन्द्र कवि)

कांग्रेसी राज्य में उन्नति के आंकड़े वर्तमान में अमर्यादित

रेल किराया	२ गुना	नागरिक अधिकारों पर हमला	५० गुना
पढाई का खर्चा	३ "	पुलिस की ज्यादतियाँ	७० "
मकानो की तंग	४ "	रिश्वत खोरी	८० "
बेकारी	८ "	चोर बाजारी	९० "
अन्याय	१६ "	जनता की मुसीबत	१०० "
टैक्स	३२ "		

अक्षयपुर नगर

कायापुर	पट्टन	कामदार	सुकर्म
आज्ञाकारी सेवक	चेतन्यचन्द्र, मनसाचन्द्र	मुद्दे मुसाहिब	मस्तिष्क
मित्र	संग -- कुसंग	हाकिम	हिम्मत
अधिकारी	आलस्य -- प्रमाद	दरोगा	दान
प्रसग से	स्मृतिपट्ट	भौमियाँ	विक्रमसिंह
प्रायव्हेट सेक्रेट्री	विवेकचन्द्र	छडीदार	षट्कर्म
दीवान (प्रायमिनिस्टर)	सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक् चारित्र,	अंर्द्धांगिनी	सुमत, कुमत
		प्रिंसआफवेल्स (युवराज)	महाव्रत -- अणुव्रत
कोतवाल	सद्विचार	पटरानी की निजी सखियाँ	५ समिति ३ गुप्ति (अष्टसखी)
उप-प्रधान	प्रीतिराज		
चौकीदार	चितदास	नौकर -- चाकार	कर्तव्य समुदाय
फौज वक्षी	बुद्धिराय		

नोट—सोलह आना अनुकरण किया। कुए में भाँग पड़ने का कारण, वे-दरकारी, और लापरवाही से अंर्द्धांगिनी कुमता रानी ने विरोधी दल-अत्याचार, स्वेच्छाचार द्वारा चौरासी के चक्कर में डाल दिया। यह भुक्तभोगी ही अनुभव कर सकता है।

विरोधी दल का सेनापति	मोह राजा	कपटसिंह	सिपह पोश
मिथ्या-दर्शन	प्रायमिनिस्टर-- प्रधान सचिव	दुराचार	प्रायव्हेट सेक्रेट्री
		कामदेव	ए० डी० सी०
कोतवाल	अविवेक	मोह राजा के प्रवीण पुत्र	राग--द्वेष
सहायक कोतवाल	क्रोधसिंह	अमीर उमराव	सप्त अज्ञान
रोकडिया	निर्दयचन्द्र		

[१] मान [२] मत्सर [३] खुदगर्जी [४] छलराम [५] चोरीचन्द्र [६] ईर्षाचन्द्र [७] तीन गर्व
[१] वजीर [२] फौजदार [३] पोद्दार [४] छडीदार [५] चोपदार [६] सिपाही [७] पहरेदार

तीन शल्य	सी० आई० डी०	महतर	मानियाँ
पटवारी	पापिया	भिस्ती	भयदास

यह पुरुष कर्मचारी है।

अतिरक्त उच्च पद पर नारियाँ सेठानी तृष्णा
कुमति गुप्त कार्य के लिये कुमति पटरानी विकथा ४ दासियाँ जहाँ छूत छात का भेद नही— [१] निन्दा महतरानी [२] पैशून (चाण्डालनी) [३] रसना–झाड़ू जो महतरानी के पास रहती है [४] कुलटा--गूढ माया इन्होने काया नगरी मे पूर्णरूप से अधिकार का बडा भारी सिलसिला शुरू कर दिया है। इसके शस्त्र दार, अस्त्र टर्र।

[१] किलेदार, फौजदार, पोद्दार, छडीदार, चोपदार, पहरेदार यह दार हैं।

टर्र —डाह प्रसाद--डाक्टर, कामराय–कलेक्टर, वदी भरोसे–बैरिस्टर, सुस्तीलाल–सोलीसीटर, अकडाई सिंह–एक्टर, इकतरफीलाल–इन्स्पेक्टर, एक पुरा ऊजड चेचक मे एक आँख जाती रही। मदनलाल–मास्टर, ऐब नारायण–एडीटर, ईर्षाचिन्द्र इस्ट्रक्टर। इनके अस्त्रो के प्रहार से कायापुर पट्टन की दीवारे छिन्न भिन्न होगयी तथा होने वाली है।

मोहराजा —दारो और टर्रो से कायापुर पट्टन पर वार वार हमला करता है।

मोह राजा का दूत —श्वेत बाल (जरासिन्धु) ने कायापुर पट्टन मे घुस कर वेदना प्राप्त करदी। शक्तिक्षीण से मित्र भी शत्रु बन गये। हिम्मतगढ खोखला पड गया। नगरी के दसो दर्वाजे खुलने लगे, नौ सडके टूटने लग गईं।

घोड़ा छूटा महल से, चहुँदिस लगी पुकार।
दस दरवाजे खोल कर, निकल गया असवार॥

दशावतारी–मानव

भगवत् जिनसेनाचार्य ने दशावतार का संबोधन कर जिन–शासन का मार्ग बताया और अश्वमेध यज्ञ का अर्थ वास्तविक क्या है इसका निरूपण मानव के दश अवतार जिन्हें विष्णु के दश अवतार बताते है निम्नांकित उल्लेख किया है :—

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज दो भूपाल ।
इक मौनी अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ।।

अब आप अपने शरीर पर ज्ञानदृष्टि डालिये —

यह मानव–शरीर पाँच तत्वो से बना है । इसमे पहिला जल है । मानव का मन संकल्प और विकल्पो के तूफानो से घिरा हुआ है । मानव शरीर से रोग शोक जामन, मरण लगा हुआ है । जो नाशवान है, सकल्प और विकल्पो के तूफानो को सहन करता है । इसमें मगर मच्छ, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ है । यह पहला मच्छावतार मन है । जिस प्रकार से मन की चचल गति है उसी प्रकार से मीन (मछली) की । शरीर की उतनी तीव्र गति नही जिस प्रकार से कच्छप की । जब यह विषयों के जाल में पकड़ा जाता है अंग संकोच कर रह जाता है । अर्थात् इन्द्रिया सकुचित कर वही रह जाती है । इसलिये दूसरा कच्छप अवतार है । नं० ३ बाराह अवतार:—

जिस प्रकार से कामी जन विषयो मे आनन्द मानते है उसी प्रकार से बाराह की दृष्टि अपवित्र वस्तु पर रहती है, त्यागी पुरुष हेय मानते है । वह है माया .—

धरा कनक अरु कामनी, ये हैं कडुवी बेल ।
बैरी मारे दाव दे, यह मारे हंस खेल ।।

जर जोरू जमीन झगडे की जड तीन। यह बात वाराह अवतार मे निरूपण की है। विषयी विषयो मे, शूकर मैला खाने मे आनन्द मानता है। न० ४ नरसिंह अवतार — चौथा है। सिंह-पुरुष वही है जो कि ससार के समस्त भोगो को भोगकर उन्हे मैले के समान निकृष्ट जानकर त्याग देता है। नाशवान वस्तुओ से ममता नही रखता। जीवो पर दया रखता है। वह सिंह-पुरुष पराक्रमी और शूरवीर है। ऐसे तो —

भर लेते है पेट सभी, है जिनके काया।
पुरुष--सिंह है वही, भरे जो पेट पराया॥

स्वय के अनुभव को सामने रख कर दूसरो को सन्मार्ग बताने वाला भुक्तभोगी ही सिंह-पुरुष (नरसिंह है)।

न० ५, पाचवा अवतार वामन अवतार है — और वामन अवतार का अर्थ ब्राह्मण वर्ण से न लगावे, किन्तु वामन का अर्थ लघु यानी छोटे मानवो से है, जो कि विषय भोगो की पुतली कामिनी की याचना करने वाले है। कामिनी माया है। कामी पुरुष अपना विवाह करने के लिये दूसरे से स्त्री की याचना करता है और उस स्त्री की इच्छापूर्ति के लिये द्रव्य सग्रह करता है और जमीन चाहता है जिस पर वह आसन कर सके। आप यहां देखिये। आप अपने लिये अब दूसरो के यहा अपनी वशपरम्परा को चलाने के लिये अपरिचित ग्राम के किसी सज्जन या जिसके यहा आप लडकी पसन्द कर आये हो उससे आपने एक कन्या की याचना की। आपका हाथ कन्यादान लेने के लिये नीचा रहा और कन्यादान देने वाले का ऊचा रहा। आपने दान लिया और उसने दान दिया। यह वामनत्व की ओर सकेत करता है।

अब लडकी के शरीर की ओर दृष्टि डालिये। यह शरीर तीन लोक की रचना का है। मध्य भाग टुन्डी का इसे मध्य लोक ही समझिये, और उसके ऊपर का भाग ऊर्ध्वलोक है। नीचे का भाग अधोलोक है, आपका निवास मध्यलोक मे है। आप केवल पेट-पालन की ओर ध्यान देते है। किन्तु कभी आपने अपने को देखा और विचार किया कि यह नारी-ससार एक शक्ति है, वह स्वर्ग और नरक दोनो के नापने का यन्त्र है। जितने भी महान् पुरुष हुये इसी के उपदेश से महर्षि बने है। जैसे महात्मा तुलसीदास। इसी नारी के पीछे, भर्तृहरि योगिराज बने, नही तो क्या उन के राजभवन मे किसी बात की कमी थी? नही। इसे माया क्यो कहा? इसलिये कि इसके दर्शन से काम पैदा होता है और काम से दुख और दुख दुर्गति का कारण बन जाता है। व्यवस्था बडी है, यह सक्षेप मे वर्णन की, और नीचे की ओर दृष्टि नही डाली जहा से मूत्र रस बहता रहता है। नारी कभी भी शुद्ध नही रहती। जो व्यक्ति कामी पुरुष है और सासारिक भोगोपभोग वस्तुओ की याचना करता है वह लघु है।

(६) छठवां परसराम वह है जो ज्ञान के फरसा से अज्ञान का नाश कर मार्गदर्शन कराते है। ब्रह्मज्ञानी पुरुष ही परसराम है।

(७) सातवें कृष्ण का अर्थ काले से है। कही आप भगवान कृष्ण को न समझ लेवें, ये तो परम योगी थे। भगवान कृष्ण का अवतार लीलामय था। उन्होने गोपियो के साथ रासलीला

रची थी। आप भी तो यहां अपने जीवन की रासलीला रचते है। आप नाचते है, आप गाते हैं, आप वंशी बजाते हैं, किन्तु क्या आप संसार के भोग भोगते है, क्या आप बुराइयों का दमन करते है? ज्ञानी जन अपने में स्वयं भगवान देखना चाहते है। जहां तक हमारे में छल कपट और बेईमानी भरी हुई है हमारा हृदय काला है।

(८) कृष्ण जी का जन्म कंस के भय से जेल में हुआ था। वहा पर कोई जन्म के गीत नहीं हुये थे, माता यशोदा के यहां हुये थे। जहा इनका पालन पोषण रक्षण हुआ था। इसका प्रमाण आप जानते ही है:—

जन्मे तब गाया नहीं, मरे न रोया कोय।
बीच दशा सुख भोगते, नारायण पद होय ॥

हमारी भारतीय परम्परा में महापुरुषों के नाम पर नाम रखने की प्रथा क्यों चली आ रही है? अन्य देशों में क्यो नही है? जैसे नारायण, कृष्ण, बल्देव, शिवशकर, महादेव, राम--चन्द्र कुमार, लक्ष्मण प्रसाद आदि। इसी प्रकार से स्त्रियों के नाम भी सूर्यकुमारी, चन्द्रकुमारी, देवकुमारी, अन्जना, रंजना आदि।

हमारी भरतीय परम्परा के अनुसार यहां पर उसी प्रकार से मोक्ष-गमन करने वाले पुरुषों ने अवतार (जन्म) लिया है और वैसे ही कर्तव्य किये है इसी से उन्हों की मूर्तियों का निर्माण इसलिये हुआ था कि वह कौन थे, उनके आचरण क्या थे, और हमारे आचरण क्या हैं। शिक्षा प्रचार का यह माध्यम था। जिन्हे हमने भगवान की प्रतिमा मानकर पूजना प्रारम्भ किया है हम उनके अग व प्रत्यग से उन कलाकृति में छुपे हुये भावों को समझ ही नही पाये है। और हमे केवल पेटपालन, कुटम्ब परिवार के झगड़े और समस्याओ से फुरसत नही है। इस प्रकार से हमारा चरित्र, व्यवहार, कला, उद्देश्य में उज्वलता न होने से अर्थात् कलकित (कालिमा सहित) कार्य जो छल और बल सहित है भावो मे परिवर्तन है।

(८) आठवां रामावतार —आप प्राय. भगवान राम के गुण गाया करते हैं और नाम भी रामचन्द्र रख लेते है, किन्तु विचारिये कि आपके कर्तव्य-कर्म क्या उन महापुरुषों के समान है? नही है। भगवान राम ने जो आदर्श ससार मे रखा उसका क्या हम पालन करते है? उन्होने एक नीच रजक के द्वारा किये गये दोष को उदाहरणरूप मान कर सीता माता के चरित्र पर दोष माना था। किन्तु ऐसी परम पवित्र सती देवी को परित्याग किये जाने पर कष्ट उठाने पड़े। उन्हें त्याग कर दिया। क्या आप उन्हो के समान विषय-वासनाओं का त्याग कर सकते है? कदापि नही।

रामायण से क्या सीखा? कविवर बनारसीदास जी ने एक रामायण कितनी सुन्दर लिखी है, जरा आप पढ़िये और समझिये :—

(अध्यात्मिक रामायण)

विराजे रामायण घट माँहि ।
मरमी होय मरम सो जाने, मूरख जाने नाहिं ॥
आतम राम, ज्ञानगुण लक्ष्मण, सीता सुमति समेत ।
शुभोपयोग वानर दल मडित, वर विवेक रण खेत ॥
ध्यान धनुषटकार सोर सुनि, गई विपयादित भाग ।
भई भस्म मिथ्या मति लका, उठी धारणा आग ॥
जरे अज्ञान भाव राक्षस कुल, लरे नि·शकित सूर ।
जूझे राग द्वेष सेनापति, सशय गढ चकचूर ॥
विलखत कुम्भकरण भव विभ्रम, पुलकित मन दरयाव ।
थकित उदार वीर महिरावण, सेतवन्धु समभाव ॥
मूर्छित मन्दोदरी दुराशा, सजग चरन हनुमान ।
घटी चतुर्गति परणति सेना, छुटे छपक गुणवान ॥
निरख शक्ति गुण चक्र सुदर्शन, उदय विभीपण दीन ।
फिरे कवन्ध महिरावण की, प्राणभाव सिरहीन ॥
इहि विधि सकल साधु घट अन्तर, होय सहज सग्राम ।
यह व्यवहार दृष्टि रामायण, केवल निश्चय राम ॥

आत्मस्वभाव

आतम मे ही राम रमा है, आतम मे जव रमता है ।
आतम श्रद्धा से ही प्राणी, पा जाता सुख समता है ॥
आतम ही मेरा वैभव है, आतम विश्व-विभूती है ।
आतम का हित आतम से है, आतम हित अनुभूती है ॥
कहाँ खोजता है अपना हित, अन्तर मे कर उसकी शोध ।
मोक्षमार्ग पर तभी वढेगा, जव होगा आतम का वोध ॥
वस्तुतत्व के निर्णय विन जव, होता नही आत्मकल्याण ।
अन्तर मे शान्ति पाये विना, होता नही दुखो से त्राण ॥

पुनः एक और भी अन्तर प्रदर्शन बताते हैं

शिक्षा दे रही है हमको रामायण अति भारी ।
एक समय मे एक पुरुप ने व्याही ज्यादा नारी ।
वृद्ध अवस्था मे दशरथ के, इसने वात विगारी ॥

अर्थ—आप जब विषय वासनाओ मे अपने ब्रह्मचर्य को नष्ट कर देते है और आपकी जब चतुर्थावस्था (वृद्धावस्था) आती है तो दशो इन्द्रिया अपना उत्तर दे देती है। जब तक शरीर मे खून है सभी सेवकाई मे रहते है, जब प्रभुत्व जाता रहता है कोई आज्ञा का पालन नही करता, बात विगड जाती है । यह है इद्रिय और वृद्ध—अवस्था की आपस मे फूट और दुष्परिणाम ।

पूर्व—पुत्र

राज छोड बन गये राम ने, पितु आज्ञा सिर धारी ।

वर्तमान—पुत्र

अब तो पिता के लिये पुत्रगण चाहत है गिरफतारी ॥

पूर्व—नारी

राजमहल के सभी सुखोपर, एकदम ठोकर मारी ।
वन मे गई पती के सग मे, सतवती सिय नारी ॥

राम जी ने सीता से जाकर अपने पिता की आज्ञा सुनादी, कि हमें वनवास दिया है, हम जा रहे है, तुम आनन्द से यहा राजमहलो मे सास-स्वसुर की सेवा मे रहना । तो सीता क्या उत्तर देती है ? हे नाथ !

जिय विन देह नदी विन वारी, तैसेहि नाथ पुरुष विन नारी ॥

आज कोई ऐसी महिला है जो पति को कष्ट आने पर वनवास के कष्टों को सहन करने के लिये तैयार हो ? (विरली ही मिलेगी) हमे सीता और राम का आदर्श गृहण करना ही योग्य है ।

पूर्व भ्राता गण कैसे थे ?

विपति समय मे सग राम के, की लक्ष्मण तैयारी ।

वर्तमान भ्रातागण कैसे हैं ?

अब तो खून पीते है भाई का, रहे मुकदमा जारी ।

पूर्व भाइयों का आदर्श

राजतिलक की गेद बनाकर खेलन लगे खिलाडी ।
इधर राम उस तरफ भरत, दोनो ने ठोकर मारी ॥

पश्चात् क्या हुआ ?

चरण पादुका धरी तखत पर, यह ही बात विचारी ।
साधू बन कर रहे भरत, नहि बने राज्य अधिकारी ॥

पूर्व—ब्रह्मचारी

लक्ष्मण राम ने सूर्पनखा को, क्या कह कर ललकारी ।

वर्तमान—ब्रह्मचारी

अव यहाँ देखे चिकनी माटी, फिसल जाय ब्रह्मचारी ॥

इसलिये क्या करना चाहिये ? सयमी जीवन बनाना चाहिये ।

शिक्षा

फिसलो मत भूल कर भी, ऊपर की सफाई पर ।
वर्क सोने का लगा, गोबर की मिठाई पर ॥

पूर्व देवर और भावज

लक्ष्मण शीश झुकाते थे, कह सीता को महतारी ।

वर्तमान देवर भावज

हाय आज कल तो भावज को, पूर्ण बनाते नारी ॥

यह दोष वर्तमान शिक्षा का है । चू कि उन विद्यार्थियो को धार्मिक सयमी जीवन की शिक्षा नही दी जाती, भेदभाव मिटाया जा रहा है । भले ही भेदभाव मिटावे किन्तु धार्मिक शिक्षा होना अनिवार्य है । और शिक्षक भी ऐसे है कि जिन्हे धर्म से रुचि नही, जब एक सद्गृहस्थ के ६ कर्म की जानकारी होना चाहिये ।

नन्दन वन्दन थुतिकरन, श्रवण चिन्तवन जाप । पठन पठावन उपदिशन बहुविधि क्रियाकलाप ॥"

वह भी नही है । पूर्व आचार्यों ने चार वर्णो की स्थापना की थी । वह है—

शूद्र जन्म से सब लखो, सस्कार द्विज गाय ।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ॥

नरक के चार दरवाजे

प्रथम द्वार निशि असन अरु, द्वितिय सग पर नार ।
तीजा संधाना, तुरिय कद नर्क चउद्वार ॥

अतएव शीलवान नारी एक रत्न है । योग धारण करने वाली महिला रत्नो का खजाना है ।

लज्जा ही नारी की शोभा है, लज्जा ही नारी का जीवन ।
लज्जाहीना जो नारी है, उसको समझो उजडा उपवन ॥

शील--परीक्षा

दोषी रावण ने सीता को, कष्ट दिये अति भारी ।
फिर भी पतिव्रत धर्म बचाकर आगई जनकदुलारी ॥
लालच और तलबार के भय से, सिया न हिम्मत हारी ।

वर्तमान नारी कैसी है ?

थोडे भय से धर्म गमावें, हाय आज कल नारी ॥

रावण राक्षस क्यों ? (रावण के लेख और चित्र को देखिये)

था पंडित विद्वान वह रावण, देखो नयन उघाडी ।
मदिरा मांस पर नारि हरन से, राक्षस बना अनाडी ॥

पूर्व सेवक

तन मन से रहा सेवा करता, हनूमान बलधारी ।

वर्तमान सेवक

अब तो मुह पै करें खुशामद, पीछे देवे गारी ।

सुसगति से स्वर्ग और कुसगति से नरक मिलता है । अतएव हमें विभीषण की नीति को अपनाना चाहिये और रावण की दुर्बुद्धि को त्याग देना चाहिये ।

भक्त विभीषण ने भाई की, संगति बुरी विसारी ।
अच्छी सगति मे तुम जाओ, कहते चन्द्र पुकारी ॥

इस प्रकार से जो शिक्षा हमे चन्द्र कवि ने वताई, रामायण से सीखना चाहिये ।

आठ बात फेरते रहो

विद्या रोटी पान है, खेती ऋण धन वार ।
इते आठ फेरत रहो, कहै नीति निरधार ॥

(९) नवम अवतार बुद्ध का है । मानव प्रतीकात्मक रूप से बुद्ध अवतारी किस प्रकार है ?

समाधान :—हम आठ अवतारो का वर्णन ऊपर कर ही चुके हैं । आप अपने मे स्वयं विचार कर देखे कि जो काम हम पूर्णरूप से अपनी विवेक बुद्धि से विचारपूर्वक करते हैं, वस्तु के स्वभाव—गुण को समझते है, मनन करते है, लोकोपकार मे लगाते है, स्व और पर के गुण दोषों को पाप और पुण्यरूप मानते है, आत्मकल्याण के लिये चिन्तन कर अनुसरण करते है, यह सव हमारी बुद्धि की ही विशेपता होने से हम बुद्धि के अवतार कहलाते हैं ।

(१०) दशवां कल्की कलंकी अवतार--हम किस प्रकार से है ? हम कलकी अवतार इसलिये है कि हमारी प्रवृत्ति विपयो की ओर आग्रसर है । हमारी विषयासक्ति श्वान से भी निम्न स्तर पर पहुच चुकी है । इसलिये आचार्यो ने कहा है :—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लपटात ।

ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात ॥

कूकर तो समय पर ही रतिक्रिया करता है किन्तु मानव को जो रतिक्रिया के लिये समय निर्धारित है उसका उल्लघन किये है । यही कारण है कि इस देश में जहा महापुरुषों का जन्म होता था, सुकाल रहता था, वहा आज सकटकालीन स्थिति पैदा हो गई। आप स्वय तुलना

करके देखिये । कि हमारे जितने कार्य हो रहे हैं उनमे सिवाय कलक के यश नही मिलता है। हमारी प्रतिभा, सूर्य के समान दैदीप्यमान कीर्ति मे प्राय. हमारी अविवेकता के ही कारण से कलक लगता ही जा रहा है क्यो कि —

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।

इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान ॥

भावार्थ .—हमारा शरीर एक रथ है, आत्मा सारथी है, इन्द्रिया घोड़े हैं। और इन पर कन्ट्रोल करने वाला सयमी वीर पुरुष धीमान् जो कि जितेन्द्रिय है जिसे वीतरागी पुरुष कहते है वही केवल कलक से बच सका है।

मानवजीवन में १४ रत्न
(प्रथम रूप)

मानव विज्ञान : १४ रत्न मानवजीवन में निम्न प्रकार से हैं:—

पूर्व आचार्य कहते है कि यह मानव-शरीर भव-समुद्र है । जितने भी जैन आचार्य हुये और अन्य धर्मों के ऋषि महर्षियो ने भी भवसमुद्र का ही वर्णन किया है । आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सभी ने एक ही माना है और उसी आधार और कल्पनाओं को लेकर प्रतीकात्मक रूप से 'यथा नाम तथा-गुण' के अनुरूप मूर्तिया कलाकारो से निर्माण कराई थी जो आज हमारे भारत के अलावा भी देश विदेशों मे अपनी प्राचीनता का मार्गदर्शन कराती हुई प्राप्त होती है ।

हमे एक चित्र कलमी कच्छावतार का श्री नेमीचन्द्र जी हुकमचन्द्र जी जैन भण्डारी जो श्वेताम्बर जैन किले के अन्दर रहते है, विदिशा नगर के पुराने निवासी है उन्ही की बैठक मे अचानक ही मुझे देखने मे आया । उसका मैने पूर्णरूप से अध्ययन किया। तो उसमे जो विशेषताये पाई उनका उल्लेख यहाँ करते हैं ।

पूर्व में नारी के ऊपर तो हम वर्णन कर ही चुके है। अब मनुष्य मे किस प्रकार से वर्णन मिलता है उसे ध्यान देकर मनन कीजिये ।

समुद्र

ससार समुद्र का वर्णन हम पूर्व मे कर ही चुके हैं । तथा मन भी जिस प्रकार से समुद्र है वह भी आप समझ चुके है । चचल मन मछली के समान है । यही मच्छावतार है ।

समुद्र में कछुवा

मानवशरीर जिस प्रकार से नाशवान है उसी प्रकार से सांसारिक भोगोपभोग समग्र-सामग्री भी क्षणभगुर है । किन्तु चैतन्यस्वरूप अजर अमर आतमा का कभी नाश नही होता । हमारे इन देखने वाले नेत्रो का ही केवल दोष है ।

इन नयनन का यही विशेख, मै तोय देखूं तू मोय देख ।

देखत देखत इतना देख, मिटजाय द्विविधा रहिजाय एक ।।

जिस प्रकार से कछुवा अपने अग मे अपने हाथ, पैर और सिर छिपा लेता है और भाग नही सकता, उसी प्रकार से विषयी मानव को विषय पकडे हुए है, वह उन्हे नही छोडता और विषयों के लोभ के वशीभूत ससारवृक्ष में वताये गये मधु—विन्दु के रसास्वादन की भाति अपनी जीवन—यात्रा को समाप्त कर देता है ।

समुद्र--मंथन

यह आप भली प्रकार से जानते ही है कि शरीर व्याधियो अर्थात् रोगो का घर है । काम, क्रोध, लोभादि विकारभाव जिनसे आत्मीयता का पतन होता है वह दानवरूप है। इनके सिर पर सदैव काल (समय), काल (मृत्यु), काल (सर्प), सात बार (रविवार आदि) सर्प के समान सिर पर छाये हुये है । चित्र मे दिखाये गये है ।

दूसरी ओर हमारी आत्मा (ब्रह्म) चतुर्मुखी प्रतिभायुक्त है । आकृति मानव की है। ब्रह्मा को विधि भी कहा है ।

विधि को कियो कुम्हार जिन, हरि को दश अवतार ।

भीख मंगावत ईश को, ऐसो हि कर्म उदार ।।

यहां ब्रह्मा को कुम्हारवत् क्यो वताया है ? क्यो कि ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की है। उसी प्रकार से आपका वाल्यकाल शिक्षा दीक्षा का है। पाणिग्रहण के पश्चात् जब सतान उत्पत्ति हो जाती है वही आपकी सृष्टि वन जाती है । इसलिये वह आपका समय कुम्हार रूप माना जाने मे कोई शका नही रहती । अतएव आप ही ब्रह्मा के रूप मे है । जो चार मुख ब्रह्मा के वताये हैं वह क्रमश: व्यापार कला सगीत, और वैद्यक है। यही चार मुख प्रतिभारूप मानव को जीवनदान देते है ।

विष्णु--यह शरीर वर्गो के अणुओ का पिड है। सिर पर पचेन्द्रियजनित विषय कषायादि काल रूप सर्प समान छाये हैं ।

अलि, पतंग, मृग, मीन, गज, जरत एक ही आंच ।

रहिमन तिन की कौन गति, जाको लागे पांच ।।

सो कि हमारे सिर पर छाये हुए हैं । जो सर्प के रूप मे प्रतीक दिखाये गये हैं। यह मानव [illegible] [illegible] बन कर कामरूप सर्प की डोरी लपेट कर घटसिन्धु मे विषयो के [illegible] सर्प की [illegible] हुए दिखाया है । दश अवतार किस प्रकार धारण किये इनका भी [illegible] [illegible] है ।

[illegible]--इस मानवशरीर मे सिर पर कालरूप सर्प वैठा है । ज्ञानरूप गगा की धारा [illegible] धाराओ से, १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मन पर्ययज्ञान ५ और केवल-

ज्ञानरूप बह रही है । चक्र-पुरुष इनका सदुपयोग और शंख-पुरुष इनका दुरुपयोग करता है । इन भावों की रौद्ररूप परिणति से विषय वासनाओं के सर्प धारण कर भवसमुद्र में मंथन करते दिखाये हैं । वह अनन्तानुवधी क्रोध, मान, माया, लोभरूप सर्प है । सर्प का नाम भी अनन्त इसीलिये कहा है—

स्वयं सुरेशः स्वसुरो नगेशः, सखा धनेशस्तनयो गणेशः ।
तथापि भिक्षां कुरुते महेशः, ललाटवन्हिरयमेव शेषः ॥

जब भगवान त्रिदेव, ब्रह्मा, विष्णु, महेश भाग्य के लिखे हुए लेख को नहीं मिटा सके तो आपकी और हमारी क्या गति ?

भगवत् शुभचन्द्राचार्य ने अपने ज्ञानार्णव पृष्ठ संख्या ३७८ श्लोक सख्या १७५ मे भर्तृहरि जी को वैराग्य के उपदेश में नारी और पुरुष दोनों ही मे १० प्रकार के कल्पबृक्षो का वर्णन किया है । तथा कविबर पंडित बनारसीदास जी ने भगवत् कुन्दकुन्द के समयसार नाटक की टीका करते हुए साध्यासाध्य अधिकार में पृष्ठ १४० दोहा संख्या २८ से ३२ तक समुद्रमंथन से निकले १४ रत्नो के घट को सिन्धु बताते हुए वर्णन किया है । जब तक गुरु का ज्ञान व्याप्त, नही होता भ्रमात्मक भावनाये नही त्यागी जाती, काम, क्रोध, लोभादि विकारो का त्याग नही किया जाता उस समय तक जीव ससार से मुक्त नही होता। और भोगोपभोग के लिये मथानी की तरह काम की सर्परूप डोरी से मनरूप सुमेरु को मंथन करता है । शुभ परिणाम देव और अशुभ परिणाम दानरूप है । ससार समुद्र है । विपत्तियो और रोगो आदि का घर है । विषेयी रोगों को आमत्रित कर ज्वार-भाटो की तरह तूफान—लहरों मे दुखी रहता है। और सुखो की आशा से उसमे १४ रत्न प्राप्ति के लिये मंथन करता है —

मन दीवान सुरत है राजा, बुध मंत्री अति भारी ।
राम नाम की बसत नगरिया, तुलसी पंच मझारी ॥
तुलसी काया खेत है, मनसा भयो किसान ।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवे सो लुने निदान ॥

चक्र क्या है ? (कवित्त)

रागरु द्वेष मोह की परिणति, लगी अनादि जीव कंह दोय ।
तिनको निमित पाय परमाणूं, वन्ध होय वसु भेदहिं सोय ॥
तिनते होय देह अरु इन्द्रिय, तहां विषैरस भुंजत लोय ।
तिन में राग द्वेष जो उपजत, तिंह संसारचक्र फिर सोय ॥

"ब्रह्म विलास"

...मी प्रसन्न रत्न है.—

लक्ष्मी क्षमस्व वचनीयमिदं दुरात्म ।
अन्धी भवन्ति पुरुषास्त्वदुपासनेन ॥
नो--चेत्कथं कमलपत्रविशालनेत्रो ।
नारायणः स्वपति पन्नगभोगतल्पे ॥

...ी प्रकार मे जानते है कि उल्लू को दिनकर के प्रकाश मे नही दिखता अर्थात् ... दिनकर (सूर्य) नही वह लक्ष्मी प्राप्त कर अंधे बन जाते है ।

चार प्रकार के अंधे—

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

मूर्ख के ५ चिन्ह—

मूर्खस्य पंच चिन्हानि, गर्वो दुर्वचन तथा ।
क्रोधश्च, हठवादश्च, परवाक्येश्वनादरः ॥

... वह —

खाय न खरचै सूम धन, चोर सबै लै जाय ।
पीछे ज्यो मधु मक्षिका, हाथ मलै पछिताय ॥

... विष्णु के हाथ मे गदा विपरीत को अनुकूल बनाने के लिये ... । इस संसार समुद्र में गुणो की आशा से लक्ष्मी और बुद्धि की नितान्त आव... ...न लक्ष्मी के कोई काम संसार का नही चल सकता । इसलिये मानव.—

सेव्या धनमिच्छद्भिः सेवकै पश्य यत्कृतम् ।
स्नानंत्र्यं यत्शरीरस्य, मूढैः तदपि हारितम् ॥

... साथ नही जाती । आंख मुंद जाने पर कुछ भी नही ।

... युवतयः सुहृदोनुकूला, सद्बान्धवाः प्रणयगर्वगिरस्य भृत्यः ।
... दंतिनिवहः तरलास्तुरंगाः, सम्मीलिते नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥

—... वाली युवतिया, अनुकूल मित्र, सज्जन भाई--बन्धु, प्रीति और ... भरी नौकर, गरजने वाले हाथियो का समुदाय, और तेज घोडे दोनो आंख ... ।

शील द्वितीय रत्न है:—

(किसकी शोभा किससे ?)

क्षमया शोभते विद्या, कुलं शीलेन शोभते ।
गुणेन शोभते रूपं, धनं त्यागेन शोभते ।।
सौम्येन शोभते लक्ष्मी, सुखं पुण्येन शोभते ।
नीत्यैव शोभते राज्यं, पाणिर्दानेन शोभते ।।

भावार्थ:—विद्यारत्न क्षमावान पुरुषों को ही शोभा देता है। और कुल की शोभा शील से है। रूप गुणवान को शोभता है। धनकी शोभा दान करने से है। लक्ष्मी शान्तस्वभावी को शोभा देती है। सुख की शोभा पुण्य से है। राज्य की शोभा नीति से है। और हाथो की शोभा दान करने से है। अतएव शील मानवो का भूषण है। और शील ही रत्न (मणि) है। इसलिये :—

शील रत्न सबतें बड़ो, सब रतनन की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ।।

तीसरा रत्न सरस्वती है:—

संगीत, सरस्वती विद्या, कला कौशल विना पुण्य के प्राप्त नही होती। संगीत से भगवत् भक्ति के दो नाम उच्चारण कर परिणामो में निर्मलता लाने के लिये है। सरस्वती का वाहन मोर है, मोर सर्प को भक्षण करता है तो विद्या (सरस्वती) से ज्ञान प्राप्त कर काम, क्रोध रूप सर्पों को भक्षण किया जाता है। माला पापों के प्रायश्चित और भगवत् नाम स्मरण के लिये है। कला-कौशल, आजीविका--साधन के लिये है।

चौथा रत्न वारुणी है:—

वारुणी एक मदिरा है। वह ८ प्रकार की है।

मदिरा--पायी की दशा, माता ही जब देख ।
ग्लानि करे तब अन्य का, क्या करना उल्लेख ।।

छहढाला मे निम्नाकित ८ मद बताये है। जो कि विद्वानों को त्यागने योग्य है। जो वास्तविक रूप से पढे लिखों में भी विद्यमान है। जो मूर्ख के पांच चिन्हों मे वर्णित है।

(आठ--मद)

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
मद न रूप को मद न ज्ञान को, धन बल को मद भानै ।।
तप को मद न मद जो प्रभुता को, करै न, सो निज जानै ।
मद धारे तो यही दोष वसु, समकित को मल ठानै ।।

एक कवि कहता है—

न कर अभिमान ये जहाँ इक रोज फानी है ।
तेरे से आलियो गुजरे, न कुछ बाकी निशानी है ॥

अत किसी भी प्रकार का मद नही करना चाहिये ।

अमिय (अमृत) पाँचवां रत्न है ।

आचार्य कहते है—

ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण ।
इह परमामृत, जन्म--जरा--मृत रोग निवारण ॥

सत्ज्ञानामृत का पान करिये और अज्ञानरूप मदिरा का त्याग ।

छठवां रत्न शंख है:—

जहाँ दोषयुक्त वातावरण हो वहा मूर्खता काम मे लाना चाहिये ।

कछु कह नीच न छेड़िये, भलो न वाको संग ।
पत्थर डारै कीच मे, उछल विगाड़ै अंग ॥
शिक्षित होकर दक्ष हो, हो गुरुपद आरूढ़ ।
फिर भी इन्द्रिय--लंपटी, उस सम और न मूढ़ ॥
खोटे अनुचित कृत्य में, फंसना विना विवेक ।
प्रथम कोटि की मूर्खता, समझो यह भी एक ॥

सातवां रत्न गजराज है:—

मन--मतंग मानै नहीं, मन के मत अनेक ।
जे मन पै असवार है, ते हजार में एक ॥

वीर पुरुप ही मनरूप हाथी पर सवारी कर सकता है ।

आठवां रत्न कल्पवृक्ष है:—

(१) मद्य--स्त्री का नाश। मनुष्य की दो स्त्रियाँ है पहली पुरुषार्थ कर प्राप्त की गई लक्ष्मी; दूसरी सरस्वती (विद्या) कला, कौशलादि । (२) वादित्र--बाजो के वजाने और वनाने की कला । (३) गृहिणी--लक्ष्मी और सरस्वती है । (४) ज्योति--घर की शोभा पुत्र कामदेव से है । (५) भूषण--शील--अहिंसात्मक परोपकारादि । (६) भोजन--समय पर आहार । ज्ञानप्राप्ति के लिये सत्सग, धर्मश्रवण, शास्त्रलेखन, साहित्यसंकलन । पर--भव के लिये । (७) माला--मोक्षप्राप्ति के लिये ।

संयम सेवा साधना, सत्पुरुषों का संग ।
ये चारों करते रहो, मोह निशा हो भंग ।।

सामायिक, स्वाध्याय, संयम और तप भगवत्भक्ति के लिये माला वैराग्य भाव दिलाने वाली है । (८) दीपक–कुल दीपक पुत्र—

बुद्धिविभूषित जन्म ले, कुल में यदि संतान ।
उस समान हम मानते, अन्य नहीं वरदान ।।
नर की सच्ची सम्पदा, उसकी ही सन्तान ।
पुण्य उदय से प्राप्त हो, ऐसा सुखद निधान ।।

भावार्थ:—बुद्धिमान सन्तति पैदा होने से बढकर संसार मे दूसरा सुख नही । सन्तान ही मनुष्य की सच्ची सम्पत्ति है, क्योकि वह अपने संचित पुण्य को अपने कृत्यो द्वारा उसमें पहुंचाता है। (९) पात्र–विषय—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लपटात ।
ज्यों नर डारत वमन सो, स्वान स्वाद सों खात ।।

भावार्थ:—यह मानव--शरीर विषयो का पात्र है । विषय संयम के साथ सन्तान उत्पत्ति कुलपरम्परा के लिये है, किन्तु कामीजनो ने काग और कूकर से भी शिक्षा ग्रहण नही की । जिस प्रकार से मनुष्य वमन करता है और कुत्ता बड़े स्वाद से खाता है, वही गति कामी जन की है। (१०) यह मानव शरीर विषयों का वस्त्र है । इस पर ज्ञान की चादर ही ओढी जा सकती है। इसमे यह दश प्रकार के कल्पबृक्ष बताये है । जो इसमें विद्यमान है ।

नौवाँ रत्न शशि (चन्द्रमा) है। कवि दौलतराम जी ने अपने छहढाल में कहा है:—

आतम को हित है सुख, सो सुख, आकुलता विन कहिये ।
आकुलता शिवमांहि न, तातें, शिवमग लाग्यो चहिये ।।

यह नौवा रत्न आपके ही मस्तक में विद्यमान है । जब आप कोई बात सोचते है और उसे पूरा करना चाहते है तो ठडे दिमाग से सोचिये, बिगड़े काम बन जावेगे । इसीलिये भगवान् शकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा का संकेत किया है। जहा पर निराकुलता है वही मोक्ष है। इस लिये मोक्षमार्ग का अनुकरण करो ।

दसवा रत्न धेनु इसलिये है कि कामाग्नि के शीतल होने के बाद नारी जब गर्भवती होकर पुत्रप्रसव करती है और वह पुत्र को दूध पिलाती है तो माता कही जाती है। उस समय वह गाय के समान है । यानी उस नारी से जिस प्रकार इच्छित वस्तुयें प्राप्त होती हैं ठीक उसी प्रकार से गाय का प्रतीक आपके समक्ष उदाहरणार्थ. सामने रखा है। विना किसी स्वार्थ–वासनाओ के परोपकारादि मे अपना जीवन संकट मे डाल कर भी अर्थात् भूख, प्यास, मारन, तड़न बधन, वशी-

करणादि की विपत्तियो को झेलती है और आपको उत्तम फल देती है । इसी प्रकार से वस्तु का स्वभाव धर्म है । यह बात समझने की है कि गाय मे दया, धर्म, दान, तपस्या, भावो की निर्मलता पवित्रता और परोपकार विद्यमान है। इसी प्रकार से इस मानव शरीर मे भी भावो की निर्मलता के साधन कामधेनु की भाँति भगवत्भक्ति है। कहते है कि भोले प्राणी ! भगवान दूर नही, किन्तु क्यो दिखाई नही देते ? इसलिये कि —

मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदे माँहि ।
आड़ी टाठी कपट की, यातें दीखत नाँहि ॥

अपनी कपट मायाजाल की जो आड लगा रखी है उसे दूर करदे, भगवान के दर्शन हो जायेगे । आत्मज्ञान पाना दुर्लभ है।

विद्या, बल, धन, रूप, यश, कुल, सुत, वनिता, मान ।
सभी सुलभ संसार में, दुर्लभ आतम--ज्ञान ॥

इसलिये —

धर्मात्मा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा ।
पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा ॥

अत एव आपकी कामधेनु धर्म है.—

धर्महि एक सुमित्र है, जो छांड़त नहि साथ ।
मरन समय या काय संग, छोड़ देत सब हाथ ॥

— मत भूलो —

(१) ऐश्वर्य पाकर–दीन और बन्धुओ को। (२) स्त्री पाकर–माता पिता को। (३) आपत्ति पाकर–धैर्य को । (४) अधिकार पाकर–न्याय को । (५) अनीति करने मे–ईश्वर को । (६) क्रोध मे–अपने आप को । (७) समय निकलने पर उपकार को । (८) शरणागत आने पर–सहायता को। (९) दीन होने पर--धर्म को । (१०) स्वार्थ वश--नीति को । (११) हिंसा करते समय--पाप को ।

ज्ञानी से ज्ञानी मिलै, जब कछु जानी जाय ।
दियौ बैल को जायफल, वो क्या जानें खाय ॥

हे भव्य जीव ! तेरे पास अमूल्य निधि, अमृतमयी वाणी है —

शब्द बराबर धन नहीं, जो कोई जानें बोल ।
हीरा तो दामों बिके, शब्द का मोल न तोल ॥

शुद्धभाव हों, दृढ़ता मनमें, जीवन में निश्चल व्यवहार ।

उसके घर पर सभी सिद्धियां, चरण चूमतीं शत--शत बार ॥

इसलिये आप को उषाकाल (प्रातः काल) चेतावनी देता है:—

जरा जाग जाओ ऊषा कह रही है, उषा का सबेरा कहीं मिट न जाये ।

खिला प्रात में जो बगीचा तुम्हारा, बहारों में देखो कहीं लुट न जाये ॥

यह आपकी कामधेनु का वर्णन किया गया। अब आप धनु जो ११ वाँ रत्न है देखिये, धनु जिसे धनुष कहते है । धनुष आपका संयमरत्न है ।

संयम की रक्षा करो, निधि सम ही धीमान् ।

कारण जीवन में नहीं, वढ़कर और निधान ॥

कूर्म अंग--सम इन्द्रियां, वश में पूर्ण प्रकार ।

तो समझो परलोक को, जोड़ा निधि भण्डार ॥

भावार्थः—आत्म-संयम की रक्षा अपने खजाने के समान ही करो, कारण उससे बढकर इस जीवन में और कोई निधि नही है । जो मनुष्य अपनी इन्द्रियो को उसी तरह अपने में खीच कर रखता है, जिस तरह कछुवा अपने हाथ पाँव को खीचकर भीतर छुपा लेता है, उसने अपने समस्त आगामी जन्मों के लिये खजाना जमा कर रखा है । संयमरूप धनुष ग्यारहवाँ रत्न है।

बारहवाँ रत्न धन्वतरि है । हमारा बारहवाँ रत्न धन्वतरि वैद्य सदाचार है:—

धन यदि गया, गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ गये कुछ जाता है ।

सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है ॥

लोकमान्य होता मनुज, यदि आचार पवित्र ।

इससे रक्षित राखिये, प्राणाधिक चारित्र ॥

भावार्थ—जिस मनुष्य का आचरण पवित्र है, सभी उनकी वन्दना करते है। इसलिये सदाचार को प्राणो से भी बढकर समझना चाहिये । यह मानव--शरीर जिस प्रकार से रोगों का घर है उसी प्रकार से रोग की औषधि भी है।

देह धरे को दण्ड है, सब काहू को होय ।

ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख भुगते रोय ॥

भावार्थः—शरीर धारण कर विषयादि रोग, शोक, भय का कारण है, उनका दण्ड ज्ञानी ज्ञान से भोगता है और मूर्ख रो--रो करके भोगता है ।

कैसा रोगी रोग क्या, क्या ऋतु का व्यवहार ।
सोचै पहिले वैद्य फिर, करे चिकित्सा सार ॥

भावार्थ —वैद्य को चाहिये कि वह रोगी, रोग और ऋतु का पूर्ण विचार करले, तब उसके पश्चात् औषधि प्रारम्भ करे ।

अव यहाँ यह देखना है कि रोग क्या है ? वह है विषय । विषय रोग के त्याग के लिये जो लोग पुनर्जन्म के चक्र को बन्द करना चाहते हैं, उनके लिये यह शरीर भी अनावश्यक है। फिर भला अन्य वन्धन कितने अनावश्यक न होगे ?

जब मुमुक्षु की दृष्टि में, निज--तनु भी है हेय ।
तब उसको क्यो चाहिये, बन्धन भरे विधेय ॥

इसलिये —

विषय त्याग बैराग्य, समता कहिये ज्ञान ।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान ॥

आचार्यों ने जीव की दो ही वस्तु शोध की हैं जो सुख की देने वाली है एक तो भक्ति दूसरी ज्ञान रूप विवेक के साथ समता आवश्यक है और विषयो का त्याग करना वैराग्य है।

भोग व्यसन सुख ख्याल में, दई मानुष गति खोय।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपता भोगे सोय ॥

जिसने मनुष्यपर्याय पाकर भोग और व्यसनो के ख्याल मे सुख माना है उस कपूत पुत्र ने अपने पिता का धन खाकर विपत्ति ही भोगी है।

विषय कसाय बराबरी, बैरी जियके नांहि ।
ज्ञान विराग विवेक से, हितू नांहि जग मांहि ॥

विषय कषाय रोग है और ज्ञान, विराग, विवेक, यही धन्वन्तरि वैद्य हैं। यह तेरहवाँ रत्न विप है ।

यह मानव शरीर माता के रज और पिता के वीर्य से उत्पन्न अनेक रोगो का घर विषयो का केन्द्र काम, क्रोध, मान, माया, लोभ यह पाच चोर इस नगर के मुखिया है जो इस पर शासन करते है । जो इन पाच चोरो से अपनी आत्मा और पुद्गल को भिन्न मानता, समझता है, आत्मा के गुण को पहिचानता है वही सच्चा विष--रत्न का पारखी है अर्थात् विषय ही विष है ।

चौदहवा वाजि अर्थात् घोडा भी रत्न है ।

आप यह जानते हैं कि सूर्य का वाहन घोडा है। सूर्य--हमारे नेत्र हैं । सूर्य के बाहन घोड़े के सात मुख है, वह सप्तभग वाणी रूप हैं । नेत्रो की चचलता मे (किरणो के प्रकाश मे) इन्द्रिया

रूप घोड़े स्वच्छन्द होकर विचरण करते है जो विना लगाम के है। यह चौदह रत्न आपके शरीर में विद्यमान है, जो ज्ञानरूप नेत्र से देखिये। समुद्रमथन कच्छप–अवतार में आचार्यो ने चित्ररूप में दर्शाये हैं। यह मनुष्य में विद्यमान है। इन्द्रिया घोड़े है, जिन पर यह आतमा बैठी है।

मानव--जीवन में १४ रत्न

(द्वितीय रूप)

नं० १ श्रीरत्न

आपको यह मालूम है ही कि हम प्रायः एक दूसरों को व्यवहार में श्रीमान् लिखा करते हैं। यह पद्धति इसलिये है कि एक दूसरे मे कोई न कोई विशेषता अवश्य होती है।

श्री का अर्थ लक्ष्मी से है, इसी लिये हम श्रीमान, या श्रीधर विशेषण लगाते है। जिसके पास लक्ष्मी होती है उसे अभिमान होता है, इसलिये हम उसे श्रीमान् कहते हैं। जिसके पास लक्ष्मी रखी हुई है अर्थात धरी हुई है उसे हम श्रीधर कहते हैं। लक्ष्मी–नारायण का तात्पर्य लक्ष्मी के पति नारायण है। इस मानव के पुरुषार्थ द्वारा उपार्जित द्रव्य लक्ष्मी कही जाती है, जिससे संसार के कार्य चलते है। इन हाथों से हम लिखते है तो सरस्वती का निवास है। दोनो हमारे जीवन में आवश्यक है। जीवन भर साथ रहती है, इसलिये हम श्रीमान् कहे जाते है। हमारा साहस, पराक्रम, बुद्धिमत्ता, परोपकारादि कार्य हमे श्रीमान् स्वयं कहलवाते है।

नं० २ मणि--रत्न

मानव की सच्चरित्रता ही मणि है, जिसे शीलरत्न कहते है। चरित्र एक ऐसा हीरा है जो घनो से भी नही फूटता।

देखा जो एक हीरा, परखा तो संग है।
वह फूल है तू जिसमें, बू हैं न रंग है॥

नं० ३ रम्भा--रत्न

हमारा सतत् प्रयत्न विद्याध्ययन, कला–कौशल, शस्त्रविद्या, शास्त्र--स्वाध्याय, रणकौशल, दान, धर्म, तप आदि मे रम जाना, उसी को अच्छा मानना अर्थात् भा जाना रम्भा नाम है। इसीलिये कहा है.— "रमन्ते योगिन." योगी पुरुष योग--साधन मे रमजाते है, उन्हें वही भाता है। और वही उनकी रम्भा है।

नं० ४ वारुणी--रत्न

किसी भी कला मे पारंगत भले ही न हो, थोड़ा बहुत जानने पर अभिमान करलेना वारुणी नाम की मदिरा है।

नं० ५ अमिय (अमृत) रत्न

विद्याध्ययन कर जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है वही ज्ञान अमृत के समान है, जो हमें जीवन मे साथ देता है ।

नं० ६ शंख--रत्न

शख--रत्न हमे विपत्ति काल मे तो साथ देता ही है, इसे प्राय सभी जानते हैं । जैसे आपने मुझे किसी प्रकार से सताया और मैं कमजोर हूँ तो रोकर अपनी मूर्खता का परिचय दू गा। और यदि सबल हूँ तो ललकार कर ससैन्य शखध्वनि कर कमजोर पर बार करने के लिये अपनी मूर्खता का परिचय देते है। क्यो कि हम मूर्खता का कार्य यह कर रहे है कि जिस कार्य के लिये हम लडते है वह है स्वार्थ और वह है विनाशकारी । जिससे दूसरो का घात हो हिंसामय हो उस कार्य को यदि हम करते है तो हमारी मूर्खता का स्पष्टीकरण हो जाता है ।

नं० ७ गजराज (हाथी) रत्न है

मन उन्मत्त हाथी हैं जो कि विवेकपूर्ण ज्ञान को अवनति की ओर भी ले जाता है और उन्नति की ओर भी ।

ज्ञान महावत डार सुमत, संकल गहि खंडै ।
गुरु अंकुश नहिं गिनै, ब्रह्मब्रत विरख विहंडै ।।

यह मन ही इस मानव शरीर का चालक है। जो बतौर उन्मत्त हाथी के है । इसलिये गणेश जी का शरीर मनुष्य का और सिर हाथी का बतलाया है । समस्त शरीर की इद्रिया गण हैं । गण का अर्थ समुदाय से है। इन्हो का ईश अर्थात् भगवान का निवास जो ब्रह्म है वह इसी मस्तिष्क के अन्दर रहता है । सोचने, समझने, विचारने के लिये बडे मस्तक का प्रतीक हाथी का मस्तक हैं । जिसके दो बडे कान बताये है, वह हैं—

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ।।

लंबी सू ड हैं । गुणो की सुगन्धी एकत्रित करो। स्वय उपभोग करो और हाथ मे रखे गुणो के मोदक को बाँट दो । और दूसरे हाथ मे माला है अपनी आतमा के वास्तविक चिन्तन के लिये है। तीसरे हाथ से कुल्हाडी है, उसका अर्थ है अज्ञानता को ज्ञान की कुल्हाडी से काटो । चौथे हाथ मे कमल है, वह मोक्ष--लक्ष्मी का प्रतीक है। जहा अज्ञानता नष्ट होगी वही पर सुख और शान्ति का रसास्वादन हो सकेगा ।

लम्वोदर से हमे यह सीख मिलती है कि सासारिक दोषो को अपने पेट मे रखलो, प्रकाशित न करो, अपने अवगुण और दूसरो के गुण देखो ।

ज्ञानगुण की विशेषताओ के धारण करने वाले ही गणधर कहलाते है ।

नं० ८ कल्पद्रुम--कल्पवृक्ष रत्न

प्राचीन काल में निर्मित विदिशा नगर में एक पत्थर पर १० प्रकार के कल्पवृक्ष बने हुये थे। जिसे पुरातत्व विभाग के अधिकारी कलकत्ते के म्यूजियम में लेगये है। वह इस नगर में क्यों पाया गया उसका एकमात्र कारण यह है कि इस प्राचीन इतिहासप्रसिद्ध नगरी में १० वें तीर्थकर भगवान शीतलनाथ का जन्म हुआ था, उनके गर्भ, जन्म, तप, यह तीनो कल्याणक यहीं हुये थे। इनकी तपोभूमि ग्यारसपुर मे थी।

शुभचन्द्राचार्य भर्तृहरि योगिराज के अग्रज भ्राता थे और भर्तृहरि जी से अनुज भ्राता महाराजा भोज परमार वंशी क्षत्रिय थे। कल्पवृक्षों का उल्लेख आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णव नामक जैन ग्रन्थ में पृष्ठ ३७८ श्लोक सख्या १७५ मे निम्नाकित रूप मे किया है—

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषाभोजनविग्रहाः ।

सुदीपवस्त्रपात्रांगा दशधा कल्पपादपाः ॥१७५॥

भावार्थ—[१] मद्य--स्त्री, विद्या, कला, कौशल या अनन्य वस्तुओ की जानकारी का अभिमान करना मदिरा है।

[२] वादित्र--संगीतयुत गायन।
[३] गृह--शरीरं व्याधिमंदिर। शरीर ही रोगों का घर हैं।
[४] ज्योति--इस घर की शोभा परोपकार, दानादि से है।
[५] भूषण--शील--ब्रह्मचर्य, सदाचार।
[६] भोजन--खाद्य पदार्थ, आहार समय पर।
[७] माला--वैराग्य पैदा करने वाली तथा भगवत्‌भक्ति में ले जाने का मार्ग बताने वाली।
[८] दीपक--कुलदीपक पुत्र पैदा करने वाली।
[९] वस्त्र--विषय वासनाओं संबंधी दोषों के ओढने का वस्त्र।
[१०] पात्र--विषयो का पात्र।

इन दस प्रकार के भोगो को देने वाली मानव--देह कल्पवृक्ष है।

जीवन एक बगीचा है, श्वांस--नीर ने सींचा है।

भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सिर नीचा है॥

नं० ९ शशि (चन्द्रमा) रत्न

आपने शकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा प्रायः देखा होगा। चन्द्रमा शीतल होता है। आप जो वात भी अपने अनुकूल विचारते है सुख और शान्ति के लिये ही। मानवशरीर व्याधियों का घर है। भारत को चारो ओर से शत्रुओं ने घेर रखा है तथा घर के ही शत्रु आपस की फूट से बने हुये है। इसीलिये भारत का अर्थ विपत्ति से है। भारत का सबसे ऊंचा पर्वत हिमालय है। हिम का अर्थ शीतल है। आलय का अर्थ घर है। तो इस मानव-शरीर का मस्तक शीतल इसलिये

रखा जाता है कि हम जो भी कार्य करें सोच समझ कर करे। शीतल विचारो से सोचा हुआ कार्य शीघ्र सफलता को प्राप्त होता है। इसलिये शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा प्रतीक बतलाया है।

सुख सुभाग्य सन्मति करण, अतुल शक्ति वर धाम ।
मंगल मूल गणेश को, बारम्बार प्रणाम ।।

गणेश जी का बाहन चूहा इस बात का प्रतीक है कि तुम्हारी आयु की डाल निश दिन दो चूहे काट रहे हैं। स्वामी कार्तिकेय गणेश के अग्रज भ्राता है। इनका वाहन गरुड है। जो आप मे विद्यमान है वह है ज्ञान। जो काम, क्रोध, मान, माया, लोभादि सर्पो का भक्षण करते है। आपका शरीर विषधर है, क्योकि यह मानव-शरीर विषयो को धारण किये है, इस विषय से ही तो मानव की बे-इज्जती होती है। और कहा तक कहे, मृत्यु भी हो जाती है ।

शकर का बाहन नन्दी है, तो मानव की इन्द्रियाँ गौ हैं। वस्तु का स्वभाव धर्म है। वृष धर्म को कहते हैं । वृषभ धर्म के धारण करने वालो को। वृषभ का अर्थ बैल यानी नन्दी से है।

सुमत (पार्वती) का बाहन सिंह है । यदि इन्द्रियो की एकाग्रता हो तो पुरुषार्थ होना सभव है । विना उद्योग किये लक्ष्मी अथवा बिना तपस्या किये मोक्षलक्ष्मी प्राप्त नही होती । इसलिये.—

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये ।
आकुलता शिव मांहि न तातें, शिव--मग लाग्यो चहिये ।।

नं० १० धेनु--रत्न

धेनु नाम गाय का है । जिस प्रकार से धेनु जन्म से मरण पर्यत सेवा सुश्रूषा करती और जिसका स्वभाव प्राकृतिक रूप से परोपकार करने का है । ठीक उसी तरह से हमारे मानव जीवन मे इन्द्रिया भी मन के आधीन कार्य करके पूरे मानव शरीर मे कर्त्तव्य निभाती हैं । यदि एक भी इन्द्रिय शिथिल हो जाती है तो गाड़ी वही रुकने लग जाती है। इन्द्रियाँ भी मन-चालक के आज्ञानुसार कर्म करने पर उसका रस यानी प्रतिफल शुभ-रूप या अशुभ-रूप देती हैं।

नं० ११ धनु--रत्न

धनु का अर्थ धनुष से है । धनुष जिस प्रकार से शस्त्र है उसी प्रकार से सयम-नियम भी मानव के लिये धनु है, जो कि हमारे मन--चालक पर ब्रेक का काम करती है । विपरीत प्रतिक्रियाओ से वचाने मे सहायक है। जो काम, क्रोधादि शत्रुओ पर विजय दिलाती है ।

नं० १२ धन्वन्तरि--रत्न

मन की पवित्रता, विवेकमय ज्ञान, और परोपकार मानवजीवन के लिये धन्वन्तरि वैद्य है, जो सयम की बूटी पिला कर आरोग्य बनाते हैं ।

रोगन की माया बढ़ी, रोगी भये अधीर ।
औषधि की शक्ती घटी, दवाघरों में भीर ।।
चहिये यदि आरोग्यता, व्रत पालो करि नेम ।
मानवता का मूल है, सदाचार व्रत प्रेम ।।

है फंसा विषयों में जो, वह वीर है किस काम का ।
जंग जिस को लग चुका, शमशीर है किस काम का ।।
दान औषधि पुण्य यश कर, बचें वृष धन प्राण हैं ।
जग में शिरोमणि नर वही, जो देत जीवन दान हैं ।।

उपरोक्त पंक्तियाँ हमे यह स्पष्ट कर देती है कि जीवन--दान देने वाला यदि कोई है तो सयम । विवेकमय ज्ञान हमारे लिये धन्वन्तरि वैद्य हैं ।

नं० १३ विष--रत्न

विष एक ऐसा रत्न है जिसके बल पर ससार चल रहा है । केवल इस तरह कि:—

अजातमृतमूर्खाणां, वरमाद्यौ न चान्तिमः ।
एकदु:खकरावाद्या, -- वन्तिमस्तु पदे पदे ।।

वालक जन्म लेते है मर जाते है तो दुख का कारण, क्षणिक है। मूर्ख बालक से जन्म भर दुख ही होता है । ऊपर वाले से अधिक दुखकर है । जो पद--पद पर दुख ही देता है ।

इसी प्रकार से यह विषय रूप विष भी कामान्धता उत्पन्न करता है । जिस प्रकार से नदी और समुद्र मे तूफान आया करते है, चतुर केवट ही उस नौका को सम्हाल सकता है। केवट मन पर काबू पाने वाला सयम है ।

मानव का संयमी जीवन वीर्य का संरक्षण, सदाचार पूर्वक उपयोग में लाया जाता है तो महापुरुष जन्म लेते है । वीर्य से (१) रस (२) रक्त (३) मास (४) मेदा (५) अस्थि (६) मज्जा (७) शुक्र जिसे वीर्य कहते है, जो कि शरीर का राजा है, उत्पन्न होता है ।

नं० १४ बाजि--रत्न अर्थात् घोड़ा

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धी मान् ।।

मानव–शरीर रथ है। आत्मा अर्थात् ब्रह्म इसका चालक (ड्रायव्हर) है जिसे सारथी कहते है । इद्रियाँ घोड़े है । इन पर सवारी करने वाला विरला ही बुद्धिमान होता है ।

※

मानवजीवन में १४ रत्न

(तृतीय रूप)

प्राय हमारे इतिहास-सशोधक विद्वानो ने इतिहास की जो पुस्तके लिखी वह प्रायः पाश्चात्य भाषा अग्रेजी मे ही है, अत हिन्दीभाषियो को उस साहित्य से वचित रहना पडा। जो मनमानी उन विद्वानो के विचारो मे आई लिखा, वही सत्य आज माना जा रहा है।

इतिहास लेखक विद्वानो ने मूर्ति के नाम, सम्वत्, काल, चिन्ह आदि वताने की तो चेष्टा की, किन्तु इसका मानव जीवन से क्या सबध है। धर्म--सस्कृति--स्वर्ग--नरक--पुण्य--पाप--सुख--दुख आदि क्या वस्तु है। उनका स्वरूप क्या है। प्रतिमारूप कही भी वर्णन नही किया। और न देव-दानव द्वारा जो समुद्रमथन हुआ। दश--अवतार जो पुराणो और दन्तकथाओ मे वर्णित हैं तथा कही जाती हैं उनकी सार्थकता क्या है। जिसे हमने अपने अनुभवज्ञान द्वारा जो कुछ पाया मनन किया उसे हम एक पुष्प के रूप मे आपके समक्ष मे उस प्रमाण के साथ रख रहे हैं जिन्हे महापुरुष, आचार्य, कवि आदि ने दोहा, चौपाई, छन्द, सोरठा, कवित्त आदि मे उल्लेख किया है।

चौदह रत्न

श्री, मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज।
कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धन्वन्तरि, विष, वाज ॥१॥

ध्यान दीजिये। यह प्रतीकात्मक शब्द जिनमे अगम्य ज्ञान भरा हुआ है—

शब्दहि मारा मर गया, शब्दहि छोड़ा राज।
जिन जिन शब्द परखियां, तिनके सरगये काज ॥२॥

इन शब्दो को पूर्व आचार्यो ने गुण--दोष को अपने मनोवैज्ञानिक बुद्धिबल द्वारा प्रतीकात्मक चिन्हो से परिपूरित साकेतिक भाषा मे कलाकारो के कर--कमलो द्वारा पाषाण को मोम की भाँति वना दिया, उसमे जो मानव, पशु, पक्षी, आसन वाहन, शस्त्र एव आकृतियो से साकारता देकर गुणो का वर्णन किया है ऐसे स्थानो पर जहा पूर्व मे बडे--वडे नगर थे वहा आज घने जगल हैं, वन, उपवन, पहाडी इलाको मे, गुफाओ मे, जो पाषाणो मे मूर्तिया निर्माण कराई है जिनसे आज भारतीय सस्कृति जीवित है।

इन मूर्तियो से हमे कौनसी अलौकिक शिक्षा प्राप्त होती है। उसे आप पढिये, समझिये, मनन कीजिये। अपने व परके कल्याणमार्ग मे लाइये।

दश-अवतार इसी मानव मे है। समुद्र-मंथन जो देव दानवो ने किया वह समुद्र यही मानव-शरीर है। देव और दानव हमारी शुभा-शुभ मनोबृत्ति और क्रियायें हैं। अब हमे यह देखना अति आवश्यक है कि हम किसे त्याग देवें। इसी मानवीय जीवन मे चौदह रत्न है, यही कारण है कि नर और नारी को रत्न कहा है।

दश अवतार

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज, दो भूपाल ।
इक मौनी, अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ॥३॥

हम यहाँ पर मच्छ, कच्छ, बाराह इन तीनों से सम्बन्धित अवतारों का वर्णन इन चौदह रत्नों में करते हैं। जिनका मन चचल मछली के मानिन्द तीव्रगति से मन-समुद्र में विपत्तियों के तथा सुख समृद्धि काल मे गमन करता है और शरीर की गति कछवे के मानिन्द अग सकोच कर विषय वासनाओं के कारण संकुचित हो जाती है। और कामी पुरुष विषयों में आनन्द मान कर तीन चीजों को दाँतों से पकड़ता है, जो एक प्रकार से माया है। वह है.—

धरा, कनक, अरु कामिनी, ये है कडुवी बेल ।
बैरी मारै दाव दे, ये मारै हँस खेल ॥४॥

जो प्रायः बाराह अवतार में चित्राकित हैं । जिसका सम्बन्ध पुरुषार्थ से है। पुरुषार्थी व्यक्ति ही विष्णु है, जो प्रजापालक है, प्रजा--परिवार। का पुत्रवत् पालन करता है। जोः—

धर्मार्थकाममोक्षाणां, यस्यैकोऽपि न विद्यते ।
अजागलस्तनस्यैव, तस्य जन्म निरर्थकम् ॥५॥

इन चारों नीतियों को समयानुसार भोग कर भी विरक्त रहता है। वही ब्रह्मा है। जिसने वस्तु के स्वभाव और गुण को जाना, अपने हाथ मे संचय किया वह ज्ञानामृत है । जिसमे ज्ञान है वही ध्यान कर सकता है। वही पराक्रमी अपने पराक्रम से सांसारिक भोगो को भोगता हुआ ससार से विरक्त होकर मोक्षलक्ष्मी प्राप्त कर सकता है ।

हमें एक ब्रह्मा की मूर्ति विदिशा जिले के चौरासी खामखेड़ा के तालाब पर माता के चबूतरे पर अस्तव्यस्त दशा मे एक पाषाण पर देखने में आई, जिसका चित्र हाथ से निकाल कर लाये हैं। उस मूर्ति के चार हाथ हैं, एक हाथ मे ढाल, दूसरे हाथ मे तलवार, तीसरे हाथ मे अग्नि, चौथे हाथ मे अमृत कलश है । चार मुख और हंस वाहन है । इस अमृत कलश का अर्थ ज्ञानामृत से है। जिसमे ज्ञान विवेक के साथ है वही शासन कर सकता है, जिसका सूचक तलवार है, और जिसके हाथ में ढाल भी है । वह है क्षमा की ढाल, जिसके हृदय मे दया है। चौथे हाथ मे अग्नि है वह अपनी कर्म निर्जरा कर ध्यानाग्नि के द्वारा मोक्ष प्राप्ति के लिये बतलाई हैं । वह आदि ब्रह्मा भी है । ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की है तो आप भी अपना परिवार बनाते है । जो आपके बच्चे है, गार्हस्थ जीवन मे उतार चढ़ाव आते ही रहते है । इसलिये कहा है—

विधि कों कियो कुम्हार जिन, हरि कों दश अवतार ।
भीख मंगावत ईश कों, ऐसो कर्म उदार ॥६॥

तो यह मानव सासारिक भोगो की लालसा से भोगो को भोगता है और पुत्र व पुत्री रत्न को मथन कर ही तो प्राप्त करता है । और इन्ही मे चौदह रत्न हैं । इन हाथो से जो द्रव्य कमाया जाता है उसी से मानव श्रीमान कहलाता है ।

नं० १ श्री--रत्न

श्री लक्ष्मी का द्योतक है। यह प्रथम रत्न है। इसके बगैर सांसारिक व्यवहार नही चल सकता। इसके लिये विद्याध्ययन, कला, शूरता, वाणी की मधुरता, विवेकपूर्ण ज्ञान, साहस, धैर्य, पराक्रम, समता, राज्य सचालन आदि की योग्यता आदि प्राप्त करने के लिए (श्री) लक्ष्मी की नितात आवश्यक्ता है । जो इस मानव मे किसी भी रूप मे विद्यमान है।

नं० २ मणि--रत्न

प्राय यह देखने मे आता है कि जिसके पास लक्ष्मी होती है वह कृपण भी होता है। क्यो कि लक्ष्मी का वाहन उल्लू इसलिये है कि वह —

खाय न खरचै सूम धन, चोर सबै ले जाय ।

पीछे ज्यों मधुमक्षिका, हाथ मलै पछिताय ॥७॥

— तथा —

यौवनं धन सम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता ।

एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ॥८॥

इस दिशा मे लक्ष्मीवान को चरित्रवान होना अति आवश्यक है । क्यो कि—

धन यदि गया गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ्य गये कुछ जाता है ।

सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है ॥९॥

शील ही मानवो का भूपण है । सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है । शील (ब्रह्मचर्य) ही एक मणि–रत्न है।

नं० ३ रम्भा--रत्न

ऐसा कौन व्यक्ति है जो विषयो मे नही रमा और विषय भोग नहा भाये ? रम जाने का अर्थ तल्लीन हो जाने से है और भा जाने का अर्थ अच्छे लगने से है । लक्ष्मी किसे अच्छी नहीं लगती ? वह केवल है दिगम्बर जिनकी दिशाये ही वस्त्र है, जो जितेन्द्रिय और वीतरागी हैं। जिनके आगे रति और कामदेव भी परास्त होकर चले गये ।

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार ।

पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥९॥

तपस्वी योगसाधना मे रमते है और उन्हे वही भाता है, वही उनकी रम्भा है.—

नं० ४ वारुणी--रत्न

विद्या विवादाय, धनं मदाय, शक्तिः परेषां परिपीड़नाय ।
खलस्य साधो विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥१०॥

विवेकी विद्याविलासी सरस्वती का सम्मान करते है । उससे विवाद तो करते है, किन्तु कुविवाद नही करते ।

ज्ञान का करें गलत उपयोग, खतरनाक है ऐसे लोग ॥११॥

धन मद के लिये नही है—

जो है मंजूर धन रक्षा, तो धनवानो बनो दानी ।
कुए से जल न निकलेगा, तो सड़ जाएगा सब पानी ॥१२॥

शक्ति का उपयोग रक्षा के लिये है हिंसा के लिये नही—

देखा शास्त्र छान छान कर, सब वैभव किसके साथ गया ।
राव रंक सब ही को देखा, अन्त पसारे हाथ गया ॥१३॥

साधु अपने ज्ञान का सदुपयोग और दुर्जन दुरुपयोग करते है । किसी भी प्रकार का मद मदिरा के समान है, उसे वारुणी भी कहते है।

कनक कनक तें सौ गुनी, मादकता अधिकाय ।
वह खाये बौरात नर, यह खाये बौराय ॥१४॥

नं० ५ अमृत--रत्न

ज्ञान अमृत है, जो सभी प्रकार के सुखो का अनुभव कराता है । हमे आम का वृक्ष और महुए का बृक्ष दोनो से बडी भारी शिक्षा मिलती है ।

आम फलै पत राख के, महुआ पत को खोय ।
जो जाकौ रस पियत है, वाकी क्या पत होय ॥ १५ ॥

सजीवन विद्या पढे, मति के कहिये हीन ।
विन विवेक करनी करै, सो वन मे लुट गये तीन ॥ १६ ॥

अंधे को ज्ञान दिया, फेकता फिरा ।
नुगरे को ज्ञान दिया, कहता फिरा ॥ १७ ॥

ज्ञानामृत के पान को, जिसके बहिरे कान ।
उसे पेट का सत्य ही, जीवन मृत्यु समान ॥ १८ ॥

ज्ञान जीव को धर्म है, भर्म त्रास को मेट ।
साच पथ पावै परखि, तब तिस सतगुरु भेट ।। १९ ।।

परख सकती नही रतनो को, हर इसान की आखें ।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हो ज्ञान की आखे ।। २० ।।

वक्ता ज्ञानी जगत मे, पडित कवी अनत ।
सत्य पदारथ पारखी, विरला कोई सत ।। २१ ।।

ज्ञानी जन हैं जौहरी, कर्मी सकल मजूर ।
देह भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर ।। २२ ।।

विवेकी ज्ञानामृत का सदुपयोग अपने आत्मचिंतन मे करते हैं और विवेकशून्य पेटपालन व्यसन, आदि दोषो मे । दुर्जन दूसरो को पीडा देने मे, दानी दान मे। ज्ञानी ज्ञान मे, सज्जन दूसरों की भलाई मे लाते हैं । करते है और दूसरो को मार्ग दर्शन कराते हैं । किन्तु वर्तमान शासक उपकारी निरपराध पशुओ का कारखाने खोल कर मशीनो के द्वारा बध करा रहे है । क्या यह विवेकी मानवो की शोभा की वस्तु है ? आज समस्त भारत मे गोबध को रोकने के लिये साधु और सत पुरुष, निहत्थे नि शस्त्र बाल, युवा, वृद्ध, और अनशन करने वाले सत्याग्रहियो पर अश्रु गैस के वम, तथा गोलियाँ वर्षा कर कष्ट पहुचाया जाता है । समस्त भारत में जहा घी, दूध, दही की नदियाँ बहती थी वहाँ आज खून की नदिया बहती है । विदिशा की बेतवा नदी में मछली आदि की शिकार की मुमानियत सिंधिया राज्यवश द्वारा थी, वहा आज ठेके दिये जाने लगे । क्या यह भारत के लिये कलक नही है ? या यह ज्ञान का सदुपयोग कहा जावेगा ? यह स्पष्ट है कि :—

खान पान का चित्त पर, पड़ता अमित प्रभाव ।
जैसा शुद्ध अशुद्ध हो, वैसे बनते भाव ।।२३।।

नं० ६ शंख--रत्न

यथा नाम तथा गुणा. । आप जानते ही है कि शख का पेट फटा हुआ है। नाम दरिद्री इस लिये है कि हम अपने स्वार्थ के लिये ज्ञानवान होकर भी तथा राज्यकीय सत्ता, अधिकार प्राप्त कर भी हिंसा को नहीं रोक सकते तो क्या यह हमारी मूर्खता नही है ? यही यथा नाम तथा गुण है ! शख देवमदिर मे रहता है तो सत्ताधारी शासक राजमदिर में। विवेकी और बुद्धिमानो के साथ रहते है । मानव शरीर समुद्र हैं, समुद्र मे मगरमच्छो की भाति काम क्रोध लोभ मोहादि है । इसी शरीर से परिश्रम कर लक्ष्मी प्राप्त करते हैं और लक्ष्मी से विषयसुख होता है। सुख का अनुभव प्राप्त होता है । यही शनिवार है। इससे यह स्पष्ट हो गया कि समुद्र की पुत्री लक्ष्मी और उसका भाई चन्द्रमा है, जो सुख और शान्ति का प्रतीक है । एक साथ विषय वासनाओ के अणुओ से वना शरीर है, जिसका पुत्र कामदेव यौवनावस्था है। शैया विषय वासनाओ की जो काल (सर्प) (मृत्यु) (समय) कालरूप हाथी (कालरूप सिंह) (सात वार) कर कहे है।

सात वार का अर्थ है हमे इस शरीर का इतवार नही, कब नष्ट हो जावे, तो सोम कहाँ ?

सोमवार हमारे सुख और शान्ति कलक सहित है। जिस प्रकार से चन्द्रमा शीतल है किन्तु कलंक सहित है। मगलवार जहाँ सुख और शान्ति नही वहाँ मांगलिक कार्य नहीं हो सकते। बुधवार। क्यो कि हमे जब विश्वास नही तो इतवार गया। सुख और शान्ति नही तो सोमवार गया। मागलिक कार्यों मे बाधा उपस्थित होगई। क्योकि इनसे भय उत्पन्न हो गया इसलिये बुद्धि भ्रष्ट होगई। क्योकि हमारे उपरोक्त कारणो से सद्गुरु नही मिले जो हमे सन्मार्ग–दर्शन कराते। इसलिये गुरुवार भी बार करने लगे। गुरु हमारे अनुकूल नही तो हमे सुख कहाँ रखा है ? इसलिये शुक्रवार भी हमारा शत्रु बन गया। क्यो कि हमे विषयो की चाट लगी है जो विनाशीक है, नाशवान है। हम जानते है कि गौ भारत जैसे कृषिप्रधान देश का मुख्य और परोपकारी पशु है, जीवित अवस्था के अलावा मरने के उपरात भी हमारे चरणो की सेवा करता है। जब हम उसके नही हुये तो हम किसी के नही हो सकते। हम अपना सुख देखते है पर दूसरो का नही, इसलिये शंख है अर्थात् मूर्ख है, क्यो कि जिनकी दाढो से खून लगा है निर्दयी है, मांसाहारी है, दया रहित है, कठोरता धारण किये है, कठोरता से कभी भी विजय नही मिलती। विजय ही शनी है, शनी का वाहन भैसा है। कामराज ही भैसा है। इन सातो वारो मे इन जुल्म करने वालो की मृत्यु होना है। यह सात वार इन पर आक्रमण कर रहे है। और जो विवेकी और बुद्धिमान है, राजा भोज के समान अपने विवेक की शखध्वनि कर ससार मे जीवित रहने की जिज्ञासा से गो--रक्षा मे अपने जीवन की आहुति दे रहे है वही वीर--पुरुष है।

मर के भी रहता है जिन्दा, बाण का मारा हुआ।
पर है जीते जी मरा, अपमान का मारा हुआ ॥२४॥

यह न० ६ का शखरत्न हमारी शठता का प्रतीक है। जहा हमे शुभ सगति मे जाना चाहिये था वहाँ हम अपनी शठता का मार्गदर्शन करा रहे है। विषयो मे विषयलपटी सद्शिक्षा काउल्लंघन कर दुधारे पशुओं का भारत से सर्वनाश का बीड़ा उठाये है।

नं० ७ गजराज (हाथी) रत्न

आप जानते ही है। कि मन मतग (हाथी) है इसे संयम का अकुश चाहिये। वह सयम का अकुश योगी पुरुषो से प्राप्त होता है। उन्हे जेलखानो मे ठूंस दिया। जहां कुछ गुण प्राप्त करना चाहिये था वहा हम अपने स्वतत्रता की आड मे स्वच्छन्द होकर निरकुशता धारण कर मदोन्मत्त हाथी की तरह अर्थात् खूनी हाथी बन कर खून करने पर उतारू है। जो मानवता के नाते शोभा नही देता। खूनी हाथी का प्रतिकार महावत के अंकुश के द्वारा ही हो सकता है। "न धर्मो धार्मिकैर्विना"।

मनुज मनुज में हो यदि अन्तर, दनुज दनुज का क्या होगा।
भाई भाई का बने विपक्षी, भावी उसका क्या होगा ॥२५॥

लगी है कुछ इस किस्म की आग, कि भाई जलता है आज भाई से।
उम्र भर इत्तफाक से रहना, सीखे कोई दियासलाई से ॥२६॥

इन सत्ताधारी मानव कहलाने का दावा करने वाले गणतत्र राज्याधिकारी गण त्रि-देव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) जैसे होना चाहिये थे। वहा यह राक्षसरूप हैं अर्थात् इनकी दानवीय वृत्ति है। इनके वाहन देखिये, जिनके बल पर राज्य कर रहे हैं।

जानत था मैं देवी का बाहन, माता को बाहन बैठोहि पायो।
शिव बाहन की सभा भरी, शनी के बाहन ने शीस हिलायो ॥२७॥
विष्णु को बाहन नजर न आयो, लक्ष्मी के बाहन ने शोर मचायो।
दुर दुर तो बहुतेरो कियो पर, भैरों के बाहन ने काटहि खायो ॥२८॥

इस कविता का भावार्थ यह है कि मे जानता था कि इस भारत के साम्राज्य की बागडोर इन सिंह--पुरुषो के हाथ मे होगी। सिंह दुर्गा का बाहन है। किन्तु वहा बैठे दिखाई दिये शीतला माता के वाहन। प्राय हम उन बालको को जो पढने लिखने मे मन नही लगाते या मूर्खता के कार्य करते हैं मूर्ख या गधे कहा करते हैं। शिव जी का वाहन नन्दी वह भी बूढा बैल जो धर्म और दया का प्रतीक पात्र है। बोट लेकर राज्यसत्ता पाई है। और यह निर्दयता का कार्य कर रहे हैं जो हिंसक पशुओ के समान हैं। शनी महाराज का बाहन भैंसा रिश्वतें लेने हेतु दौडा, भत्ता बढा चढा वेतन पाकर, दिन दहाडे सभ्यता के साथ डाका डालने मे चतुराई के साथ धनसचय कर कोठिया निर्माण कर अनेको प्रकार के चढा बढा कर टैक्सो से प्रजा को दुखी कर चूसने की क्रिया मे सर्वगुण सम्पन्न विषयो मे आसक्त, गौबध रोकने की प्रार्थना को हाथी जैसा सिर हिला कर अस्वीकार कर रहे है। यह गजराज रत्न है, किन्तु खोटा है।

विष्णु का बाहन गरुड़ अर्थात् ज्ञान है। इनमे कोई ज्ञानवान मनुष्य जिसके हृदय मे दया हो और अपनी लेखनी का सदुपयोग करके अपनी वीरता का परिचय दे सके नही हैं। क्यो कि विष्णु की पत्नी लक्ष्मी जी, उनका वाहन उल्लू है। राज्यलक्ष्मी प्राप्त कर उल्लू बने बैठे है। स्वार्थत्याग नही करना चाहते।

वैशाखना बुल बुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से।
बर्वाद गुलिस्तां करने को, बस एक ही उल्लू काफी है।
हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्तां क्या होगा ॥२९॥

भावार्थ—आज भारत की प्रत्येक आत्माए अचानक ही ऐसी भीषण सकटकालीन स्थिति, निर्दय व्यवहार के आतकित घटनाओ से त्रसित होकर एक दूसरी आत्मा जो कि चलते फिरते बगीचे हैं चर्चा करते हैं कि अब क्या करे। इस बगीचे को बर्वाद करने को एक ही उल्लू काफी था अर्थात् एक ही व्यसन जब इस मानव देह को बर्वाद कर सकता है तो हर शाख पै उल्लू बैठा है यानी प्रत्येक अग पर स्वार्थ वासनाओ के उल्लू बैठे, है तो इस बगीचे की क्या दशा होगी? जो इस राज्यसिंहासन पर हल्ला मचा रहे हैं।

हम अपनी प्रार्थना को लेकर उन्हे समझाने जाते है तो वह खिसिया कर तिरस्कार करते हुए भैरों का बाहन कुत्ता के द्वारा कटवाते और मरवाते, अश्रु गैस के बम उड़वा कर निरपराधों की हत्याएं करते हैं। और कराते है यह मदोन्मत गजराज है। यह शठता का प्रदर्शन कर रहे हैं।

नं० ८ कल्पदुम (कल्पवृक्ष) रत्न

जीवन एक बगीचा है, श्वांस नीर ने सींचा है।

भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सर नीचा है ॥३०॥

इस बगीचे मे १० प्रकार के कल्पवृक्ष निम्नांकित है। जिनका उल्लेख श्री दिगम्बर जैनाचार्य शुभचन्द्र जिनका अपर नाम गोपीचन्द्र या मछन्दरनाथ हैं। जो भर्तृहरि योगिराज के अग्रज भ्राता थे और महाराजा भोज अनुज भ्राता थे। इनकी तपोभूमि भोपाल के निकट समसगढ में रही है।

भर्तृहरि की तपोभूमि आशापुरी, भोजपुर आदि जो भोपाल के निकट हैं। आचार्य शुभचन्द्र ने भर्तृहरि जी को दीक्षा के पश्चात् पढाने के अर्थ एक ज्ञानार्णव नामक ग्रन्थ पृष्ठ सं० ३८७ श्लोक स० १७५ मे लिखा हैं। उक्त ग्रन्थ मे यह श्लोक है:—

मद्य तूर्य गृहज्योतिर्भूषा भाजन विग्रहाः।

सुदीप वस्त्र पत्रांगा दशधा कल्पपादकाः ॥३१॥

भावार्थ.—मद्य-(१) स्त्री का नशा अर्थात् लक्ष्मी। (२) वादित्र सगीतयुत गायन। (३) गृह--गृहिणी। ज्योति (४) घर की शोभा। (५) भूषण--शील-सदाचार। भोजन (६) समय पर आहार। माला (७) वैराग्य पैदा करने वाली। और भगवत् भक्ति में लेजाने वाली मार्गदर्शक। दीपक (८) कुल दीपक पुत्र को जन्म देने वाली। वस्त्र (९) विषय वासनाओ के सबंधी ओढने का वस्त्र। पात्र (१०) विषयो का पात्र। इस प्रकार से यह मानव जीवन एक बगीचा है। जो दश प्रकार के भोगों को स्वर्ग के देवों के समान भोगता है। इसे अपने स्वार्थ अर्थात् इन्द्रियों के वशीभूत जो क्षणिक रसास्वादन करा कर नष्ट हो जाती है अभिमान कर रहा है और गो जैसे वश के नाश करने के लिये अपनी लेखनी और मन को परोपकार मे नही लगाता। इस उत्तम रत्न का दुरुपयोग कर अपनी राक्षसी वृत्ति अपना रहा है और राज्यसत्ता को कलंकित कर रहा है। विश्व के प्राणियो के समक्ष लज्जित होते शरम नही लाता। मूर्ख (भोदू) इसे काट रहा, आयु व्यतीत कर रहा है।

श्वास श्वास पर हरि भजो, वृथा श्वास मत खोय।

ना जाने या श्वास को, आवन होय न होय ॥३२॥

नं० ९ शशि (चन्द्रमा) रत्न

आपने देखा होगा कि भगवान शकर के ललाट पर चन्द्रमा चमक रहा है। यह क्या वस्तु है ?

इसे समझिये अपने ठडे दिमाग से सोचिये, स्वभाव मे शीतलता लाइये। क्रोधाग्नि मानव को जलाती है और ठडे विचारो से सोचने मनन करने पर विगडे काम भी सुधर जाते है। यह वही चन्द्र है जो रत्न के रूप मे शकर जी के मस्तक पर दिखाया गया है।

बुरी वातो का सामना करो। ३ बाते मत भूलो (१) दूसरो के द्वारा किया गया उपकार (२) भगवत् भक्ति (३) अपने दोष। तीन वातो पर सदा चलो। (१) निपराध जीवो की हिंसा न करो। (२) सदा निष्ठापूर्वक सत्पथ पर चलो। (३) परोपकार करो। उदारता व्यर्थ नही जाती।

नं० १० धेनु--रत्न

न० १० जिसका सकेत गौ से किया गया है। वन्धुगण! गो माता ही भारत का प्राण है। भगवान शकर का बाहन नदी क्यो है ? और दुर्गा का बाहन सिह क्यो है ? इन सबका उत्तर आपको आगे देवेगे। यहा केवल गो माता से ही सबध है। ध्यान से पढिये।

अरे बावले सोच समझ तू, क्यो बनता नादान।
विन विवेक तू करनी करता, पढा लिखा अज्ञान ॥ ३३ ॥

गो माता का दूध पिया तुम, नन्दी गण से बोट लिया तुम।
नन्दी गण है शकर बाहन, गो वश मिटावन निर्दय क्यो तुम ॥ ३४ ॥

राज्यलक्ष्मी पा अभिमानी, खूनी नर तू सिंह बना।
दूध दही घी माखन मावा, खा पी कर वलवान बना ॥ ३५ ॥

दुःख सुख रोगावस्था तेरी, रोग गया आखे फेरी।
ज्ञानी होकर बना अयाना, माता से ये आखे फेरी ॥ ३६ ॥

भारत से गोवश मिटाने, कुपथ पथ तू चला अयाने।
समझ समझ ओ अरे विवेकी, हठग्राहिता छोड सयाने ॥ ३७ ॥

करुणा दया भाव सम लाकर, दुर्बुद्धि को दूर भगा कर।
कृषीप्रधान देश की शोभा, रक्षा सत्ताधारी कर ॥ ३८ ॥

गोधन गजधन बाजधन, रतन खान बहु धान।
जिन धरयो सतोष धन, सब धन धूल समान ॥ ३९ ॥

जिस प्रकार से गो माता के सतोष होता है उसी प्रकार से जिन्हे संतोष है वही धेनु रत्न है।

सव की गठरी लाल है, बिना लाल कोई नही।
वना फिरै कगाल, गाँठ खोल देखी नही ॥४०॥

कामधेनु है दया तुम्हारी, सुख सचय नित करती।
वृष है धर्म, धर्म वृषभ है, जो सुख साधन करती ॥४१॥

नं० ११ धनु--रत्न

काम क्रोध जठराग्नि, अग्नि चार परकार ।
ध्यान अग्नि चौथी कही, समझ लेहु करतार ।।४२।।

संयम धनु कर लेहु तुम, वचन बाण गहौ हाथ ।
वाक बाण मारो नही, सयम तुमरे हाथ ।।४३।।

नं० १२ धन्वन्तरि रत्न

नरभव सुन्दर पाय, आतम मे चित दीजिये ।
आतम शुद्ध स्वरूप, वाही को रस पीजिये ।।

रे रे आतम राम, विषयन की आशा तजौ ।
आशा रसरी बाँध, डूबे हो भव-कूप मे ।।४५।।

ममता दुख को बीज, समता सुख की मूल है ।
विपदा होवे दूर, समता में चित लाइये ।।४६।।

लखत सुनत सूंघत फिरत, इन्द्री तृपत न होत ।
मन रोके इन्द्री रुके, ब्रह्म परापति होय ।।४७।।

कीजे यही उपाय, नर-भव तेरा सार है ।
फिर पछतावे भारी, नातर जन्म वृथा गया ।।४८।।

वही ध्यान वह जाप व्रत, वही ज्ञान सरधान ।
जिन मन अपना वश किया, तिन सब किया विधान ।।४९।।

भोग व्यसन सुख ख्याल मे, दई मनुष्य गति खोय ।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपदा भोगै सोय ।।५०।।

जंह संयोग तह भोग है, जहा भोग तह रोग ।
जहाँ रोग तंह काल है, कालहि मृत्यु वियोग ।।५१।।

सब विकार त्यागन किये, तजा क्रोध अभिमान ।
तजी भरम की भावना, व्याप गया गुरु ज्ञान ।।५२।।

जब लग लाल समुद्र मे, तब लग लख्यो न जाय ।
निकसि लाल बाहर भयौ, मंहगे मोल विकाय ।।५३।।

उपरोक्त पद्यों में निम्नांकित भावार्थ है

सत्ताधारी राज्य शासक :— ज्ञान का दुरुपयोग करने वाले पढ़े लिखे भी मूर्ख होते या नही ?

(१) यह तेरे सांसारिक भोग (विषय) ही रोग है ।

(२) यह मानव शरीर भोगो का और रोगो का घर समुद्र ही भवकूप है। और इस मे तू डूबा हुआ है।

(३) इसमें से निकलने के लिये आशा की रस्सी में अहिंसा का कांटा बंधा है।

(४) आत्मीयता, एवं सहानुभूति रत्न हैं। जो ब्रह्म (आत्मा) गो में है वही तेरे में, वही अनशन करने वाले साधु-सन्यासी बाल युवा बृद्ध में। किन्तु तू मासभक्षण मत कर, जिहवा इद्रिय का दमन कर। ब्रह्म प्राप्ति (यश पाने) का यही एक मात्र उपाय है। समता धारण कर।

कांटा कांटे से निकलेगा, विष होगा विष से निर्मूल।
दुष्टों पर करते अनुकंपा, यही मानवों की है भूल ।।५४।।

(५) सद्गुरु ज्ञान, उपदेश, अनशन, यह जडी बूटी हैं। जो कि तुम्हारे चचल मन को जो कि काम, क्रोध, मान, माया, लोभ के वश विषयो मे आसक्त है रोगो को आमन्त्रित करता है।

(६) राज्यसत्ता का उपभोग, और दुरुपयोग कर काल को क्यो आमन्त्रित करता है ?

(७) सयम की घुटी औषधि जडी बूटियो से युक्त रासायनिक एव ज्ञानामृत पेय से आरोग्य बन। यह तेरा मन और हाथ की लेखनी ही धन्वन्तरि बैद्य है।

नं० १३ विष रत्न

हे विद्वान ! यह मानव शरीर विषधाम-विषयो का घर है। विषधर सर्प का सूचक है।

विच्छू के पीछे बसै, मुख में बसत भुजंग।
नाहर के नख में बसै, सो सब मानव--अंग ।।५५।।

गुणीजन, यह शरीर विषय-वासनाओ को धारण किये है, इसलिये दोहे की साकारता प्रमाणित होती है। यही विषधर है प्रतीक सर्प से लिया गया उदाहरणार्थ।

इस मानव शरीर के प्रत्येक अग मे शकर जी के सर्पो के आभूषण मानवाकृति गरुड के शरीर पर सर्पो के आभूषण, विष्णु की सेज शैया और सिर पर घटाटोप सर्पो की फणावली। यह सब कारण प्रतीकात्मक पूर्व जैनाचार्यों ने पाषाणोत्कीरित मूर्तिकला मे निहित कर मूक भाषा मे कथाए आपके समक्ष रखी है, जिन्हे आज तक किसी भी विद्वान ने न समझा और न समझने की कोशिश की कि यही मानव शरीर विष-विषयो का घर है। और विष के समान विष है। अनत सर्प को कहा है। इस मानव शरीर मे अनतानन्त काम, क्रोध, मान, माया, लोभ लिपटा हुआ है।

यदि इस विष का वास्तविक रूप से समय के अनुसार उपयोग मे लाया जाय तो महा पुरुष जैसे रत्न उत्पन्न होते हैं। और नही तो इस मानव जीवन का जन्म लेना भैरो के वाहन (कुत्ते) के समान जन्म लेकर मरने के बराबर है।

नं० १४ वाजि (घोड़ा) रत्न

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान ॥

भव्य पुरुषः—यह मानव-शरीर रथ के समान है। ब्रह्म (आत्मा) इसका संचालक है, अर्थात् ड्रायव्हर है। इद्रियां घोड़े है। और इन इंद्रियों पर काबू पालेने वाला अपने अधिकार मे लेकर अपनी इच्छाओ को दमन करने वाला सयमी पुरुष विवेकवान ही धीमान् कहलाता है। लक्ष्मी तो वेश्याओं के पास भी इकट्ठी हो जाती है।

यह चौदह रत्न इस मानव--शरीर मे जिस प्रकार से शोध किये गये आपके समक्ष मौजूद हैं आशा है, विवेकी पाठकगण विचारेगे और मनन कर सदुपयोग करेगे।
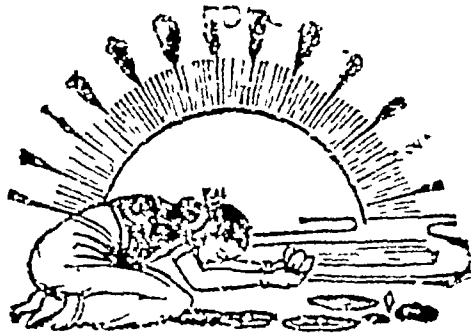
आचार्य भद्रबाहु का जीवन चरित्र

पुण्ड्रवर्द्धन देश मे सतपुर नगर था । उस नगर का राजा पद्मरथ प्रकाण्ड विद्या एव बुद्धि का भण्डार न्यायवान शासक था ।

इसी नगर मे सोमशर्मा नामक ब्राह्मण था, जिसकी भार्या का नाम श्रीदेवी था । इन्होके एक विलक्षणबुद्धि वाला उत्तम गुण सयुक्त महान रूपवान भद्रवाहु नामक पुत्र हुआ । यह सरलस्वभावी वालक था । एक दिन यह अनेक बालको के साथ वडी चातुर्यता से गोलिया खेल रहे थे । इन श्री भद्रबाहु जी ने १३ गोलियो से उन बालको को पराजय दी । इस समय तक यह पढे लिखे नही थे । जहा पर श्री भद्रबाहु जी गोलिया खेल रहे थे उसी मार्ग से १४ पूर्व के ज्ञाता श्रुतकेवली गोवर्धनाचार्य निकले । आचार्यश्री को इन बालको के समुदाय मे भद्रबाहु की विशाल बुद्धि, विनय, चातुर्यता एव पात्रता देख कर ही ठहरना पडा । और मनमे विचारने लगे कि यही पाचवाँ श्रुतकेवली होने वाला बालक है । यह बात निमित्त ज्ञान से जानी ।

पश्चात् सोमशर्मा ब्राह्मण के घर जाकर उदारहृदय श्री गोवर्धनाचार्य ने कहा कि हे विद्वज्जन ! क्या तुम अपने पुत्र भद्रबाहु को विद्याध्ययन के लिये दे सकोगे ? हमारी इच्छा इस बालक को विद्या पढाने की है ।

आचार्यश्री ने इस बालक मे क्या पात्रता देखी ? अन्य बालको की अपेक्षा (१) विनय (२) वाणी की माधुर्यता (३) कार्य की सलग्नता (४) साथियो के प्रति सहृदयता (५) चातुर्यता से विजय (६) दयामय परिणाम (७) शील (८) सयम से बोलना (९) व्यवहारकुशलता (१०) उदारता (११) त्याग (१२) और दूसरे को अपना किस तरह बनाना । यह (द्वादश अग) बातें उनमे देखी । यह आचार्य विद्यादान देने के पूर्व देखा करते थे । किन्तु आज की विद्या किस प्रकार की है—

बच्चों के खूं में माँ बाप की बू आये कहाँ से ?
दूध तो डिब्बे का है, तालीम है सरकार की ।।

ज्ञानी जन है जौहरी, करमी सकल मजूर ।
देह--भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर ।।

योग्य शिष्य श्री भद्रवाहु जी को योग्य आचार्य श्री गोवर्धन जैसे गुरु मिले । यह भी एक पूर्व पुण्य का फल है । जो घर वैठे आचार्य का शुभागमन हुआ । और प० सोमशर्मा ने आते देख वडी भक्ति से सम्मानपूर्वक आसन देकर विनम्र भावो से आगन्तुक अतिथि का स्वागत करते हुये विठाया और कहा भगवन् ! मेरे भाग्य का उदय हुआ जो आचार्यश्री के चरणो से यह घर पवित्र हो गया । इस प्रकार की माधुर्यभरी वाणी उस ब्राह्मण के मुख से निकलने के पश्चात् आचार्य ने

कहा—हे भद्र ! क्या तुम अपने इस बालक को विद्या पढ़ाने के लिये दे सकोगे ? इस बालक के कण्ठ मे विद्या विराज रही है और यह बालक विश्व मे आपके वश को ही नही, अपितु विश्व को भव–सागर से पार उतारने का एक केवट है। यह बड़ा भारी विद्वान होगा। इसका भविष्य उज्वल है। इस प्रकार से कहने पर प० सोमशर्मा ने प्रसन्नतापूर्वक उस बालक को सुपुर्द कर दिया और गुरु आशीर्वाद देकर बालक को अपने साथ ले आये।

भद्रबाहु और पाठ्यशाला

गोवर्धनाचार्य गिरि–गुफाओ मे जहाँ एकान्तवास था, विद्याध्ययन कराने लगे। कुछ काल व्यतीत होने पर भद्रबाहु विद्या मे पारंगत बन गये। जब आचार्य ने देखा कि यह सभी बातो मे पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर चुका है, किसी भी बात की कमी नही रही, उस समय उस बालक को आचार्य ने माता–पितादि के पास भेज दिया।

यह था आचार्य जी का विद्यादान, निःस्वार्थ सेवा। वर्तमान में विद्या लोकहितार्थ नही अपितु विषय--सेवनादि के लिये बना रखी है। यह है पूर्व वर्तमान गुरुओ और विद्या का अन्तर प्रदर्शन।

समय जाते देर न हुई थी कि बालक गुरु–आज्ञा से माता–पितादि के निकट जाने का आदेश प्राप्त कर घर पर पहुचा और बडी विनय और भक्ति के साथ माता–पितादि के चरण–स्पर्श किये। तत्पश्चात् नगरवासियो से यथायोग्य विनय से मिल कर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया। जिससे नगरवासियो में सहृदयता उत्पन्न हुई और बडी प्रसन्नता की लहर दौड गई तथा वे पूज्य माने जाने लगे। यह था पूर्व विद्याध्यनन का आदर्श।

समय जाते देर न हुई कि माता पिता पुत्रस्नेह से ओतप्रोत होकर उसके विवाह की तैयारी करने लगे। यह बात जब भद्रबाहु को ज्ञात हुई तो उन्होने माता पिता से कहा—पूज्य ! स्त्री भवसागर है। इसके भंवर मे जो फस जाता है वह नाना प्रकार के जन्म--मरण, गर्भ वेदना और नरको की यातनाओ को भोगता है। यदि कदाचित् उदर से बाहर निकला तो निकलते समय यह जीव कहता है—कहाँ !--कहा !! कुछ दिन बाद वह अपने मल--मूत्रादिक में लिपटने और नरक–यातनाओ को भूल जाता है। यह ससार दु.खो का घर है। इसलिये मै पूर्ण बाल--ब्रह्मचारी रहूँगा और विश्व मे आपके वंश की बृद्धि अजर अमर रखू गा। वह सब सच ही हुआ।

देखिये, आज हजारो वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी उनके नाम स्मरण करते है। यह है उनके जीवन का आदर्श। अन्त मे उन आचार्य भद्रबाहु ने श्री गोवर्धनाचार्य से जिनदीक्षा ली और वे सच्चे सुख का अनुसरण करने लगे। आचार्य श्री गोवर्धनस्वामी ने अपनी आयु का अल्पकाल जान कर, देशकाल के अनुसार सभी उतार--चढाव और भविष्य समझाकर भद्रबाहु को आचार्य-पद देकर और फिर स्वय समाधि लेकर मोक्ष प्राप्त किया।

कालगति के अनुसार आचार्य भद्रबाहु स्वामी समस्त शास्त्रो के ज्ञाता, कलाओ मे निपुण, जिनका ज्ञान ही नेत्र है, जिनके मुखकमल से अमृतरूप वचनो की गगा बहती है, ऐसी कल्लोल करती स्याद्वाद की तरगो से युक्त सरस्वती ने मुनिगण एव जन–समुदाय मे भव्य भावनाये उत्पन्न करदी। इसके पश्चात् ही मुनिगण का विहार होता हुआ इस विदिशा नगर के उद्यान उदयगिरि नामक पहाडी पर आया था। उसी समय चन्द्रगुप्त आचार्य के दर्शनार्थ पधारे और उपदेशामृत पान किया।

सम्राट् चन्द्रगुप्त और आचार्य भद्रवाहु

(उदयगिरी गुफा न० ५, विदिशा)

बाराह--मूर्ति

जिस काल मे इस बाराह-मूर्ति का निर्माण हुआ वह स्वर्णयुग कहा जाता था। इस काल मे मनुष्यो के परिणाम कोमल, दयार्द्र, न्याय--युक्त, भव्य, दूरदर्शी, गुणज्ञ, विचारवान, पराक्रमी, सत्कल्याणी, सद्व्यवहारी और शास्त्रो के पारगामी होते थे ।

ऐतिहासिक परम पुनीत विदिशा नगरी के उद्यान मे सौभाग्य से विचरण करते हुये आचार्य भद्रवाहु स्वामी अपने शिष्यो सहित आर्यावर्त नामक पर्वत पर पधारे । और ये गुफा न० १ जिसे सूर्यमन्दिर कहते हैं उसमे विराजमान हुये ।

जिस प्रकार सूर्य अपने आताप (गर्मी) से शीतकाल मे होने वाले भयकर रोगो का नाश कर देता है, उसी प्रकार से भद्रवाहु स्वामी के उपदेशामृतरूपी तेज ने चन्द्रगुप्त के पाषाणी हृदय को जो बर्फ की तरह पाषाण बन रहा था, पिघला कर नम्रीभूत कर दिया । जिससे सम्राट चन्द्रगुप्त, मार्गदर्शक, ऐतिहासिक, दार्शनिक महापुरुष बने । जिनकी कीर्तिरूपी प्रभा आज भी विश्व मे जीवित है। इस सम्बन्ध मे इनके मन्त्री वीरसेन जो इनके साथ थे, उन्होने एक शिलालेख गुफा न० ६ के दरवाजे पर बाहर ही अकित कराया है ।

अनुवाद--शिलालेख गुफा नं० ६

"सिद्धम्" । सबसे प्रथम सिद्धो को नमस्कार किया है । सवत् ८०२ आषाढ शुक्ला ११ के दिन सम्राट चन्द्रगुप्त जब कि यह महाराज कहे जाते थे, जिन्हो की दृष्टि गुणावलोकी थी, अपने गुरु श्री महाराज छगलक के पौत्र श्री महाकवि नीतिज्ञ महापुरुष जो चाणक के नाम से प्रसिद्ध है, जिनका लिखा नीतिग्रन्थ हितोपदेश है । उसमे इनका नाम विष्णुदत्त चाणक है । यह स्वभाव के अति क्रोधी तो थे ही किन्तु एक सनक भी होने से सनकीनस्थ महाराज भी कहते है । उनका यह देहधर्म अर्थात् शरीर द्वारा की गई स्मृतिरूप क्रिया है । जो साकारता के रूप मे विद्यमान है।

प्रतिलिपि शिलालेख गुफा नं० ६

१।। सिद्धम् । सवत्सरे ८०२ आषाढ मासे शुक्लेकादश्या परम भट्टारक महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त पादानुध्यातस्य ।।२।। महाराज छगलक पौत्रस्य महाराज विष्णुदासपुत्रस्य सनकानीकस्य महाराज ढलस्याय देयधर्म ।

गुफा न० ६ पर खुदा हुआ है जो इसी गुफा नं० ५ से लगी हुई है ।

प्रतिलिपि गुफा नं० ७

१॥ सिद्धम् ॥ यदन्तज्योंतिरवर्काभमुर्व्यामव्यापि चन्द्रगुप्तास्यमद्भुतम् । विक्रमावक्रयक्रीता-दासन्यग्भूतपार्थिवामानसंरक्ता धर्म तस्य राजाधिराजर्षेरचिन्त्यो (त्साहकर्म्मण) अन्वय प्राप्त साचिव्यो व्यापृत: । सधिविग्रहे कौत्सश्गाव इति ख्यातो वोरसेन: कुलारुयया शब्दार्थ न्यायलोकज्ञ: कवि. पाट-लिपुत्रक कृत्स्नपृथ्वीजयार्थ्येन राज्ञैवेह सहागत भक्त्याभगवतश्शंभोर्गुहामेतायकारयत् ॥

हिन्दी अनुवाद शिलालेख गुफा नं० ७

सबसे प्रथम सिद्धों को नमस्कार किया है। चन्द्रगुप्त एक वीर पुरुष व्यक्ति है। जिसकी अद्भुत कीर्ति विश्व मे प्रसिद्ध हे। सूर्य के समान हजारो वर्ष व्यतीत होने पर भी आज जिसकी कीर्ति दैदीप्यमान है। जिसका पराक्रम और धर्म पृथ्वीतल पर सम्माननीय था। इस कारण जनसमुदाय ने दासत्व ग्रहण कर लिया था। ऐसे राजाधिराज चन्द्रगुप्त जिन्हे विक्रमादित्य भी कहते है। जिनका आज संवत चल रहा है। जिनका उत्साह और कर्म आचरय है। जिसका विचार करने मे बुद्धि नही दौडती। उनके मत्री जाति के ब्राह्मण पाडित्य मे निपुण जिनका नाम वीरसेन था। पाटलीपुत्र निवासी कविकुलदीपक शब्द, अर्थ, न्याय, लोक के ज्ञाता, संधि-विग्रह के सचिव (मत्री) कौत्स गोत्री थे। जिस सम्राट चन्द्रगुप्त ने पृथ्वी की विजय यात्रा के उपलक्ष मे तथा आचार्य भद्रबाहु की भक्तिवश कल्याण को देने वाली मूकक्रथाओ से परिपूर्ण शंभू अर्थात् जिन्होंने आत्मा और शरीर रूप पृथ्वी को समान बना दिया है। रागद्वेषादि को नाश करने वाली गुफाए जो मुनियों, विद्वानो के ज्ञान ध्यान का स्थान हे बनवाई।

गुफा नं० २० का शिलालेख

॥ओ नम सिद्धेभ्य ॥ श्री संयुताना गुणतोयधीना, गुप्तान्वयाना नृपसत्तमाना। राज्ये कुल-स्थाभिविवर्द्धमाने, षड्भियते वर्षशतेथमासे। सुकार्तिके बहुल दिनेथ पंचमे, गुहामुखे स्फटविकटो-त्कटामिमाजित। जिताद्विषा जिनवर पार्श्वसंज्ञिकां, जिनाकृति शमदम-वानचोकरत। आचार्य भद्रा-न्वयभूषणस्य, शिष्यो ह्ययसावार्य्य कुलोद्गतस्य। आचार्य गोशर्ममुनेस्सुतस्तु, पद्मावतावश्वपतेत्र पर्य-टस्य। परैर्जयस्य रिपुघ्नमानिनस्स। सधिलस्येस्य भिविश्रुतो, भुविस्य सजया शंकर नाम शब्दितो, विधानयुक्त यति मार्गमास्थित। स उत्तराणां सदृशे कुरुणां उदग्दिशा देशवरे प्रसूत.। ज्ञापाय कर्म्मारि गणस्य धीमान् यदत्र पुण्यम् तदपाससर्ज्ज।

गुफा नं० २० का हिंदी अनुवाद

सिद्धों को नमस्कार। प्रसिद्ध गुप्तवंशीय श्रीसंयुत एवं गुणसपन्न राजाओं के समृद्धिमान राज्यकाल के १०६ वे वर्ष के कार्तिक कृष्ण ५ पंचमी के शुभ दिन शमदमयुक्त शंकर नामक व्यक्ति ने विस्तृत सर्पफणो से भयकर दिखने वाली जिनश्रेष्ठ पार्श्वनाथ २३ वे तीर्थंकर की मूर्ति गुफा द्वार मे बनवाई। ये शंकराचार्य भद्रकुल भूषण तथा आर्य कुलोत्पन्न गोशर्म्म मुनि के शिष्य है। ये माता पद्मावती और पिता संघिल के पुत्र नाम से विशेष विख्यात है। संघिल एक शूर अश्वपति थे और शत्रुओ से अजेय होने के कारण अपने को अजेय रिपुघ्न मानते थे। शंकर ने विधि-पूर्वक यतिमार्ग स्वीकार किया है। उनका जन्म श्रेष्ठ उत्तर-प्रदेश मे हुआ है। उन्होंने सर्वसाधारण के शत्रुओं के क्षयार्थ (इस प्रतिमा-निर्माण-रूप) शुभ कार्यों के पुण्य का उत्सर्ग किया है।

गुफा नं० १ से २० आदि से अन्त तक गुफाये मनोवैज्ञानिक भावनाओं का इतिहास के अनुसन्धान का प्रचार, धर्म, संस्कृति और क्षेत्र का अद्वितीय जीता जागता उदाहरण है।

आचार्यो की परोपकारमय भावनाओ को पाषाण में मोम की भाति कलाकृतियो मे उत्कीर्ण कराई है। जो मानव के जीवन को अपने नैतिक उत्थान की ओर अग्रसर कराती है। यह भले ही है कि हम उसका लाभ न ले, और विपरीत उपयोग करें। प्राय कामांध और कुमार्गगामी ही जिनका भविष्य अधकारमय है कुचेष्टायें कर स्वत को और अन्य व्यक्तियो को पतन की ओर ले जाने की चेष्टा करते हैं। अज्ञानता और विद्वेष इसका प्रमुख कारण है।

हमारा लक्ष्य वास्तविक आध्यात्मिक ज्ञान है जो कि इन प्राचीन प्रतिमाओ मे छुपा है स्वय प्राप्त करें। अधकार मे रहने वाले सहधर्मी जिज्ञासुओ को भी उत्थान की ओर ले जाने मे मार्ग-दर्शन करावे। ऐसा ही प्रयत्न है। नि सन्देह शिलालेख अपनी-अपनी अनन्य भापा लिपियो मे पूर्व महापुरुपो की वैभवशाली कीर्ति की स्मृति दिला रहे हैं। आचार्य चाणक का कथन है—

आयुः कर्म च वित्तं च, विद्या निधनमेव च।

पंचैतान्यपि सृज्यन्ते, गर्भस्थस्यैव देहिनां॥

भावार्थ—देहधारियो के जन्म, मरण, आयु, कर्म, धन और विद्या के लिये विधाता जन्म लेने से पूर्व ही (गर्भ मे) अकित कर देता है। जिसकी कथा एक मनोवैज्ञानिक इतिहास वन जाता है।

समुद्र सात है। (१) ससार, (२) मन, (३) विद्या, (४) कला, (५) गुण, (६) विज्ञान, (७) समुद्र। प्रकृति दो प्रकार की है—एक शुभ और एक अशुभ। जिसे हम पुण्य और पाप के रूप मे ही मानते हैं। पुण्य देव और पाप राक्षस माना है।

पुण्य पठाता स्वर्ग में, तथा नरक में पाप।

दोनों की सन्तान से, होता पश्चाताप॥

सप्त ऋषि—(१) मुख, (२) आख, (३) नाक, (४) कान, (५) त्वचा, (६) मलद्वार, (७) मूत्रद्वार, वासनाओ के घर हैं।

पाच मत्री—(१) प्रधान मत्री--अहकार, (२) गृह मन्त्री--काम, क्रोध, (३) अर्थ मत्री--लोभ, (४) विदेश मन्त्री--मोह माया, (५) रक्षा मत्री--दया क्षमा। इनकी साकारता आचार्यों ने उदयगिरी गुफा न० ५ और १३ मे वतलाई है। प्रथम गुफा न० ५ का इतिहास प्रारम्भ करते हैं। विपया-शक्त ससारी मानव अपनी कामवासनाओ की साधना और उनकी तृप्ति के लिये अविवेकत्वपूर्ण

आचार्य श्रीरत्ननदी विरचित (भद्रवाहु चरित्र) अनुवादक स्व० प० उदयलाल जी काशली-वाल (वडनगर)। प्रकाशक मूलचन्द किसनदास कापडिया सूरत के पृष्ठ न० १४--१५ पर विष्णु की उपासना के सवन्ध मे 'भागवतामपाश्चा' श्लोक दिया है।

अधम से अधम क्या क्या क्रियाये नही करता ? सब कुछ करता ही है। जिसकी साकारता का वर्णन निम्न प्रकार है। सुधीजन त्रुटियों को सुधारने की कृपा करेगे। लेखक अल्पबुद्धि है।

बाराह--मूर्ति

अवतार १० हुये जिनमें बाराह को हम भगवान की कल्पना इसलिये करते है कि इनसे हमें अद्वितीय ज्ञान मिलता है। भगवान बाराह समुद्र मे एक पराक्रमी पुरुष के रूप मे खड़े है और मुख मे स्त्री दबी है। बाराह मुख काम है। काम इसलिये है कि जो भी सासारिक सुखो की कल्पना पैदा होती है सिर मे ही। यही ब्रह्म निवास करता है। कामी पुरुष विषयों मे आनन्द मानता और भोगता है। विषय--भोगो का स्थान (नारी) गुप्तॉग मे है जहा से अपवित्र वस्तु-मल-मूत्रादिक निकलता रहता है। जिसे बाराह आनन्द से खाता है। और स्त्री पुत्र विदेशमंत्री है। स्त्री कामवासना की पुतली है। इसके पीछे मानव अपने प्राणो की आहुती दे देता है। स्त्री तथा पुत्र परिवारादि के पालनार्थ प्रसन्न करने के लिये द्रव्य की आवश्यकता होती है। प्राप्ति के लिये देश विदेश भ्रमण करना पड़ता है। इसे दौलत कहते है। इसमे दो लत है। यह जब प्राप्त होती है तो ऐंठ दिखाती है, जाते समय कमर तोड़ देती है। इसे लक्ष्मी कहते है। इसका बाहन उल्लू है। जिसके पास यह जाती है उसे उल्लू बना देती है। और इसी प्रकार से पृथ्वी पर सम्राट बनने की इच्छा से कमजोरो को मारकर और बलवानों के समक्ष आधीनता स्वीकार करता है। यही झगड़े की मूल है.—"जर, जोरू--जमीन, झगड़े की जड़ तीन।" किन्तु—

विद्या विभव उतंग कुल, और सुजस संसार।
विन दीने नहिं पाइये, भली वस्तु ये चार ॥

चाणक और चन्द्रगुप्त भेंट

पूर्व पुण्य से विष्णुशर्मा चाणक कास के खेत मे कास को जड़ से उन्मूलन करने के कार्य मे सलग्न थे। होनहार कि भारतसम्राट चन्द्रगुप्त पदयात्रा करते आ निकले। गुरुजी को सविनय प्रणाम कर कास उन्मूलन का कारण पूछा। क्रोधावेश मे उत्तर दिया—इसे मैं समूल नष्ट कर के ही रहूँगा।

चन्द्रगुप्त—गुरुजी! मै इसे कृषि-यन्त्रो से आसानी से नष्ट करने में सहायता कर सकता हूँ। सेवा स्वीकार करेंगे ?

गुरुदेव चन्द्रगुप्त की चातुर्यता, उदारता और विवेकपूर्ण वात को सुनकर पूर्णरूप से देख कर, और इनके भविष्य को पूर्वा-पर विचार कर अपनी विद्वेषमय भावनाओं की पूर्ति के लिये अर्थात् नदवंश के नाश करने हेतु सहायक मान उक्त भूमि की मिट्टी से तिलक कर दिया और कहा—तू इस भूमि का सम्राट है।

चन्द्रगुप्त आश्चर्य भरी दृष्टि से विचार करते हुये गुरु के चरण पकड़ कर कहते हैं—मैं साधनहीन, अल्पवुद्धि कैसे सम्राट बन सकता हू ?

उदारता और उद्योग कभी भी निष्फल नही जाते हैं। कह कर आशीर्वाद दिया। संसार में

चार अधे हैं—

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार ।

स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

स्वार्थवश चन्द्रगुप्त आचार्य चाणक के राज्यप्रलोभन मे प्रधान मत्री अहकार और ईर्षा-चन्द्र इन्स्ट्क्टर वन कर नन्दवश के घात मे सहायक बने ।

कोपयुक्त मनुष्य अपने स्वाभाविक क्षमा गुण का नाश कर देता है । अपनी शक्ति द्वारा दूसरे के प्राणो का नाश कर दूसरे की हिंसा करता है । तथा धर्म को छोड पाप करने लग जाता है । योग्य कार्य को छोड बैठता है । बडो का निरादर और नाना प्रकार के भड वचन बोलता है । ससार मे निन्दा का पात्र बनता है । इस प्रकार वह अनेक अवक्तव्य कुकर्म कर डालता है । जिनका कि उल्लेख नही किया जा सकता ।

नन्दवश के द्वारा गुरु श्री विष्णुशर्मा चाणक का अपमान किया गया था, इसी कारण क्रोधाग्नि प्रज्वलित हुई । और बदले की भावना लेकर प्रतापी वीर क्षत्री चन्द्रगुप्त को साथ लेकर नीतिज्ञ महापुरुष ने सग्राम छेड दिया ।

आचार्य कहते है—

यौवनं धन संपत्तिः प्रभुत्वमविवेकता ।

एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ॥

जब अकेली जवानी नाश का कारण बन जाती है तो धन, सपत्ति, अविवेकिता यदि चारो एकत्रित हो जाय तो वहा क्या अनर्थ नही हो सकता ?

जब यह सम्राट प्रारम्भिक यौवनावस्था मे देश-देशान्तरो मे नन्दवश का नाश कर दिग्विजय के लिये चल दिये, अनेक राजाओ को पराजित करते हुए बगैर जातिभेद के कामाग्नि और विषय की तृप्ति के लिये सुन्दर कन्याओ के साथ भोग भोगने के लिये डोले भी लिये गये । जब यह सम्राट दिग्विजय से अपनी सेना और मत्रियो के साथ विदिशा आये तो मालूम हुआ कि आचार्य श्री भद्र-बाहु स्वामी गुफा न० १ जहां सूर्य-मन्दिर है विराजमान हैं, दर्शनार्थ गये और नमस्कार कर उपदेशामृत पान करने लगे ।

आचार्य आशीर्वाद देते हुए पूछते है—कहा से आ रहे हो ?

सम्राट उत्तर देते है—दिग्विजय करके ।

आचार्य ने विचार किया, यह एक प्रतापी वीर पुरुष जिसका भविष्य उज्वल है, और वह सासारिक चक्र मे फस कर अपने आत्मस्वरूप को भूला हुआ है, इसे सन्मार्ग पर कैसे लाया जाय । इस हेतु गुफा न० ५ जिसमे वाराह की मूर्ति उत्कीर्ण है, चित्र निर्माण किया और राजन को सम्बोधनार्थ सामने रखा ।

आचार्य कहते हैं:—राजन् ! इसे समझा ?

राजन उत्तर देते हैं:— गुरु जी, समझाइये।

आचार्य कहते हैं—राजन् ! आप कहाँ खड़े है ? यह ससार अथाह समुद्र है। इस ससार में प्राणी इन्द्रियजनित विषयरूपी शत्रुओं के भोगने में आनंद मानता है।

असुरसुरनराणां यो न भोगेषु तृप्तः, कथमपि मनुजानां तस्य भोगेषु तृप्तिः।
जलनिधिजलपाने यो न जातो वितृष्ण--स्तृणशिखरगताम्भः पानतः किं स तृप्येत् ॥

(सुभाषित रत्न सदोह ॥६॥)

अर्थ:—इस जीव ने संसारसमुद्र मे भ्रमण करते हुए सुर असुर आदि के उत्कृष्ट से उत्कृष्ट भी विषय सुखो को भोगा है। परन्तु जब उनसे भी इसकी तृप्ति न हुई तब मनुष्यो के सामान्य भोगों से कैसे इसकी तृप्ति हो सकती है ? कभी नही।

जो प्यास (तृषा) समुद्र के समस्त जल पीने पर भी नही बुझती वह भला घास के ऊपर लगी हुई ओस की बूद से कैसे शान्त हो सकती है ? उसी प्रकार उत्कृष्ट विषय भोगो को भोग कर भी तृप्त न होने वाले इस जीव को सामान्य भोग तृप्तिदायक नही हो सकते।

तब आचार्य कहते है कि जिस प्रकार एक दिन मे सूर्य की तीन अवस्थायें बदल जाती हैं उसी प्रकार मानव की भी बदलती है। मानव इन तीन वस्तुओ के न मिलने पर विकारभाव उत्पन्न करता है और रुचि अनुसार प्राप्ति पर स्वर्ग के सुख मानता है। जिसका उदयगिरि गुफा न० ५ मे जो वर्णन किया है उसके दो पहलू हैं। जिनमे भगवान विष्णु (विष्णुकुमार मुनि) जिनने ७०० मुनियो की बलि से रक्षा की थी, और दूसरा पहलू है सम्राट चन्द्रगुप्त को राजवैभव से विरागता दिलाने का। इस इतिहास मे दोनो ही पहलू बताये जा रहे हैं। और उस अवस्था का वर्णन किया जा रहा है जो कि यौवनावस्था से सम्बन्ध रखता है। जिस यौवन काल मे मानव मदाध होकर जो झगड़े की तीन वस्तुये है (जर, जोरू, जमीन) उनकी ओर ध्यान दिलाया और फिर आचार्य भद्रवाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्रगुप्त को विजय से लौटते समय विदिशा में अपनी अमृतमयी को सच्चरित्र बनाया। यह उनकी मनोवैज्ञानिक कला थी, वशीकरण मत्र था, जो कलाकृतियो मे उदयगिरि गुफा न० ५ मे स्थित है।

देखो गजेटियर ग्वालियर जिल्द १, सन् १९०८। वीर निर्वाण सं० १६२ विक्रम स० ३०७ वर्ष पूर्व अर्थात् ३६४ बी० सी०।

नोट—जैन शासन के शास्त्रो के अनुसार समय (काल) नही मिलता है।

यह गुफाये चन्द्रगुप्त के मत्री वीरसेन जो इनके साथ थे दिग्विजय के पश्चात् विदिशा नगर मे आये थे उनने निर्माण कराई थी।

आचार्य भद्रवाहु स्वामी जाति के ब्राह्मण और दिगम्बर जैनाचार्य थे। जिनके साथ सैकड़ो मुनि, क्षुल्लक, आर्यिका, श्रावक, श्राविकाये और ब्रह्मचारीगण थे। और वह भी धुरन्धर विद्वान

थे, जो गुफा न० १ पर विराजमान थे। जिसे सूर्यमदिर या सूर्यगुफा कहते है । जिस प्रकार सूर्य अपनी दैदीप्यमान किरणो से प्रकाश करता है उसी प्रकार से सम्राट चन्द्रगुप्त के हृदयसमुद्र मे प्रकाश कर अज्ञानान्धकार को दूर कर निर्मल स्वभाव होकर आत्मीय सुखानुभव प्राप्त कर सके। ऐसे उन त्यागी विरागी तपस्वी के दर्शन कर आज वह जीवित है । जहा अनेको जिज्ञासु धर्म-श्रवणार्थ मुनि आचार्य के निकट बैठे थे, जा बैठे थे । इस बात की पुष्टि गुफा न० ६–७--१९--२० के शिलालेख तथा मनोवैज्ञानिक कलाकृतिया मे छुपे अद्‌भुत ज्ञान का भण्डार गुफा न० ५-१३-१९ क्रमश प्रतीक है । जिन्हे आज तक कपोलकल्पित कथायें सुना करते थे, किन्तु वह कही तक कुछ महत्व अवश्य रखती है । जिनके शिलालेखो की प्रतिलिपिया पूर्व मे दी जा चुकी है ।

नीच--गिरि

गुफा न० २ लगायत १४ तक नीचगिरि कहलाता है, इसलिये कि वह दक्षिण और उत्तर की पहाडियो की अपेक्षा बीच का भाग नीचा है। यहाँ प्रतिवर्ष दो बार रामनवमी के अवसर पर वैश्यो का मेला भरता था, किन्तु वर्तमान मे यह मेला बैस नदी के किनारे गुफा न० २० के पश्चिम दिशा की ओर भरता है ।

कामी पुरुष की गति

जिस प्रकार कामी पुरुष विषयो मे आनन्द मानता है उसी प्रकार बराह अपवित्र वस्तु के खाने मे आनन्द मानता है । दोनो की गति एक ही है । मानव जीवन से तुलना कीजिये ।

नारीजघनरंध्रस्थ, विण्मयमूत्रचर्मणा ।
बाराह इव विडभक्षी, हन्त मूढा सुखायते ।।

(जीवधर कुमार चरित्र)

सर्वजनैः कुलजो जनमान्यः, सर्वपदार्थविचारणदक्षः ।
मन्मथबाणविभिन्नशरीरः, किं न नरः कुरुते जननिंद्यः ।।५८३

(सु० र० स०)

भावार्थ —जो लोग उत्तम कुल मे जन्म लेते है, जिनका समस्त ससार सत्कार करता है, जो कि हित के और अहित के विचारने मे कुशल है, वे लोग जिस समय कामदेव के बाणो से जर्जरित शरीर हो जाते है उस समय निंद्य से निंद्य भी कार्य कर डालते है। जिस प्रकार —

अन्हि रविर्दहति त्वचि वृद्धः, पुष्पधनुर्दहति प्रबलोढं ।
रात्रिदिनं पुनरंतरमतः, संवृतिरस्तिरवेर्न तु कंतोः ।।५८४।।

(सु० र० स०)

अर्थ —ग्रीष्म ऋतु का तेजस्वी सूर्य अपने प्रताप द्वारा अधिक से अधिक शरीर को तपा सकता है । तिस पर भी उसका कुछ न कुछ छत्री आदि से प्रतिबन्ध भी किया जा सकता है।

परन्तु कामदेव का प्रबल प्रताप रात दिन जलाता है। और वह आतरंगिक दाह करता है, इसलिये कुछ भी प्रबन्ध नही हो सकता ।

स्थावरजंगमभेदविभिन्नं, जीवगणं विनिहंति समस्तं ।

निष्करुणं कृतपापकचेष्टः, कामवशः पुरुषोऽतिनिकृष्टः ॥५८५॥

अर्थ—कामदेव के वशीभूत हुआ पुरुष अति निकृष्ट हो जाता है। और दया रहित पापी हो स्थावर, जंगम दोनों प्रकार के असंख्य जीवों की हिंसा करने लग जाता है ॥५८५॥

दृष्टिचरित्रतपोगुणविद्या, शीलदयादमशौचशमाद्यान् ।

कामशिखी दहति क्षण तेन, वन्हिरिवेंधनमूर्जितमत्र ॥५९१॥

किं बहुना कथितेन नरस्य, कामवशस्य न किंचिदकृत्यं ।

एवमचिन्त्य सदा मतिमंतः, कामरिपुं क्षयमत्र नयंति ॥५९२॥

अर्थ—जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि ईंधन के समस्त समूह को जलाकर भस्म कर देती है उसी प्रकार कामरूपी अग्नि पुरुष के दर्शन, ज्ञान, चरित्र, तप, विद्या, शील, दया, शम, दम, शौच, आदि समस्त गुणो के समूह को क्षण भर मे जला कर भस्म कर डालती है। इसलिये बहुत कहने से क्या ? कामी पुरुष अकृत्य से अकृत्य भी समस्त कार्यो को कर डालते है। ऐसा विचार कर जो लोग काम को सदैव जीत कर विजय प्राप्त करते है वे लोग बडे ही बुद्धिमान है ॥५९१--५९२॥

संयमधर्मविवृद्धशरीराः, साधुभटाः शखैरिणमुग्रं ।

शीलतपःशितशस्त्रनिपातै,--र्दर्शनबोधबलाद्धि धुनंति ॥५९५॥

अर्थः—जिनलोगो का संयम और धर्मरूपी शरीर बलवान है, वे प्रवल तपस्वी लोग शील और तपरूपी तीक्ष्ण खड्ग की धारा से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की सहायता पूर्वक काम रूपी बैरी को मार गिराते है और उसके जीतने से प्राप्त हुए अक्षय यश का लाभ लेते है। ॥५९५॥

माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार ।

पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥

राजन् ! देखो, बराह के मुख मे जो स्त्री दबी है वह भी माया की एक शक्ति है। यही झगडे की मूल और विनाश का कारण है।

स्त्री का शरीर अपवित्रता का घर है ।

(कवित्त)

मांस हाड़ लोहू सानि पूतरी बनाई काहु, चामसों लपेट तामें रोम केश लाये है ।
तामें मल मूत भर कृमि केई कोटि धर, रोग संचै कर कर लोक में ले आये है ॥

बोलै वह खाउं खाउं, खाये विना गिर जाऊं, आगे को न धरों पाउं ताही पै लुभाये हैं ।
ऐसे भ्रम--मोह ने अनादि के भ्रमाये जीव, देखै परतक्ष तोऊ चक्षु मानों छाये है ॥
(ब्रह्म विलास)

विद्वेषवैरिकलहा सुखघातभीति, निर्भर्त्सनाभिभवनासु विनाशनादीन् ।
दोषानुपैति निखिलान् मनजेऽतिमायी, बुद्ध्वेति चारु मतयो न भंजति मायाम् ॥६०॥
(सु० र० सदोह)

अर्थ—जो लोग मायाचारी हैं वे इस ससार मे बैर बढाते है, शत्रुओ के डर से चिन्तित हो दुख पाते है, रात दिन लडाई झगडो मे फसे रहते है, सुख से हाथ धो बैठते है, लोगो की फटकार सहते हैं, तिरस्कृत होते हैं, और कहा तक कहे ! मायाचारी अपने प्राण भी खो बैठते हैं । इसलिये चतुर श्रेष्ठ मनुष्य माया से सदा बचते ही रहते हैं ॥६०॥

प्रच्छादितोपि कपटेन जनेन दोषो, लोके प्रकाशमुपयातितरां क्षणेन ।
वर्चो यथा जलगतं विदधाति पुंसां, माया मनागपि न चेतसि संनिधेया ॥६२॥
(सु० र० स०)

अर्थ—जिस प्रकार पानी मे डुबोई गई विष्टा कुछ समय के बाद अवश्य ही ऊपर आकर प्रकट हो जाती है, उसी प्रकार कपटपूर्वक मनुष्य द्वारा छुपाया गया दोष भी ससार मे किसी न किसी समय अवश्य ही प्रकट हो जाता है। अनेक प्रयत्नो के करने पर भी माया नही छिपती, वह अवश्य ही खुल जाती है । इसलिये मनुष्यो को चाहिये कि वे माया को सर्वथा छोड दें ।

(छप्पय)

जातिहीन कुलअंध, कुत्सित कुरूप नर, जराग्रसित कृशगात, गलितकुष्टी अरु पांडर ।
ऐसौ हू धनवान होय तो आदर बाको, अपनौ गात विछाय, लेत रस सर्वस ताकौ ॥
गनिका विवेक की बेल कों; कदन करन वारी निरखि ।
वच रहे बड़े कुलवंत नर, रचत पचत मूरखि हरखि ॥८९॥

अर्थ—जो जन्मांध कुरूप बृद्धावस्था से शिथिल गवार नीच जाति और कोढी को भी अल्प द्रव्य की आशा से अपना सुन्दर शरीर समर्पण कर देती हैं, और जो विवेकरूपी कल्पलता के लिये छुरी के समान हैं, ऐसी वेश्याओ से रमण करने की कौन बुद्धिमान इच्छा करेगा ? ॥८९॥
(भर्तृ० शतक)

मत्तेभकुंभदलने भुवि संति सूरा । केचित् प्रचण्डमृगराजबधेऽपि दक्षाः ॥
किन्तु ब्रवीमि बलिना पुरतः प्रसह्य । कंदर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः ॥५८॥

(छप्पय)

हाथी मारनहार होत, ऐसे हू सूरे। मृगपति बध कर सकें, बकें नहिं नेकहु पूरे॥
बड़े--बड़े बलवन्त, वीर सब तिनके आगे। महाबली ये काम, जाहि देखत सब भागे॥

अभिमान भरे या मदन को, मान भार मेटे अवधि।
नर धरम--धुरंधर वीर वे, विरले या संसार मधि ॥५८॥

अर्थः—मत्त हाथी के मस्तक को विदारने वाले शूर इस पृथ्वी पर अनेक हैं और प्रचण्ड सिंह को मारने वाले दक्ष योद्धा भी कितने ही है। परन्तु मैं बलवानों के आगे हठपूर्वक कहता हूँ कि कामदेव के मद का नाश करने वाला तो कोई विरला ही मनुष्य होता है। वे है वीतरागी दिगम्बर जैन साधु ॥५८॥ (भर्तृ० शतक)

नारी में नवग्रह

गुरुणा स्तनभारेण, मुखचन्द्रेण भास्वता।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां, रेजे ग्रहमयी वसा ॥१६॥

(छप्पय)

केश राहु सम जान, चन्द्र सौ सोहत आनन। द्वादश में द्वै अर्क, नैन केतुहि अलकानन॥
मन्दहास है शुक्र, बुधै बानी कहि जानों। सुर गुर जान उरोज, कर्ण मंगलहि बखानों॥

अति मन्द चाल सोइ शनैश्चर, महा मनोहर युवति यह।
तेहि सब फलदायक देखियत, जाकों सेवत नवग्रह ॥१६॥

(भर्तृ० शतक)

(दोहा)

नव युवती के भाल पर, लगी हुई सिन्दूर।
यारो खतरा है यहाँ, रहना इससे दूर॥

अर्थः—(१) केश-राहु (२) मुख--चन्द्रमा (३) भोंह-केतु (४) मधुर हास्य-शुक्र (५) वाणी--बुध (६) कान-मगल (७) अति मन्द चाल-शनैश्चर (८) उरोज-गुरु (९) नेत्र-सूय। यह नव ग्रह नारी में है।

आचार्य शुभचन्द्र कहते हैंः—(ज्ञानार्णव पृ० सं० २०९ श्लोक नं ६७ देखो)—

बकवृत्ति समालम्व्य, वंचकैर्वञ्चितं जगत्।
कौटिल्यकुशलैः पापैः, प्रसन्नं कश्मलाशयैः ॥६७॥

अर्थ—कुटिलता मे चतुर ऐसे मलिनचित्त पापी ठग बगले के ध्यान की सी वृत्ति (क्रिया) का आलम्बन कर इस जगत को ठगते रहते है। बगले की वृत्ति लोकप्रसिद्ध है। बगला जल मे समस्त अगो को सकोच कर एक पाव से खडा रह कर ध्यानमग्न हो जाता है। यदि मछलिया उसे कमलपुष्पवत् समझ उसके निकट आ जाती हैं तो वह तत्काल उन्हे उठाकर खा जाता है। इसी प्रकार मायावी की वृत्ति होती है। इस प्रकार माया कषाय का वर्णन किया ॥६७॥ (जो बाराह मुख मे दबी है)

गले में रत्नहार क्यों ?

धैर्य-प्रशसा—

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता, शौर्यस्य वा संयमो ।
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो, वित्तस्य पात्रे व्ययः ॥
अक्रोधस्तपसः क्षमा, प्रभवितुर्धर्मस्य निर्व्याजिता ।
सर्वेषामपि सर्वकारणमिद, शीलं परं भूषणम् ॥८३॥
(भर्तृ० शतक)

(कुडलियाँ)

मण्डन है ऐश्वर्य कौ, सज्जनता सन्मान। बाणी सज्जन शूरता, मण्डन धन कौ दान ॥
मण्डन धनकौ दान, ज्ञानमण्डन इन्दी दम। तपमण्डन अक्रोध, विनयमण्डन सोहत सम ॥
प्रभुतामण्डन क्षमा, धर्ममण्डन छल खण्डन। सबहिन मे सर्दार, शीलता सबको मण्डन ॥८३॥
(भर्तृ० शतक)

अर्थ—ऐश्वर्य का भूषण सज्जनता है। अपनी बाणी को वश मे रखना शूर की शूरता की शोभा है। ज्ञान की शोभा शान्ति से है। शास्त्र का विनय भूषण है। धन की शोभा सत्पात्र को दान देना है। तप की शोभा क्रोध न करना है। प्रभुत्व की शोभा क्षमा करना है। धर्म का भूषण निष्कपटता है। और अन्य सब गुणो का श्रेष्ठ भूषण और कारण शील है ॥८३॥

(छप्पय)

नीतिनिपुण नर धीर, वीर कछु सुयश करौ किन ।
अथवा निन्दा कोटि कहौ, दुर्वचन छिनहि छिन ॥

सम्पत्ति हू चलि जाउ, रहौ अथवा अगणित धन ।
अबहि मृतक किन होउ, अथवा निश्चल तन ॥

पर न्यायपथ कौ तजत नहि, बुधि विवेक गुणवान निधि ।
वे संग सहायक रहत नित, देत लोक परलोक निधि ॥८४॥

अर्थ—नीतिविशारद मनुष्य चाहे निन्दा करे चाहे प्रशसा, लक्ष्मी चाहे आवे चाहे चली जाय, मृत्यु अभी आ जाये और चाहे युग के अन्त मे हो, परन्तु धैर्यवान पुरुष न्याय के मार्ग से एक पग भी नहीं हटते ॥८४॥

दैव प्रशसा—(दोहा)

फल हू पावत कर्म ते, बुद्धिहु कर्म अधीन ।

तद्यपि बुद्धि विचारिके, कारज करौ प्रवीन ॥

अर्थ—यद्यपि मनुष्यो को उनके कर्मानुसार फल मिलता है और बुद्धि भी कर्म के ही अनुसार हो जाती है । तद्यपि बुद्धिमानो को उचित है कि कार्य को विचार के करे। (भर्तृ० शतक)

संसार में कोई सुखी नहीं है

या ससार मे कोई सुखी नजर नही आया ॥

कोई दुखिया निर्धनी दीन बचन मुख बोले ।
भ्रमत फिरै परदेशन मे, धन की चाह मे डोलै ॥१॥

दौलत के कोठरा भरे है, तन मे रोग समाया ।
निश दिन कडुवी खात दवाई, कही करत नही काया ॥२॥

तन निरोग अरु धन बहुतेरा, फिर भी सुख को रोता ।
पूजत फिरै कुदेव जगत के, तदपि पुत्र नहि होता ॥३॥

तन निरोग धन पुत्र पाय के, फिर भी रहा दुखारी ।
पुत्र नही आज्ञा को माने, घर मे कर्कशा नारी ॥४॥

तन धन और सुलक्षण नारी, सुत है आज्ञाकारी ।
फिर भी दुखिया रहा जगत मे, भयो न छत्राधारी ॥५॥

चक्रपती भये छत्रपती भये, फिर नारी संग मोहे ।
आशा तृष्णा घटी न जिसकी, फिर भी सुख को रोये ॥६॥

जगनलाल वही है सुखिया, जो इच्छा का त्यागी ।
राग द्वेष तज सकल परिग्रह, भये परम बैरागी ॥७॥

रक्षाबन्धन क्यों ?

हिन्दूधर्म ग्रन्थो मे बताया है कि भगवान विष्णु ने बाराह रूप धारण कर पृथ्वी का उद्धार किया था । किन्तु हमें यहा पर जैन दृष्टिकोण से समझना है कि भगवान विष्णु कौन है ? वह हैं विष्णुकुमार मुनि, जिन्होने ७०० मुनियो की रक्षा की थी और बलि को छला था। तीन पग भूमि दान में बामनरूप धारण कर ली थी । मुनियो की रक्षा हुई थी। इसके उपलक्ष मे जैनों में रक्षा-बंधन का त्योहार मनाया जाता है। और अपवित्र यज्ञ का विध्वंस किया गया था, उसके उपलक्ष में भुंजरियाँ देकर वर्ष भर के अपराधों की क्षमा-याचना की जाती है । जो विष्णु भगवान के पैर

के नीचे सर्प पर बैठे हैं वह बलि (बलवान क्रोध) है और बलि के पीछे उसके अभिमान (अहकार) की मूर्ति है और उसके पीछे बलि का लोभ है, जिस पर भगवान विष्णु ने बलिराज की समस्त वदले की भावना को धूल मे मिलाया था ।

बदले की नहिं आस रख, संत करें उपकार ।
बादल का बदला भला, क्या देता संसार ॥

विष्णुकुमार मुनि की परम्परा का परिचय:—

कुरुजागल देश मे हस्तिनागपुर के महाराजा महापद्म के दो पुत्र थे । बड़े पुत्र का नाम पद्म और छोटे का नाम विष्णुकुमार था। महापद्म ससार की असारता जान अपने बड़े पुत्र पद्म-राय को राज देकर वैरागी हो गये । साथ मे विष्णुकुमार ने भी योग ले लिया । यह धरणीधर पर्वत पर तपस्या कर रहे थे। उस समय उन्हे विक्रिया ऋद्धि सिद्ध हुई थी, जिससे यह अपना शरीर छोटा और बडा बना सकते थे । किन्तु इन्हे इस बात का पता न था। क्योंकि इन्हे इस बात से कोई प्रयोजन सिद्ध नही करना था ।

उज्जैन नगर के वनखण्ड मे अकम्पनाचार्यादि ७०० ऋषि-मुनिगण का सघ आकर ठहरा। उन मुनियो के दर्शनार्थ प्रजा को बन की ओर जाते देख उनके राजा श्रीवर्मा ने अपने मंत्री बृह-स्पति, प्रहलाद, नमुचि और बलि से पूछा कि यह प्रजा कहा पर जा रही है ?

मन्त्रियो ने उत्तर दिया कि बन मे कुछ ढोगी साधु आयु हैं, उनके दर्शनो को जा रही हैं। राजा ने कहा कि मैं भी वहा जाऊंगा। तो उन मन्त्रियो ने उन्हे वहा जाने से रोका, किन्तु राजा ने एक भी न सुनी और जाने को तैयार हो गये । बिवश होकर पीछे पीछे मत्री भी जाने लगे।

मुनिगणो को यह बात अवधिज्ञान से मालूम हो गई कि मंत्रिगण धर्मद्वेषी, निर्दयी और घातक उपसर्गकारी है । इसलिये समस्त साधुओ को राजा के साथ मन्त्रियो के आने की बात कह सुनाई और सब को मौन दे दिया । जब राजा दर्शनो को आया तो सब को ध्यानस्थ पाया । किसी भी मुनि ने बात नही की और न आशीर्वाद दिया ।

सम्पूर्ण साधुसमाज को मौन सहित देख जब राजा वापिस जा रहे थे तो मन्त्रियों ने अनेकों प्रकार की निन्दायें की, किन्तु राजा सुनता गया । जब यह मार्ग मे जा रहे थे तो एक श्रुतसागर मुनि जिन्होने गुरु-आज्ञा नही सुन पाई थी, जो भिक्षा के अर्थ नगर मे आये थे, राजा और मन्त्री-गण को भिक्षा लेकर लौटते समय मुनि को बीच मार्ग मे, मन्त्रियो ने रोक कर बाद-विवाद छेड़ दिया । किन्तु मुनि ने अमृतमयी वाणी और स्याद्वाद के बल पर विजय पाई । मन्त्रिगण का सिर नीचा हो गया । बलि की पराजय का बृत्तान्त गुरु से जा कर जब मुनि ने सुनाया तो आचार्य कहते हैं—होनहार कोई टाल नही सकता । कहा भी है—

कैसे कैसे बलि भूप भूपर विख्यात भये। बैरीकुल कांपे नेकु, भोंहो के विकार सों ॥
लंघे गिरि सायर, दिवाकर से दिपे जनों। कायर किये हैं भट कोटिन हुंकार सों ॥

ऐसे महा मानी मौत आये हू न हार मानी। त्यों ही उतरे न कभी मान के पहार सों ॥
देव सों न हारे, पुनि दाने सों न हारे। काहू सों न हारे, एक हारे होनहार सों ॥

अतएव विजयी श्रुतसागर मुनि को आचार्य ने आज्ञा दी कि तुम उसी स्थान पर जाकर भूरक्षक देव से तीन पग भूमि की याचना कर ध्यानस्थ हो जाना। जो उपसर्ग आये उसे शान्ति-पूर्वक सहना। अन्यथा समस्त संघ पर भीषण संकट आवेगा। इस प्रकार आज्ञा दे श्रुतसागर मुनि को पुनः बादस्थल पर वापिस कर दिया। श्रुतसागर मुनि गुरु-आज्ञा स्वीकार कर उसी स्थान पर जाकर ध्यानस्थ हो गये।

श्रुतसागर मुनि पर उपसर्ग

इधर सचिव गण अपनी पराजय की भावना लेकर मध्य अधेरी रात्रि मे उसी दिन विना सोचे समझे खड्ग लेकर मुनियो को मारने चल पड़े। और जहा पर उन्हे पराजय जिनके द्वारा मिली थी उन्हे देख चारों ओर से घेर कर प्रहार करने को उद्यत हुए ही थे कि वनरक्षक देव वहा से इनके उपसर्ग को देख कर रुका और समस्त कारण अपने अवधिज्ञान से जान कर प्रहार करते हुए मुद्रा मे उन्हे वही कील दिया। रजनी समाप्त हुई और भानु का उदय हुआ। नगरवासियो ने मुनिके उपसर्ग को देखा। नगर मे मत्रियो के दुष्कृत्य की चर्चा, बात की बात मे फैल गई। और जब राजा ने सुना तो राजा भी वहां तत्काल ही आया और वह सब देखा।

राजा को वहा उपस्थित देख वनरक्षक देव ने क्रोधित होकर उन की निन्दा की। इस पर राजा ने यक्ष से क्षमायाचना की और कहा कि मैं इन्हे कठोर दण्ड दूंगा। किन्तु वनदेवता इतना क्रुद्ध था कि उन्हे प्राणदण्ड दे रहा था। लेकिन दयासागर परम तपस्वी श्रुतसागर महाराज ने जीवन-दान देकर उन मत्रियो को छुडवा दिया।

राजनीति के अनुसार राजा ने उन मत्रियो का काला मुख करा कर गधे पर बिठा कर नगर मे फिराया और उनका धन माल शासन के कोष मे ले लिया। पश्चात् देशनिकाला दे दिया। अनुचित क्षमा की छत्रछाया मे अपराध पनपते हैं।

मंत्रीगण देशनिकाले के बाद मंत्री कैसे बने ?

यह मत्रीगण उज्जैन नगर से देश निकाले के पश्चात् नगरो मे भ्रमण करते हुए हस्तिनागपुर पहुचे। वहा राजा को ब्राह्मण होने और विद्वान होने के नाते आशीर्वाद दिया। राजा ने इनकी विद्वत्ता को देख कर आश्रय दिया और अपनी सभा का सभासद बना लिया। एक दिन राजा चिन्तातुर बैठा था। इन मत्रियो ने चिन्ता का कारण पूछा तो कहा कि हमारे अधीनस्थ रहने वाला राजा सिहबल विपरीत हो गया है। यह सुनकर बलि ने कहा, यदि आप आज्ञा दे तो मै उसे बात की वात मे वाध कर ला सकता हू। राजाज्ञा पाते ही मत्रीगण छल कर सिहबल को वाध कर ले आये और राजा के सन्मुख खडा कर दिया। एक राजा दूसरे राजा के साथ जो सद्व्यवहार करते है, उसी प्रकार से राजा सिहबल का सन्मान किया, जिससे वह शत्रु न बनकर मित्र ही वना रहा।

इस चातुर्य के कारण राजा ने इन्है इच्छित वर मांगने के लिये कहा, तो इन चतुर

मन्त्रियो ने तत्काल कह दिया कि वचन भंडार रखिये, जब आवश्यकता होगी ले लेंगे । पद्मराय ने 'तथास्तु' कह वचन भडार मे रखा ।

कुछ दिन भ्रमण करते हुए मुनिराज अकम्पनाचार्यादि का सघ हस्तिनागपुर के उद्यान मे पहुचा। यह सवाद उन धूर्त मन्त्रियो को ज्ञात होते ही उन्हे यह सदेह हो गया कि हमारी धूर्तता का समस्त भेद इन साधुओं से खुल जायगा इस कारण हम पर सकट आना कोई दुर्लभ न होगा । ऐसा विचार कर उन मन्त्रियो ने अविवेकतापूर्ण निर्मम दया रहित नरमेध यज्ञ का विचार कर अपना जो वचन राजा के भडार मे था, मन्त्रणा कर लेने का निश्चय किया ।

वलि का नरमेध यज्ञ और मुनियो पर भारी विपत्ति

वलि ने मन्त्रणा कर राजा पद्मराय से सात दिन के लिये राज्य की बागडोर अपने हाथ मे लेने के लिये माग की, किन्तु राजा को इस भेद का पता न लगा और न राजा ने कोई चिन्ता ही की। इसलिये कहा है—

विना सोचे विना समझे, बशर जो काम करता है ।
वह अपने हाथ से अपना, बुरा अंजाम करता है ।।

राजा तो अपना वचन देकर वनवास मे चला गया और मन्त्रियो ने जहा कि ऋषि मुनियो का सघ था चारो ओर से काटेदार बागड लगवा दी और राजा की अनुपस्थिति मे निर्भय होकर नरमेध यज्ञ प्रारभ कर दिया । जिसमे मृतको के सडे कलेवर, दुर्गन्धयुक्त वस्तुओ को तथा साधु उनके विरोध मे आने वालो को उस यज्ञ मे जबरन डालना प्रारभ कर दिया । कहा है—

मेघहि वरसै तृन जरै, खेत बाढ को खाय ।
भूप करै अन्याय तो, न्याय कौन पर जाय ।।

गुलो का गुल लगे खाने, अरे सय्याद क्या करना ।
जहां बे--दर्द हाकिम हो, वहां फरियाद क्या करना ।।

क्रोधी मनुष्य आखें होते हुए भी अन्धा होता है । यहा पर जैन साधुओ की परीक्षा का समय है । जो वलि ने उत्पात किये थे उन्हे उन धीर वीर ७०० मुनियो ने किस प्रकार सहन कर अपनी दया का परिचय दिया, आगे पढेगे ।

यज्ञ के विषैले धुआ से गगन-मडल आच्छादित हो गया। मुनिगण ने सन्निकट मरण जान सभी मुनियो ने सकटकाल समाप्ति तक सन्यास ले लिया । इस हृदयविदारक घटना से पुरवासी अत्यत दुखित और चिन्तित थे। जब राजा ही अन्याय करे और बागड ही खेत खाने लग जावे फिर कृषक क्या क्या उपाय करे ! इस हेतु मुनियो की सहानुभूति मे पुरवासियो ने भी अपने जीवन देने की ठान ली। इस प्रकार दिन तो समाप्त हुआ और निशा का आगमन हुआ। मुनियो की पुण्यवर्गणाये आकाश-मडल मे टकराने लगी।

उसी समय उसी क्षण ध्रुवतारा भय से कांपने लगा। इस कांपते हुए ध्रुवतारे को मिथलापुर के उद्यान में अवधि ज्ञान और निमित्तज्ञान से परिपूरित सागरचन्द्र मुनिराज ने अवलोकन किया। और हस्तिनागपुर के भयानक उपसर्ग के कारण उनके मुख से हाय हाय का शब्द निकला। इस शब्द को पुष्पदन्त नामक मुनिराज ने सुन उन महाराज से पूछा कि गुरुदेव! मुनिराज रात को नही बोलते, आपने हाय हाय क्यो कहा? क्या कारण है? तब सागरचन्द्र मुनिराज ने ७०० मुनिराज के उपसर्ग का बृतान्त कह सुनाया और कहा कि इस उपसर्ग का निवारण यदि कर सकते है तो केवल विष्णुकुमार मुनि, जो धरणीधर पर्वत पर तपस्या कर रहे है। उन्हे विक्रियाऋद्धि प्राप्त है।

विष्णुकुमार मुनि का बामनरूप

पुष्पदन्त मुनिराज गुरु सागरचन्द्र जी से शीघ्र ही आज्ञा लेकर विष्णुकुमार मुनि जहा तपस्या कर रहे थे चल दिये और जाकर विष्णुकुमार जी मुनि से मुनि सागरचन्द्र जी से सुना सब बृतान्त कह सुनाया। ७०० मुनियो के उपसर्ग की बात सुन कर तत्काल विक्रिया ऋद्धि की परीक्षार्थ हाथ लंबा कर दिया। जब हाथ लम्बा होता चला गया तो समझ लिया कि बास्तव में इस उपसर्ग पर विजय मिल सकती है। तब विष्णुकुमार मुनि हस्तिनागपुर मे आकर अपने बड़े भाई पद्मराय के पास गये और इस निन्दित कार्य की आलोचना की और बताया कि जिस क्षत्रिय कुल मे श्रेयास जैसे दानी हुए वहा तुमने इस निन्दित कार्य को राज्य का दान दिया और वह भी सात दिन का हिसक यज्ञ रचवा दिया। जगत्वन्द्य मुनिराजो पर उपसर्ग कराया और कुल मे कलक लगाया। यद्यपि यह कार्य मुनिपद के अनुकूल नही था, परन्तु और कोई उपाय भी न था। उस वक्त पद्मराय विष्णुकुमार से क्षमा याचना करने लगे। अपनी विवशता उनके समक्ष रख दी। और प्रार्थना की कि आप इसका उपाय कीजिये।

भगवान विष्णुकुमार मुनि ने अपनी वैक्रियक ऋद्धि से वामन रूप सुन्दर शरीर बनाकर, मस्तक पर तिलक लगा कर, बगल मे वेद दाब कर, भिक्षापात्र हाथ में लेकर मन्त्रोच्चारण करते हुए उस यज्ञभूमि की ओर चल दिये। राजा बलिराज अपने चारो भाइयो के साथ बैठे मानवों को यज्ञमे जीवित होम रहा था और उधर चीत्कार हो रहा था। उसके साथ मे एक पशु ने कहा.—

(कवित्त)

कहै पशु दीन सुन यज्ञ के करैया मोहि, होमत हुताशन में कौन सी बड़ाई है ?
स्वर्ग सुखमैं न चहों, देहु मुझे यों न कहों, घास खाय रहो मेरे, यही मन भाई है ॥

जो तू यह जानत है, वेद यों बखानत है; यज्ञ जलौ जीव पावे स्वर्ग सुख-दाई है ।
डारै क्यों न वीर यामें, अपने ही कुटुम्ब ही कों, मोहि जिन जारै, जगदीश की दुहाई है ॥

(भूधर शतक)

जब वामन अवतार भगवान विष्णुकुमार मुनि को आते और मंत्रोच्चारण करते हुये देखा तो बलि आकर उठ खडा हुआ। उसी समय विष्णुकुमार ने आशीर्वादात्मक श्लोक सुना दिया। इस

समय हर्षित होकर राजा बलि ने कहा भगवन् जो चाहो सो दू । तब मुनिराज कहने लगे अरे बलि ! तू क्या देगा ? तेरे पास क्या है ? और क्या दे सकता है ? इस पर बलि ने दान का हठ किया कि नही भगवन् जो चाहो वही दू गा। यो दान देने को आतुर देख कहा मैं एक कुटिया के लिये तीन पग भूमि, वह भी अपने ही पग से चाहता हू, क्या दे सकता है ? तो बलि ने कहा महाराज ! इससे क्या होगा ? इस समय मैं राज्य–वैभव तक दे सकता हू । तो भगवान विष्णुकुमार जी दया के सागर ने केवल तीन पग भूमि की पुन. माग की। इसके अलावा मुझे तेरे राज्य की कोई वस्तु नही चाहिये। तब बलिराज विचार करते हैं कि इससे मेरा कोई नुकसान नही। और प्रसन्नतापूर्वक देने को उत्सुक देखा तो तत्काल ही उससे सकल्प कराया और जलधारा दिलाई और मत्रोच्चारण के साथ यही पृथ्वी का दान विष्णुकुमार मुनि ने लिया । जो पृथ्वी भगवान विष्णु बाराह की मुखाकृति मे खडे हैं और मुख मे माया रूपी नारी दबी है जिसे राजा बलि ने महाराजा पद्म से ७ दिन को दानवता के लिये ली थी। जो कमलनाभि पर दिखाई दे रही है । और वह कमलनाभि एक समुद्र मे सलग्न है जो लक्ष्मी से सबध रखती है । यह वही माया रूपी नारि है, जिसे मानव दातो से पकडता है, अपने सासारिक सुखो के लिये ।

विष्णुकुमार मुनि की चमत्कारिक माया

चमत्कारिक आशीर्वादात्मक श्लोक सुन कर बलि इस बात पर प्रसन्न हुआ कि मेरे मनोरथ की सिद्धि के लिये भगवान विष्णु ने सचमुच अवतार लिया है, मेरे मनोरथ सिद्ध हो गये ।

देखिये, यह हमे क्या शिक्षा देता है ! आपके समक्ष छल-कपट-गर्व है, इनका परित्याग करो । जिस प्रकार बलि ने महाराजा पद्म को छल कर सातदिन का राज्य लिया और आतक ढा दिया । उसका बदला उन्हे विष्णु भगवान ने किस प्रकार दिया। इस हाथ करलो और इस हाथ देखलो ।

भगवान विष्णुकुमार मुनि ने अपनी विक्रिया ऋद्धि के द्वारा शरीर को बढाया और एक पैर सुमेरु पर्वत पर रख दिया और दूसरा पैर मानुषोत्तर पर्वत पर । जब तीसरे पैर रखने को कोई भूमि न रही तब बलि से कहा कि –अब बताओ कि तीसरा पैर कहाँ रखू ! तब बलि राजा उनके इस माया से चकित हो उठा और काँपने लगा। उस समय क्रोधित होकर विष्णुकुमार ने तीसरा पैर बलि जहा बैठा था उसके ऊपर रख दिया। उस समय उसे हाथ जोड क्षमा याचना करना पडी । इसी आशय का चित्र उदयगिरि की गुफा न० ५ मे उत्कीर्ण है । कहा है—

जवर मिलो जब सतायो, नवल मिलो तें खायो ।

बलि के सिर पर जो सर्प की घटाटोप फणावली है वह दबदबे की प्रतीक है । क्रोध का सकेत सर्प से है । क्रोध करने से सर्वस्व नष्ट हो जाता है। तीन चीजें तीन चीजो के बगैर नही ठहरतीं।

(१) इलम बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के। और (३) माल बगैर तिजारत के।

प्रसग वश:—

क्या बलि जैसी प्रवृत्ति वर्तमान भारत के शासको की नही है ? इसका प्रत्यक्ष प्रमाण विदिशा के पुरातत्व विभाग का सरक्षित क्षेत्र था । उसका विनाश हो गया है । अधिकारीगण

मूर्तियाँ उठाकर ले गये। जिसके सम्बन्ध में "विदिशा के पुरातत्व का भयंकर विनाश" नामक सूचनापत्र दिनाक ७--८--६२ श्रावण शुल्ल ७ वि० सं० २०१९ को छपाकर वितरण किया गया था। क्या इस स्वतन्त्र भारत मे कोई ऐसा व्यक्ति नही है जो इस ओर लक्ष देता? इसका उत्तरदायित्व मध्य प्रदेश सरकार और पुरातत्व विभाग पर नही तो किस पर है? लेखक चाहता था विदिशा के पुरातत्व का संरक्षण।

राजा बलि के पीछे जो मूर्ति अभिमानयुक्त बताई है वह बलिका अभिमान है कि मेरे समान कोई प्रतापी, शूर, वीर, चतुर, प्रकाड नीतिज्ञ नही है, जो हूँ वह मै ही हूँ। उसका स्वप्न समाप्त हो गया। और जो इसके पीछे खडी मूर्ति बताई है वह है बलि के लोभ की। भगवत् जिनसेनाचार्य कहते हैं:—

अध्येति नृत्यति लुनाति मनोति नौति,
क्रीड़ाति हंति वपते चुनेति विभेति।
पुष्णाति गायति धिनोति विर्भति भिते,
लोभेन सीव्यति पणायति याचते च ॥७२॥

(सु० र० सं०)

अर्थः—मनुष्य लोभ से, द्रव्य कमाने की इच्छा से, पढता है, नाचता है, काटता है, तौलता है, नापता है, स्तुति करता है, खरीदता-बेचता है, क्रय विक्रय करता है, जीव मारता है, बीज बोता है, फूल आदि चुनता है, भय खाता है, चीजे चुराता है, गाना गाता है, कर्जा लेता है, अन्य का पोषण करता है, भेदन करता है, कपड़े सीता है, जुआ खेलता है, और भीख माँगता है ॥७२॥

तथा

लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते।
लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ॥

अर्थ.—लोभ से क्रोध, लोभ से काम, लोभ से मोह और लोभ ही से नाश होता है। अतएव लोभ ही पाप का कारण है।

हिंसा चोरी झूठ अरु, क्रोधादिक जे पाप।
सो सब उपजत लोभ से, लोभ पाप का बाप॥

या से लोभ न कीजिये, धरो हृदय संतोष।
सतोषी जग में सुखी, सर्व गुणो का कोष॥
करो भलाई सबहि से, या से जग यश होइ।
जाके जग में मित्र बहु, सुखी सदा नर सोइ॥
धर्म-नाव भवसिधु से, काढन को लख सार।
तामें दृढ आसन करो, तो पाओ भव पार॥

पहिले तिस के दौष गुण, लखि के होउ सवार।
नाही तो भवसिन्धु के, डूबोगे मझधार ।।

छिद्र रहित दृढतर घनी, हल्की बहु विस्तार।
खेवट होना पर चतुर, तब हो नौका पार ।।

मान कषाय के सम्बन्ध मे आचार्य शुभचन्द्र ने योगिराज भर्तृहरि को समझाने के लिये ज्ञानार्णव ग्रन्थ की रचना की थी। उसके पृष्ठ सख्या ४८ से ५३ तक का उदाहरण यहा देते हैं।

कुलजातीश्वरत्वादिमदविध्वस्तबुद्धिभिः ।
सद्यः संचीयते कर्म नीचैर्गतिनिबन्धनम् ।।४८।।

अर्थ—कुल, जाति, ऐश्वर्य, रूप, तप, बल, विद्या और धन, इन आठ भेदो से जिनकी बुद्धि बिगड गई है, अर्थात् मान करते हैं वे तत्काल नीच गति के कारण कर्म को सचय करते हैं। अर्थात् कोई ऐसा समझे कि मान करने से मैं ऊचा कहलाऊगा सो इस लोक मे मानी पुरुष ऊचे तो नही होते किन्तु नीच गति को प्राप्त होते है।

मानग्रन्थिर्मनस्युच्चैर्यावदास्ते दृढ़स्तदा ।
तावद्विवेकमाणिक्यं प्राप्तमप्यपसर्पति ।।४९।।

अर्थ—हे मुने ! जब तक तेरे मन मे मान की गाठ अतिशय दृढ है तब तक तेरा विवेकरूपी रत्न प्राप्त हुआ भी चला जायगा। क्योकि मान कषाय के सामने हेय उपादेय का ज्ञान नही रहता ।।४९।।

प्रोत्तुंगमानशैलाग्रवर्तिभिर्लुप्तबुद्धिभिः।
क्रियते मार्गमुल्लंध्य पूज्यपूजाव्यतिक्रमः ।।५०।।

अर्थ—जो पुरुष अति ऊचे मान पर्वत के अग्रभाग मे (चोटी पर) रहते है वे नष्टबुद्धि है। ऐसे मानी समीचीन मार्ग का उल्लघन करके पूज्य पुरुषो की पूजा (प्रतिष्ठा) का लोप कर देते है। भावार्थ—मानी पुरुष पूज्य पुरुषो का भी अपमान करने मे शकित नही होते ।।५०।।

लुप्यते मानतः पुंसां विवेकामललोचनम् ।
प्रच्यवन्ते ततः शीघ्रं शीलशैलाग्रसंक्रमात् ।।५१।।

अर्थ—इस मान कषाय से पुरुषो के भेदज्ञानरूप निर्मल लोचन लोप हो जाते है। जिससे शीघ्र ही शील रूपी पर्वत के शिखर सक्रम (चलने) से डिग जाते है। क्योकि विवेक जब नही रहा तो शील कहा ? ।।५१।।

ज्ञानरत्नमपाकृत्य, गृहणात् यज्ञानपन्नगम् ।
गुरूनपि जनो मानी, विमानयति गर्वतः ।।५२।।

अर्थः—मानी पुरुष गर्व से अपने गुरु को भी अपमानित करता है, सो मानी ज्ञानरूपी रत्न को दूर करके अज्ञान रूपी सर्प को ग्रहण करता है ॥५२॥

करोत्युद्धतधीर्मानाद्विनयाचारलंघनम् ।
विराध्याराध्यसंतानं स्वेच्छाचारेण वर्तते ॥५३॥

अर्थः—मान से उद्धतबुद्धि पुरुष गर्व से विनयाचार का उल्लघन करता है और पूज्य गुरुओ की परिपाटी (पद्धति) को छोड कर स्वेच्छाचार से प्रवर्तने लग जाता है ॥५३॥

लोभ कषाय के विषय मे भगवत्जिनसेनाचार्य कृत सुभाषित रत्न सदोह के पृष्ठ सख्या २१ श्लोक सख्या ६४--६५ व ८१ और ८२ का उदाहरण यहा दे रहे है ।

लोभ दूर करने का उपदेश

शीतो रविर्भवति शीतरुचिः प्रतापी, स्तब्धं नभो जलनिधिः सरिदंबुतृप्तः ।
स्थायी मरुच्च दहनोऽदहनोपि जातु, लोभानलस्तु न कदाचिददाहकः स्यात् ॥६३॥

अर्थः—संसार मे स्थायी पदार्थ है वे चाहे अस्थाई हो जाय, सूर्य अपनी उष्णता छोड़ ठंडा बन जाय, चन्द्रमा शीतलता को त्याग दे, आकाश स्तब्ध होजाय, समुद्र नदियों से तृप्त हो अपनी मर्यादा छोडदे, पवन अपना बहना बन्द करले, और अग्नि भी (दहन) जलाना बन्द कर शान्त हो बैठ जाय, परन्तु यह लोभरूपी अग्नि कभी भी शान्तिदायक नही हो सकती, । भावार्थः—ऊपर कही गई असभव बाते चाहे एक समय सभव हो जाय परन्तु लोभ से कभी भी शान्ति-सुख नहीं मिल सकता ॥६३॥

वित्ताशयः खनति भूमितलं सतृष्णो, धातून् गिरेर्धमति धावति भूमिपाग्रे ।
देशांतराणि विविधानि विगाहते च, पुण्यं विना न च नरो लभते स तृप्तिं ॥६५॥

अर्थ.—मनुष्य धन की आशा से पृथ्वी को खोदता है। पर्वत की धातुओ को फूंकता है। राजा के आगे आगे दौडता है । और नाना देशो विदेशो मे परिभ्रमण करता फिरता है । परन्तु बिना पुण्य के कही भी तृप्त नही होता। अर्थात् पुण्य के प्रभाव से तो घर बैठे ही नाना सपत्तिया आ जाती है । और उसके अभाव मे कही भी जाने से वे नही मिल सकती। इसलिये धनकी आशा छोड कर पुण्य का ही उपार्जन करना योग्य है ॥६५॥

लोभं विधाय विधिना बहुधापि पुंसः, संचिन्वतः क्षयमनित्यतया प्रयांति ।
द्रव्याण्यवश्यमिति चेतसि संनिरूप्य, लोभं त्यजंति सुधियो धुतमोहनीयाः ॥८१॥

अर्थः—लोभ के वश हो नाना उपायो द्वारा उपार्जन किया गया भी द्रव्य अनित्य होने से अवश्य ही एक न एक दिन नष्ट हो जाता है। इसलिये मोह के फद से बचने वाले लोग सर्वदा लोभ से दूर रहने का ही प्रयत्न करते हैं ॥८१॥

राज्यलिप्सा के दूर करने के लिये अचार्य भद्रबाहु स्वामी ने चन्द्रगुप्त मौर्य को जिनदीक्षा दी। यह अग्रवाल जाति के इतिहास पृष्ठ स० ११७ से स्पष्ट हो जाता है कि जैन पुस्तको मे दो लोहाचार्यो का उल्लेख आता है। और लेखक महोदय श्री प्रोफेसर सत्यकेतु विद्यालकार जी ने जो यह अग्रवाल जाति का इतिहास पहिला सस्करण जो सन् १९३८ देहली कर्मशियल प्रेस चांदनी चौक देहली से प्रकाशित कराया है, लिखा है कि अनुश्रुतियो का प्रमाण जैन ग्रन्थो मे ढूढना सुगम नहीं है। यह बात असत्य है। जो साहित्य जैन ग्रन्थो मे प्राप्त है किसी ने विद्वेष की भावनाओ के कारण उठाकर नही देखा। और यदि देखा भी है तो उसे छुपाने की कोशिश तो की किन्तु प्रकाश मे लाने की कोशिश नही की।

जैसा कि "विदिशा का प्राचीन वैभव" के लेखक राजमल मड़वैया के साथ जाति -- विद्वेष के कारण अमल मे लाया गया और उसका परिणाम साहित्य का विनाश, राज्य को वस्तु संग्रह प्राप्त न होना, क्षेत्रीय क्या पूर्व में महत्व रहना, पर्यटक, विद्वान, लेखक, विद्यार्थी आदि को पुरातत्वीय सामग्री का उपलब्ध न होना। विनाशकर्त्ताओं को क्या इस वैममनस्यता के कारण प्रोत्साहन नही मिला ? हमे यह प्रसन्नता और गौरव की बात है कि इस बैमनस्यता का स्पष्टीकरण करने का सौभाग्य उपरोक्त कथित महानुभाओ ने दिया, जिसके अत्यन्त आभारी है। विदिशा नगर की नगरपालिका और उसके पार्षदगण, जिलाध्यक्ष, पुलिस विभाग, प्रान्तीय और केन्द्रीय आदि सभी संरक्षक को विनाशकर्ता बताते है। न कभी संरक्षक से आकर पूछा, न पत्रव्यवहार देखा, न मार्गदर्शक पुस्तिका का अवलोकन किया, जिस ने देश विदेश के यात्रियों को मार्गदर्शन कराया गया। शासन को वस्तुयें अर्पित की गई। और आज भी किले की दीवाल मे जो सामग्री प्राप्त हो रही है पुरातत्व विभाग के अधिकारी नही देख रहे है। जो विभाग की संरक्षित सम्पत्ति है। जिस शासनकाल में इस प्रकार के शासक हों वहां उन्नति कैसे हो सकती है ? जिस में न्याय का नाम भी नही, चारों ओर भ्रष्टाचार और पक्षपात हो, उसमें धर्म और सांस्कृतिक निधियों का उत्थान होना कभी भी संभव नही। विशेष विदिशा का इतिहास आगे देवेंगे।

यह आपको पूर्व मे ऊपर बता ही दिया है कि विष्णुकुमार मुनि ने अपनी योगमाया अर्थात् विक्रियाऋद्धि से तीन पग से समस्त भूमि को नाप लिया और जो उसके हृदय मे कपट के मैले का कोटा था इस पृथ्वी का उद्धार किया और उस नरमेध यज्ञ को विध्वस करने से नगर मे हल-चल मच गई। जो बाराहरूप विष्णु भगवान के गले मे बडी मोटी माला डली है वह देव और नगरवासियो ने यज्ञ-विध्वस और ७०० ऋषि-मुनियो के रक्षा की प्रन्नता मे ही पहिनाई थी। ठीक इसी प्रकार उन भद्रबाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्रगुप्त के मनोविकार को जीत लेने पर चन्द्रगुप्त के विकारभाव को त्याग देने पर नगरवासियो ने यह विजयमाल पहिनाई थी। जिस

कारण से जनता में प्रसन्नता की लहर दौड गई थी । और जय--जयकार हुये थे । संग्राम नष्ट हुआ था । सग्राम भी एक प्रकार का यज्ञ है । जिस पर विजय पाना इन परम तपस्वियों का ही काम है और यही नरसिंह भगवान है जो मनुष्य-पर्याय में काम, क्रोध, मान, माया और लोभ पर बिजय पा लेते है ।

आप यह भली प्रकार जानते हैं कि जब ऋषियो को बलि ने त्रसित किया था तो ऐसा कौनसा हृदय होगा जिसके लिये दु.ख न हुआ हो ? और दानववृत्ति पापात्मा के प्रति घृणा और ईर्षा न हुई हो ? उस समय क्या क्या पश्चाताप न हुए होंगे ! स्वयं पर ही अनुभव कर देखे कि अपना एक पैसे का नुकसान होता है तो नेत्रो मे पानी आ जाता है । नेत्र के पलक वरोनी हैं जो वरुण देव हैं और नेत्र कलश हैं जो मनुष्याकृति मे समुद्र मे खड़े दिखाई बताये गये है ।

क्या वह पवित्रात्मा भगवान नही जो दूसरो की भलाई के लिये तपस्या को भी त्याग कर जीवनदान दे ? वह बंदनीय नही है तो कौन है ? ऐसे परोपकारी भगवान विष्णुकुमार मुनि को मेरी बंदना है।

मुनियों के उपसर्ग को दूर करने की बात नगरवासियो ने राजा पद्मराय को जाकर कही। नगर के निवासी श्रावक और श्राविकाओ ने यथायोग्य गुरुओं की सेवा सुश्रुषा की और आहार का दान दिया । हम आजकल दीवारो पर मुनियो के कल्पित चित्र बनाते हैं, पूजन करते हैं। यह परंपरा चली आ रही हैं ।

गुरुओं की उदारता : बलि को जीवनदान

राजा पद्मराय को भगवान विष्णुकुमार मुनि ने बलि के उपसर्ग के सबध मे जो कहा था वह पूर्व मे बता दिया जा चुका है । इस पर राजन् को बड़ा भारी हृदय मे रोष है। इस कारण आचार्य के समक्ष जाकर कहा—गुरुदेव! इस बलि ने आपको जो कष्ट दिया इसे कौनसा कठोर दण्ड दिया जावे ? यह सुन उन क्षमाभूषण योगिराज ने कहा कि यह तो हमारे पूर्वोपार्जित कर्मो का दोष था। प्राणि अपने कर्मानुसार सुख और दुख भोगता है; इसी का नाम ससार है। राजन् ! इसे क्षमा कर दीजिये । इस प्रकार दयामयी अमृतरूप वाणी सुन कर, एक आश्चर्यकारी बात सुन कर बलि-राज ने अपने अपराधो की क्षमा याचना के लिये प्रार्थना की । जो शेषनाग पर बैठे हाथ जोड़ रहे है। यही भाव इस प्रतिमा मे छुपे है ।

इस प्रकार से प्रजा ने सुना तो कौने कौने से जयध्वनि निकलने लगी। नगर में बदनवार बाधे गये, जो आज श्रावण मास मे रक्षाबधन के समय बाधे जाते हैं। मुनि–रक्षा हुई इसका सूत्र बाधा जाता है। जो यज्ञ मे धान बोया गया था वह ऊग आने से भुजरियाँ पैदा होगई थी । यज्ञ विध्वस होने से वह जनता ने उखाड ली और आपस मे ले ले कर क्षमा याचना करने लगे। आज भी वह परपरा चालू है ।

इसी प्रकार चंद्रगुप्त को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने बलवान होने के नाते और चंद्रगुप्त के दुष्कृत्यो को उदाहरण देकर सबोधन कर यह बताया कि 'क्षमा वीरस्य भूषणाम्' । इसलिये हे राजन् ! काम, क्रोध, मान, माया और लोभ ही पतन की ओर ले जाने वाले है। यह समन्वय इस प्रतिमा में छुपा है।

पाठकगण यह विचार करते होगे कि इन वरुण देव के पीछे दो नदिया क्यो वताई हैं ? उनका स्पष्टीकरण यह है कि —

मानव का शरीर समुद्र है। जिस प्रकार समुद्र मे तूफान आते है उसी प्रकार से आपत्तियो के तूफान आते है । जिस प्रकार वलि ने मुनिराजो पर आक्रमण तूफान उपस्थित किया था, जिससे दयालु सज्जनो के पुत्रो मे दुखो के कारण अश्रु भर आये थे, जिनका सकेत बरुणदेव से मिला । और जब अश्रुओ का बेग हुआ तो यह दोनो ही नेत्र गगा यमुना के रूप मे दिखाई बताये हैं। जो एक मगर पर है वह गगा और जो कछुवे पर है वह यमुना का सकेत है । जो इस ससार-सागर मे दुख और सुख के रूप मे समा जाती है । इस लिये कहा है —

सर्परूप संसार है, नवलरूप नर जान ।
संत बूटि संयोग ते, होत अही--विष--हान ।।

अर्थ —यह ससार सर्प के समान है और मनुष्य नवले के समान ।

भावार्थ —जिस प्रकार से न्योला सर्प का भक्षण कर लेता है उसी प्रकार से आध्यात्मिक ज्ञानी पुरुष क्रोध रूपी सर्प को ज्ञान से क्षय कर देते है। इसी प्रकार भगवान विष्णु ने अपने ज्ञान से बलि के क्रोध पर विजय पाई । काम को सिद्ध करना एक शूरवीर का ही काम है। शूर का अर्थ शूरवीर से है । बलि क्रोधवान था । जो उस वलि से शक्तिशाली होगा वही टक्कर ले सकता था, जो कि विष्णु भगवान ने ली ।

गंगा और यमुना के ऊपर एक व्याकुल मनुष्य का चित्रण है

आप यह भली प्रकार जानते है कि मानव के जब शुभ दिन आते है तो अनायास ही योग मिल जाते है और औगुण मे गुण विद्वान ही खोज पाते है । और यह भी बतलाते हैं कि जरा सा द्वेष विनाश का कारण होता है और वह किस प्रकार भयकर रूप धारण कर लेता है। जो समझदार और विवेकी है वह भूल से भी किसी का अपमान नही करते । यदि भूल से हो जाय तो तत्काल ही क्षमा माग लेते हैं। कहा है—अपनी भूल मान लेना विद्वत्ता और बडप्पन है।

आचार्य चाणक्य का नन्द वश ने अपमान किया था, इस बदले की भावना से चन्द्रगुप्त का योग विद्वान चाणक्य ने मिलाया, भयकर विनाशीक कारण सग्रह किये। किन्तु यह सब पुण्ययोग से ही सफल हुए और उद्योग के साथ पुरुषार्थ किया । सफलता मिली । इसलिये चाणक्य ने उद्योगी पुरुष को सिह कहा है और वही लक्ष्मी का स्वामी धनवान, ऐश्वर्यवान होता है । यदि नन्दवश ऐसी भयकर भूल न करता तो विनाश का कोई प्रश्न उपस्थित्त न होता और न यहा इतिहास मे लिखा जाकर महापुराण बनता ।

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः, दैवन देयमिति कापुरुषा वदन्ति ।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्म्यशक्त्या, यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ।।

उपरोक्त प्रथम पहलू से देखा है । अब दूसरी ओर भी दृष्टि डालिये ।

जिस समय सागरचन्द्र मुनिराज ने ध्रुवतारा देखा और पुष्पदन्त मुनिराज ने हाय हाय का शब्द सुना और निवारण की युक्ति मे विष्णुकुमार मुनि के द्वारा उपसर्ग (विपत्ति) निवारण का योग्य निमित्त बताया । उस समय मुनि विष्णुकुमार ने अपने सिंह के समान उद्योग से पुरुषार्थ करके उस विपत्ति का निवारण किया । यशस्वी प्रतिभा पाई । जिससे आज वह ससार मे सिंह-पुरुष अर्थात् पूज्य पुरुष माने जाते है । उन्होंने यह यशरूपी लक्ष्मी पुरुषार्थ से प्राप्त की । वह उपसर्ग भाग्य से टल गया, इस प्रकार का आलसी पुरुषो का कहना है, प्रतिभाशालियो का नही । यत्न करने पर सफलता न मिले यह बात दूसरी है । जो व्याकुल अवस्था की मूर्ति बताई है वह उस समय की जब पुष्पदन्त मुनिराज ने विष्णुकुमार से कहा था और व्याकुल अवस्था में यज्ञ विध्वस के लिये गए थे ।

आप यह भली प्रकार से समझ गये होगे कि हमसे जो स्वार्थ–बर्बरता मे कार्य बनते है वहाँ पापों का सचय अवश्य है, और यह भी जानते हैं कि जो कुछ हम पाप अर्थात् अशुभ कार्य (जिनकी लोग निन्दा करे) कहते है वह हमारे सामने ही दिखाई देता है । इसी कारण अभी जो वर्णन किया है वह जीवन के एक पहलू जिसे राग या पाप, अशुभ, अवगुण, अधर्म, अन्याय इत्यादि नामों से मानते हैं । सामने दिखाया गया है, सो लिख कर समक्ष में रखा है ।

आचार्य भद्रबाहु का समझाने के लिये मनोवैज्ञानिक परिश्रम

अब यह देखिये कि बाराह–रूप विष्णुकुमार मुनि अर्थात् भगवान विष्णु, या चन्द्रगुप्त को धर्म की व्याख्या समझाने के लिये जो मनोवैज्ञानिक परिश्रम श्री आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने किया उसमे कुछ भाग जो रहा वह बाराहमुख के सामने चार पंक्तियो मे खड़े हुए संकेतयुक्त प्रतिमाओं का रह गया है । जिसे आप समझिये ।

इन चार पंक्तियो मे उन सम्राट चन्द्रगुप्त के मंत्रीगण है जो उनके साथ दिग्विजय में थे। यह प्रथम पहलू है। और दूसरा पहलू यह है जब मुनि विष्णुकुमार बामनरूप धर कर बलि के समक्ष गये थे । और तीन पग भूमि दान मे लेने का संकल्प कराने के बाद अपनी विक्रिया ऋद्धि से शरीर को बढाया था । उस समय चारों मंत्री जिनका देशनिकाला उज्जैन के राजा श्रीवर्मा ने दिया वह बृहस्पति, प्रह्लाद, नमुचि और बलि और इनके साथी विपरीतानुगामी संकेत करते हुए दिखाये हैं । काम, क्रोध, मान, माया और लोभ के वशीभूत अपना उल्लू सीधा करने वाले थे । आश्चर्य की दृष्टि से देख रहे है । अनेकान्त दृष्टि से देखने से मूर्तिकला मे छुपे हुये ज्ञान का लाभ अवश्य मिलता है ।

※ पाप भाग समाप्त ※

卐

पाप और पुण्य

मानव शरीर मे चार वर्ण हैं—(१) सिर–ब्राह्मण (२) भुजायें–क्षत्रिय (३) पेट--वैश्य (४) और पैर–शूद्र ।

शूद्र जन्म से सब लखो, संस्कार द्विज गाय ।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ।।

अर्थ.—जन्म से सभी शूद्र हैं । संस्कार से द्विज अर्थात् सस्कार से दूसरा जन्म माना गया है । वेद अर्थात् शास्त्र पढकर शास्त्री, और आत्मा मे लीन होने पर वह ब्राह्मण कहलाता है। जीवो की रक्षा करने वाला ही क्षत्रिय है । इसी लिये प्रकृति ने भुजाए रक्षा के लिये दी हैं न कि घात के लिये । और व्यापार उद्योग कर शरीर रूपी मशीन के सचालन हेतु पेट बनाया है, इस कारण वैश्य है। शूद्र इसलिए है कि पूरे शरीर का विकार मल–मूत्रादिक नीचे को ही गिरता है । इसी प्रकार से हमारे अधम कृत्य हमे पतन की ओर ले जाते हैं । देखो —

कुव्वत थोड़ी रोष घनेरा, यह लक्षण पिट जाने का ।
आमद थोड़ी खर्च घनेरा, यह लक्षण मिट जाने का ।।

कम पूंजी अरु वनज घनेरा, कम ताकत मगरूर ।
पैदा कम खर्चा घना, बिगड़ें तीन जरूर ।।

जो ब्रह्मज्ञानी हैं, वेद–शास्त्रो के ज्ञाता हैं, रहस्य को जानते हैं । जो वस्तु जिस प्रकार है उसी प्रकार जो विचार संकल्प, कल्पनायें, सुख एवं दुख का ज्ञान आय व्यय सबंधी तथा धर्म अधर्म, सत् असत् कर्म, राग द्वेष, पुण्य--पाप आदि की क्रियाओ के मनोविकार अवस्थानुसार परिवर्तनशीलता का ज्ञान होता है, इसलिये यह ब्राह्मण उपदेश आदेश का कर्त्ता माना है । इसलिये.—

सुख दुख अनुभव ज्ञानमय, कर संकल्प विचार ।
राग द्वेष अरु पुण्य को, ब्रह्म भेद निरवार ।।

वशीकरण

असमर्थों का बल क्षमा, समरथ भूषण जान ।
वशीकरण शुभ है क्षमा, हितकर यह बहु मान ।।

पुण्य की मूल

क्षमा पुण्य की मूल है, क्षमा सर्व गुण दान ।
जाके हिय होती क्षमा, ता संग दें भगवान ।।

शुभ भावों से पुण्य हो, अशुभ भाव से पाप ।
दोनों की संतान से, होता पश्चाताप ॥

पुण्य पठाता स्वर्ग में, तथा नरक में पाप ।
दोनों के संसर्ग से, बढ़ता जगका माप ॥

पुण्य अरु पाप समूह से, हो कर्मों का बंध ।
पर परिणति से जीव का, हो घनिष्ट संबंध ॥

सार रहित संसार में, पुण्य पाप का खेल ।
पुण्यवान सुख भोगते, पापी भोगें जेल ॥

सुखाभास हो पुण्य से, जग में माला--माल ।
पापों के फल से अमित, दुखी होय संसार ॥

(सवैया)

काय पाय के व्रत नहिं कीना, आगम पढ़ नहिं मिटी कषाय ।
धन को पाय दान नहिं दीना, कहा काज तुम कीनों जाय ॥
लीनों जनम मरण के कारण, पुंजी गांठ तें चले गंवाय ।
चारों बात फेर नहिं मिलि हैं, ज्ञान ध्यान धन नर--पर्याय ॥

पुण्य पाप फल माँहि, हरख विलखौ मत भाई ।
यह पुद्गल--परजाय, उपजि विनसै थिर थाई ॥
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लावो ।
तोरि सकल जग द्वन्द फन्द, निज आतम ध्यावो ॥

इस प्रकार से आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने चन्द्रगुप्त को पाप पुन्य का वर्णन समझाया । जो प्रत्येक विवेकी मानव के जीवन पर ज्ञान–गुण में विद्यमान है। आत्मीय उन्नति के हेतु ग्रहण करें।

अब देखिये और विचार कीजिये कि बिना पुण्य के सद्योग नही मिलते । जब सम्राट ने पूर्व सत्कर्म किये थे उनके ही योग से उन्हे लक्ष्मी प्राप्त हुई । जो उनके सिर पर कमल लिये पीछे की ओर पुण्य का प्रदर्शन करती समुद्र मे कमल पर दिखाई है । यही पुण्य–वर्गणाओं का सुयोग था जो लक्ष्मी दासी बनकर चरणो मे खड़ी रहती है। यह है पुण्य की दासी लक्ष्मी । इसलिए पुण्योपार्जन करना आचार्य ने बताया है ।

अब देखिये बाराह की मूर्ति के पीछे जो बहुत से मनुष्य वादित्रादि संयुक्त खड़े दिखाई बताये हैं वह है इस बात के द्योतक कि जब पुण्ययोग से आचार्य का सदुपदेश सुनने को मिला और आत्मी-

देवदैत्योरगव्यालग्रहचन्द्रार्कचेष्टितम् ।
विदन्ति ये महाप्राज्ञास्तेऽपि वृत्तं न योषिताम् ।।२४।।

अर्थ—जो महाविद्वान् देव, दैत्य, नाग, हस्ती, ग्रह, चन्द्रमा और सूर्य इन सब की चेष्टाओं को जानते हैं, वे भी स्त्रियो के चरित्र को नही जान सकते । क्योंकि स्त्रीचरित्र अगाध है । यह जगत्प्रसिद्ध उक्ति हैं ।।२४।।

स्त्रियों के नाच के दो पहलू है, एक तो अपने हाव भावादि द्वारा विषय भोगादि मे आनन्द मानती है, गाती हैं, वादित्रादि बजाती है, और नाचती है। दूसरा पहलू यह था कि जिन स्त्रियों को सग्राम मे पुरुषविहीन होना पडा, सकटकाल देखने पडे, उनका शील भंग हुआ, बेघरवार हुई। ऐसे आताताई ने अणुव्रत ले लिये, विपत्ति से सदैव के लिये छुटकारा पाया, इसलिये नाच रही है। तीसरा पहलू यह भी है कि ऐसा आततार्ड पुरुष ससार को क्षणभगुर मान ससार की असारता जानकर विभूति सकटो से पाने के पश्चात् योग धारण कर रहा है। इसलिये भी आनन्द उसके उपलक्ष मे मना रही है । इत्यादि और भी शुभ बन्ध के कारण हो सकते हैं ।

तब देखिये, इन स्त्रियों के ऊपर एक देव विमान में बैठा पुष्पवृष्टि कर रहा है। इसका सम्बन्ध इससे क्यो है? इसका कारण यह है कि भगवान विष्णुकुमार मुनि ने बलिराज को बामनरूप धारण कर छला और ७०० ऋषि–मुनियो की रक्षा की । उसकी दानवता का प्रतिकार अपने बाहुबल पर किया । इसलिये नगरवासियो के साथ देवो ने भी जय–जयकार किये और पुष्पवृष्टि की । उसका भाव दर्शाया गया है। तथा दूसरी बात यह भी है कि सम्राट चन्द्रगुप्त ने आचार्य भद्रबाहु जी के द्वारा धर्मोपदेश प्राप्त कर अणुव्रत धारण कर मोक्षमार्ग का अनुसरण किया, इसलिये जनता और देवो ने उनका स्वागत किया, पुष्पवृष्टि की, जिसका यह चित्रण है ।

इसी तरह जो अतिथि अपने घर या नगर मे आते है, जिनसे कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता, किन्तु अपने भारस्वरूप होते हैं, जब उनका स्वागत एक मानवता के नाते करते है तो फिर जो एक महापुरुष के रूप मे हो, जिनसे अद्वितीय ज्ञान मिलता है, कैसे वचित रह सकते है ?

चित्रण की साकारता

अब आप बाराह रूप भगवान विष्णु के सिर पर जो भगवान शिव है जो कि वृषभ पर आरूढ है कहती है कि—स्वामिन् ! इस चित्रण का क्या अर्थ है ? तो भगवान क्या उत्तर देते है ? यह सब मायारूपी नार है । जो इसके चक्कर में फंस जाता हैं उसका निकलना बड़ा कठिन है। इसके जीतने वाले तो अलौकिक शक्ति के धारी भगवान वीतरागी पुरुष हैं । उन्हे छोड़कर कोई विजय नही पा सकता ।

※ गुफा नं० ५ का इतिहास संपूर्ण समाप्त हुआ ※

※

मकरवाहिनी गंगा

मकर वाहिनी गगा की मूर्ति इस विदिशा मे मौर्य साम्राज्य मे थी। इसकी प्रतीक मौर्य साम्राज्य की निर्माणित उदयगिरी गुफा मे मिलती है। तथा कई जगह विदिशा के किले की दीवाल मे से लोगो को मिली है ।

साम्राज्य किसी के एकसे नही रहे, यह तो चलती फिरती छाया है। एक का उत्थान दूसरे का पतन अवश्य है ।

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद कुषाणो के शक्ति की बृद्धि हुई। ईर्षा के कारण तथा अपना प्रभुत्व जमाने के हेतु परिस्थितियो के अनुसार हिन्दू जैन बौद्ध धर्म अत्याचारियो के कारण भयकर दुर्दशा मे पड गया । लोगो को विश्वास था कि भगवान शिव ही इस सकट को घडी को दूर करेंगे, वे ही अपने भक्तो को स्वतत्र करने के लिये खडे होगे ।

कुषाणो की नीति थी कि उच्च वर्ग को नष्ट कर दिया जाय, राष्ट्र की सास्कृतिक स्वतन्त्रता की जडे कमजोर पड जाय, जनशक्ति समाप्त हो जाय । ब्राह्मणो के नाश हेतु वैदिक धर्म का कट्टरता से विरोध किया गया, जनता पर अत्याचार किये गये। इससे भारतोय समाज दुखित हो उठा। ऐसा इतिहासकार बताते है ।

भारशिवो ने गगा तट पर विजय प्राप्त करने के बाद अपना कार्य विदिशा, पद्मावती और मथुरा तक राज्य की बृद्धि की, कुषाण साम्राज्य को उखाडकर फेक दिया । इस सम्बन्ध मे एक ताम्रपत्र मे लिखा मिला है—

"अशभारसन्निवेशित शिवलिंगोद्वाहन शिवसु परितुष्ट समुत्पादित राजवशानाम् परक्रम आधिगत-भागीरथी अमजल मूर्द्धाभिषिक्तनाम् दशास्वमेध-अवभृथस्नानाम् भारशिवानम् ।।"

भारशिव शासनकाल मे सिक्को और राज्यचिन्हो मे भी शिव के स्वरूप को स्वीकारा है । गगा की शक्ति पर उनका अटूट विश्वास था । उनके सिक्को पर एक ताड बृक्ष और उसकी छाया मे बैठी स्त्रीमूर्ति अकित रहती थी । यह स्त्रीमूर्ति गगा की होती थी । उनका राज्यचिन्ह मकरवाहिनी गगा का था । भारशिव मूर्तियो के सिर भी प्राप्त हुए हैं जो मडनैया सग्रहालय विदिशा मे विद्यमान है ।

जैनधर्म, वौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म मे मूर्तिपूजा प्रवल थी । भारशिव केवल लिंग पूजा ही करते थे। कुषाणो का नाश, शैव धर्म का प्रचार, हिंदू सस्कृति और धर्म की रक्षा के लिये उन्होने तीन स्थानो (राजधानियो) मे पद्मावती, विदिशा और मथुरा मे रह कर कार्य किया । इसके वारे मे पुराणो मे उल्लेख मिला हैं ।

"नवनागा पद्मावत्या कान्तिपुर्याम् मथुरायाम्" । भारशिवो के सस्थापक वीरसेन को कहा है । किन्तु जिनवीरसेन ने उदयगिरी की गुफाये वनवाई है। इससे मालूम होता है कि यह दूसरे वीरसेन है। वह वीरसेन तो जैन धर्मानुयायी थे। इसलिये मालूम होता है कि उन्होने सिद्धो को नमस्कार करते हुए जिनविम्वो की प्रतिष्ठा कराई है, और जिनविम्व निर्माण कराये हैं।

उज्जैनः—

आराधनासार कथाकोष पृष्ठ संख्या ३३१--कथा आचार्य भद्रबाहु ।

जैनियों के दिगम्बर–श्वेताम्बर दो भेद

सम्राट चन्द्रगुप्त की दिग्विजय यात्रा से लौटने के पश्चात् आचार्य भद्रबाहु के उपदेशामृत पान करने के उपरात जिनधर्म स्वीकार किया । और उज्जैन प्रस्थान किया । श्वेताम्बर--दिगम्बर इन दो धर्मों का भेद बारह वर्ष का अकाल पडने से हुआ । एक दिन आचार्य भद्रबाहु स्वामी चर्या को (भोजनार्थ) नगर में गये हुए थे। और किसी गृहस्थ के घर पालने में पड़े दुधमुहे बच्चे ने आचार्य के अन्दर आते ही कहा कि जाओ--जाओ !

इन शब्दो पर अपने निमित्तज्ञान से जानकर कि यहाँ बारह वर्ष का अकाल पडने वाला है, आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने उज्जैन नगर से जैनविद्री को प्रस्थान किया, जो दक्षिण भारत मे जैनियो का सब से बड़ा तीर्थस्थान है ।

इन्हो का जैनविद्री जाना सम्राट अशोक के १५० वर्ष पूर्व यानी हजरत ईसा से ४३ वर्ष पहिले बताते हैं । आचार्य भद्रबाहु स्वामी के आगमन के कारण ही भेलसा का नाम भादलपुर भी रखा गया था। जैनियो की मजहबी रस्मों मे आज तक यह पुराना नाम लेते हैं ।

इस बात का ग्वालियर गजेटियर जिल्द पहली सन् १९०८ में जो उल्लेख किया है वह जैन शास्त्रो के अनुसार सवत् १४१ मे हुये है ऐसा ज्ञात होता है । आचार्य भद्रबाहु द्वितीय--बाराह मिहिर के छोटे भाई थे और सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) के दरबार के नव रत्नों में से थे । जिनमे दिगम्बर जैन साधु भी थे । जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१)--धन्वन्तरी (१)–क्षपणक–द्वितीय नाम सिद्धसेन दिवाकर जो दिगम्बरी जैन साधु थे (३)–अमरसिंह जिनका लिखित अमर कोष कहते हैं । (४)--शकु भट्ट (५)–घटपरकर (६)-- कवि कालिदास (७)–बाराह मिहिर (८)--वररुचि ।

इन्ही सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के नाम से जिनको विक्रमादित्य कहते है संवत् चल रहा है और मालव सवत् से जुडा है । विक्रम ने शको पर विजय पाई और शकारि कहलाया, इसी का यह सवत्सर चला है और वह मालव सवत् से जोड दिया गया है ।

विदिशा और उदयगिरि गुफा नं १३ भगवान शेषशायी विष्णु

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि, जलमन्नं सुभाषितं ।

मूढः पाषाणखण्डेषु, रत्नसंज्ञां विधीयते ।।

भावार्थ—इस वसुन्धरा पर मुख्य तीन रत्न हैं (१) अन्न (२) जल और (३) सुभाषित (मधुरवाणी), किन्तु मूर्ख मनुष्य पाषाण के टुकड़ों को रत्न मानता है ।

कुटिल वचन सबतें बुरो, जार करै तन छार ।
साधु--वचन जलरूप है, बरसे अमृतधार ॥

भगवान विष्णु के साथ सप्त ऋषि भी है । वह निम्न प्रकार हैं—

(१) दो आखे (२) दो कान (३) दो नाक के स्वर (४) एक मुख । इनका दो प्रकार से उपभोग होता है । सन्त समाज सदुपयोग के रूप मे और विपरीत (कुटिल) बुद्धि वाले इसका दुरुपयोग करते हैं।

पांच मंत्रियों के नाम

(१) प्रधान मन्त्री–अहकार (२) गृह मत्री--काम, क्रोध (३) विदेश मंत्री--माया मोह (४) अर्थ मत्री--लोभ (५) रक्षा मन्त्री--दया, क्षमा ।

एक कवि ने भगवान विष्णु से पूछा कि भगवान! आप सूख क्यों गये ? तो भगवान उत्तर देते हैं —

एका भार्या प्रकृतिमुखरा, चंचला च द्वितीया ।
पुत्रश्चैको भुवनविजयी; मन्मथः दुर्निवारः ॥
शेषा शैय्या पवनवहनो, वारिसेवितसुरारिः ।
स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं, दारुभूतो मुरारिः ॥

भावार्थ—भगवान विष्णु की दो पत्नियाँ हैं, उनमे एक तो प्रकृति से मुखर है अर्थात् धारा प्रवाही बोलने वाली सरस्वती जो जीवन भर साथ देती है, पतिव्रता है, मुझमे अत्यन्त स्नेह रखते है । और दूसरी जो स्त्री लक्ष्मी है वह ऐसी चचला है कि आज इसके पास, कल उसके पास है आपस मे झगडा रहा करता है । इस पर पूछा कि विशेष कर सूम के घर क्यो रहती है ?

(दोहा)

एक दिना लक्ष्मी प्रतें, पूछत हैं कवि एम ।
दाता पंडित सूर तजि, रहै सूम घर केम ॥

लक्ष्मी का उत्तर (कवित्त)

सूर घर जाऊं तौ अकेली रहि जाऊं रांड, बो तौ जूझि जूझि मरिजाय रणथान में ।
दाता घर जाऊं तौ मैं आदर न पाऊं नेक, बो तौ भरि भरि थाल फैंकदेत दान में ॥
पंडित के जाऊं सौत विद्या से लड़ाई रहै, दोय तलवार न समांय इक म्यान में ।
तातें सेठि सूमचन्द, ढूंढ लियो ठीक मैंने, खरचै न खाय जोड़ि धरत मकान में ॥

भगवान विष्णु कहते है—लक्ष्मी की यह दशा है इस कारण दुखी हूँ। और पुत्र कामदेव है जो लोक में विजय प्राप्त करने वाला है। वह है यौवनावस्था जिसे दूर नही किया जा सकता। मदान्ध होकर विषयों मे अपने आत्मस्वरूप को भूल गया और मेरा शयन इन आपत्तियों के कारण शेषनाग पर है। शेषनाग का काटा हुआ मंत्र और औषधि से बचा सकता है किन्तु-क्रोधरूप सर्प का काटा किसी भी हालत में नही बच सकता अर्थात् जिस राजा का दबदबा (प्रभाव) हैं वह राज्य उत्तम है, जिस राज्य का प्रबन्ध भ्रष्टाचारियो और स्वार्थियों के हाथ में हो वह न यश पा सकता है न वह अधिक समय टिक सकता है। इस कारण देव और दानव अर्थात् पाप पुण्य आपस में झगड़े कराते रहते है। और मेरा बाहन गरुड है। वह आपस में विरोधी हैं। क्रोध (सर्प) और ज्ञान (गरुड) है। इस प्रकार एक कवि ने कहा है कि:—

चिन्ता बिन चतुरई नहीं, दुख बिन नहीं शरीर।
पाप बिना लक्ष्मी नहीं, सो भूले दास कबीर ॥

यह मायारूपी लक्ष्मी नारि विदेशमन्त्री है। कहा है:—

काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह के धारि।
तिन महँ अति दारुन दुखद, माया रूपी नार ॥

भावार्थ—काम क्रोध मद और लोभ आदि मोह की प्रबल सेना है। इसमें स्त्री जो माया की साक्षात् मूर्ति है वह तो बहुत ही भयानक दुख देने वाली है।

अग्नि, समुद्र, प्रबल स्त्री और काल की समानता—

प्रश्न:—कहा न अबला करि सकै, कहा न सिन्धु समाय।
कहा न पावक में जले, कहा काल नहिं खाय ॥

उत्तर—सुत नहिं अबला करि सकै, मन नहिं सिन्धु समाय।
धर्म न पावक में जले, नाम काल नहिं खाय ॥

(दोहा)

जन्म पत्रिका वरति के, देखहु मनहिं विचार।
दारुन बैरी मीचु के, बीच विराजत नार ॥

भावार्थ—जन्मकुडली को व्यवहार मे लाकर मनमें विचार कर देखो कि स्त्री भयंकर बैरी के और मृत्यु के स्थान में विराज रही है। कुडली के बारह स्थानो में छठा शत्रु का और आठवाँ मृत्यु का माना जाता है। इनके बीच मे स्त्री का स्थान सातवाँ है। जगत मे स्त्रियों के कारण न मालूम कितने लोगों मे शत्रुता और कितने की मृत्यु हुई है।

इसलिये हे लक्ष्मी—

समुद्रे वसते लक्ष्मी, पर्वतस्तनमंडले ।

विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं, पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥

भावार्थ—हे देवि ! आपका निवास समुद्र मे है अथवा आपमे ही समुद्र निवास करता है। आपके उन्नत स्तन मडलाकार गोल पर्वत के समान है। ऐसी जो भगवान विष्णु की पत्नी लक्ष्मी, मैं तुझे चरणस्पर्श कर क्षमा मागता हुआ नमस्कार करता हू।

आप प्रात काल विस्तर से उठकर सर्वप्रथम अपनी हस्तरेखाये क्यो देखते हैं ? इसलिये कि—

कराग्रे वसते लक्ष्मी, करमूले च सरस्वती ।

करमध्ये तु गोविन्दा, प्रभाते करदर्शनम् ॥

भावार्थ—आप इन्ही हाथो से धन कमाते है सो लक्ष्मी का निवास है और लिखते है सो सरस्वती का निवास है। और दोनो हाथ मिलाने पर चन्द्रमा वन जाता है इसलिये चन्द्रमा समुद्र का पुत्र है, आपका शरीर ही समुद्र है, और चन्द्रमा की वहिन लक्ष्मी हे, उसका वाहन उल्लू है। जो इसके चक्कर मे फसता है वह उल्लू वन जाता है। जैसे चन्द्रमा का पुत्र बुध यदि आपके मस्तिष्क मे शान्ति का भडार है तो आप अपनी विवेकवुद्धि से सुख, लक्ष्मी, धर्म कर्म, सव कुछ भोग सकेगे और जो हाथ मे चन्द्रमा बन जाता है वह देव माना गया है अर्थात् वही भगवान है जो इन हाथो मे विद्यमान है। इसलिये प्रात काल हस्तरेखा के दर्शन का महत्व वतलाया है। यदि इस प्रकार न किया तो—

चला लक्ष्मीः चला प्राणाः, चला जीवितमंदिरे ।

चलाचले च संसारे, धर्म एको हि निश्चलः ॥

इसलिये कहा है कि भगवान विष्णु के समान कौन है —

लोभ पाप में नहि फंस्यो, लगे न मन्मथ बाण ।

क्रोधानल में नहि फंस्यो, सो नर विष्णु समान ॥

लोभ की प्रबलता (अर्थ–मत्री)

ज्ञानी तापस सूर कवि, कोविद गुन आगार ।

केहि के लोभ विडंबना, कीन्हि न एहि संसार ॥

भावार्थ—ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, पडित और गुणो का धाम इस ससार मे ऐसा कौन मनुष्य है जिसकी लोभ ने मट्टी पलीद न की हो ?

माया की फौज (विदेश मंत्री)

व्यापि रहेउ संसार महुँ, माया--कटक प्रचंड ।

सेनापति कामादि भट, दंभ कपट पाखंड ।।

भावार्थ—माया की प्रचड सेना ससार मे फैल रही है। कामादि (काम क्रोध मद लोभ मोह मत्सर) वीर इस सेना के सेनापति है। और दम्भ कपट पाखड इसके योद्धा है । अत एव इसके गृहमत्री काम, क्रोध और अर्थमत्री लोभ की प्रबलता है—

तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।

मुनि विज्ञान धाम मन, करहिं निमिष महुँ क्षोभ ।।

यह तीनो दुष्ट बड़े ही बलवान है। ये विज्ञानसपन्न मुनि के मन में भी पलक मारते मारते क्षोभ उत्पन्न कर देते है । अतएव—

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम ।

ये ही तेरे शत्रु है, समझो आतम—राम ।।

हे आत्मन् ! यही तेरे शत्रु है।

काम क्रोध और लोभ के सहायक—

लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नार ।

क्रोध के पौरुष वचन बल, मुनिवर करहिं विचार ।।

भावार्थ—श्रेष्ठ मुनिवर विचार करते है और कहते है कि लोभ के इच्छा और दम्भ का बल है, काम के केवल कामनी का बल है और क्रोध के कठोर वचन का बल है ।

(उद्‌बोधन)

दीपशिखा सह युवति तन, मन जनि होसि पतंग।

भजहिं राम तजि काम मद, करहिं सदा सत्संग ।।

तथा

फिसलो मत भूल कर भी, ऊपर की सफाई पर ।

वर्क सोने का लगा, गोबर की मिठाई पर ।।

पुनः—नवयुवती के भाल पर, लगी हुई सिन्दूर ।

यारो खतरा है यहां, रहना इनसे दूर ।।

भावार्थ—युवतियो का शरीर खोटी खोटी सप्त धातुओं का भण्डार जिसमे मल-मूत्रादिक झरता रहता है ऐसे अपवित्र गोरे शरीर रूप दीपक की लौ पर हे मन ! तू उसमें पतंग बनकर क्यो भस्म होता है ! काम और मद को त्याग कर राम जो अन्तर्यामी हैं आत्मचिन्तवन कर। काम क्रोधादि एक एक अनर्थकारक हैं, फिर सब की तो बात ही क्या है ?

ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस, तेहि पुनि बीछू मार।
तेहि पियाइय वारुणी, कहहु काह उपचार ॥

भावार्थ—जिसकी होनहार और भविष्य खोटा हो, जिसे क्रूरग्रह लगे हो अथवा पिशाच लगा हो और उसमे भी वायु रोग से पीडित हो, ऐसी ही दशा मे विच्छू डक मार देवे, ऐसे तीन प्रकार के पागल को यदि शराब पिलादी जाय तो यह कैसा इलाज है ? क्या यह उस जीव के विनाश का कारण नही ?

विच्छू के पीछे बसे, मुख में वसत भुजंग।
नाहर के नख में बसै, सो सब त्रिया के अंग ॥

भाग्यवान कौन है ?

बुध सो विवेकी विमल मति, जिन्ह के रोष न राग।
सुहृत सराहत साधु जेहि, तुलसी ताको भाग ॥

भावार्थ—विवेकी निर्मल बुद्धि के धारक ज्ञानी पुरुष राग का योग मिलने पर आशक्ति और विछोह (न मिलने) पर क्रोध नही करते, किन्तु साधुजन जिनका हृदय पवित्र है प्रशसनीय और भाग्यशाली हैं।

इस प्रकार महाराजा चन्द्रगुप्त को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने यह देवासुर सग्राम का उदाहरण देकर सम्बोधित किया है। जिनका चित्रण आप उदयगिरि की गुफा न० १३ मे अवलोकन कर रहे हैं।

नव नाग एवं विष्णु के नाम

अनन्तं, वासुकी, शेषं, पद्मनाभं, च कंबलम् ।
शंखपालं, धार्तराष्ट्रं, तक्षयं, कालियं, तथा ॥
एतानि नव नामानि नागा नागं च महात्मनाम् ।
प्रातःकाले संध्यायां नित्यं, पापं संपूर्ण मुच्यते ॥

गुफा नं० १३

इस परम पुनीत ऐतिहासिक विदिशा नगरी मे आचार्य भद्रबाहु स्वामी का प्रथम उपदेश हुआ और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को जिनदीक्षा दी गई।

यहां भगवान शीतलनाथ के ३ कल्याणक हुए थे। भगवान नेमिनाथ का समवशरण श्रीकृष्ण के ३ युगल भ्राताओं को लेने आया था, जो कंस के भय से देवों ने अलका नामक सेठानी के घर पालनार्थ रखे थे।

रामचन्द्र जी का बनवास के समय आगमन तथा शत्रुघ्न के पुत्र शत्रुघाती (सुबाहु) को इस दशार्ण प्रदेश की राजधानी का स्वामी बनाया था।

२६ जैनाचार्य यहाँ पट्टाधीश हुए। यहाँ पर २० गुफाये हैं जिनमे प्रमुख और दर्शनीय गुफा न० १ सूर्य गुफा, गुफा न० ५ बाराह नाम से, गुफा न० १३ शेषशायी विष्णु, गुफा नं० १९ देव और दानवों द्वारा समुद्रमथन नाम से विख्यात है। गुफा नं० २० इसमे जैन तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। गुफा न० ६, ७, और २० मे सम्राट चन्द्रगुप्त के शिलालेख, उनके आगमन तथा दिग्विजय से आने और अजेय होने के संबंध मे साक्षी दे रहे हैं तथा उनमें आचार्य भद्रबाहु के धर्मोपदेश का भी वर्णन है। आचार्य वीरसेन पूर्व में उनके मंत्री थे। भली प्रकार से सिद्ध होता है। आचार्य' भद्रबाहु स्वामी की मनोवैज्ञानिक धर्मोपदेश की प्रचारपद्धति क्या थी? हिंसक, आतातयी को जिनधर्म में दीक्षित किया।

शेष का भावार्थ—कुछ नही से है और नाग का सर्प से। इन्हे अनंतशायी भी कहते है। अनत का भी अर्थ सर्प से ही है। सामायिक पाठ में कहा है—

काल अनंत भ्रमों जग में सहिये दुख भारी।
जन्म मरण नित किये पाप कौ हों अधिकारी॥
क्रोध मान मद लोभ, मोह माया वश प्राणी।
दुःख सहित जे किये दया तिन की नहिं आनी॥

कवि दौलतराम जी कहते है:—

मोह--महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत बादि।
तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा॥

आचार्य कहते है कि इस जीव ने अनन्तानन्त बार जन्म लिया और मरण को प्राप्त हुआ। इस कालरूप शैय्या पर शयन करने से अनन्तशायी कहा है।

जो जनमत सो मरत है, समय आय पुनि जाय।
फिर क्यों सोच करो बृथा, हितकर करो उपाय॥

यह जीव चैतन्यस्वरूप आत्मा जिसे विष्णु भी कहते है, जिनकी नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति बताई है, मोह के वशीभूत उसके लालन–पालन के अर्थ लक्ष्मी की ओर दौडता है। वह तो पुण्य से ही प्राप्त होती है। यह दो प्रकार की है—

(१) माया दोय प्रकार की, जो कोई जाने खाय।
एक मिलावै राम से, एक नरक ले जाय ॥
माया ठगनी ने ठगा, यह सारा संसार।
पर माया जिनने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥

(२) मोह— (राग रामकली)

जीव को मोह महा दुखदाई ॥

काल अनादि जीति जिंहि राख्यो, शक्ति अनन्त छिपाई।
क्रम क्रम करके नर--भव पायो, तऊ न तजत लराई ॥१॥
मात तात सुत बान्धव बनिता, अरु परदार बढ़ाई।
तिन सो प्रीत करै निशि बासर, जानत सब ठकुराई ॥२॥
चहुँगति जन्म मरण के बहु दुख, अरु बहु कष्ट सहाई।
संकट सहत तऊ नहिं चेतत, प्रेम मदिरा अति पाई ॥३॥
इह बिन तजे परम पद नाही, यो जिनदेव बताई।
तातें मोह त्याग ले भैया, ज्यो प्रगटै ठकुराई ॥४॥
गुण अनंत प्रगटै जिह थानक, ता पटतर को आवै।
इह विधि हंस सकल सुख--सागर, आपुहि आप लखावै ॥५॥
यह मोह महा बलवंत भूप, तुम ज्ञाता जानत सब स्वरूप।
कैसे कर इन सो बचै जीव ? तुम स्याने ह्वै चूको न दाव ॥६॥

ज्ञातव्य रूपक—

आयुध जाके खग चक्र हाथ, बहु धारा जास उपाधि साथ।
महां नागफास विद्या अनेक, बंध सत्तर कोड़ा कोड़ि टेक ॥
बाणादिक महा कठोर भाव, जिंहि लगै वचत नहिं रंक राव।
इह विधि अनेक हथियार धार, कहूं नाम कहत नहिं लगे पार ॥

जाके संग सूरा है अनेक, अज्ञान भाव सब गहै टेक ।
मंत्री सुर राग द्वेष हेर, छिनमें सब सेना करहिं जेर ॥
संशय सो गढ़ जाके अटूट, विभ्रम सी खाई जटाजूट ।
विषया सी रानी जासु गेह, सुत जाके सूर कषाय सेह ॥
सेनापति चारों है अनंत, जिहिं घेरो अव्रतपुर महंत ।
प्रधान मंत्री अहंकार नं० ७—सेनापति(राग)नं० ८ सहायक सेनापति (द्वेष) नं०९

परिवार का रूपक

सत है पिता धर्म है बन्धु, लज्जा सी महतारी ।
शील बहिन, संतोष पुत्र, अरु क्षमा हमारी नारी ॥
ज्ञान सो गुरु, विवेक है चेला, रहत सदा हितकारी ।
काम क्रोध द्वय चोर वसत हैं; तिनको डर मोय भारी ॥
आशा सासू तृष्णा साली, लोभ मोह ससुरारी ।
अहंकार है स्वसुर हमारे, ते सबके अधिकारी ॥
मन दीवान सुरत है राजा, बुध मंत्री अति भारी ।
राम नाम की बसत नगरिया, तुलसी पंच मझारी ॥

विषया रानी के मन्त्री लोभ है, जो गृहमन्त्री काम यौवनावस्था मे पदार्पण कर भोगों को भोगते है ।

जो विषयी निश दिन रहै, भरा सदन सन्ताप ।
ऋद्धि सहित भी निंद्य हो, लज्जित होता आप ॥

उस समय कामाग्नि को सान्त्वना नही मिलती तो क्रोधाग्नि प्रज्वलित होती है, जो अग्नि हाथ में लेकर सकेत कर रहे है।

जलता वह ही आग में, जो हो उसके पास ।
क्रोधी का पर वंश भी; जलता विना प्रयास ॥
वह क्रोधी मृततुल्य है, जिसे न निज का भान ।
पर त्यागी उस क्रोध का, होता सन्त महान ॥

मन्त्री-लोभ नं० ११ और काम क्रोध जो गृह मन्त्री जो प्रधान मंत्री (अहंकार) के ए० डी० सी० हैं पाप कर्म के उदय से कर्म-बंधनो से बाधे हुए है । इसलिये:—

राग द्वेष छल लोभ मोह कामादि विचार हटाऊं ।
पर परणति को त्याग निरन्तर, स्वाभाविक चित लाऊं ।।

इसलिये.—

शीत समय दर्याव किनारे, ध्यान धरें अन्तरंग में ।
करें निर्जरा कर्मबन्ध की, योग संवार छिन छिन में ।।

यह शुभ भावना हमारे रक्षामन्त्री न० ५ एव ६ क्रमश बारम्बार पुष्टि करते हैं ।

(नं० ५) दयाः—

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान ।
तुलसी दया न छोड़िये, जब लग घट मे प्रान ।।

दुर्बल की जैसी दशा, करता है तू क्रूर ।
वैसी ही तेरी दशा, तब कैसा हो शूर ।।

जिन पापो के नाम से, कांप उठे यह जीव ।
वह उनको भोगे नहीं, जिसमें दया अतीव ।।

(नं० ६) संयम के माहात्म्य से, मिलता है सुर--लोक ।
और असंयम राज--पथ, रौरव को बे-रोक ।।

क्षमा पुण्य की मूल है, क्षमा सर्व गुण दान ।
जाके हिय होती क्षमा, ता संग दें भगवान ।।

सामाजिक वा धार्मिक, कार्य वही कर पाय ।
जो पृथ्वी सम गह क्षमा, सब की सब सह जाय ।।

जीवन का आनन्द विवेक पर निर्भर है । और विवेक पुण्ययोग से ही मिलता है । विवेकी अपने अवगुण और दूसरो के गुण देखते है ।

ज्ञानरूप गरुड़ न० ३ क्या कहते है —

ज्ञान कहै चेतन सुनो, तुमसे मेरे नाथ ।
कहा विचारौ क्रूर वह, गहि डारौ इक हाथ ।।

तब चेतन ऐसे कही, जीत तुम्हारी होय ।
मारि भगावो मोह को, रागद्वेष अरि दोय ।।

जीवित मानव जाति के, दो ही नेत्र विशेष ।
अक्षर कहते एक को, संख्या दूजा शेष ।।
शिक्षित को सारी मही, घर है और स्वदेश ।
फिर क्यों चूके जन्म भर, लेने में उपदेश ।।
विद्या ही नर के लिये, अविनाशी त्रुटिहीन ।
निधि है, जिससे अन्य धन, होते शोभाहीन ।।

उस समय सरस्वती नं० ४ चित्र मे बताई गई है । देखो रुद्रयामल तत्रान्तर्गत भवानी सहस्रनाम वेकटेश्वर प्रस बम्बई मे छपे पृष्ठ ९ श्लोक नं० १३ पर :-

कुन्डासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ।
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहिनी ।।

इसलिए माता सरस्वती कहती है .—

निर्लोभी करुणा भरा, कर्मठ, बुद्धि विशाल ।
राज्यकार्य को राखिये, ऐसा नर भूपाल ।।

जिसकी प्रतिभा से रहे, शासन में विस्फूर्ति ।
और हटे विपदा वही, करे सचिव पद--पूर्ति ।।

भक्त कुशल भी भृत्य पर, रुष्ट रहे जो देव ।
भाग्यश्री उस भूप की, फिर जाती स्वयमेव ।।

जिसे प्रतिष्ठाभंग का, भय रहता स्वयमेव ।
उस कुलीन निर्दोष को, कहो सदा नर-देव ।। ---मड़वैया

माता सरस्वती का भव्य जीबों को अन्तिम उपदेश । यदि विश्व में जीवित रहना है तो:—

करना है कुछ करना सीखो, छाती तान विचरना सीखो ।
जीना है तो मरना सीखो, तब हो पूर्ण विजय ।।

इसलिये —हमें महत पुरुषों के जीवन, ये ही बात सिखाते है ।
जो करते है सतत परिश्रम, वे पवित्र बन जाते है ।।

इस शेषशायी भगवान् विष्णु की गुफा नं० १३ से जो शोधपूर्ण ज्ञान मिला वह है एक आदर्श पुरुष का महत्वपूर्ण जीवन, जो कि श्री पूज्यपाद आचार्य भद्रबाहु स्वामी जो एक ब्राह्मण कुल के दीपक थे। और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य जिसे विक्रमादित्य भी कहते है जिसने सेल्यूकस की पुत्री

हेलना से विवाह किया था और दिग्विजय से लौटने के पश्चात् उज्जैन जाते समय विदिशा में आचार्य भद्रवाहु स्वामी से प्रथम बार भेंट करने गये थे। जिनकी भावना सांसारिक भोगो को भोगने मे थी, प्रवृत्ति हिंसक, आत्मचिन्तवन से दूर थी, सदगुरु द्वारा आत्मीय शत्रु मित्र का निर्णय कराया गया, जो हजारो वर्ष बीत जाने पर भी अपनी शौर्यपूर्ण कीर्ति के द्वारा आज भी ससार मे जीवित है, जो इस प्रतिमा से ज्ञान मिलता है।

प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ॥

अध्याय – ५

देव–दानवों द्वारा समुद्र–मंथन

पाठकगण भली प्रकार जानते ही हैं कि देव और दानवों ने समुद्र-मंथन किया था और उसमें से १४ रत्न निकाले थे। यह समझने की बात है कि वह देव कौन है और दानव कौन है? समुद्र क्या है? और १४ रत्न क्या हैं?

(१) पुण्य प्रकृति देव है और (२) पाप प्रकृति दानव हैं।

जो यशस्वी कार्य है, जिन्हे ससार अच्छा कहता है, जिनमे यह लक्षण हों :—

दोहा—**विनय दया अरु प्रेम से, जासु हृदय भरपूर।**
नहिं मनुष्य, वह देवता, गहहु तासु पद--धूर॥

और वही ससार का महापुरुष है जिसके चरित्र को पढकर मानव अपने जीवन को यशस्वी बनाता है। कहा है—

सूरत से कीरति बड़ी, बिना पंख उड़ जाय।
सूरत तो जाती रहे, कीरति कभी न जाय।
जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
याते यश संचय करहु, लोग करैं सम्मान॥

और दानव इसके विपरीत कार्य करने वाला है। कहा है—

जूआ खेलन मांस मद, वेश्या व्यसन शिकार।
चोरी पर--रमनी रमन, सातों पाप निवार॥
हिंसा चोरी झूठ अरु, क्रोधादिक जे पाप।
सो सब उपजत लोभ से, लोभ पाप का बाप॥

यह सब कुछ विषय भोगादि के लिये ही किया जाता है। उसका मूल कारण नारी है। वही संसार-समुद्र है। उसी का मथन होता है। नारी मे ९ ग्रह, १४ रत्न और १० प्रकार के कल्पवृक्ष दशाग विद्यमान हैं। वही भोग की भडार है। नारी के गुण—

नारि विना घर भूत समान, सु नारि सबै घर की रखवारी।
नारि चखावत है षट् भोजन, नारि दिखावत है सुख भारी ॥
नारि विना रजनी सुख कारण, पुत्र उपावन को बड़वारी।
और बड़ाई कहां लों करूं, साख बड़ी मन रंजनहारी ॥

इस पर जिनसेन आचार्य अपने सुभाषित रतनसदोह पृष्ठ १०१ श्लोक सख्या ३०३ मे कहते है—

येषां स्त्रीस्तनचक्रवाकयुगले पीतांशुराजत्तटे,
निर्यत्कौस्तुभरत्नरश्मिसलिले आस्यांबुजभ्राजिते।
श्रीवक्षःकमलाकरे गतभया क्रीड़ा चकरापरां,
श्रीर्हि श्रीहरयोऽपि ते मृतिमिताः कुत्रापरेषां स्थितिः ॥३०३॥

अर्थ—स्त्री के स्तनरूपी चक्रवाको से युक्त, पीताशु–पीताम्बर रूपी मनोहर तट से भूषित, कौस्तुभ मणि की छटकती हुई किरणरूपी जल से व्याप्त, मुखरूपी कमल से अलकृत जिनके श्री वक्षस्थलरूपी विशाल तालाब मे साक्षात् लक्ष्मी ने क्रीडा की। जब ऐसे महापुरुष भी काल के गाल मे फस गये, तब अन्य मनुष्य सदा काल कैसे जीवित रह सकते है ? कभी नही।

स्वर्ग के देव दशाँग भोग भोगते हैं कल्पवृक्षो से, जो नारी मे प्राप्त है

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषा—भाजन—विग्रहाः।
सुग्दीपवस्त्र पात्रांगा दशधा कल्प-पादपाः ॥ १७२ ॥

भावार्थः—शब्द	अर्थ—
(१)—मद्य	स्त्री का नशा
(२)—वादित्र	सगीतयुत गायन
(३)—गृह	गृहिणी
(४)—ज्योति	घर की शोभा
(५)—भूषण	शील
(६)—भोजन	समय पर आहार
(७)—माला	वैराग्य पैदा कराने वाली, भगवद्भक्ति मे लेजाने का मार्ग बताने वाली।
(८)—दीपक	कुलदीपक पुत्र पैदा करने वाली
(९)—वस्त्र	विषय–वासनाओ सबधी दोषो के ओढने का वस्त्र
(१०)—पात्र	विषयो का पात्र

इन दश प्रकार के भोगों की देने वाली दश प्रकार के कल्पवृक्ष इसमें स्वर्ग के देवो के समान होते हैं। ज्ञानार्णव प्र० सं० ३७८ श्लोक सं० १७५, शुभचन्द्राचार्य।

यह भवसागर है; इस कल्पवृक्ष से जब परिवार बढ जाता है तो वह एक ससार बन जाता है, और फिर मानव का माया–मोह–जाल मे फंस कर निकलना दुर्लभ हो जाता है।

(१) स्त्री को मुग्धा कहते हैं (२) इसका मन समुद्र है। कहती कुछ और करती कुछ और है (३) नारी की वाणी (भवर) मे फसना सरल है, किन्तु निकलना कठिन (४) इसके गुण (५) विद्या (६) और कल्लोलमय कलाये विचित्र हैं। यह छह समुद्र इसमे विद्यमान हैं।

बालक के जन्म लेने से मरण पर्यंत जो मानव--जीवन मे घटनाये और क्रियाये होती है वह सभी अनुभव करते हैं।

बालक माता के उदर से निकल कर माता का स्तन मुंह मे दबाता है और दूसरा हाथ दूसरे स्तन पर रखता है, उसे नाखूनो से खोटता है, मसलता है, किन्तु विकारभाव से रहित रहता है।

बालक माता पिता के साथ सोता है और उनकी समस्त क्रियाओ को देखता समझता है और उसके उसी के अनुकूल सस्कार पडते है तथा वह उत्तरोत्तर जीवन मे बृद्धि करता है।

जब बालक ५ वर्ष का होता है उसे माता पिता लाड प्यार से विद्याभ्यास कराने गुरु जी के पास बिठाते हैं। जब बालक अपने साथी बालक बालिकाओ के साथ मैत्री कर लेता है तो वह पूर्ववत् माता पितादि की विषय सबन्धी क्रियाओं को तथा पशु इत्यादि की विषयोन्मद क्रियाओ के अनुसार क्रीडाये प्रारम्भ कर देता है। यह अवस्था कुमारकाल के श्रीगणेश की है और यही सम्हालने की है। यदि बालक को विषयो का चस्का लग गया तो चरित्र से गिर जाता है। और इस कामान्धता की पूर्ति मे वह बालक क्या नही कर सकता? एक तो चढती जवानी, दूसरे माता पिता का द्रव्य हाथ मे होने से, तीसरे अविवेक और बल का प्रयोग क्या अनर्थ नही करता? इस पर हितोपदेश मे कहा है —

यौवनं धनसंपत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्॥

दुराचारी बनने मे कौन सी कमी बाकी रहजाती है? वैसे तो वर्तमान की शिक्षा—

आधुनिक शिक्षा यदी तुम प्राप्तगर यह कर सको।
तो लाभ क्या, बस क्लर्क बनकर पेट अपना भर सको॥
गर हो सके तो बन मदर्रस, पेट का पालन करो।
नहि हो सके तो भीख मांगो, अन्यथा भूखों मरो॥
सिर झुका लिखते रहो, सुन अफसरों की गालियां।
तो दे सकेगी सांझ को, दो रोटियां घरवालियां॥

शिक्षे ! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी ।
जीवित रहो जीवित रहो, रक्षक तुम्हारे है धनी ॥

जब से पैदा हुए न हमने, एक घड़ी भी सुख को जाना ।
कितना बड़ा पेट का खंदक, भरने को दो दाने पाना ॥
मुट्ठी भर लोगों ने जग का, लूट रखा है सभी खजाना ।
आज व्यक्तिगत प्रश्न नही है, आज बदलना हमें जमाना ॥

वर्तमान शिक्षा के शिक्षक बीडी, सिगरेट तथा अन्य मादक वस्तुऐ और दुर्व्यसन जैसे जुआ आदि खेलते और खाते पीते हैं, क्या इसका नवनीत से बालको पर कुप्रभाव नही होता ? जिसे सुधारने की क्या आवश्यकता नही है ? और जब वर्तमान शासक जो चन्द दिनके लिये बनते हैं वे क्या सभ्यता के साथ टैक्स लगा कर उनमे चोरी करना नही सिखाते ? क्या यह सरासर सभ्यता के साथ डाका नही डाला जा रहा है ? यह सब किस लिये ? सासारिक भोगों को भोगने के लिये । क्या यह ससार–समुद्र का मथन नही है ? और क्या यह दानवता नही है ?

जब यह बालक कुमार--अवस्था से निकल कर यौवनावस्था मे प्रवेश करता है तो माता पितादि को विवाह की चिन्ता होती है और सभी लोग व्यवहार मे कहने लगते हैं कि शादी करो, शादी करो । उस समय परिवार के लोग शादी की तैयारी करते हैं, ससार--सिन्धु मे उतारने के लिये । जिसका प्रतीक है :—

संसार--सिन्धु में उतर रहे, दो प्राणी नादान खिवैया ।
श्रीमान् दो आशीस इनको, पार लगे जीवन की नैया ॥

दो प्राणी जीवन--नौका ले, संसार--सिन्धु में उतर रहे ।
आशीस आपकी पाने को, उत्सुक नयनो से निरख रहे ॥

यह दोहे विवाह--मडप मे प्राय. लोग लिखकर टाँगते हैं, और चिट्ठी–पत्रिकादि मे भी छापते है । अब देखिये, यहाँ विकार--भाव उत्पन्न होता है । पूर्व मे माता के साथ सोने मे कोई विकार–भाव नही था । अब स्त्री के साथ सोने मे विकारभाव पैदा होता है । स्त्री मे मनुष्य के मुग्ध हो जाने से मुग्धा कहलाती है । रम जाने से रम्भा । रमण के समय रमणी । जीवन की साथी होने से नारी । साथ रहने से स्त्री । बिगडे कार्य बनाने से वनिता । डरने से भीरु । धोखा देने में चातुर्य होने से अगना । बालक खिलाने से ललना । कामोद्दीपन की क्रियाओ के करने से कामिनी । क्रोध का जोश दिलाने से योषिता । स्वय जोश मे रहने से योषा । सीमायें बाधने से सीमन्तिनी । आदि अनेको नाम गुण और दोष के अनुसार श्लोक मे बताये हैं । वह धनजय नाम मा ला इस प्रकार गिनाये हैं —

स्त्री नारी वनिता मुग्धा, भामिनी भीरुरंगना ।
ललना कामिनी योषिद्, योषा सीमन्तिनी वधूः ॥

नितम्बिन्यबला बाला, कामुकी बामलोचना ।
भामा तन्नूदरी रामा, सुन्दरी युवतिश्चला ॥

भार्या जाया जनिः कुल्या, कलत्रं गेहिनी गृहम् ।
महिला मानिनी पत्नी, तथा दारा पुरन्ध्रयः ॥

बल्लभा प्रेयसी प्रेष्ठा, रमणी दयिता प्रिया ।
इष्टा च प्रमदा कान्ता, चण्डी प्रणियनी तथा ॥

सती पतिव्रता साध्वी, पतिवन्त्येकपत्यपि ।
मनस्विनी भवत्यार्या विपरीता निरूप्यते ॥

ऊपर स्त्रियों के नाम कहे गये है । अब विपरीत स्त्रियों के नाम कहे जाते हैं:--

बन्धकी कुलटा मुक्ता, पुनर्भू पुंश्चली खला ।
स्पर्शाभिसारिका दूती स्वैरिणी संफली तथा ॥

गणिका लंजिका वेश्या, रूपाजीवा विलासिनी ।
पण्यस्त्री दारिका दासी, कामुकी सर्ववल्लभा ॥

मित्र के रूप में स्त्री के नाम

वयस्याऽऽली सहचरी; सध्रीची वसयाःसखी ।
आली विर्वाजित मित्रं; सम्बन्धो मित्रयुक् सुहृत् ॥

माता के रूप में स्त्री के नाम.—

सवित्री जननी माता, जनकः सविता पिता ।
देहोऽपघनकायांगं, वपुः सहननं तनुः ॥

यह नारी के नामो के अनुकूल-प्रतिकूल गुण दोष विद्यमान हैं ।

यौवनावस्था में विकारभाव का मूल कारण क्या है ?

(श्लोक)

न देवो विद्यते काष्ठे, न पाषाणे न मृण्मये ।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद् भावो हि कारणम् ॥

भावार्थ:—देवता न काष्ठ मे है न पाषाण मे, न मिट्टी मे न मूर्ति में । यदि देवता है तो भावो मे ही है । इसलिए वेश्या की मनोभावना कही है कि:—

पंडित उपदेशक मरि जावें, शास्त्र अगनि माँहि जरि जाँहि ।
पुरखा जन परलोक पधारें, तरुण पुरुष रडुआ ह्वै जाँहि ॥
कन्या सब हमको मिलि जावें, गनिका इम चिन्तत मन माँहि ।
इत्यादिक नित करै अमंगल, ताहि मंगला--मुखी कहाँहि ॥

हाट बाट नित बैठकरि, जोवन बेचनिवारि ।
कही जाति या देश में, हाय मंगला नारि ॥

और अमंगला किसे कहते है ?

विधवा तरुण तपस्विनी, असिव्रत पालनहारि ।
कही जाति या देश में, हाय अमंगला नारि ॥

वेश्याऽसौ मदनज्वाला रूपेन्धनसमेधिता ।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते, यौवनानि धनानि च ॥

वेश्या कामरूपी ईधन से प्रचण्ड हुई अग्निज्वाला है, जहा कामी पुरुष अपने धन और यौवन का होम करते हैं।

कश्चुम्बति कुलपुरुषो वेश्याधरपल्लवं मनोज्ञमपि ।
चार भाट चोर चेटक, नट विट निष्ठीवनशरावम् ॥

भावार्थ—वेश्या के अधर-पल्लव को कौन कुलीन पुरुष चूमेगा ? वह तो ठग ठाकुर चोर नीच और नट आदि जारो के थूकने का शकोरा (पीकदान) है ।

रजकशिलासदृशीभिः कुक्करकर्परसमानचरिताभिः ।
गणिकाभिर्यदि संगः, कृतमिह परलोकवार्ताभिः ॥

भावार्थ—जिस प्रकार धोवी की शिला पर हरेक के वस्त्र धुल जाते हैं, उसी प्रकार वेश्या से भी हरेक ऊच नीच विषय सेवन कर जाता है। जिस प्रकार मर्घट मे पडी खोपडी पर कुत्ते लडते है, उसी प्रकार वेश्या पर भी लोग लडते रहते हैं। जिसने वेश्या का सगम किया उसने परलोक की बात जान ही ली, अर्थात् उसे जान लेना चाहिए कि मैं नरक अवश्य जाऊंगा ।

स्त्री के ७ दोष

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभिता ।
अशौचत्वं निर्दयत्वं, स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥

भावार्थ:—१. झूठ बोलना, २.साहस के साथ कार्य करना, ३. कपट क्रियाओं का सेवन करना, ४. जडमति, ५ अति लोभ दशा का होना, ६ दुर्गधनीय अपावन दशा मे रहना, ७. निर्दय हृदय होना, इत्यादि स्त्री--जाति मे स्वाभाविक दोष होते है ।

अर्थाः पादरजोपमा गिरिनदीवेगोपमं यौवनम् ।
मानुष्यं जलविन्दुलोलचपलं फेनोपमं जीवनम् ॥
धर्मं यो न करोति निश्चलमतिः स्वर्गार्गलोद्घाटनम् ।
पश्चातापहतो जरापरिणतः शोकाग्निना दह्यते ॥

भावार्थ—लक्ष्मी Wealth के समान चंचलता (१) पर्वत की नदी के समान यौवनावस्था (२) चार दिन की जवानी (३) मनुष्यो का जीवन कल्लोलित जल के चपल विन्दु तथा जल के झाग सदृश तत्क्षण नष्ट होने वाला, स्थिर बुद्धि को दूर हटाने वाला (४) वृद्धावस्था मे हत-प्रहत किया जाता है (५) शोकाग्नि में जलाना (६) अग्नि के समान पौद्गलिक स्थूल पदार्थों को जलाने की क्षमता (७) शोक के समान दुखदाई अन्य पदार्थ नही।

कहां गये वे दिन मूरख बोल ?

जनमत ही उच्छाह भये बहु, बजे नगाड़े ढोल।
लाड प्यार से गोदी खेला कर कर विविध कलोल ॥कहा०॥१॥

पाव चला, फिर थोथी बोली से बोला तू बोल ।
ज्यो ज्यो वृद्धि हुई या तन की, त्यो त्यो बढे कपोल ॥कहां०॥२॥

मात पिता अरु गुरू जनो ने, दी शिक्षा अनमोल।
लेकिन तूने बालकपन का, किया न कुछ भी मोल ॥कहा०॥३॥

युवा हुआ तरुणी सग राचा, खोया वीर्य अमोल ।
मत्त भ्रमर बन यौवन खोया, चूमत चाम कपोल ॥कहां०॥४॥

धन सपति पाकर के तूने, कीना दुर उपयोग।
ज्ञान, ध्यान, जप, तप नहि कीना, चित रहा डावाडोल ॥कहा०॥५॥

सतसगति नहि कीनी तूने, खोया समय अमोल ।
इससे ही तू बना हुआ है, आज ढोल की पोल ॥कहा०॥

धर्मकार्य मे दई न कौडी, समझी उनको पोल ।
रडीबाजी मे पैसे को, लुटा दिया दिल खोल ॥कहा०॥७॥

अर्द्ध मरे सम हालत हो गई, सूखे लाल कपोल ।
हाड मास का नाम शेष बस, लटका चामर झोल ॥कहा०॥८॥

राग द्वेष माया—तृष्णा ने जाना तुझको बोल ।
ज्ञानदृष्टि से देख मूर्ख तू, अपना खाता खोल ॥कहा०॥९॥

क्षणभगुर ससार अटल तू, काया माने चोल ।
जरा देर मे विनश जायगी, आने दे झकझोल ॥कहा०॥१०॥

अब भी गर तरना चाहे तो, धरम करम को तोल ।
मुन्नालाल लगादे आतम, प्रभु--चरणो मे खोल ॥कहां०॥११॥

गुरु उवाच (दोहा)

देह अपावन है बुरी, मल–मूत्रन की खान।
अरे आतमा मूढ तू, क्यो नहि करता ग्लान ॥१२॥

तू अविनाशी आतमा, ये जड विनशनहार।
तू ज्ञानी अज्ञान ये, फिर क्यो करता प्यार ॥१३॥

इसलिए—

शुभ भावो से पुण्य हो, अशुभ भाव से पाप ।
दोनों की संतान से, होता पश्चाताप ॥

इसमे भाव ही मुख्य कारण है। कमर झुकी हुई एक वृद्ध माता से एक यौवनासन्न लडके ने हस कर पूछा—

अधः पश्यसि किं बाले, पतितं किं सुन्दरि ?

तो उसने उत्तर दिया—

रे रे मूर्ख ! न जानासि, गतं तारुण्यमौक्तिकम् ।

भावार्थ — अरे मूर्ख ! तू नही जानता कि मेरा तरुणतारूपी मोती गिर गया है। इसी प्रकार से एक लडके ने एक बृद्ध पुरुष से पूछा (जिसकी कमर झुकी हुई थी) कि तुम्हारा क्या गिर गया है, जिसकी तुम तलाश कर रहे हो ? वृद्ध ने उत्तर दिया :—

कमर खमीदा नही है, बे--बजह जईफों की ।
जमीन ढूंढ़ती है, मजार के काबिल ॥

भावार्थ — यह है कि हे नवयुवको ! तुम्हे इस बात पर ध्यान देना है कि यदि तुमने अपने शील की रक्षा नही की और समुद्र मथने मे अर्थात् सासारिक विषय–भोगो मे ब्रह्मचर्य को नष्ट कर दिया तो तुम भूले न रहो, यही दशा कल को तुम्हारी भी होगी। इसलिये खोकर अवश्य सीखो।

चोर और महाराजा भोज

एक दिन महाराजा भोज के महल मे एक चोर चोरी करने को घुसा, और कोशिस करता हुआ राजा के पलग के नीचे जाकर बैठ गया।

राजा को नीद नही आई थी। राजा ने पडे पडे एक श्लोक बनाया। उसके तीन चरण तो बन गये, पर चौथा चरण न बन सका। उस चौथे चरण को चोर ने बना दिया।

राजा के तीन चरण यह थे—

चेतोहरा युवतयः, सुहृदोनुकूलाः, सद्बान्धवाः प्रणयगर्वगिराश्च भृत्याः।
गर्जन्ति दंतिनिवहाः तरलास्तुरंगाः, ... ॥

भावार्थ :- मेरे चित्त को हरने बाली स्त्रिया है, मेरे अनुकूल मित्र है, मेरे भाई बन्धु बड़े सज्जन है, मेरे नौकरो को घमड बिलकुल नही है, मेरे द्वार पर हाथी गरज रहे है, घोड़े हिनहिना रहे है, मै ऐसी सम्पत्ति बाला हूँ। इस प्रकार ३ चरणो को राजा बार बार उच्चारण करता है, तब चौथा चरण चोर कहता है —

"सम्मीलिते नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ॥"

अर्थात्—आँखे मिच गईं तो फिर तुम्हारा कुछ भी नही है !

卐

विकारभाव का मूल कारण संगति है—

ज्ञान घटै शठ क्रूरन के संग, मान घटै पर के घर जाये।
पाप घटै पुनि दान किये, तन--रोग मिटै कछु औषधि खाये ॥

प्रीति घटै कछु मांगन तें, अरु नीर घटै ऋतु ग्रीषम आये ।
जोर घटै अति मैथुन ते, यम--त्रास घटे प्रभु के गुन गाये ॥

ज्ञान बढ़ै गुनबानन के संग ; ध्यान बढ़ै तपसी संग कीये ।
मोह बढ़ै परिवार की संगति , लोभ बढ़ै धन में चित दीये ॥

क्रोध बढ़ै नर मूढ़ की संगति, काम बढ़ै तिय को संग कीये ।
पाप बढ़ै गणिकानि की संगति, पुण्य बढ़ै जिन--पूजन कीये ॥

पाठको ! इस समुद्र-मथन को आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने सम्राट चन्द्र-गुप्त को अपने मनोविज्ञान से समझाया कि इस यौवनावस्था को व्यर्थ मत जाने दो। सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है।

मरणासन्न एक बृद्ध पुरुष खाट पर पडा अन्तिम श्वास ले रहा था। उस समय किसी मिलने वाले नौजवान ने आकर पूछा—पिताजी ! कैसे पड़े हो ? तो उत्तर मे बृद्ध पुरुष ने कहा:—

(दोहा)

बृद्ध पुरुष खटिया विषें, करता पड़ा विलाप ।
रोगग्रसित दु.खित हृदय, भरा शोक सन्ताप ॥१॥

नौजवान इक मित्र ने आकर पूछी वात ।
कहो पिता कैसे पडे, तन मे है कुशलात ॥२॥

कुशल क्षेम के दिन गये, गई सुक्ख की रात ।
जोश जवानी का ढला, सूख गया सव गात ॥३॥

पौरुष सारे थक गये, पैसा रहा न पास ।
रुग्ण पडा हूँ खाट पर, तजि जीवन की आस ॥४॥

किसी समय के दिन वड़े, किसी समय की रात ।
भैया ! तुमसे कहत हू, अपने मन की वात ॥५॥

हाय कहां अब ढूंढूं मै ...... !

जो कुछ करना हो सो करलो, सुकृत तरुण अवस्था मे ।
पैसा पास निरोगी काया, इन्द्रिय ठीक व्यवस्था मे ॥
करि न सकोगे वृद्धापन मे, वल पौरुष थकि जाने से ।
आग लगी कुटिया मे फिर क्या, होता कूप खुदाने से ॥
वृद्धा सौत सतावेगी तव, रोओ तरुणा रानी को ।
हाय कहा अब ढूढू मै उस, रूठी हुयी जवानी को ॥६॥

समय एकसा सदा न रहता, ढलती फिरती छाया है ।
आज धनी वह काल निर्धनी, आनी जानी माया है ॥
तरुण समय की गौरव-गाथा, अपनी तुम्हे सुनाता हू ।
धर्म कर्म कुछ किया न मैने, अब पीछे पछिताता हू ॥७॥

सोलह से चालीस बरस तक, चढती हुयी जवानी मे ।
कूद जाउगा निर्भय होकर, वासो गहरे पानी मे ॥
मार छलांग पेड पर चढ, टहनो को खूब हिलाता था ।
बातो ही बातो मे ऊचे, पर्वत पर चढि जाता था ॥
सह न सकू था कभी किसी की, किंचित कडुवी बानी को ॥ हाय० ॥८॥

दौड भाग मे सब से आगे, अव्वल नम्बर पाता था ।
रस्साकसी पटेबाजी, लाठी भी खूब चलाता था ॥
कुश्ती मे अपने से दूने, पहलवान को ढाता था ।
ताल ठोक कर बडे बडे, योधाओ को डरपाता था ॥
वेधि देउथा कठिन निशाना, लेकर तीर कमानी को ॥हाय०॥९॥

मेरे थप्पड़ से दुश्मन का, निकल जवाडा आता था ।
मेरे सिर से सिर दुश्मन का, नरियल सा फट जाता था ॥
मेरी कुहनी से दुश्मन का, चूर चूर हो जाता था ।
मेरी टेढी नजर देखि, दुश्मन का दिल थर्राता था ॥
मुक्के से सीधा करता था, बड़े बड़े अभिमानी को ॥हाय०॥१०॥

भरा जवाडा था मुंह में, बत्तीसों दात चमकते थे ।
कश्मीरी सेवों के सदृश, कलले सुर्ख दमकते थे ॥
उन्नत मस्तक गोल चाद सा, सुन्दर दिव्य ज्योति बाले ।
घूघर वाले केश शीस पर, नागिन से काले काले ॥
तनी हुई मूछे मुह पर, जतलाती थी मर्दानी को ॥ हाय०॥११॥

हृष्टपुष्ट था बदन गठीला, सुन्दर सुदृढ सजीला था ।
गज की सूड समान भुजाएं, हृदयस्थल जोशीला था ॥
सिंह समान पराक्रम था, सब अंग अंग फुर्तीला था ।
थभ समान पुष्ट जघाए, कोई अग न ढीला था ॥
देता था निकाल पृथ्वी से, लात मारकर पानी को ॥हाय०॥१२॥

दूर दूर के पहलवान भी मुझे देखने आते थे ।
गुजराती कश्मीरी सिंधी, सरहद्दी शरमाते थे ॥
वाह वाह कहते थे, मेरी देख सलौनी सूरत को ।
रची विधाता ने आकर क्या, ऐसी सुन्दर मूरत को ।
नीचा अचकन चुश्त पजामा, साफे के रग धानी को ॥ १३ ॥हाय० ।

जैसा था मैं बली साहसी, वैसा ही था व्यापारी ।
पुरुषारथ से धन सचय करि, भरि देता था अलमारी ॥
नारि सुता सुत पोता पोती, आज्ञा मे थे घर वाले ।
नाते रिश्तेदार करे थे, स्वागत सब जीजा साले ।
सब को राखि प्रसन्न किया करता अपनी मनमानी को ॥हाय॥१४॥

जोश जवानी का रग फीका, पडने लगा पचासा में ।
साठ बरस का शठ कहलाया, इस जीवन की आशा में ॥
सत्तर में सब कहने लगे हत्तेरे की, धुत्तेरे की ।
वे ही करने लगे वदी, जिनके संग में की थी नेकी ॥
अपने हुए बिराने अब तो, करि करि खेंचा तानी को ॥ हाय० ॥ १५ ॥

सत्तर के लगभग अब, तन पर, सही बुढापा छाया है।
किधो काल ने मुझे पकडने को यमदूत पठाया है ॥
पग खूटा दो हालन लागे, चरखा हुआ पुराना है।
बिगडि गई पेट की अतडिया, होता हजम न खाना है ॥

सभी रोग आये करने, मुझ बूढे की महमानी को ॥ हाय० ॥ १६ ॥

शीस भया सब स्वेत, मुरादाबादी जेम पतीली है।
बैठि गये है गाल वदन के, खाल भई सब ढीली है ॥
रौनक जाती रही भई, चहरे की रगत पीली है।
टप टप टपके नाक सिडक से, मूछे रहती गीली हैं ॥

हसते है सब आख देखि, अधी चुदी धुधलानी को ॥ १७ ॥ हाय० ॥

टूटि गये सब दात बना मुह, सापो का सा भट्ठा है ।
बोला जाता नही ऐंठि करि, जीभ बनी ज्यो लट्ठा है ॥
खासत खासत धडक उठा दिल, बलगम हुआ इकट्ठा है।
अग अग मे वायु भरी सब, चीवत रग रग पट्ठा है ॥

अरे करू कैसे मैं सीधी, अब इस कमर कमानी को ॥ हाय० ॥ १८ ॥

जो करते थे प्यार वही अब, टेढी आँख दिखाते है।
नारि यार परिवार सुता सुत, भाई पास न आते है ॥
खाना पीना औषधादि भी, नही समय पर मिलती है ।
हाथ पाव असमर्थ हुए, कमबख्त न काया हिलती है ॥

पडा खाट पर काट रहा था, इस मौत सदृश जिदगानी को ॥हाय०॥ १९ ॥

जो धन माल पास था मेरे, सबने मिलकर बाटा है।
फिर भी मैं इनकी आखो मे, खटकू जैसे काटा है ॥
दे दे गाली कहते मुझ से, खून हमारा पीवेगा ।
ये खूसट बूढा नहिं मरता, जाने कब तक जीवेगा ॥

हृदय फटा जाता है मेरा, सुन सुन तीक्षण बानी को ॥ हाय० ॥ २० ॥

मन मे था उत्साह पास मे, पैसा तरुण अवस्था थी ।
सब मेरे खाने पीने की, घर मे ठीक व्यवस्था थी ॥
तब न किया आतम हित मैंने, भोगो मे फस जाने से।
चोर निकल भागा घर से, फिर क्या है शोर मचाने से ॥

खडा शीस पर काल लूटने, इस नरभव रजधानी को ॥ हाय० ॥ २१ ॥

कहते थे गुरु बार बार; मै समझा नहि समझाने से ।
जप तप संयम नेम धरम व्रत, सीखा नही सिखाने से ।।
बीता समय हाथ नहि आता, गीत पुराने गाने से ।
'मक्खन' छोड चलो अब जल्दी, इस झोपडी पुरानी को ।।हाय०।।२२।।

देव और दानव

पाठकगण ! समझ लीजिये कि देव कौन है और दानव कौन है ? समुद्र क्या है और मथन किस चीज का किया गया ? और समुद्र मथने पर क्या परिणाम निकला ? इस गुफा नं० १९ जो अमृत गुफा है, इसके दरवाजे पर बाहर की ओर समुद्र मे एक शिवलिग है, जिसे सर्प की रस्सी बनाकर दोनो ओर देव दानव के रूप मे मानव अपनी ओर खीच रहे हैं ।

काम एक प्रकार का भयंकर सर्प है और इसका काटा हुआ नही बचता, किन्तु सर्प का काटा हुआ मत्र और औषधि से बच जाता है ।

इसी प्रकार से विवाह होने के पश्चात् वर–वधू विषय भोगों में लवलीन हो जाते हैं। अब यहाँ पर भाव दो प्रकार के हो जाते हैं, एक तो विकारभाव, दूसरा विरागभाव ।

कामी पुरुष नारी के उन्नत स्तन देख कर जिन्हे दूध, आचल, बोबो, धन और क्षीर आदि कहते है । कामाधी उन्हे मसल कर विकारभाव से आनन्द मानता है। यह दानवता है। यह नहीं जानता कि यह तो मास की रक्तादि से भरी थैली है । ग्लानि नही करता। और अपनी शक्ति-- ब्रह्मचर्य, शील को नष्ट कर अन्त मे पराजित होता है । यदि यह बात सत्य नहा तो किसी बृद्ध पुरुष को देखो और उससे अनुभव की बात सुनो और समझो ।

विरागी पुरुष विचारते है कि यह ज्ञानेन्द्रिय ५ है । अब एक इन्द्री के पीछे किन किन जीवो की क्या दशा हुई । उस सबन्ध मे पढिये :—

पंचेन्द्रिय के विषय

(छप्पय)

रसना के सर मीन, प्राण पल माँहि गमावै ।
अलि नासा परसंग, रैन बहु संकट पावै ।।
मृग करि श्रवण सनेह, देह दुर्जन को दीनी ।
दीपक देख पतंग, दृष्टि हित कैसी कीनी ।।
फरस इन्द्रि बस गज (करि) परयो कौन कौन संकट सहै ।
एक एक विष--बेलि सम, पंचन सेय तु सुख चहै ।।

जो अज्ञानी ज्ञान की, बातें करे विशेष ।
ज्ञानपरिणमन ना करै, भुगतै दुःख विशेष ।।

जब एक इन्द्री ही विनाश का कारण बन जाती है तो पाचों ही इन्द्रियो के सेवन करने वालो की क्या गति होगी ?

पठको! स्वय अनुभव मे लाई हुई कृति की ओर भी ध्यान दीजिये कि -आप नदी,बावडी, तालाब आदि के जल मे ओधे-सीधे- आसन मार कर उसका आनदानुभव लेते हैं। अर्थात् उसमे तैरते है। उसका पानी भी उछालते है। अनेको प्रकार से उस जल मे क्रीडा करते है। उसी प्रकार मानव स्त्री के साथ अनेको आसनो का प्रयोग अर्थात् विषय भोगादि काम-क्रीडा करता है, उसका मथन करता है, किन्तु उस विषय-भोग से तृप्ति नही होती। जिस प्रकार कुत्ता कुतिया के पीछे फिरता है किन्तु कार्तिक मास मे भूख प्यास को छोड देता है, इतना मुग्ध हो जाता है।

प्यारे बन्धुओ! मानव की यही दशा है। इसने बारहो महिने विषय भोगादि के लिये मान लिये और कार्तिक मास बना लिया। तथा अपने सयम, नियम का परित्याग कर दिया। जब स्त्री गर्भ धारण कर लेती है और प्रसव करती है तो वह एक कन्या रत्न को जन्म देती है वो उसमे ही वह १४ रत्न प्राप्त होते है जो पुण्य प्रकृति देव और पाप प्रकृति दानव थे।

श्री मणि, रम्भा, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज ।
कल्पद्रुम, शशि, धेनु, धनु, धन्वंतरि, विष, बाज ।।

भावार्थ — शब्द .... अर्थ ....

१—श्री (लक्ष्मी है)= यह गृहलक्ष्मी है।

२—मणि= शील और सेवाभाव इसका मणि है।

३—रम्भा= लडकी सुदूर अपरिचित ग्राम-कुल की होकर जब वह विवाहित होकर हमारे ही वश मे आती है और वह हम लोगो मे इतनी रम जाती है कि जहा उसका जन्म हुआ उसे त्याग भी देती है और अपने अनुकूल बना लेने से रम्भा है।

४—वारुणी= कोई भी पर पुरुष या घर के ही लोग अनुचित बात उसे कह देवे तो अपने पति से कह कर सिर कटाने मे कमी नही करती अर्थात् इसका मदिरा जैसा नशा चढता है और अपमानित कराती है मद्य के समान, यह स्त्री मद है।

५—अमिय= अमृत के समान इसलिये है कि—

कार्ये दासी रतौ वेश्या, भोजने जननी समा ।
आपत्तौ बुद्धिदात्री च, स भार्या भुवि दुर्लभा ।।

उत्तम पदार्थो युक्त अमृत के समान भोजन कराती है। जिससे हम स्वस्थ रहते है। आज्ञा मे चलने से अमृत के समान है।

६—शख=शख का अर्थ मूर्ख से भी है । अकसर लोग मुझे शंख कहा करते थे और जब मैं उनसे पूछता था कि शंख का अर्थ क्या है ? तो मूर्ख ही बताया गया । अकसर विना विचारे कार्य कर डालना, पूर्वापर विचार न करना मूर्खता है । वह प्रायः स्त्रियों मे पाई जाने से उन्हे शख की भी उपमा दीगयी है । तथा शख का अर्थ शखध्वनि से भी है । जब माता बालक को जन्म देती है या कोई महान् कार्य या उत्सवादि हो तो अपनी माधुरी वाणी से गायन गा कर उपदेशामृत देकर मुग्ध कर लेती है । वाणी से गीत गाना भी शंखध्वनि करना है ।

७—गजराज=जब हाथी बाजार से निकलता है तो उसके पीछे पचासो कुत्ते लग जाते है और चिल्लाते भोकते है, किन्तु वह चिन्ता नही करता और अपने मार्ग से चला जाता है । ठीक उसी प्रकार से जब नारी श्रगारयुक्त होकर कारणवशात् मार्ग से निकलती है तो उसके पीछे कामान्धी जो उसके शील को विगाडना चाहते है नाना प्रकार के दोषयुक्त वचनों से निन्दा करते है, किन्तु वह विदुषी महिलारत्न कामी कुत्तो की परवाह नही करती और गजराज की भाँति गभीरता धारण कर चली जाती है । इस कारण उसे 'गजगामिनि' कहने मे कोई दोष नही ।

८—कल्पदुम=अर्थात् कल्पबृक्ष इसलिये है कि वह सतानो से घर भर देती है और समय समय पर जो खाने, पहिनने, ओढने आदि की सुख-सामग्री मागने पर पूर्ति कर देती है ।

९—शशि=आप यह भली प्रकार जानते है कि चद्रमा शीतल होता है। शिवजी के मस्तक पर चद्रमा होता है । समुद्र का पुत्र चन्द्रमा, विष्णु का साला चन्द्रमा । और जहा समुद्र में अथाह जल भरा हो वहाँ अग्नि शान्त हो जाती है । इसी प्रकार से मानव के शरीर की अग्नि को शात करने की शक्ति नारी मे होने से इसे शशिप्रभा, शशिवदनी, शशिकुमारी आदि नामों से पुकारते है । तथा अनन्य प्रकार के सुखो की दाता होने से भी शशि है ।

१०-धेनु= धेनु का अर्थ गाय से है । जिस प्रकार गाय अपने बछड़े को दूध पिलाती है उसी प्रकार से यह अपने बालको को दूध पिलाने से धेनु है ।

११-धनु=नारी पुरुष की बामागी है । यह सुख मे पीछे और आपतिकाल में सदैव आगे रहती है । भगवान राम जिस समय वन-वास को गये तो धनुष को पीछे कधे पर टाग कर गये थे । और जब खरदूषण और रावण जैसे पराक्रमी से मुकबला हुआ तो वह सामने आ गया था । उस समय बाया हाथ दाहिने हाथ से कहता है :--

दान मान सम्मान में, सदा रहेउ अगवान ।
अब क्यों पीछे जात है, लगत दशानन वान ।।

उस समय दाहिना हाथ उत्तार देता है .---

रामचन्द्र के श्रवण ते, पूछन चाहों वात ।
एक एक मस्तक हनूं, या हनूं एक ही साथ ।।

भावार्थ यह है कि नारी भी धनुष के समान आपत्ति काल में सामने आ जाती है । जैसे वीरॉगना लक्ष्मीबाई महारानी झासी तथा रानी दुर्गावती आदि । तथा धार्मिक और पारमार्थिक कार्यो मे सहायता करने से धनु समान है ।

१२—धन्वतरि=वैद्य इसलिये है कि बालक के जन्म से मरण पर्यन्त तक उसका स्नेह इस प्रकार है जैसे गाय और बछड़े का। माता स्वय गीले मे सोती है और बालक को सूखे मे सुलाती है। जिस प्रकार समुद्र मे तूफान आता है उसी प्रकार से देहधारियो के भी कहा है।

देह धरे कौ दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान सों, मूरख भुगते रोय॥

जब रोगो का तूफान सिर पर आ जाता है उस समय माता अपने बालक के स्वस्थ रखने की चिन्ता मे लग जाती है। औषधि उपचारादि कर उसे स्वस्थ बनाती है। प्राय स्त्रियाँ दवाखानो मे नर्स, दाइयो और डाक्टरनी आदि को देखते हैं। इसलिये वह धन्वतरि वैद्य भी है।

१३–विष=इसलिये है कि विष–पान करने से मनुष्य इकदम सो जाता है और यह हसाते खिलाते सुलाती है।

नारी विष की जड़ लखो, नारी नागिन जान।
यम अरि मारे दाव से, यह हंस हरती प्रान॥

और यह क्रूर स्वभाव की होने से सिंहनी भी है। कहा है—

क्रूर सिंह हिय तास से, क्रूर तिया हिय जान।
पति सुत धन से रहित तिय, का हिय क्रूर महान॥
अशुचि कुटिलता मूर्खता, द्वेष कपट छल मान।
क्रोध झूठ ये नारि के, दोष सहज ही जान॥
पति को वश करके तिया, करती महा कसूर।
निजी दोष को ढाँकने, पति पर गुस्सा पूर॥
कान नाक सिर हाथ पग, कटि बंधन सब अंग।
तो भी नारी वश नही, फिर भी करती तंग॥
नारी के सब वश भये, जग के जीव अपार।
दुःख खानि यह जिन तजी, हुए मुक्ति भर्तार॥

१४–बाज=यहाँ बाज का अर्थ घोड़े से है। जिस प्रकार घोड़े मे दोष होते हैं, वह स्त्री के गुण कहे गये है। जैसे :—

शीतल पातल पतल नख, लघु भोजन लघु रोष।
ये स्त्री के पांच गुण, येहि तुरी के दोष॥

और घोड़ी के गुण स्त्री के दोष हैं :—

अति चयन्च चंचल चपल. अती खाद्य अति रोष ।
येहि तुरी के पांच गुण, ये स्त्री के दोष ॥

जिस प्रकार मानव घोड़े पर सवारी करता है उसी प्रकार विषय-लपटी स्त्री पर। जिस प्रकार से बाज पक्षी पक्षियो पर आक्रमण करता है उसी प्रकार से स्त्री पुरुष पर । इसलिये वह बाज है ।

इस प्रकार से देव और दानवौ ने १४ रत्न समुद्र मथ कर निकाले, यह भी एक अर्थ निकलता है । जिस प्रकार पतंगा एकइन्द्री जनित सुखो के पीछे अपने प्राण गंवा देता है उसी प्रकार से मानव पाचो ही इद्रिय जनित सुखो को भोगता हुआ भी तृप्त नही होता और विषयों के पीछे अपने जीवन की आहुति दे देता है ।

आचार्य कहते है कि हे राजन्! यह विषय भोग तभी तक सुहावने लगते है जब तक शरीर मे रक्त है, शक्ति है । जिस समय शक्ति क्षीण हुई और रोगादि ने घेरकर तेरी सूर्य समान दैदीप्यमान कीर्ति पर कालिमा लगाई। यदि इसमे सुख होता तो —

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताहू लपटात ।
ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात ॥

द्वीपायन ऋषि कोप में, रावण मान मंझार ।
माया में साधू मरा, लोभ विप्र क्षयकार ॥

रोग लूटता भोगि को, लोभी को शठ जान ।
वेश्या लूटे कामी को, काल सभी को मान ॥

मृग कस्तूरी, बृक्ष फल, तिया रूप, गज हन्त ।
सिंह चाम, नर द्रविण ये, बैर करे तन दन्त ॥

मांसभक्षि के कंह दया, मद्यप कंह सतवान ।
कामी के विद्या कहां, रंक कहां सुख जान ॥

माया ममता दीनता, तृष्णा चिन्ता जान ।
ये पन पापिनि मनुज का, खून सोखती मान ॥

इस लिये हे राजन्! यह नारि ही समुद्र है। देव प्रकृति पुण्य और दानव प्रक्रिति पाप है। नरक-गति में लेजाने वाली है, त्यागने योग्य है ।

भारत की भविष्य वाणी

सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के सोलह स्वप्न

(१) सूर्य अस्त—	बृष–धर्म का अभाव। गोवध के कारण घी, दूध का अभाव। द्वादशाग के जानने वाले नही रहेगे।
(२) रत्नो का ढेर धूल मे—	यतियो मे एकता नही रहेगी। प्रत्येक घर मे फूट होगी।
(३) कल्पवृक्ष की डाल टूट गई—	क्षत्रिय जिन–धर्म को नही मानेगे। आत्मस्वभाव दयारहित होगा।
(४) समुद्र मर्यादा रहित होगा—	राजा नीतिज्ञ एव पटु नही होगे। भ्रष्टाचारी, चोर, डकैती और हिंसको, विषयभोगियो, विद्वेषियो के हाथो मे शासन की बागडोर होगी।
(५) बारह फण का सर्प—	बारहो मास अकाल रहेगा। प्रजा दुखी रहेगी।
(६) देवताओ का विमान उलट गया—	सज्जन और दयावान नही दिखेगे।
(७) राजपुत्र ऊट पर चढा हुआ है—	शासक वर्ग निम्न श्रेणी के असत्यभाषी छली और दगाबाजी से बनेगे और राज्य भोगने की लालसा से भीख के मागने वाले निर्दयी होगे।
(८) दो काले हाथी का युद्ध —	बर्षा का अभाव होगा।
(९) गाय के दुधमु हे बछडे गाडी मे जुते—	तरुणावस्था, जब तक शासन की बागडोर हाथ मे नही आवेगी, धर्म धर्म चिल्लावेगे।
(१०) हाथी पर बन्दर बैठा—	शासक नीच स्वभावी चचल होगे।
(११) प्रेत नाच रहा है—	झूठे, दगाबाजी मे निपुण और मक्कारो की पूजा होगी।
(१२) सुवर्णपात्र मे श्वान खीर खा रहा है–	धनिको के धन से दुष्कर्म अधिक होगा।
(१३) जुगनू दैदीप्यमान हो रहे हैं —	सत्यवादिता कही कही चमकेगी।
(१४) तालाब सूख गया है-–	महगाई, टैक्सो की अधिकता से दया दान पूजा पाठ इन्कमटैक्स, सैलटैक्स से सूख गया है।
(१५) धूल मे कमल खिला हुआ है—	उच्च कुल मे जन्म लेकर बाममार्ग का प्रचार करेगे। जिनकी हिंसक मनोभावनायें होगी।
(१६) चन्द्रमा मे कई छिद्र होगे—	सुख शान्ति के देने वाले सत्य अहिसा के भेद मे प्रभेद होगा।

इसका स्पष्टीकरण श्री आचार्य रत्ननन्दी विरचित भद्रबाहु चरित्र अनुवादक स्व० प० उदयलाल जी काशलीवाल, प्रकाशक श्री मूलचन्द्र किशनदास जी कापडिया सूरत के पृ० स० १४ और १५ पर विष्णु की उपासना के संवध मे 'भागवतामपाश्चा' श्लोक दिया है, देखिये और शका समाधान करिये।

सांसारिक दशा (संयम और असंयम)

प्राचीन राजमंदिर के ४ सहतीर : झाँई पौर विदिशा

(११ वीं शताब्दी)

इस परम ऐतिहासिक प्राचीन नगरी में ३० जैनाचार्य पट्टाधीश हुए हैं। इन जैनाचार्यों द्वारा सुसंबंधित प्रतीकात्मक चिन्हयुक्त कला और कलाकृतिया मानव
की सांकेतिक प्राचीन इतिहास से सुसंबंधित प्रतीकात्मक चिन्हयुक्त कला और कलाकृतिया मानव सांसारिक दशा की साकारता का
जीवन के उपयोगी शिक्षाप्रद आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक सांसारिक दशा की साकारता का
चित्रपट और उसका परिचय आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

इसके उपदेशक जैनाचार्य निर्माता जैन शासक परमार वशीय क्षत्रिय थे।

सहतीर नं० १

इस प्रथम सहतीर मे जो मूर्तिया क्रमशः हाथी, शेर सयम का ज्ञानयुक्त वृक्ष एक वीर
पुरुष कालसिंह से युद्ध करते दिखाया है। एक वृक्ष मानव के ज्ञान का शुष्क वृक्ष होने पर
मानव पर जो कालरूप हाथी चारो पैर देकर खडा हुआ है इसका क्या अर्थ है ? इसका स्प-
ष्टीकरण निम्न प्रकार है :-

आचार्य मानव को सबोधित करते है कि हे भाई ! तू कहा सो रहा है ? जरा सावधान
हो देख। जब तू माता के उदर-कुड में माता के रज-वीर्य से बालक के रूप मे
बना तभी से यह दिन रात जिसे काल या समय कहते हैं इस काल को पूर्वाचार्यो ने हाथी का
रूप क्यो दिया ? इसलिए कि काल बहुत बडा है, उसकी एक रूप हाथी से तुलना कर इसलिए
दिखाया है कि भूमण्डल पर हाथी बड़ा और शक्तिशाली पशु है, उससे कोई विजय नही पा सकता।
केवल मानव ही। ऐसा है जो अपने ज्ञान द्वारा उसे बस मे कर सकता है। वह भी विवेकपूर्ण
ज्ञान के द्वारा ही किन्तु सामने देखता क्या है कि इधर यदि कालरूप हाथी से बचता हैं तो
उधर कालरूप सिंह इसे खाने को खड़ा है।

यह कालरूप सिंह हिंसक और क्रूरस्वभावी है, मासलौलुपी है किन्तु, हाथी शाकाहारी
है। दौनों आपस मे विरोधी हैं। हाथी अपने पैरों से कुचल कर मारता हैं तो कालरूप सिंह अपने

हिंसक स्वभाव से । मौत दोनो ही दशा मे है । आचार्य बारह भावनाओ मे कहते हैं :—

काल—सिंह ने मृग—चेतन को घेरा भव—वन में ।
नहीं बचावनहारा कोई, यों समझो मन में ॥
मंत्र यंत्र सेना धन सम्पति, राज पाट छूटे ।
वश नहि चलता काल—लुटेरा, काय—नगरि लूटे ॥

यह कालसिंह शिक्षा–गुरु भी है, बचने के लिये पुरुषार्थ करना भी सिखाता है । पुरु-षार्थ ४ प्रकार का है। वह है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । यह संकेतात्मक चिन्ह आपको बताया, इसे समझें और ज्ञानार्जन करें ।

इस काल-सिंह के पीछे देखिये कि एक वृक्ष जिसका नाम संयम वृक्ष लिखा है । ज्ञान के द्वारा ही इसकी रक्षा हो सकती है । होना चाहिये विवेकपूर्ण अनुभवी । यह प्रश्न उठता है कि मानव वृक्ष कैसे है ?

जीवन एक बगीचा है, स्वांस—नीर ने सींचा है ।
भोंदू इसको काट रहा, पड़ा किये सिर नीचा है ॥

इसकी शाखायें इन्द्रिया हैं। वे क्रमश हैं स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्र यानी कान । इसकी पाच ही उपेन्द्रिया भी हैं। यह मिलकर १० हो जाती है ।

यहा एक उर्दू का शायर कहता है —

बेशाख्ता बुलबुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से ।
बर्बाद गुलिस्तां करने को, बस एक ही उल्लू काफी है ॥
हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्तां क्या होगा ॥

हे भाई ! इसका अर्थ है कि देख, पूर्व मे एक कमाता था और सब बैठे कुटुम्बी खाते थे । आज जितने कमाते हैं वह भी इस महगाई और सकटकालीन स्थिति से तुलना कर देख ।

बुलबुल एक पक्षी है, वह है आत्मा, जिसे उर्दू फारसी मे बुलबुल कहते है। रुह को हिन्दी और सस्कृत मे ब्रह्म, जीव, चैतन्य। जिसे चेतना शक्ति है वह ससार के समस्त कार्य सुलभ कर सकता है, केवल पुरुषार्थ द्वारा ।

गुलिस्ता–बाग को कहते हैं। जो इन्द्रिया हैं वह शाखायें और मानवशरीर बृक्ष है । यदि इसे नष्ट करना है तो एक कोई व्यसन लगा लो। व्यसन ७ है, वह हैं :-

जुआ खेलन, मांस, मद, वेश्या व्यसन, शिकार ।
चोरी पर-रमणी-रमन, सातों पाप निवार ॥

यह सातो ही उल्लू व्यसन है। उल्लू से भाव है मूर्खता से। आचार्य कहते है तू इनसे बच। इनसे बचने के लिये पुरुषार्थ सिंह चाहिये। पुरुषार्थ के ४ प्रकार है—

धर्म, अर्थ, अरु काम, शिव, पुरुषारथ चतुरंग।
कुधी कल्पना गहि रहे, सुधी गहे सर्वंग॥

जो शीलवान और सदाचारी है, जिन्हे ब्रह्मचारी कहते है, जो सयमरूप ज्ञान की लगाम अपने हाथ मे रखते हैं उन पर भी कालरूप हाथी जो दिन रात है चारो पहर रूप पैरो से चढा हुआ है। यह प्रथम तीर का स्पष्टीकरण आचार्यो ने अपनी मूक लेखनी द्वारा चित्रो में समझाया है।

सहतीर नं० २

नर-तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान॥

इस दोहे का स्पष्ट भावार्थ यह है कि यह मानव-शरीर रथ है जो वृक्ष के रूप में कहा है। आत्मा इसका सारथी है। जो इस रथ को हाकता है अर्थात् चलाता है इन्द्रिया घोड़े हैं। विवेकवान, ज्ञानवान, धीमान यह सब पर्यायवाची शब्द हैं। जो इस घोड़े पर बैठा है। इन्द्रिय रूप घोड़े पर बैठ कर सयम की लगाम अपने हाथ मे रखे है।

इस घुडसवार के आगे एक मानव-पथिक (राहगीर) कन्धे पर लाठी रखे, लाठी मे पोटली लटकाये चल रहा है। यह तीन भावो को स्पष्ट करता है। स्वात्मरक्षा के लिये सयम की लाठी पोटली एक पात्र है। वह मानव-शरीर , हृदय पोटलो मे बधा है विवेकपूर्ण ज्ञान।

ज्ञानीजन है जौहरी, करमी सकल मजूर।
देह—भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर॥

अब आप देखिये, इस पथिक के आगे एक घोड़े पर सवार पुन. बतलाया है किन्तु सामने कुत्ता का संकेत है। वह इस बात को स्पष्ट करता है कि कुत्ता असयमी है, जो मैथुन छुप कर नही करता किन्तु अपनी ऋतु पर ही करता है। मानव इतना पतित है कि उसे कोई समय निश्चित नही है, इसलिए यह असयमी इन्द्रिय रूप घोड़े पर सवार दिखाया है। कुत्ते के साथ वाला आदमी अपनी अगुली से सकेत कर रहा है कि जो मानव अपनी चरम सीमा को छोड़ देते हैं वे विवेकशून्य हैं, असयमी और दुश्चरित्र हैं। वह इसप्रकार वाधे जाते हैं जैसे दो चमार एक बैल को बाधकर और लटकाकर ले जा रहे हैं। यहां आचार्यों ने बैल ही क्यों बताया है ?

बैल इसलिये बतलाया है कि यह वृष यानी धर्म को सम्बोधित करता है। इसके अनेक नाम हैं। जैसे वृष, वृषभ, बैल, सांड, नादिया, नदी, । यह धर्म ही आनद का देने वाला है। दयामय है, जिसे हमने उल्टा टाग रखा है अर्थात् हम विपरीत-मार्गानुगामी बन गये हैं।

आप स्पष्टरूप से देखिये, अनुभव कीजिये कि क्या अपने ज्ञान का दुरुपयोग करने वाला विषयासक्त व्यक्ति जब पकडा जाता है क्या बाधा नही जाता ? क्या जनता और पुलिस के द्वारा बाँधा और मारा नही जाता ? अथवा दडित नही किया जाता ? कौनसी कमी रह जाती है ? ससार मे ४ प्रकार के अन्धे है —

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

वर्तमान पाठको से निवेदन है कि आप प्रत्यक्ष मे इन चित्रो को देखें और अपनी ओर अपने गुण और दोषो पर दृष्टि डालेंगे बिचार करेंगे तो क्या आप आत्मकल्याण से वचित रह सकेंगे ? कदापि नही । आप विद्या का दुरुपयोग न कर सदुपयोग ही करेंगे । आचार्य कहते है —

विद्या विवादाय, धनं मदाय, शक्तिः परेषां परिपीडनाय ।
खलस्य साधो विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

सहतीर न० ३

सहतीर न० ३ इस बात की पुष्टि करता है कि मानव का ज्ञान एक सयम–वृक्ष है । इसके पूर्व की ओर घोडे पर सवार सयमी पुरुष है । इसके पीछे एक हाथी लगा हुआ चला आ रहा है। वह है दिन और रात रूप हाथी, जिसे काल से सकेत किया है ।

वृक्ष के पश्चिम की ओर एक घुडसवार जो दिखाया है वह इस बात की पुष्टि करता है कि मैं असयमी इसलिये हू कि इन्द्रिया घोडे है । और घोडा अपने बाये पैर से शूकर की ओर सकेत कर रहा है, इसलिए कि शूकर मैला खाने मे आनद मानता है और विषयी असयमी मानव विषयो मे आनद मानता है । विषयो का स्थान मैले का स्थान है, जिसमे से मलमूत्रादि बहता रहता है । किन्तु वही घुडसवार अपने दाहिने हाथ की अगुली से सकेत कर रहा है कि मैने इस मानव के ज्ञानरूप वृक्ष का दुरुपयोग किया है और करता ही जा रहा हूँ, इसलिए कि मुझे मृगतृष्णा है । इस कारण से मुझे खाने को कालरूप सिंह सामने से चला आ रहा है ।

सभी को काल ने खाया, तुझे भी काल खायेगा ।

काल सामने और पीछे दौनो ही ओर है । चेतावनी को आचार्यों ने सकेत मे दर्शाया है ।

सहतीर नं० ४

इस सहतीर न० ४ मे सबसे पहिले इन्द्रियरूप घोडे पर सवार विषयो का लोलुपी है, जिसे कहते है मृगतृष्णा । जिस विषय का एक बार रसास्वादन कर लेने पर उसकी पिपासा शान्त नही होती है । बार बार भोगने की लालसा रखता है । जिस प्रकार मृग चौकडी भर कर वन मे चारो ओर सुगधी को खोजता फिरता है, किन्तु वह सुगन्धी उसकी नाभि मे ही है । आचार्य कहते हैं :-

ज्यों मृग दौड़ा फिरे विपिन में, ढूंढे गन्ध बसै निज तन में।
पर में करै हुलासी, मोय सुन सुन आवै हांसी ॥

उसकी नाभि मे कस्तूरी की सुगध मौजूद है, किन्तु वह भूला हुआ है। इसी प्रकार से मानव अपने आत्मीय सद्गुणो को, अपने दयामय धर्म को, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के चक्र-व्यूह मे फस कर भूला हुआ है।

इस हिरण के आगे एक और हिरण चौकडी भर कर भागता जा रहा है। वह है ज्ञान का तीसरा नेत्र। मृग की आख से आचार्यो ने मानव की आख की उपमा दी है। कहा है कि :—

फूटी आंख विवेक की, कहा करै जगदीश।
रामजनी (कंचनिया) को तीन सौ, मनीराम को तीस ॥

तो पुन कहते है —

परख सकती नहीं रतनों को, हर इन्सान की आंखे।
दिखाई ब्रह्म क्या देगा, जो ना हों ज्ञान की आंखे ॥

तो ज्ञान-नेत्र आवश्यक है, और यह जानना भी आवश्यक है कि आगे पीछे कालरूप शिकारी चला आ रहा है। तो सुख और शान्ति कहा है ?

कविवर पडित दौलतराम जी ने छहढाला की तीसरी ढाल में कहा है —

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न, ताते शिवमग, लाग्यो चहिये ॥

अर्थ—आत्मा की यदि भलाई है तो सुख और शान्ति में। वह सुख और शान्ति वहां है ? जहा आकुलता नही है। आकुलता मोक्ष मे नही है, इसलिए मोक्षमार्ग पर लगना चाहिये।

इस शिकारी की पीठ के पीछे जो वृक्ष हैं वह ज्ञान का वृक्ष है, जो कि सयम से ही प्राप्त होता हैं। जहा पर तृष्णा है वहाँ नही। वे तृष्णारूपी ६ डाँकने है —

तृष्णा, चिन्ता, दीनता, माया, ममता, नारि।
ये षट् डांकिनि पुरुष के, पीवत रुधिर निकारि ॥

इस पर भगवत् शुभचन्द्राचार्य ने ज्ञानार्णव ग्रन्थ मे १७ वे प्रकरण पृ० सं० १८३ श्लोक सं० १४ में योगिराज भर्तृहरि को रसायन विद्या के सम्बन्ध मे सबोधन किया है कि हे योगिराज! यदि तुझे सुवर्ण की ही आवश्यकता थी तो तू राज्य का त्याग कर योगी क्यों हुआ ?

न मज्जति मनो येषामाशाम्भसि दुरुत्तरे।
तेषामेव जगत्यस्मिन् फलति ज्ञानपादपः ॥

अर्थ— इस जगत मे जिनका मन दुस्तर आशा-तृष्णारूपी जल मे नही डूबता उनके ही ज्ञानरूपी वृक्ष फलता है। और आशा तृष्णारूपी जल मे ज्ञानरूपी वृक्ष गल जाता है । इस कारण फल नही लगता ।

इन्द्रियो की मृगतृष्णा के सम्बन्ध मे अमितगति आचार्य सुभाषित रत्नसदोह मे उपदेश ५ पृ० २८, श्लोक सख्या ८७ मे कहते हैं —

दूर्वांकुराशनसमृद्धवपुः कुरंगः, क्रीडन् वनेषु हिरणीभिरसौ विलासैः ।
अत्यन्तगेयरवदत्तमना वराकः, श्रोत्रेन्द्रियेण समवर्तिमुखं प्रयाति ।।८७।।

अर्थ—हिरण वन मे रहकर स्वच्छन्दता से हरी हरी घास को खाता है, हिरणियो के साथ मनमानी क्रीडा कर सुख भोगता है, परन्तु श्रोत्र इन्द्रिय के वश होकर गीतो के सुनने से पकडा जाता है। इस तरह यम के मुख मे चला जाता है ।

इस पर आचार्य अमितगति सासारिक विषय-सुख-निराकरण प्रकरण के दूसरे श्लोक मे कहते है —

न तदरिभिराजः केसरी केतुरुग्रो, नरपतिरतिरुष्टः कालकूटोऽतिरौद्रः ।

अर्थ—प्राणियो का जितना उग्र अहित ससार मे विषयरूपी शत्रु करते है उतना मदोन्मत्त हाथी (दिन रात पीछे लगा है) व मासलोलुपी सिह (काल) सामने खडा है, भयकर राहु, कुपित हुआ राजा, अति तीक्ष्ण विष, अति क्रुद्ध यमराज, प्रज्वलित अग्नि, और भयकर शेषनाग, आदि भी नही करते। अर्थात् शत्रु, मदोन्मत्त हाथी आदि तो एक ही भव (जन्म) मे दुःख देते है व अनिष्ट करते हैं ,परन्तु भोगे हुए इन्द्रिय विषय जन्म जन्म मे दुःख देने वाले होते है । इसका मुकावला वीर पुरुष ही कर सकते है । देखिये, एक वीर पुरुष काम-शूकर जो विषय है उससे युद्ध कर विजय पा रहा हैं । उसे वीतरागी पुरुष, जितेन्द्रिय पुरुष कहते है ।
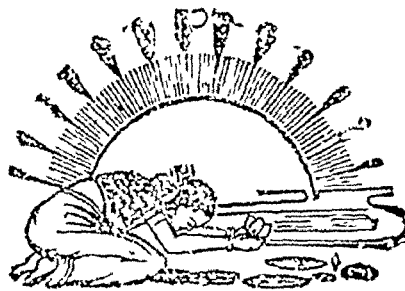
शिव और शिवालय

मानव—जीवन से एक तुलनात्मक दृष्टिकोण

यहा परम पवित्र प्राचीन भारत मे महापुरुषों का जन्म हुआ है। ऐसी उत्कृष्ट तीर्थस्वरूप भूमि पर विषयासक्त स्वार्थलंपटी वाममार्गियो ने धर्म की आड़ ले ले कर भोली भाली जनता को क्षणिक स्वार्थ के लिये कर्त्तव्यो से विमुख कर अहिंसक दयामय धर्म के पालने वालों को हिंसक प्रवृत्ति मे ले जाने का प्रयत्न व अधिकार जमाया था। ऐसे कठिन समय मे जैनाचार्यो का देश काल क्षेत्रानुसार जन्म और आगमन होता ही रहा हैं। इन महापुरुषों की लोकोपकारमय अहिंसक प्रणाली को विवेकपूर्ण ज्ञान, अनुभव, त्याग और तपस्या के द्वारा सारगर्भित अहिंसामय धर्म, संस्कृति एवं साहित्य की सुरक्षा हेतु प्रचार और प्रसार की दृष्टि रखते हुए जो मार्गदर्शन विश्व के प्रांगण मे साकार रूप से प्रत्येक नगर, अटवी, खेड़े, ग्रामो में विद्यमान है निर्माण कराया था, जिसे हम पुरातत्व कहते हैं। जो कि प्राचीन मूर्तियो के रूप में मोम की भांति उत्कीर्ण कराये थे। जिनसे उनकी विद्या, कला कौशल और बुद्धि का परिचय मिलता है। जिसे हम या हमारी विद्वद् मंडली समझ ही नहीं पाई है।

इन मूर्तियो के अग प्रत्यंग से मानव जीवन को शुद्ध धर्म की तुलनात्मक दृष्टि से सामने रखा है, शिक्षा देती हैं, किन्तु विवेकशून्य मानव खजुराहो आदि की मूर्तियों को नग्न रूप मे देखकर सही लक्ष्य से हटकर विपरीत मार्ग अपना कर उपहास करते है! हमने जो इन मूर्तियों से ज्ञान प्राप्त किया और शिक्षा ली हैं उसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक समझ कर पाठकों के समक्ष रख रहे हैं।

आप अपने विवेकपूर्ण ज्ञाननेत्र से देखेंगे तो हमें कौन वस्तु ग्रहण करना है और कौन त्या—गना है, इसका सही निर्णय हो सकेगा। इसकी तुलना देखिये कि जहा पर जैन मंदिर है उसी के निकट मे शिवालय भी है। ऐसा क्यो ? प्रश्न १।

उत्तर .–शिवालय में शिवलिंग कामदेव के रूप मे पूजा जाता है, जिनका सकेत काल (मृत्यु), सर्प, हाथी, सिंह, व्याघ्रादि को प्रतीकात्मक बताया है। और दूसरी ओर जैन मदिरो में इसके विपरीत रागद्वेषादि से वर्जित बताया है। शिवालय में केवल शिवलिंग को ही संकेतात्मक रूप दिया है और जैन मदिरों मे सर्वांग को।

प्रतिमायें अवलोकते, हट जाता अज्ञान ।
इसीलिए सब पूजते, मान उन्है भगवान ।।
प्रतिमाओ का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव ।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ।।
जो विषयी निशदिन रहै, भरा मदन संताप ।
ऋद्धि सहित भी निंद्य हो, लज्जित होता आप ।।

परपरागत रूप से अह ब्रह्मास्मि, अह विष्णु , शिवोऽह को मत्र मानकर उसका जाप करते है। इस सम्बन्ध मे गीता, भागवत और जैन सम्प्रदाय के आचार्य श्री भगवतजिनसेन ने जिन सहस्त्रनाम स्तोत्र मे उल्लेख किया है।

प्रश्न २—शिव किसे कहते है और वह कहा पर है ?

उत्तर–शिव आत्मकल्याण को कहते है। जहा आकुलता नही है। आलय घर को कहते है। यह मानवशरीर भी एक शिवालय है, यदि निराकुलता हो। श्री कविवर दौलतराम जी कहते हैं:—

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न, तातें शिवमग लाग्यो चहिये ।।

प्रश्न ३—शिवलिंग क्या है ?

उत्तर–शिवलिंग पुरुषचिन्ह है और जिलहरी स्त्रीचिन्ह ।

प्रश्न ४—शिवलिंग पर सर्प-फण छाया क्यो किये है ?

उत्तर–सर्प काल यानी मृत्यु का प्रतीक है। वह हमे सावधान करता है।

प्रश्न ५—शिवलिंग पर त्रि-कु ड क्यो लगा है ?

उत्तर--प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर की ओर देखे कि टुन्डी का मध्य भाग, ऊपर ऊर्ध्व भाग, नीचे की ओर अधो भाग है। यही तीन कु ड है।

पुरुषा अकार ठांड़ो निहार, कटि हाथ धरे द्वय पग पसार।

और यही तीन लोक है।

प्रश्न ६—शिवलिंग बाहर की अपेक्षा मदिर मे गहराई लिये जमीन के वरावर गुफाओ मे क्यो विराजमान होते है ?

उत्तर--आप अपने शरीर की ओर स्वय देखिये। प्रकृति ने आपके शरीर की रचना किस प्रकार की है। केवल भावना ठीक होनी चाहिये ।

अन्धकार है वहां, जहां आदित्य नहीं है।
है वह अन्धा देश, जहां साहित्य नहीं है।।

अन्धे ४ प्रकार के होते है।

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार।।

जहा हमारी आखो पर विषयोन्मत्त भावनाओ की पट्टी बधी हुई है, उसे दूर करने के लिये ज्ञान-सूर्य की अत्यन्त आवश्यकता है। मानव शरीर एक देश है। उस पर स्वार्थलपटता की पट्टी बधी है। वहा आदर्श और आध्यात्मिक ज्ञान जो एक साहित्य के रूप मे विद्यमान हैं कैसे प्राप्त हो सकता हैं ?

भोग बुरे भव-रोग बढ़ावे, बैरी है जग जीके।
वे रस होंय विपाक समय अति, सेवत लागे नीके।।
बज्र अगनि विष से विषधर से, है अधिके दुखदायी।
धर्मरत्न के चोर प्रबल अति, दुर्गति पंथ सहाई।। (भूधर कवि)

विधि को कियो कुम्हार जिन, हरि को दश अवतार।
भीख मंगावत ईश को, ऐसो कर्म उदार।।

ब्रह्मा को कुम्हार, विष्णु को दश अवतार और शकर जी को भीख क्यो मागना पड़ी ? यह कर्म की विचित्रता है। विष्णु जी की नारी लक्ष्मी जी के चार बेटे है :—

लक्ष्मी के सुत चार है, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे कौ आदर नहीं, तीन करे भड़फोर।।

भगवान शंकर ने भीख क्यो मागी और योगी क्यो हुऐ ?

स्वयं सुरेशः स्वसुरो नरेशः, सखा धनेशस्तनयो गणेशः।
तथापि भिक्षाॅ कुरुते महेशः, वलीयसी केवलमीश्वरेच्छा।।
आपको बाहन बैल बली; वनिताहू को बाहन सिंहहि पेख के।
भूषक है सुत बाहन एक को, दूजो मयूर की पच्छ विशेख कें।।
भूषण हैं कवि चैन फणीन्द्र के, बैर परे सबते सब लेख के।
तीनहुं लोक के ईश गिरीश, सु जोगी भये घर की गति देख के।।

हिन्दु, जैन, शिव और शैव धर्मावलम्बी समाज मे जो तिलक लगाने की पद्धति है वह एक प्रकार से प्रतीकात्मक चिन्ह है। वह चार प्रकार की है —

पार्वती की गोल विन्दी, महादेव का आड़ा ।
विष्णु जी की तीन फाँक, राम जी का ठांड़ा ।।

पार्वतीजी की गोल विन्दी इसलिये है कि—पृथ्वी को वैज्ञानिको ने गोल माना है। जिस प्रकार से चक्र गोल है । तो नारी के सिर से पैर तक सर्वाग के आभूषण गोल हैं । वस्त्र जो भी पहिनती हैं गोल होते है । आगोपाग भी गोल हैं । यह एक प्रकार से सासारिक रचना का चक्रव्यूह है । यही एक शक्ति है । इसलिये वैज्ञानिको का कहना सत्य प्रतीत होता है ।

महादेव का आडा तिलक इसलिये है कि सासारिक भोगो मे प्रधान काम है। उससे बचने का वह सकेत देता है। इसलिये विद्याभ्यासियो को त्यागने योग्य निम्नाकित श्लोक मे पूर्वाचार्यों ने कहा है —

कामं, क्रोधं तथा लोभं, स्वादं श्रृंगारकौतुके ।
अतिनिद्राऽतिसेवा च, विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत् ।।

इनसे लोभ का कारण उत्पन्न होता है । इसलिये लोभ ही पाप का बाप है ।

लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते ।
लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ।।

अहभाव उत्पन्न करने वाला काम ही है, इसलिये आडा तिलक अहभाव के त्याग की ओर सकेत करता है। विष्णु जी की तीन फाक इसलिये बतलाई है कि यह मानव-शरीर बिषय-वासनाओ के अणुओ का पिंड है और रोगो का भण्डार (शरीर व्याधिमदिर) है। इसकी चीर फाडी होती रहती है । आप प्राय अस्पतालो मे देखते ही हैं । चौथा तिलक जो राम जी का खडा हुआ बतलाया है वह जितेन्द्रिय पुरुष का है, जिन्होने इन्द्रियो पर विजय प्राप्त की है । जो वीतरागी है। जिनका राग समाप्त हो गया है । इस प्रकार का तिलक जैन धर्मावलम्बी, रामस्नेही ही लगाते है, यह उन्ही का चिन्ह है ।

प्रश्न ७—शिवजी का बाहन नन्दीगण क्यो है ? और शिवलिग से दूर क्यो है ? तथा ऊंचाई पर क्यो है ?

उत्तर—शिव का अर्थ कल्याण से है । नन्दीगण का अर्थ आनन्द का देने वाला है । बृष का अर्थ धर्म से है । धर्म के द्वारा ही समस्त प्रकार का आनन्द, जिसे सुख कहते हैं, मिलता है । वह दयामय है। जहाँ दया है वहा धर्म है ।

धर्म प्रशस्त होता है । धर्म का भाग ऊचा है। वह उत्तरोत्तर ऊचा ही चढाता है। और कामदेव पतन की ओर ले जाता है । यह प्राकृतिक वस्तु है । धर्म १० प्रकार का होता है :—

शम, दम, शौच, धृति, क्षमा, विद्या, धी, अक्रोध ।
सत्य, अचौरी, धर्म दश, करते है मन बोध ॥

जैन शास्त्रों मे कहा है.–

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव भाव है, सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव है ।
आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य धरम दश सार है, चहुँगति दुखते काढ़ि मुक्ति करतार है ॥

धर्मात्मा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा ।
पर पापी धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नही कहा ॥

(८) अंतरग नग्न वह है जिन्है वीतरागी पुरुष कहते है, जो निरतर आत्मकल्याण मे लगे रहते हैं। वह विचारते हैं कि :–

न सुखं देवराज्ये च, न सुखं चक्रवर्तिनः ।
यत्सुखं वीतरागस्य, मुनेरेकान्तवासिनः ॥

गौ-धन गज-धन, बाज-धन, रतन खान, बहु धान ।
जिन धार्यो सन्तोष धन, सब धन धूल समान ॥
लोभ पाप में नहिं फंस्यो, लगे न मन्मथ वाण ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ॥

(९) जिनकी चिरकाल तक जीने की आकांक्षा रहती थी, ऐसे तपस्वी त्यागी पूर्वाचार्य प्रत्येक प्रकार से सयमी जीवन विताते थे। वह आज हजारो वर्ष वीतजाने पर भी जीवित है । किन्तु आज का मानव राजनीति मे पड कर प्रजा का हित नही सोचता। उसकी जैसे तैसे पाच वर्ष तक राज्य करने की लिप्सा बनी रहती है।

राजनीति की चासनी, मुंह लागे इक बार।
लगी रहत धुन उसी की, जीत होय या हार ॥

(१०) फूट का फल

भारत में एक कर फूटी अनेक बार, बार बार भारत में उपद्रव मचे रहे ।
फूटी थी कचरिया अयोध्या दशरथ गृह, दुखी हुआ राम हृदय वन वन भ्रमत ॥
सहोदर में फूटत जो फूट देखो लंका में, सवा दो लाख पुत्र नाती सफाचट भये ।
द्वापर में श्रीकृष्ण के समक्ष ही फूट पड़ी, कौरव और पांडव भारत में भसम भये ॥

फूट गये मान राजपूतो का गंवा दिया, अपनी ही बहिन को मुगलानी बनात भये ।
फूटे जयचन्द्र देशद्रोही जो भारत से, भारत पर मुगलो के हमले करात भये ॥
फूट पड़ी दोनो मे खोल नैन देख मित्र, भारत अखण्ड के खण्ड दो हो गये ।
अब यार चहुँओर फूट पडी भारत में, सो कूकर से भोंकत घर घर में भटक रहे ॥

वर्तमान में देश के लुटेरे !

कला सीख ज्ञान सीख पूरे विद्वान हुए, सीखा कुल बन्श पर बांध एक टूटा है ।
भारत का गुण लेय भारत ही नाश कियो, भारत के वासियों ने भारत ही लूटा है ॥
विदेशी तो भारत को लूट कर ले ही गये, लूटा कुल भारत एक कोना न छूटा है ।
भारत के रोहिणी विदेश ही न जा सके, लूटा स्वदेश तो क्या लूटने में लूटा है ॥

यह हमारा एक दृष्टिकोण विद्वद् समाज के समक्ष पुरातत्वीय शोध का है । हमे जहाँ पर भी जो प्रतिमाये मिलती है उनकी व्याख्या अग प्रत्यग से करने की जिज्ञासा रहती है । केवल लेखनी मे ही नही, किन्तु इसके साथ चित्र सहित कपडो पर बनाई गई प्रदर्शनी लोकसेवा के लिए नि शुल्क है । इसप्रकार से मानव जीवन मे घटने वाली अनेक मूर्तियो का साहित्य हमारे सग्रहालय मे उपलब्ध है ।

भारतीय देव पूजा क्या है ? देव पूजा की परम्परा का प्रादुर्भाव क्यो हुआ ? इस परम पवित्र भावना को धार्मिक भावना की मान्यता क्यो दी गई ? इसका मूल कारण मनुष्य का स्वार्थ है ।

प्रतीकात्मक जो सकेत पूर्वाचार्यो ने किये है वह परिणामो मे शुद्धि लाने के लिये । जिन चिन्हो से हमे और हमारी आत्मीय सपत्ति पर आघात पहुँचता हो उसे त्याग कर देना चाहिये । इस कारण से प्रतीकात्मक चिन्ह अकित किये गये थे । किन्तु खेद है कि मिथ्यात्व को भी धर्म मान लिया गया है । जहाँ आत्मा मे ग्लानि आवे वह कार्य निषेध किया गया है । जिसमे निर्दयता है उसमे क्या सुख होना सम्भव है ? कदापि नही ।

सत्कर्मो से मानव को देव और निर्दयतापूर्वक कार्य करने वाले को दानव कहते है । जिन शास्त्रो मे निर्दयता झलकती है उनका त्याग करने पर ही आत्मा मे सुख हो सकता है ।

पूर्व महापुरुषो का उद्देश्य आत्मकल्याण की भावनाओ को लेकर ही था । मानव शिव अर्थात् कल्याण का घर है । इसका सक्षिप्त नाम शिवालय भी इसी उद्देश्य को पूरा करता है ।

वर्तमान की शिक्षा आन्तरिक ज्ञान, आध्यात्मिक ज्ञान, धार्मिक ज्ञान, सांस्कृतिक ज्ञान मे कोई श्रद्धा क्यो नही रखती ? क्योकि वह विषयभोगी निरन्तर बनती जा रही है । यह इस देश का दुर्भाग्य है ।

नग्न रागी

आज की शिक्षा केवल पेट पालन के लिये ही है। यह राजरोग राग है। राग और द्वेष आपस में मित्र है और रागी द्वेषी जिसकी आत्मा है वही भिक्षा माँगने वाला संसारी नग्न है।

नग्न वीतरागी

दूसरा नग्न वह है जिसकी केवल दिशाये ही अम्बर (कपड़ा) है; जिसने इन्द्रियों पर विजय पा ली है, जिसे वीतरागी पुरुष या जितेन्द्रिय पुरुष कहते है, वह है दिगम्बर जैन साधु अथवा तीर्थंकर। जो कि आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाण्ड स्याद्वादी विद्वान है।

सिर पर जटाओं में सर्प क्यों लिपटा है ?

समाधान :- यह सर्प काल अर्थात् मृत्यु का सकेत करता है कि तेरे सिर पर काल अर्थात् सात बार आक्रमण कर रहे है। तेरी मृत्यु इन सात बारों में होना है। इन सातों में से कोई एक दिन ऐसा काल (समय) आवेगा जो तुझे खा जायगा। अत. तू धर्म कर्म में सावधान रहकर अपना जीवन यापन कर।

माथे पर चन्द्रमा क्यों चमक रहा है ?

समाधान .- यह शान्ति और सुख का प्रतीकात्मक चिन्ह हैं। जो बात पूर्वा-पर विचारों के साथ दूरदर्शी परिणाम को सोच समझ कर कही जाती है उसी मे अपना और दूसरों का हित है।

प्रथम ही जो सोच कर बात है कहता नहीं।
वह बिना लज्जित हुए, संसार में रहता नहीं ॥

भगवान शंकर के त्रि-नेत्र क्यों है ?

समाधान :- दोनो नेत्र मानव के चर्मचक्षु हैं, जिनसे —

इन नैनन का यही विशेख, मै तोय देखूं तू मोय देख।
देखत देखत इतना देख, मिट जाय दुविधा रहिजाय एक ॥

तृतीय नेत्र विवेकपूर्ण ज्ञान का है।

ज्ञानी जन हैं जौहरी, करमी सकल मजूर।
देह-भार का टोकरा, धरे शीश भरपूर ॥

मस्तक पर त्रिकुण्ड क्यों लगा है ?

समाधान -यह रजोगुण ब्रह्मा, सतोगुण विष्णु, तमोगुण शकर का प्रतीक है। यह बाल, युवा, बृद्ध तीनो अवस्थाओ और तीनों लोको का भी प्रतीक है। इनसे शिक्षा ग्रहण करके आत्म-हित मे लगना चाहिये।

जब तक मानव के शरीर मे शक्ति है, जो जितेन्द्रिय पुरुष है वह चक्र पुरुष कहलाते है। जिनमे चारो पुरुषार्थ भोगने की शक्ति है, जो अन्याय का प्रतीकार कर न्याय के पथानुगामी हैं, जो भलाई और बुराई को समझते है, गुण और दोष, पुण्य और पाप, सज्जनता और दुर्जनता को भली प्रकार से समझते है, वह सिंह-पुरुष कहलाते हैं।

भर लेते है पेट सभी, है जिनके काया।
पुरुष-सिंह है वही, भरे जो पेट पराया ।।

मानव का मुख क्या कहता है ?

मुखिया मुख को चाहिये, खान पान को एक।
पाले पोषे सकल अंग, तुलसी सहित विवेक ।।
मुंह आया सो बक चले, मुंह मे नही लगाम ।
मुंहफट होना जगत में, नहीं मनुज का काम ।।

दात, जीभ से क्या कहते हैं ?

हम बत्तीस अकेली है तू, हम में आवे जावे ।
एक बार मै धर मसकूं, किससे फरियाद करावे ।।

जीभ का दातो को उत्तर -

तुम बत्तीस अकेली हूं मै, तुम मे आऊं जाऊं।
एक बात मै ऐसी कहदूं, बत्तीसो तुड़वाऊं ।।

सिर क्या कहता है ?

सिर झगड़त है जीभ से, मै समझाऊं तोय।
तू कहके छुप जायगी, पिटवावेगी मोय ।।

यह बात प्रकृति को अच्छी नही लगी —

कुदरत को नापसंद है, सख्ती जवान मे।
पैदा हुई न इसलिये, हड्डी जवान मे ।।

यौवन विनाश का कारण क्यो हैं ? चाणक्य ऋषि कहते हैं -

यौवनं धन-संपत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ।
एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ।।

यौवन, धन, संपत्ति और प्रभुता यह चारो ही प्रत्येक मानव के पास है। किसी के पास कम और किसी के पास ज्यादा। आज का प्रत्येक मानव विषय भोगी बन गया है। और विषय की पुतली नारी है जिसे माया कहते है। बैरी दाव पेच से मारता है, यह हसा खिलाके मारती है। यह जिसके पास होती है या आ जाती है उसे उल्लू और अन्धा बना देती है। अन्धे चार प्रकार के होते है —

जन्म अन्ध, कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

जन्म का अन्धा तो किसी को हानि नही पहुचाता, किन्तु शेष तीनो अन्धे बहुत दुखदायी होते हैं। इसलिये देखिये, लक्ष्मी का दूसरा नाम माया है। यह एक शक्ति है। इसको जीतना कठिन है। यदि इसे जीता है तो केवल वीतरागी पुरुषो ने ही।

इस माया को सिर से पैर तक देखिये, जितने आभूषण देखेगे सब गोल, जितने वस्त्र पहिनती है सब गोल, जितने अंग और प्रत्यंग है सब गोल। इसलिये ही इसके हाथ में चूड़ी चक्र का प्रतीक दिया है। जो माया के चक्र में फसता है वह उल्लू बन जाता है। यह माया एक विषय-विष भी है। विषय-विष के धारण करने से ही तो यह विषधर अर्थात् नागन कही जाती है। विषयों मे फसने वालो का अन्तिम परिणाम दुर्गति का मूल कारण है।

विषय—विकार के कारण

विषयी मानव विषयो में आनन्द का अनुभव करता है, किन्तु मैले का खाने वाला शूकर उससे घृणा करता है या नही ? जिस अपवित्र स्थान से मलमूत्र और रक्त की नदी बहती है क्या यह शारीरिक विकार नही है ? और क्या काम एक विकार नही है ? विकारी वस्तु को देखकर विकारभाव पैदा होते है या नही ?

जब नारी प्रसन्न भई, दे न सकहि कछु और।
अशुचि पात्र आगे धरे, वही नरक का ठौर ॥

यही काम-विकार विनाश का कारण बन जाता है। यह मानव शरीर एक रथ है। दशो इन्द्रिया घोड़े है, जो इसमें जुते हुए है। आत्मा इसका ड्रायवर है और इस रथ मे बैठने वाला विवेकी सयम है।

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इंद्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावे श्री मान ॥
कामदार कामी पुरुष, मान मांगनों सोय।
इन चारों के दया नहिं, राम करे सो होय ॥

इस लिऐ विद्याभ्यासियो को आचार्यो ने कहा है कि—

कामं क्रोधं तथा लोभं, स्वादं श्रृंगार कौतुके ।
अति—निद्रातिसेवा च, विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत् ।।

आठ वातो का त्याग कर देना चाहिये । जो इनका त्याग नही करते है वह विद्यार्थी जीवन को सफल नही बना सकते । यही विषय मानवजीवन को कालरूप सिर पर छाये हुए है ।

बोली—वाणी की महिमा

लोभ पाप से नहिं फंस्यौ, लगे न मन्मथ बाण ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ।।
जिह्वा बड़ी सु बावली, कह गई स्वर्ग पाताल ।
आप कह भीतर भई, जूता खाय कपाल ।।
शब्द सम्हारे बोलिये, शब्द के हाथ न पांव ।
एक शब्द औषधि करै, एक शब्द करै घाव ।।
शब्द बराबर धन नही, जो कोई जाने बोल ।
हीरा तो दामों बिकै, शब्द का मोल न तोल ।।
वाण लगे तो काढ़िये, कीजे कोट उपाय ।
बचन-वाण जो हिय धसै, सो नहिं काढ्यो जाय ।।
ज्ञानी से ज्ञानी मिलै, कहै ज्ञान की वात ।
मूरख से मूरख मिलै, कै घूंसा कै लात ।।
मस्करी दिन दश करो, ज्यादा करो तौ बीस ।
तीसो दिन की मस्करी, कटा देत है शीश ।।
शब्दहि मारा मर गया, शब्दहि छोड़ा राज ।
जिन जिन शब्द परखियां, तिनके सर गये काज ।।
मिष्ट बचन है औषधी, कटुक बचन है तीर ।
श्रवण द्वार ह्वै संचरे, साधै सकल शरीर ।।
मधुर बचन से है सभी, वशी होत संसार ।
कौड़ी लगे न गांठ की, बाढ़ै प्रीति अपार ।।
आवत गारी एक है, उलटत होय अनेक ।
कहैं कबीर नहिं उलटिये, रहै एक की एक ।।

गारी ही से ऊपजै, कलह कष्ट और मीच ।
हारि चलै सो साधु है, लागि चलै सो नीच ॥
अपनी मीठी बोलि सों, कोयल पाती मान ।
लोग रूप नहिं देखते, गुण पर रखते ध्यान ॥
वाणी प्रिय बचनों सहित, निर्मदता संग ज्ञान ।
क्षमा शौर्य धन दानयुत, विरले दिखते जान ॥

क्रोध का क्या फल होता है ?

क्रोध कर मरे और मारे, ताह फांसी होय ।
किंचित हू मारे तो, जाय जेलखाने में ॥
अगर कहुं निबल भयो, हाथ पॉव टूट गये ।
ठौर ठौर पट्टी बंधी, पड़े सफाखाने में ॥
पीछे से कुटुम्बी जन, हाय हाय करत फिरें ।
हाथ पॉव पड़त फिरें, तहसील और थाने में ॥
किंचित हू किये ते क्रोध, एते दुख होत भ्रात ।
अनेक सुख होत भ्रात, जरा गम खाने में ॥

यह बात हमे भगवान शकर की वाणी रूप गगा जो अथाह समुद्र हैं, शिक्षा देती है। इसलिये प्रकृति ने मानव को सुनने को दो कान और बोलने को एक जीभ दी है ।

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक ।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जीभ एक ॥

पूर्वाचार्यो ने यह स्पष्ट कह दिया है कि जीवों की परिणति तीन प्रकार है :—

परिणति सब जीवन की, तीन भांति वरणीं ।
एक पुण्य, एक पाप, एक राग हरणी ॥

यौवन मे बिषयो की मदान्धता रोग का कारण है । इस रोग के कारण कुसंगति, कुशिक्षा, कुगुरु, कुमित्र विषयानुगामी है ।

धीर वीर तब ही तलक, जब तक लखी न नारि।
नारि नैन के मिलत ही, सर्वस्व देत बिगारि ॥

यौवनावस्था मे चढता हुआ खून अपनी सुर्खी वतलाता है, उसी प्रकार मगल गृह भी है। यही शरीर का राजा है । आचार्यो ने कहा है – वीरभोग्या वसुन्धरा ! वीर बालक ही जो ब्रह्मचारी है जिन्होने विषय कषायादि का त्याग किया है वही इस कायारूप वसुन्धरा को स्वस्थ (आरोग्य) रख सके है। और इसका सही सदुपयोग कर यश प्राप्त कर सके है । उन्ही ने विजय पाई है । और जो विषयो के वशीभूत है वह —

है फंसा विषयों में जो, वह वीर है किस काम का ।
जंग जिसको लग चुका, शमशीर है किस काम का ।।

यह भी एक कर्म की विचित्रता का स्वरूप है जो यह विषयो के जाल मे फंस जाता हैं, इसे कालरूप सर्प द्वारा आचार्यो ने साकेतिक कलाकृतियो मे निरूपण किया है। चतुर मनुष्य जो ब्रह्मज्ञानी हैं इसका सदुपयोग करते है और जो शख पुरुष है वह इसका दुरुपयोग करते है । जो वात हम यहाँ पर लिख रहे है वैसी मूर्तिया भी हमे प्राप्त हुई है ।

क्रोध, मद लोभ, माया, इनमें राचै है ये जीव।
जिनके कारण बन्ध करता, फिरता रहता है सदीव ।।
जीव कर्मो का ये सम्बन्ध है, अनादि काल से ।
जिस तरह दूध में मक्खन है, स्वयं बिन मिल बावरे ।।
कर्मो के संसर्ग में, जीव हुआ बेहाल ।
मति माफिक वर्णन हुआ, अनुभव लेहु सम्हारि ।।

मानव—शरीर क्या एक वृक्ष है ?

समाधान — यह मानवशरीर एक ससारवृक्ष है । इसे कालरूप हाथी पकड कर पटक रहा है । जिस प्रकार से काल वडा है उसी प्रकार से भूमण्डल पर हाथी बडा है । यह एक शाकाहारी पशु है । यह बालक के जन्म लेते ही पीछे लग जाता है । जिस प्रकार से सफेद और काला हाथी होता है उसी प्रकार से दिन सफेद हाथी है और रात काला हाथी है । इसके चार पैर हैं, दिन के भी चार पहर है और रात के भी चार पहर है ।

दूसरा सिह भी काल है, किन्तु यह माँसाहारी है। यह भी काले और सफेद दोनो ही रग के होते है । इसके भी चार पहर है। यह मृत्यु को सकेत करता है । सिह हमे पुरुषार्थ करना सिखाता है । पुरुषार्थ चार प्रकार का हैं—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। जिसने इन चारो पुरुषार्थों को साधा है वही इस ससार मे जीवित है । आज वही महापुरुष हमे देवस्वरूप है, जिनने इस कालरूप सिह से सग्राम कर विजय पाई है । और जो विषयो मे आशक्त रहे उन्हो को यह अनन्तकाल से चारो पैरो से कुचलता और खाता आया है ।

यह कालरूप हाथी संयमी और असयमी प्राणी मात्र के पीछे लगा हुआ चला आ रहा है। उसे असंयमी मनुष्य अपने मानव जीवन मे उस समय महसूस करता है जब इन्द्रिया शिथिल हो जाती है, शक्ति क्षीण हो जाती है। अय मेरे नौजवानो! देखो एक वृद्ध पुरुष को और अनुभव करो कि मैने इन विषय भोगो मे रुचि रखकर क्या काम-शूकर की भाति कालरूप सिह को आमंत्रित नही किया अर्थात् मृत्यु को नही बुलाया ? देखिये, आज भारत के अनेको छात्र विषयों के फन्दे मे फंस कर मौत के घाट उतरते जा रहे है। शिक्षा लेना क्या आवश्यक नही है ?

नर तन, रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान ॥

सयमी और असयमी दोनो ही प्राणी पथिक है, जो मनुष्य शरीररूप रथ है। आत्मा इसका ड्रायवर है, इन्द्रियां घोड़े और इस पर बैठने वाला धीमान् पुरुष है, जो एक राहगीर बटोही है, किन्तु असयमी मानव का जीवन श्वान से भी पतित है, क्योकि विषयान्धी का कोई समय विषयो के लिये निश्चित नही है और श्वान के लिये समय निश्चित है।

कुत्ता कार्तिक मास में, तजत भूख और प्यास।
तुलसी विषयी नरन को, बारहुं कातिक मास ॥

हम इन्द्रियरूप घोड़े पर सवार होकर मृगतृष्णा के समान अपनी मृगनयनी को साथ लेकर रमते हैं और जीवनयात्रा के अतिम समय मे काल समाप्त होते ही यमराज अपना वाण छोड देते हैं। इस मानवरूप वृक्ष की रक्षा विरला वीर पुरुष जो जितेन्द्री वीतरागी है, वही कर सकता है।

इसप्रकार के चार सहतीर हमे विदिशा नगर मे किले के अन्दर झाई पौर मे मिले है, जिनमे इस प्रकार का चित्रण किया गया है।

कविवर भूधरदास जी ने इसे अनुभवी-ज्ञान द्वारा चरखा बताया है :—

चरखा चलता नांही रे, चरखा भया पुराना ॥
पग खूंटे दोउ हालन लागे, उर मदरा खखराना।
टेढ़ी भई पांखुरी पांसू, चाले नहिं मनमाना ॥
रसना तकली ने बल खाया, सो कैसे करि खूटै।
शबद सूत सूधा नहिं निकसै, घरी घरी में टूटै ॥
आयु माल का नहीं भरोसा, अंग चलाचल सारे।
रोज इलाज मरम्मत चाहै, बैद बढ़ई सब हारे ॥
नया चरखला रंगविरंगा, सबका चित्त चुरावै।
पलटे वरण गये गुण अगले, अब देखत नहिं भावै ॥

मोटा महीन कात के अजहुं, करि अपना सुलझेरा ।
अंत अग्नि में जलना होगा, 'भूधर' समझ सबेरा ।।

शिवजी के दो गण नन्दी और भृंगी कौन हैं ?

समाधान :—नन्दी आनन्द का देने वाला धर्म है जिसे वृष कहते हैं । वृष का संकेत बैल से किया है। प्रत्येक जीव मात्र के अन्दर धर्म है । वस्तु का स्वभाव ही धर्म आचार्यों ने निरूपण किया है । और भृगी है जठराग्नि, जिसका संकेत आचार्यों ने बाघाम्बर से किया है । जिस प्रकार से बाघ खाने को दौडता है उसी प्रकार से यह जठराग्नि है । इस पेट की जठराग्नि को शान्त करने के लिये क्या क्या उपाय नही रचे जाते ?

भर लेते हैं पेट सभी, है जिनके काया ।
पुरुषसिंह है वही, भरे जो पेट पराया ।।

हम आपकी दृष्टि श्रीमत राजमाता सिंधिया की ओर ले जाते हैं कि वह इस युग की सही मायने मे सिंह–पुरुष है । उन्होने जनता की सेवा के लिये चुनाव लड़ा और शानदार विजय प्राप्त की थी ।

ध्यान देने की बात है कि राजमाता ने स्वयं मुख्य मंत्री पद स्वीकार नही किया। ऐसा क्यो ? इसलिये कि सिंहवृत्ति धारक क्या आधीनता धारण करते हैं ? कदापि नही । जो हंस मोती चुगते है क्या वह कभी उच्छिष्ट वस्तु की ओर नजर डालते हैं ? नहीं । जिस राजा ने राज्य किया है क्या वह गुलामी करेगा ? नही । जिस दानी ने दान दिया हो क्या वह कभी भिक्षा मागेगा ? नही । जितना वेतन मुख्य मन्त्री पाते होंगे उतना तो दान नित्य प्रति दिया जाता है । यह हमारे पूर्व राजाओ के दान की परपरा रही है ।

शंकर जी के विवाह में बरातीगण

(मानव जीवन से तुलनात्मक)

नन्दीगण पर सवार होकर, बरात चली शंकर भोला ।
पर्वत से उठ चले महादेव, सुरत धरी है गोकुल की ।।
उत्तराखंड से उतर कर, हनूमान आगे भोला ।
ब्रह्मा तो चढ़ चले हंस पर, गरुड़ पै विष्णू भगवाने ।।
भटक पै भैरो, चार पैर चूहे पर गणपति सोहाने ।
लाल बैल पर मंगल राजा, काले सांड पर महाकाले ।।
भूरे हाथी पर वृहस्पती, सवार होकर के चाले ।
जरख के रथ में चली डंकनी, चले जो शिव के अमवाने ।।

घोड़े के रथ में सूर्य नारायण, चल धरती दे सत् म्याने ।
हिरण के रथ में चलै चन्द्रमा, चले जो शिब के अगवाने ।।
अर्र ततइया, बर्र ततइया, विच्छुन की झालर लटकें ।
सहस नाग की नांद बनाई, मुण्डन की माला लटक ।।
कहत नादिया सुनलो बाबा जी, खूब सजालो तुम हमको ।
यहां की दुनिया नाम धरेगी, शरम लगेगी दोनों को ।।

भावार्थ —नन्दीगण का अर्थ है, आनन्द देने वाला धर्म, जिसे वृष कहते है व वृष बैल से सकेत किया है। धर्म दश प्रकार का वेदों और ग्रन्थो में पूर्वाचार्यों ने लिखा हैं ।

बारात का अर्थ है मानव जीवन की जीवनयात्रा से और भोला कहते हैं सीधा सरल मानव ।

ब्रह्मा–यह मानव शरीर जिसके द्वारा सृष्टि की रचना होती है और ब्रह्म चैतन्य स्वरूप आत्मा जिसे हस कहते है । इसी हस पर यह मानव शरीर बैठा हुआ है । मानव–शरीर विषय-वासनाओ के अणुओं का एक पिंड है । और यह ज्ञानरूप गरुड पर सवार है ।

चूहे के चार पैर है । जो दिन और रात यह मानव की आयुरूप डाल को काटते रहते है । इसके भी चार चार पहर होते है । गण नाम समुदाय का है और इसका पति चैतन्य स्वरूप आत्मा है। यदि यह आत्मा इस शरीर मे न हो तो क्या इस शरीर की शोभा हो सकती है ? नही ।

मानव का सुखी जीवन शुक्र है । जहां सुखी जीवन है वहां पर विषय अपनी विभिन्न कलाये दिखाते हैं । विषय शनि है । जिसे विषय लग जाते है उसका जीवन कलकमय बन जाता है । और वही मृत्यु का कारण बन जाता है । मृत्यु को यम कहा है । इन तीनों का बाहन काला सॉड जिसे भैसा कहते है । साकेतिक भाषा में आचार्यो ने उल्लेख किया हैं । शुक्र, शनि और यम का बाहन भैसा है ।

भूरा हाथी मानव की वृद्धावस्था है । जब श्वेत बाल आते हैं उसी काल विवेकपूर्ण ज्ञान का अनुभव होता है । अनुभव ज्ञान की कसौटी है । ज्ञान हमारा गुरु है । ज्ञानी ज्ञानरूप हाथी पर सवार होकर सयम का अकुश लेकर चलाता है ।

आपने देखा होगा कि जरख एक जगली खूंख्वार के समान मासाहारी पशु है । यह विशेष कर खून पीता है । इसकी कमर टेढी होती है । इसी प्रकार से वृद्धावस्था मे मानव की भी कमर टेढी हो जाती है । आयु शेष रहने से जरा बुढापे का प्रतीक है । जर्जर बुढापे के शरीररूप रथ मे डकनी आकर अपना राग आलापन करने लग जाती है । वह छः है ।

तृष्णा, चिन्ता, दीनता, माया, ममता, नार ।
ये षट् डॉकिनि पुरुष का, पीवत रुधिर निकार ।।

जिस प्रकार से विवाह में गीत प्रायः स्त्रिया गाती है, यह भी अपना अपना गीत गाने लग जाती हैं। जो हमारे कल्याणमार्ग मे अगवानी करने आ जाती हैं।

शकर जी की बारात मे ग्रह, नक्षत्र, भूत पिशाचादि सभी गये थे। तो इस कविता के भावार्थ मे यह सभी बतलाये गये हैं। इनमे सूर्य और चन्द्रमा भी थे।

सूर्य नारायण —घोडे के रथ मे। घोड़े इन्द्रिया हैं। नेत्र इन्द्रिय मे जब तक प्रकाश हैं तभी तक शक्ति है और यह मानवशरीर शक्ति की पालकी (म्याना) हैं। पुरुषार्थी व्यक्ति ही नारायण है, यदि सत्कर्म करे तो। अन्यथा पशुओ से भी गिरा हुआ है।

जो दार्शनिक पुरुष हैं वह अपनी शूरवीरता, धर्म और मोक्ष के साधनो मे, परोपकारो मे बतलाते हैं और कामान्धी पुरुष सासारिक भोग भोगने मे, अर्थ और काम के साधनो मे लगे रहते हैं। जिसप्रकार से शूकर विष्टा खाने मे आनन्द मानता है उसी प्रकार से विषयी मानव विषयो मे आनन्द मानता है।

हिरण के रथ मे चन्द्रमा इस बात को बतलाता है कि मुखाकृति से सुख और दुख का आभास होता है। हमारे सद्विचार मस्तिष्क मे केन्द्रित होते हैं। इसलिये शीतलता का प्रतीक शकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा बतलाया है। नेत्रो को मृगनयन की उपमा से विभूषित किया है। जिस प्रकार से हिरण चौकडी भरता है उसी प्रकार से नेत्र भी दूर दूर के साकेतिक चिन्हो को पहिचान लेता है। यही हिरण का रथ है।

अर्र ततइया, बर्र ततइया मानव जीवन की चचलता, चिडचिडा स्वभाव, हृदयविदारक कटु वचन और असत् कार्य जिनसे कि आघात पहुँचता है। इसका द्योतक है।

दुर्गा का बाहन सिंह पुरुषार्थ का प्रतीक बतलाया है। नारी ही पुरुषार्थ करना सिखाती है। आलसी, रोगी और विषयी मानवो के घरो मे प्राय कलह इसीलिये मचा रहता है कि वह पुरुषार्थहीन होते है।

यह मानव शरीर एक नाद (कुण्ड) के मानिन्द है और इस शरीर से अनन्तानन्त काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, अनन्तकाल से लिपटा हुआ है। अनन्त नाम सर्प का और अनन्त नाम काल का है।

प्रार्थना में से ध्वनित अर्थ

धन धन भोलानाथ दिगम्बर, कौड़ी नहीं खजाने में।
तीन लोक बसती में बसाके, आप बसे वीराने में॥

भावार्थ—यह शरीर ही तीन लोक की रचना का है। इसमे आत्मा आकर बसी। इस बसती की रचना किस प्रकार है? आत्माराम भोलानाथ है। इसे जैसी सगति मिल जाय। किन्तु आत्मा भिन्न है, पुद्गल भिन्न है। इसके खजाने मे तीन रत्न अमूल्य है–वह हैं रत्नत्रय,

जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र कहे जाते हैं। और लोक भी तीन ही हैं। ऊर्ध्व नाभि से ऊपर का भाग, मध्य टुन्डी का भाग और अधोभाग पैरों की ओर का भाग कहलाता है।

दर्शन मस्तिष्क में विचारणीय है, ज्ञान हृदयंगत किया जाता है और चरित्र विषयादि से बचाया जाता है। किन्तु मूर्ख मानव इस निधि को स्वतः के पास न रख खो देता है और खोजता फिरता है। देखिये तीन लोक–

पुरुषा अकार ठाड़ो निहार, कटि हाथ धरै द्वै पग पसार।

इस प्रकार यह तीन लोक का नकशा बन जाता है।

जटा जूट का मुकुट शीश पर, गले में मुण्डों की माला।
माथे पै है डटा चन्द्रमा, कपाल का कर में प्याला ॥

भावार्थ—मानव के सिर पर जटाओ का मुकुट प्रकृति ने स्वयं ही निर्माण किया है। और जो सर्पफण बताया है वह काल सिर पर छाया है इसका प्रतीकात्मक चिन्ह है। इस कारण नाना प्रकार की शकाये उत्पन्न होती है, जो शुभ रूप और अशुभ रूप हैं। गले में मुण्डमाल है वह काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, छल कपट आदि की जो कि संसार परिभ्रमण कराने वाली विषय भोगादि मे ले जाने वाली है। इनसे सावधान रहने का उपदेश मिलता है। मस्तक पर जो चन्द्रमा विराजमान है वह सुख और शान्ति का प्रतीक है।

सिंह चर्म का वस्त्र पुराना, वृद्ध बैल असवारी को।
शिव-रमणी तुव सेवा करती, धन धन गौर विचारी को ॥

धर्म एक बूढा बैल है जिस पर शकर जी सवारी करते है। यह इनका गण है। सद्गुणों के समुदाय को गण कहते है। क्षुधा एक सिंह है जो जीर्ण शीर्ण पुराने वस्त्र से ढका हुआ है। गौरा जी का वाहन सिंह है। सिंह और बैल आपस मे विरोधी है। गौरा जी एक देवी शक्ति है। धन्य है उन महापुरुषों को जिनकी सेवा में शिव-रमणी खड़ी रहती हैं।

उत्तम पुत्री है राजों की, व्याही गई भिखारी को।
क्या जाना क्या देखा उसने, नाथ तेरी सरदारी को ॥

विद्वज्जन! यह ऊपर बता ही चुके हैं कि मोक्षगामी महापुरुषों की तीन–१ पद्मासनी, २ कमलासनी, ३ हसासनी पत्निया है, जो सर्वोत्तम मानी गई हैं। जो इनके राजा है और यह पुत्रिया वैरागी के लिये व्याही गई है नाथ! जब तक केवलज्ञान नही होता तब तक इस अपार ससार के अन्दर क्या देखा, क्या सुना और क्या समझा तथा अनुभव किया ?

सुनी तुम्हारी व्याह की लीला, भिखमंगे क्यों नंगे तुम ?
नाम तुम्हारे हैं अनेक पर, सबसे उत्तम है नंगा ॥

भावार्थ —हे मोक्षाभिलाषी ! आपने इस सासारिक व्यवहार रूप विवाह का चरित्र देखा और सुना जो कि क्षणभगुर है । जो असयमी हैं, जिनका भविष्य खतरे मे है, वही तो दर दर के भिखारी और नगे कहे जाते हैं । आप तो ससार-सागर से पार उतारने वाले हैं । आपने माया मोह जाल का परित्याग कर दिया है । इसलिये आप नगे हैं । इसीलिये आप दिगम्बर कहलाते है ।

भगवान ऋषभदेव को भागवत मे महादेव कहा है, जो दिगम्वर है और उनके अनेको नाम हैं । इच्छाओ से रहित होने से वे नगे हैं ।

याही तें शिव शोभा पावैं, बैठ रही सिर पर गंगा ।
भूत प्रेत बेताल साथ में, यह दिल सब से है चंगा ।।

अत हे भगवन् !

अष्ट कर्म जो दुःख देते है, तिनके क्षय का करो उपाय ।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न रोग सब ही टर जाय ।।

यही भूत प्रेतादि का समुदाय जो जबरदस्त है उसको आपने तपस्या से जीत लिया है । केवलज्ञानरूप गगा (वाणी) को मुखारविन्द से वहाकर शोभा पाई है जो सवको कल्याण की देने वाली है, इसलिये आप शोभा को प्राप्त हैं ।

तीन लोक के दाता होकर, आप बने क्यों भिखमंगा ।
अलख तुझे बतलाते मुझे, क्या मिलता अलख जगाने से ।।

भावार्थ —इस कविता की दो लाइन मे भगवान से तर्क किया है कि आप जब तीनो लोको के दाता है तो भिखारी क्यो बने ? और अलख जगाने से तुम्हें क्या मिला ? वास्तविक पूछना कुछ तथ्य रखता है । वह निम्न प्रकार हैं, ध्यान दीजिये ! माता-पिता, गुरुजन या महत् पुरुष सद्-शिक्षाये यदि न दे तो स्वात्मानुभव प्राप्त नही हो सकता और विरागता के वगैर उसका प्रभाव नही पड सकता । न यह ज्ञात हो सकता कि मैं कौन हूँ ? मेरा कर्त्तव्य क्या है ? मैं किस मार्ग पर जा रहा हू ? और मुझे किस तरफ जाना है ? राग-विराग, आत्मा-पुद्गल, साकार-निराकार, पुण्य-पाप, गुण-अवगुण, भलाई-बुराई, दया-निर्दयता, दोष-निर्दोष आदि मे अन्तर है । यदि यह न बताया जाय तो भव्य जीवो के कल्याणमार्ग जो आत्मीक स्वाभाविक गुण आत्मा मे विद्यमान है कैसे प्राप्त हो ? इसलिये वैरागी, या कहिये भिखारी बने और चेतावनी दी । अलख जगाने का तात्पर्य यही है ।

अतिम आशय यह हैं कि जिन्हें काम, क्रोध, माया, लोभ है वह कुल का ईश (मुखिया) नही हो सकता ।

(सवैया)

पंकज-कोष में भृंग फंस्यो इक, यों करतौ मन में मनसूवा ।
होयगौ प्रात उगेंगे दिवाकर, मै उड़ि जैहों पराग लै सूवा ।।

बैनी सो बीचहि और भई, कछु हो गयौ काल कौ ख्याल अजूवा ।
आय गयंद चबाय लियौ, मन ही में रहे मन के मनसूवा ।।

(दोहा)

अलि पतंग गज मीन मृग, जरत एक ही आंच ।
तिन का कौन हवाल है, जिन के संग में पांच ।।
हिय निर्गुन नयननि सगुन, रसना नाम सुनाम ।
मनहुँ पुरट संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम ।।

भावार्थ—भगवत् नाम जपते समय, हृदय मे निराकार ब्रह्म की व्यापकता और नेत्रों मे साकार के दर्शन और जिव्हा पर सुन्दर नामोच्चारण ऐसा शोभा देता है मानो दो सोने के पर्तों की डिब्बी में हीरा रखा हो । ऐसा सुन्दर मालूम होता है । पुनः :—

हिय फाटहु फूटहु नयन, जरहु सो तन केहि काम ।
द्रवै स्रवै पुलकै नहीं, तुलसी सुमिरत नाम ।।

भावार्थ—तुलसीदास जी कहते है कि भगवान का नाम स्मरण करते हुए जिसका हृदय नम्रीभूत न हुआ, आखों मे प्रेम की अश्रुधारा न बही और शरीर रोमाचित न हुआ तो ऐसा हृदय फट जावे, नेत्र फूट जावे, शरीर जल जावे । क्योकि इनका कोई उपयोग नही हुआ । इसलिये कहा है कि —

हिय के हरि अति लघू हैं, मंदिर के अति बृद्ध ।
घरकौ जोगी जोगिया, आनगॉव कौ सिद्ध ।।
प्रतिमाये अवलोकते, हट जाता अज्ञान ।
इसीलिये सब पूजते, मान उन्है भगवान ।।
प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बहुत प्रभाव ।
जैसे रूप विलोकते, तैसे होते भाव ।।
वीरों की फोटू निरख स्वयं फड़कते अंग ।
वारांगनाओं को निरख, सुभग शील हो भंग ।।

दश धर्म-निरूपण

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव भाव हैं, सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आंकिचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं, चहुंगति दुखतें काढ़ि मुकति करतार हैं ।।

शब्द	अर्थ
(१) क्षमा—	पृथ्वी (मिट्टी) की मृदुता ।
(२) मार्दव—	मिट्टी के गुठलो से पृथक् होना ।
(३) आर्जव—	कूडा कचडा का त्याग करे, मन की सरलता ।
(४) शौच—	दिखने मे मिट्टी की स्वच्छता ।
(५) सत्य—	यथार्थ निरूपण ।
(६) सयम—	मकान के दरवाजे, खिडकी वन्द करना । इसी प्रकार से शरीर की १० इन्द्रियो पर कट्रोल करना ।
(७) तप—	(तपाना) । इंद्रिय, मन की वृत्ति को रोकना । अनशन उपवासादि द्वारा स्वर्ण मे मिश्रित धातु मैलादि की पृथकता ।
(८) त्याग—	उसी प्रकार आत्मा से विकारो का त्याग करना ।
(९) आकिञ्चन्य—	कुछ भी विजातीय पदार्थ का न रखना ।
(१०) ब्रह्मचर्य—	आत्मा मे लीन होना ।

उत्तम क्षमा —शिव जी का वाहन नन्दी है । भगवान आदिनाथ ने कल्पवृक्षो के लुप्त होने पर वैल की उपयोगिता, पशुपालनादि की क्रियाओ का उपदेश दिया था । और उसके परोपकारमय गुणो को समझाया था । इसलिये भगवान आदिनाथ का चिन्ह वृषभ है !

दुख है कि स्वतंत्र भारत मे गौ-रक्षा न हो और अकवर मुगल साम्राज्य मे गौवध बन्द हो । भारतीय शासक जो हिन्दुत्व की डीग मारते है क्या उनका पतन नही हुआ ?

(छप्पय)

अरिहु दंत तृण धर्रांहि, ताहु मारत न सबल कुइ ।
हम नित उठ तृण चर्रांहि, बैन बोर्लांहि जु दीन हुइ ॥
हिन्दुहि मधुर न देंहि, कटुक तुरकाहु न पियावंहि ।
जुपै एक हम जर्नांहि पुत्र, जगतहि मन भावहि ॥
सुन शाह अकब्बर अरज यह, गौ बिनवै जोरे करन ।
कौन चूक मोहि मारयतु, मुयहु चाम सेवत चरन ॥

उत्तम क्षमादि १० धर्म और गौ महिमा

(१) उत्तम क्षमा—भगवान आदिनाथ और ११वे रुद्र शकर जी दोनो ही भारत मे महा-

पुरुष हुए और उन्हें पहिचानने के चिन्ह और वाहन वृषभ ही हैं। जिसे बैल, नादिया, नन्दी, बुल सांड आदि और गाय को सुरभी, अंग्रेजी में काउ कहते हैं।

यह भारतवर्ष एक कृषिप्रधान देश हैं। इसका उपकारदाता यदि है तो केवल पशुओं में प्रधान गौ-वंश ही है। इसकी अनुपम उपकारमय सेवायें जो स्वार्थ रहित हैं- (१) कृषि, (२) गाडी, नाड़ी के जोतने में, (३) लादने में, (४) सवारी करने में, (५) कोल्हू में। भूख-प्यास, मारन-ताड़न, बन्धन आदि के कारण उपस्थित होने पर समताभाव और मरने पर नरपिशाच (मनुष्य) तथा पशु, पक्षी, कीड़े, मकोड़े मांस खाते हैं और खाद बनकर भी सेवा करता ही हैं।

वर्तमान में तो मांस सुखाकर और डब्बों मे भरकर बाहर भेजने का व्यापार स्वार्थियों ने बना रखा है और कहते हैं कि हम भारतीय गौ-रक्षक हिन्दू हैं।

इस मांस में चरबी भी रहती है, जो सचिक्कन पदार्थ है, जिसे वैज्ञानिकों ने विटामिन बताकर और अंग्रेजी दवाओ में मिलाकर खिलाने से बुद्धि परिवर्तित की हैं। कहा है—"जैसा खाओ अन्न, वैसा होय मन। जैसा पिओ पानी, वैसी बोलो बानी।"

इसके लीवर के मांस की थैली में गौलोचन निकलता है, जो प्राय: औषधि के ही उपयोग में आता है। प्रकृति कस्तूरी जैसी है,और वह कस्तूरी के ही भाव बिकता हैं। इसकी आँते रक्त से नदी नालो की तरह भरी रहती हैं। इन आतों की तात, रस्सी आदि बनती है। हड्डी का चूरा कर सरेस निकाल कर शेष हिस्सा का खाद बना लेते हैं। तथा हड्डी के खिलौने, दस्ते हथियारों के उपयोग में आते है। बालों की रस्सियां मुहरी आदि बनती हैं। चमड़ा आपके चरणों की रक्षा करता है तथा रस्से आदि बनते है जो मिलों के काम में आते हैं और वायसर व चामटी आदि बनती है। रक्त राक्षसीवृत्ति वाले मानवों ने इंजेक्सनादि मे उपयोग मे ला दिया है। सीग का बाजा बनता है।

ऐसे उपकारी का बदला निर्दयता पूर्वक दिया जाय। क्या यही मानवता हैं ? और क्या उस पशु मे धर्म नही ? समता भाव नहीं हैं ? यह है उत्तम क्षमा पहला धर्म।

(२) उत्तम मार्दव—पार्वती जी का बाहन सिह यह सिखाता है :-

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।

नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशंति मुखे मृगाः।

तथा- **उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः॥**

भावार्थ—उत्तम कुल, उत्तम विद्या, उत्तम बल का गर्व नही करना चाहिये और पुरुषार्थ कर मोक्षलक्ष्मी प्राप्त करना चाहिये।

(३) उत्तम आर्जव धर्म—

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम।

ये ही तेरे शत्रु है, समझो आतम राम॥

भावार्थ—हृदय मे बसी हुई कामाग्नि और विषयो के कारण मानव मायाचार, छल-कपट, क्रोधादि से अपनी स्वार्थपूर्ति करता है। स्वार्थपूर्ति का त्याग कर देना ही आर्जव धर्म है। और जो इसे धारण करता है वही नकुलीश है।

(४) सत्य धर्म—

कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
सांच—जवाहर खोल, सतवादी जग मे सुखी ॥
ऐसो बचन कहै मुख सोय, तिन को सुनि जन मोहित होय ।
मधुर मिष्ट वच्च अति सुखदाहि, सो जिन पूजों अर्घ चढ़ाहि ॥
मन मे हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सो करिये ॥
ऊचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया।
बच झूंठ सेती नरक पहुंचा, सुरग में नारद गया ॥
ईर्षा मद अविवेकता, निर्दयता धुन जान ।
बहु अनर्थ इक ही करै, चारो मौत समान ॥

भावार्थ—निर्दयतापूर्वक विवेक रहित मदान्ध होकर ईर्षा वश अपनी वाणी से जिससे दूसरो का अहित होता हो तो उसका त्याग करना ही सत्य धर्म है।

(५) शौच धर्म—

लोभ पाप में नहिं फंस्यो, लगे न मन्मथ-वाण।
क्रोधानल में नहिं तप्यो, सो नर विष्णु समान ॥
लोभ पाप कौ बाप बखानौं ॥
आशा फांस महाँ दुखदानी, सुख पावै संतोषी प्राणी ॥

भावार्थ—विषयो की आशा की फास और उसका लालच सब पापो का बाप है, जो अत्यन्त ही दारुण दुख देने वाली है। जो जीव अपने शील, जप, तप, और सतोष पूर्वक शुद्धि करते है वही सुख पाते है। जो काम-वाण से बचकर क्रोधाग्नि मे नही तपे है वह मनुष्य विष्णु के समान है। यही शौच धर्म है।

(६) सयम धर्म—

जो काय अपने हाथ राखै, चपलता मेटे सही।
परमादि टारि सुधारि थिरता, जारि अघ ले सुख मही ॥

लखि काय गुपति सु नाम याकौ, सदा आचारज करै ।
ते धीर या फल जारि कर्म सु मुकति सी रमनी बरै ।।

(पचपरमेष्ठी विधान पृ० १९)

उद्‌बोधन

आया रे बुढ़ापा मानी सुधि बुधि विसरानी ।।टेक।।
श्रवण की शक्ति घटी, चाल चलै अटपटी ।
देह लटी भूख घटी, लोचन झरत पानी ।।आया रे०।।१।।
दांतन की पंक्ति टूटी, हाड़न की संधि छूटी ।
काया कि नगरी लूटी, जात नहिं पहिचानी ।।आया रे०।।२।।
बालों ने बरन फेरा, रोग ने शरीर घेरा ।
पुत्र हू न आवै नेरा, औरों की कहा कहानी ।।आया रे०।।३।।
'भूधर' समुझि अब, स्वहित करोगे कब ।
यह गति ह्वै है जब, तब पछितैहै प्रानी ।।आया रे०।।४।।

इन्द्री और मन को वश मे कर छह काय के जीवों की रक्षा करना और सांसारिक विषय-भोग क्षणिक सुख है, आत्मा के सद्‌गुणो को चुराने वाले है, इनसे सावधान रहना और नियमो का पालन करना सयम धर्म है ।

(७) उत्तम तप—तीन अवस्था (सवैया)

बालक है तब बालक सी बुद्धि, जोवन काम हुताशने जारे ।
बृद्ध भयौ सब अंग रहे थकि, आये है सेत गये सब कारे ।।
पांय पसारि पर्यौ धरती मांहि, रोवै रटै दुख होत महां रे ।
बीती यों बात गयौ सब भूलि, तू चेतत क्यों नहिं चेतनहारे ।।

(ब्रह्मविलास पृ० १९)

(मात्रिक कवित्त)

जबलों राग द्वेष नहिं जीतत, तबलों मुकति न पावै कोई ।
जबलों क्रोध मान मन धारत, तबलों सुगति कहां ते होई ।।
जबलों माया लोभ बसै उर, तबलों सुख सुपने नहिं जोई ।
ए अरि जीत भयौ जो निर्मल, शिव—संपति विलसतु है सोई ।।

भावार्थ –कार्तिकेय स्वामी के हाथ मे त्रिशूल है, जो तीन काटो का सकेत करता है। वह मानव के लिये सत्य दर्शन, सत्य ज्ञान, सत्चारित्र धारण करने का है, जिसे वीर पुरुष ही धारण कर सकता है।

सम्यग्दर्शन का लक्षण –

तीन मूढता और आठ मद रहित तथा आठ अग सहित सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्ज्ञान का लक्षण – (दोहा)

हीन अधिक सशय रहित, सत विपरीत न जान।
यथा तथा जाने उसे, कहते सम्यकज्ञान ॥

सम्यक्चारित्र का लक्षण – (दोहा)

मोह गये समकित मिलै, समकित से सम ज्ञान।
राग द्वेष के क्षपण कौ, व्रत धारे द्रग मान ॥

स्वामी कार्तिकेय के हाथ का त्रिशूल वाह्याभ्यतर तप करने की ओर सकेत करता है।

(८) उत्तम त्याग –

दरश विशुद्धि धरै जो कोई, ताकौ आवागमन न होई।
विनय महा धारै जो प्राणी, शिव-वनिता की सखी बखानी ॥
शील सदा दृढ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमांही, ताके मोह-महातम नाही ॥

भावार्थ —जो मनुष्य अपनी दृढता के साथ आत्मा मे लीन हो जाता है, जिसके पास मोह ममत्व नही रहता, जो निरन्तर ज्ञान का ही अभ्यास करता है, जो महान विनय का धारी है, जिसका दर्श विशुद्ध है वह अवश्य ही आवागमन रहित होता है और मोक्ष–लक्ष्मी उसकी सखी कही गई है।

वीर पूजन मे कहा है—

गणधर अशनिधर चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासु धर, तिरशूलधर सेवहिं सदा ॥

इस बात की पुष्टि हमारे गणेश जी महाराज से होती है जो गणो के ईश अर्थात् परमात्मा कहे जाते है। जिनका मस्तक विशाल, कान वडे, सूड लबी, गले मे रत्नो का हार, पेट पर सर्प, बडा

पेट, वाहन चूहा, हाथ में कुल्हाडी, कमल, मोदक, लाडू एव दान मुद्रा जिसकी सकेत कर रही है।

विशाल मस्तक—विवेकपूर्ण विशेष बुद्धि का सूचक है। दो बड़े कान, और एक जीभ क्यों है ?–

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ॥

(चौपाई—१५ मात्रा)

जिन उपदेश सुनै दे कान, ताके हृदय बढ़त अति ज्ञान।
जे सुनते नहिं हित उपदेश, ते बालक दुख सहत हमेश ॥
मृदु बचनामृत मुख पर धारि, कटुक बचन कबहूँ न उचार।
पर-धन तृण समान नित जान, पर की जान अपन सम मान ॥

लघु नेत्र :—

चाम चखन से सब मती, चितवत करत न वेर।
ज्ञान-नैन से जिनमती, चितवत इतनों फेर ॥

गणेश जी की लम्बी सूड क्या सकेत करती है ? —

विश्व के सुगंधी सद्‌गुणरूप मोदक जो हाथ मे लिये हैं उनका स्वय उपभोग करना और अन्यो को भी ज्ञान–मोदक बाटना, यह महान कार्य गणधर (गणेश जी) का ही है।

गले का हार परोपकार का सूचक है :–

आभरण नर-देह का, बस एक पर उपकार है।
हार को भूषण कहै, उस बुद्धि को धिक्कार है ॥

पेट पर सर्प इस लिये है कि ससारी प्राणी दोषो—क्रोध, मान, माया, लोभ, छल, कपट से युक्त है और यही मानवता के सर्प हैं। जिन्है हजम करने का सकेत कर रहे है। अर्थात् अपने अवगुण और दूसरो के गुण देखो, यह सकेत कर रहे हैं। इसलिये पेट बडा है।

वाहन चूहा–दिन और रात रूपी दो चूहे ससारी जीवों की आयु को काट रहे हैं।

आयु कटत है रात दिन, ज्यों करोंत तें काठ।
हित अपना जल्दी करौ, पड़ा रहेगा ठाठ ॥

आचार्य कहते है कि मानव का शरीर ही ससार है। यह एक भयानक जगल है। जठराग्नि (सिह मुख है)। मन एक हाथी है; जो विषयरूप हथिनी के पीछे भागता फिरता है। जब इच्छित वस्तु प्राप्त नही होती और असमर्थ हो जाता है तो वटवृक्ष की लटकती हुई जटाओं को

पकड लेता है और उसपर चढकर कालरूपी हाथी से अपनी जान बचाता हैं। और वह कौटुम्बिक मधु-मक्खियो और नाना प्रकार के रोगादि की पीडा को सहन करता है। यह वृक्ष ससाररूपी कुए के बीच मे है और उसमे महान् भयकर अजगर मुह फाडे हुए है। जो अनादि काल से परिभ्रमण करता चला आ रहा है।

यह मानव जिस तिस प्रकार से विषयाश्रित होकर विषयरूपी मधु की बूद का रसास्वादन करता है और आयु रूपी डाल को दिन-रात रूपी दो चूहो से कटवा रहा है। और सदैव सकट मे पडा रहता हैं।

उस समय विद्याओ के धारण करने वाले सद्गुरु आदेश और उपदेश देते और समझाते हैं। कहते हैं कि यह ससार के विषय भोग अत्यत ही दुखदाई हैं। किन्तु यह ज्ञानहीन जीव सद्गुरु के बचनो का पालन नही करता और अन्तिम अवस्था अर्थात् वृद्धावस्था मे जब इसका तेज (ब्रह्मचर्य) नष्ट हो जाता है तो इस प्रकार पछताता है जिस प्रकार मक्खी शहद मे लिपट कर अपने जीवन को समाप्त कर देती है और आत्मीय सुख चैतन्य स्वरूप को भूल जाती है। इसलिये गणेश जी का वाहन चूहा सकेत कर रहा है कि अपनी आयु का सदुपयोग करो, व्यर्थ मत जाने दो।

आचार्य पुनः समझाते है कि—

हंस काग को परख को, सतगुरु दई बताय।
हंसा मोती को चुगे, काग नरक पर जाय॥
हंसा बगुला एकसा, मानसरोवर मांहि।
बगुला ढूंढ़ै माछली, हंसा मोती खांहि॥
हंसः श्वेतो, बकः श्वेतो, को भेदो बकहंसयोः।
नीरक्षीर—विभागेषु, हंसो हंसः बको बकः॥

यदि ऐसा न किया तो— (कवित्त)

सिन्धु से तात, हते विधि से सुत, सूरज सोम, सहोदर दोऊ।
रम्भा रमा जिनकी भगिनी, मघवा मधुसूदन से बहिनोई॥
तुच्छ तुषार इतौ परिवार, सुआन सहाय भयो नहिं कोई।
सूख सरोज गयौ छिन में, सम्पति मे सबकौ सब कोई॥

भावार्थ—सिंधु के पिता वरुण, ब्रह्मा जैसे पुत्र, सूर्य चन्द्रमा जैसे भाई, लक्ष्मी सरस्वती जैसी बहिन, इन्द्र और विष्णु जैसे बहनोई। इतना परिवार होने पर भी एक जरा सा तुषार लगते ही हे कमल! क्षणमात्र मे सूख गया, कोई आकर तेरा सहायक न हुआ। अरे भोले जीव! सपत्ति के अन्दर तो -

सब रिश्तेदार बन जाते है, जब पैसा पास होता है।
टूट जाता है गरीबी में, जो रिश्ता खास होता है ॥

बीज दो प्रकार के हैं, एक राग, दूसरा द्वेष :—

राग द्वेष दो बीज हैं, कर्म बंध फल देत ।
इनकी फाँसी में बंध्यो, छूट्यो नहीं अचेत ॥

चार खान

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खान ।
ज्ञान सुखों की खान है, दुःख खान अज्ञान ॥

चार बल

तन बल, धन बल, स्वजन बल, विद्या बल, बल चार ।
एक मनोबल के बिना, चारों ही बेकार ॥

अन्धे चार प्रकार

काम क्रोध मद नयन से, अन्धे चार प्रकार ।
नयन अन्ध इनमें भला, करे न पर अपकार ॥

गणेश जी के हाथ मे कुल्हाडी इसलिये हैं कि आठो कर्म काष्ठ हैं । इन्है (१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मनःपर्यय ज्ञान (५) केवलज्ञान द्वारा ही काटा जा सकता है। कुल्हाड़ी यही सूचित करती है ।

कमल :-जो हाथ मे लिये है वह लक्ष्मी का द्योतक है । अर्थात् आप इन्ही हाथो से धनोपार्जन करते है । लक्ष्मी आपके हाथ मे है, और वह पुण्यवान को ही प्राप्त होती है । वह किस प्रकार मिलती है ? सिद्ध पूजा है लिखते है कि-

काम अग्नि है मोहि, निश्चै शीलस्वभाव तुम ।

भावार्थ-हे भगवन् ! मुझे कामाग्नि सता रही है और आपका स्वभाव शीतल है । कर्म आठ होते है । उनमे प्रथम कर्म १-ज्ञानावरणी है :—

सूरत ऊपर पट पड्यो, रूप न जाने कोय ।
ज्ञानावरणी करम ते, जीव अज्ञानी होय ॥

२–दर्शनावरणी कर्म

जैसे भूपति दर्श को, होन न दे दरवान।
तैसे दर्शन आवरण, देखन दे न सुजान ॥

३–वेदनी कर्म

शहद मिली असि धार, सुख दुख जीवन को करै ।
करम वेदनी धार, साता असाता देत है ॥
पुन्नी कनक महल मे सोवै, पापी राह पड़ौ दुख रोवै ।
पुन्नी वांछित भोजन पावै, पापी मांगै टूक न पावै ॥
पुन्नी जरी जवाहर सोवै, पापी फाटे टुकड़े खोवै ।
पुन्नी कंचन थार कटोरा, पापी के कर प्याला खोरा ॥
पुन्नी गज पर चढ चालंता, पापी पग नागे धावंता ।
पुन्नी के सिर छत्र फिरावै, पापी शीश बोझ ले धावै ॥
पुन्नी हुकम जगत मे होई, पापी बात सुनै नहिं कोई।
पुन्नी भौन दर्व नित आवै, पापी धन देखन नहिं पावै ॥
पुन्नी को सब देखन जावै, पापी जन का मुंह न लखावै ।
पुन्नी कबहुं रोग नहिं पावै, पापी को नित व्याधि सतावै ॥
पुन्नी शील रूप युत नारी, पापी लहै न कानी कारी ।
पुन्नी के सुत करें कमाई, पापी तरसें हो दुखदायी ॥
पुन्नी गई वस्तु फिर आवै, पापी के कर तें गिर जावै ।
पुन्नी के षड् ऋतु सुख विलसै, पापी महा दुखी अति बिलखै ॥

पुण्य पाप दो डार, कर्म वेदनी वृक्ष के ।
सिद्ध जलावन हार, द्यानत निरवाधा करौ ॥

४–मोहनी कर्म

जैसे मदिरा पान तें, सुध बुध सर्व विलाय।
तैसे मोह कर्म उदय, जीव गहल हो जाय ॥

५–आयु कर्म

जैसे नर का पांव, दियौ काठ में थिर रहै।
तैसे आयु स्वभाव, जिय को चहुँगति थिर करै ॥

६–नाम कर्म

चित्रकार जैसे लिखै, नाना चित्र अनूप।
नाम कर्म तैसे करै, चेतन को बहुरूप ॥

७–गोत्र कर्म

ज्यों कुम्हार छोटे बड़े, भांड़े गढ़ जानेइ।
गोत्र कर्म त्यों जीव को, ऊंच नीच कुल देइ ॥

८–अंतराय कर्म

भूप दिलावै द्रव्य कों, भंडारी दे नाहिं।
होन देय नहिं संपदा, अंतराय जग माहिं ॥

गुणो का मोदक सकेत करता है कि—

गुण वाले संपति लहैं, लहैं न गुण विन कोय।
काढ़े नीर पाताल तें, जो गुनयुत घट होय ॥

दान चार प्रकार का है :-
(१) औषधि दान, (२) अभय दान, (३) आहार दान, (४) शास्त्र दान अर्थात् ज्ञानदान।

(सवैया ३१ मात्रा)

लक्ष्मी आगम का सुख अब तक, नष्ट हुआ नहिं कितनी बार।
भ्रमवश पुनि पुनि कर प्रयत्न क्यों, विफल मनोरथ होता यार ॥
समझ रहा है जिसे चपलमति, तू सुस्थिर—सुख—पारावार।
बहुत समय सो नहीं रहेगा, करत क्लेश क्यों बारम्बार ॥

(चौबोला)

आने में होती है चिन्ता, जाने में फिर भारी।
इससे साफ समझ में आता, धन आना दुखकारी ॥
यों विचार कर ज्ञानवान का, लोभ—विटप विच्छेद करें।
जिससे जगमें सब अनर्थकर, विषमय फल फिर नहीं फरें ॥

यह लक्ष्मी आते तो गर्व कराती है और जाते हुए कमर तोडती है। इसका नाम ही दो–लत है। दो लत से तात्पर्य दो आदत से है। इसलिये --

दान औषधि पुण्य यश कर, बचे वृष धन प्राण है।
जग में शिरोमणि है वही, जो देत जीवन दान है।।

त्याग उचित ढग पर करे, और पात्र को दान दे, कुपात्र को नही।

(चौपाई १५ मात्रा)

दूषण तज गुण भूषण धार, कूर भाव मन का परिहार।
झूठ वचन कबहूँ मत भास, सांच बचन पर बढ़ती शाख।।

९–आकिंचन्य धर्म

पार्वती जी अपने बाँये हाथ मे आरसी (दर्पण) द्वारा सकेत करती है कि परिग्रह एक चिन्ता है। जिस प्रकार शरीर मे एक फास दुख का कारण बन जाती है उसी प्रकार से सासारिक भोगोपभोग सामग्री, स्त्री, पुत्र, पौत्रादिक भी मोह, माया, कलह आदि के कारण बन कर आत्मा को मलिन बनाते है और नाश के कारण बन जाते है। अतएव सर्वथा त्याग कर दिगम्बर मुनिराज बन कर कर्म-निर्जरा कर आत्मशुद्धि कर मोक्ष प्राप्त करते है। महादेव जी दिगम्बर क्यो है ? इसलिये कि उन्होने त्याग किया है। सही मायने मे महादेव का अर्थ यही है।

१०--ब्रह्मचर्य धर्म

बड़ी नीति लघु नीति करत है, वायु सरत बदवोय भरी।
फोड़ा आदि फुनगुनी मंडित, सकल देह मनु रोग दरी।।
शोणित हाड़ माँस मय मूरति, तापर रीझत घरी घरी।
ऐसी नारि निरख कर केशव, 'रसिकप्रिया' यह कहा करी।।

इस प्रकार के घृणायुक्त शरीर से हस (चेतन) निकल जाने के बाद कोई प्रेम नही करता। पशुओ के शरीर का तो उपयोग होता भी है, किन्तु यह किसी भी प्रकार से उपकार मे नही आता।

पशु की तो पनही बने, नर को कछू न होय।
नर जो कछु करनी करे, तो नर नारायण होय।।

इसलिये कहा है कि --

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान।।

इसलिये :—

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनों, माता बहिन सुता पहिचानों ।
सहैं बान बर्षा बहु सूरे, टिकें न नैन बान लखि कूरे ।।
कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करै ।
बहु मृतक सड़ींहि मसान मांहीं, काक ज्यों चौंचें भरै ।।
संसार में विष—वेल—नारी, तज गये योगीश्वरा ।
द्यानत धरम दश पैड़ चढ़िके, शिव-महल में पग धरा ।।

यौवन था जब रूप था, गाहक थे सब कोय ।
यौवन रतन गमाय के, बात न पूछै कोय ।।
विषय भोग जग में जिते, है सब दुख की खान ।
इनमें फंस कर हंस तुम, भूल गये भगवान ।।

नारीजघन—रन्ध्रस्थ, विण्मूत्रमयचर्मणा ।
वराह् इव विड्भक्षी, हन्त मूढ़ा सुखायते ।।

(सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित-सम शीतल सुरभि ।
भव—आताप निवार, दश लक्षण पूजों सदा ।।

भावार्थ :—हेमाचल से अर्थ है हिमालय पर्वत से, जो भारतवर्ष का मस्तक हैं, जो सुन्दर और शीतल है । इसी प्रकार से मानव के शरीर का सिर यदि शीतल नही तो जब संसारियो का चित्त चंचल हो जाता है तो मुनियों का किस प्रकार स्थिर रह सकता है ?

भव आताप से अर्थ है कि गार्हस्थ जोवन की झझट अर्थात् साँसारिक विषय भोगादि जब तक पृथक् नहीं किये जाते आत्मीक सुख प्राप्त नही हो सकता । यह दश लक्षण धर्म मे ऊपर कहे जा चुके हैं ।

साँसारिक चिन्ताओ (शंकाओं) का स्थान मस्तक है । जितनी जटाये उतनी शंकाये । जब तक शंकाये समाधान नही होती मुनियो के चित्त को शांति नही मिलती । इस पर स्वामी कार्तिकेय शिवजी से कहते हैं कि माता पार्वती जी क्रोधित होती है कि ऐसी गगा को जटाओं से त्याग दो जिससे दूसरो का अहित होता है ! यथा :—

अम्बा कुप्यति तात मूर्ध्नि विहिता, गंगेयमुत्सृज्यताम् ।

तब शकर जी उत्तर देते हैं .—

विद्वन् षड्मुख संततं मयि रता, तस्या गतिः का वद ?

भावार्थ :—हे विद्वानो के शिरोमणि षडानन ! मुझ मे निरन्तर तल्लीन रहने वाली गंगा की क्या गति होगी ?

पुन· स्वामी कार्तिकेय क्रोधित होकर शकर जी को उत्तर देते हैं ·—

कोपाटोपवशात् विवृत्तावदनः प्रत्युत्तरं दत्तावान् ।

भावार्थ ·—स्वामी कार्तिकेय के छह मुख थे, सो उन्होने एक एक मुख से एक एक समुद्र का नाम लेकर कहा कि .—

(१) अम्बोधि ; (२) जलधि , (३) पयोधि , (४) उदधि , (५) वारिनिधि·, (६) वारिधिः, इन छह समुद्रो मे डुबाओ । ठीक ही है :-

सांची तो गंगा यह वीतराग वाणी ।
अविच्छिन्न धारा निज धर्म की कहानी ॥सांची०॥
जामें अति ही विमल अगाध ज्ञान-पानी ।
जहां नही संशयादि पंक की निशानी ।।सांची॥१॥
सप्तभंग जहां तरंग उछलत सुखदानी ।
संत-चित मराल-वृंद रमें नित ज्ञानी ॥साँची०॥२॥
जाके अवगाहन तें शुद्ध होय प्रानी ।
भागचन्द निहचै घट माँहि या प्रमानी ॥साची॥३॥

सप्तभग वाणी (दोहा)

बन्दों श्री जिन देव को, बन्दों सिद्ध महंत ।
बन्दों केवलज्ञान जो, लोक अलोक लिखंत ॥१॥
सप्तभंग वाणी कहूँ, जिन आगम अनुसार ।
जाके समुझत समझिये, नीके भेद विचार ॥२॥

(चौपाई)

अस्ति नास्ति गुण लक्षणवन्त। प्रथम दरव यह भेद धरंत ॥
ये गुण सिद्ध करन के काज । सप्तभंग भाखे मुनिराज ॥३॥

प्रथम द्रव्य अस्ति नय एह । नास्ति कहै दूजी नय जेह ॥
तीजी अस्तिनास्ति सु निहार । चौथी अवक्तव्य नय धार ॥४॥
पंचमि अस्ति अवक्तव्य कही । छट्ठी नास्ति अवक्तव्य लही ॥
सप्तमि अस्तिनास्ति अवक्तव्य । इनके भेद कहूं कछु अब्ब ॥५॥
अस्ति दरब कौ मूल स्वभाव । नास्ति परणमन निपट निनाव ॥
अथवा और दरब सो नाँहि । ताहि उपेक्षा नाम कहाँहि ॥६॥
अस्ति नास्ति गुण एकहि माँहि । बहु गुण द्रव लक्षण ठहराँहि ॥
अस्ति नास्ति बिन दर्व न होय । नय साधे तें भ्रम नहिं कोय ॥७॥
द्रव्य गुण वचननि कह्यो न जाय । बचन अगोचर वस्तु स्वभाव ॥
जो कहुं एक आस्तिता सही । तौ दूजी नय लागे नहीं ॥८॥
जो कहुँ नास्तिक गुण दोउ माँहि । तो अस्तिकता कैसे नाँहि ॥
अस्ति नास्ति दोउ एकहि बेर । कही न जाय बचन कौ फेर ॥९॥
दुहू को एक विचार न होय । इक आगे इक पीछे जोय ॥
कोउ गुण आगे पीछे नाँहि । दोउ गुण एक समय के माँहि ॥१०॥
तातें वचन अगोचर दर्व । सातों नय भाखी ए सर्व ॥
नय समुझे तें वस्तु प्रमान । नय समझे जिय सम्यक्वान ॥११॥
नय नहिं लखै मिथ्याती जीव । तातें भ्रामक रहै सदीव ॥
'भैया' जे नय जानहिं भेद । तिनके मिटहि सकल भ्रम खेद ॥१२॥

(ब्रह्मविलास)

(सोरठा)

अमल अखंडित सार, तंदुल चन्द्र समान शुभ ।
भव—आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ॥

भावार्थ :—मैल रहित, अखंडित, श्वेत चन्दा का उदय संसार की गर्मी को शान्त करता है, पश्चात् :–

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा ।
भव-आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ॥

भावार्थ .—तीनो लोक और दशो दिशाओ मे श्रेष्ठ दश लक्षणयुक्त चन्दन मे केशर घिसकर त्रिकुन्ड शिवजी ने इस हेतु लगाया कि मैं केवल तीन गुण (१) रजो गुण-ब्रह्मा, (२) तमो-गुण–शिव, (३) सतोगुण—विष्णु सयुक्त हूँ।

श्री पार्वती जी अपने ज्ञान-दर्पण द्वारा सबोधित करती है कि देखो तुम्हारे बाये हाथ मे एक फण का सर्प है और दूसरे हाथ मे तीन फण का सर्प है, वह तीनो योगो को अर्थात् विवेकपूर्ण आगा-पीछा विचार कर मन से, वचन से, और काय से—इन तीनो योगो से जो कार्य किया जायगा, एकागी कुछ भी न कर सकेगा। यही तुम्हारे हाथ मे जो दाहिना हाथ जाँघ पर कलश लिए है वह अमृत का सूचक है। जो इस ज्ञानामृत को पियेगा वह अमर हो जायगा।

नारी के नाम और उनके अर्थ

(१) आर्या:—नारी दो हजार वर्ष पूर्व आर्या कहलाती थी, क्योकि इस भरत क्षेत्र के ६ भाग हैं, जिनमे ५ म्लेक्ष खण्ड और एक आर्य खण्ड। आर्य खण्ड मे रहने से आर्य पुरुष को, आर्या स्त्री को कहते थे। भूमि पर चलने से भूमिगोचरी और युगलिया अर्थात् दो बालक नर-मादा साथ जन्म लेने से भोगभूमिया कहे जाते थे।

(२) पतिव्रता .—सात्विकवृत्ति से अपने विवाहित पति के साथ मन से, वचन से और काया से धर्म पालन कर जीवनयात्रा समाप्त करती थी, इसलिए पतिव्रता कही जाती थी।

(३) साध्वी :—पारिवारिक अनेक कष्ट सहने के कारण साध्वी कही जाती थी।

(४) पति-वत्नी या एकपत्नी .—नारी एक ही पति पर अपना शीलव्रत पालने से एकपत्नी कही जाती थी।

(५) मनस्विनी ·—वीर पुरुष की तरह प्रतिज्ञा कर घोर विपत्तियो का सामना कर विजय प्राप्त करने से मनस्विनी कही जाती थी।

(६) सती :—जीवन पर्यंत अन्य पुरुष को शरीर से हाथ न लगाने देने से और सिंहनी के समान शीलभग की दशा मे आत्मसमर्पण कर देने से सती कही जाती थी।

(७) चण्डी .—शीलभग या राजकीय, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, मानसिक, शारीरिक, आपत्तियाँ आने पर आततायियो के प्राण लेकर या अपने प्राण देकर रक्षा करने के कारण चण्डी कहलाती थी।

(८) **रमणी** :—अपरिचित वंश की कन्या दूसरे कुल में जाकर अपने अनुकूल उस को बनाले और उसमें लवलीन हो जावे तथा जो रतिक्रियाओं में निपुण हो उसे रमणी कहते हैं ।

(९) **कुल्या** :—दोनों कुल पीहर और ससुराल की मर्यादा रखने से कुल्या कही जाती थीं ।

(१०) **गृहिणी** :—जो गृहकार्यकुशल अपने मकान, वस्त्र, बालक और परिवार को स्वयं स्वच्छ रखते हुए रखे वह गृहिणी कहलाती है ।

(११) **लक्ष्मी** :—जो अपने बुद्धिबल से काम लेवे, परिवार एव इतर लोगो मे सम्मान प्राप्त कर लेवे, समस्त कार्यो को सफल बनाने मे कम खर्च करे आमदनी से और आपत्तियो के लिए जिसमें धन संग्रह की चातुर्यता हो, व्यवहारकुशल हो वह लक्ष्मी है ।

(१२) **जननी** :—जो जन्म देने के साथ साथ बालक को सुयोग्य बनाकर अपनी कूख को यशस्वी बना लेवे । यो तो कीड़े मकोड़े जन्म लेते और मरते रहते हैं । कहा है—

जननी जने तो भक्त जन, या दाता या शूर ।
नहीं तो रहना बाँझ ही; वृथा गंवा मत नूर ।।

इत्यादि गुण और अवगुण के अनुसार स्त्रियों के यह नाम हैं ।

नारीत्व : अष्टभुजी दुर्गा

आज हमे यह देखना आवश्यक है कि पूर्व और वर्तमान भारतीय नारियो मे जलवायु, शिक्षा-दीक्षा, रणकौशल, चातुर्य, शील, व्यवहारकुशलता, धार्मिक अभिरुचि, त्याग, विवेक और सत्यनिष्ठा का कितना अन्तर पाया जाता है। इन द्वादश भावो को धार्मिक, सामाजिक, सास्कृतिक दृष्टिकोण से देखना है। विषय-भोगो को विषधर किस प्रकार से बतलाया है। यह सब मार्गदर्शन कराकर वे मोक्षमार्गप्रदर्शक बनी थी और अपनी शक्ति का परिचय देकर, महानता का परिचय दिया था। जिससे हमारे चरित्र, ज्ञान, दान, गुण, शील, तप, विद्या, धर्म पर क्या प्रभाव पडता है ? जिस मानव ने इन पर ध्यान नही दिया वह ससार मे बिना सीग-पूछ के पशु के समान भ्रमण करता है।

अब देखना यह भी आवश्यक है कि 'अह ब्रह्मास्मि', 'अह विष्णु:' और 'शिवो ऽह', पूर्व विद्वानो ने शास्त्रो मे क्यो लिखा ? और इसका क्या अर्थ है ? इसका इस मानव-जीवन से क्या संबध है ? हम यहा केवल यह बताना चाहते हैं कि भगवान शंकरजी की पत्नी माता पार्वती जी के जीवन से कौन सी अलौकिक शिक्षा प्राप्त करे ? जो उन्ही के प्रताप का सूर्य अष्ट-भुजी दुर्गा के नाम से प्रख्यात है।

अष्टभुजी दुर्गा

वर्तमान मे इस अष्टभुजी दुर्गा की पूजन नवरात्रियो मे करते हैं। उन्ही की प्राय सभी स्थानो पर प्राचीन शिल्पकला की पाषाणोत्कीरित मूर्तिया मिलती हैं। उनसे कई गुनो सुन्दर कला मे चित्रकारो ने अनेक रगो से सजाकर, चित्र प्रकाशन मे लाकर अपनी कला का परिचय दिया है। किन्तु यह ज्ञात न हो सका कि इनसे हमे कौनसा अद्भुत ज्ञान मिलता है, जिसे ग्रहण करना चाहिये और कौनसी वस्तु हमे त्याग करना चाहिये ?

पूर्व कलाकारो ने पाषाण मे अपनी कला की दक्षता बतलाई है और कवियो ने अपनी बुद्धि की विशेषता साहित्यिक काव्य-कला मे। किन्तु इसकी आवश्यकता की सूझ बूझ और प्रचार के सकेत शास्त्रो मे क्रमबद्ध नही पाये जाते हैं, छिन्न भिन्न दशा मे क्वचित्, क्वचित् मिलता है। और न पुरातत्ववेत्ताओ ने ही इस सम्बन्ध मे क्रमबद्ध लिखा है।

इस जीव की दो स्त्रियां हैं। एक सुमत, जिसे हम पार्वती के नाम से संकेत करते हैं और दूसरी है कुमत, जिसे हम महिषासुरी या वाराही के नाम से पुकारते हैं। और यह जीव की भावना में शकर हैं। सुमत के द्वारा कुमत का बध होता है।

मानव-शरीर पांच तत्व का पुतला है। इन पाँचों तत्वों के पुतले का पिंड अवतार के रूप में अपने सद्गुणों द्वारा भगवान के रूप में पूजा जाने लगा है और दुर्गुणों के द्वारा निन्दा की गई है। गुण और अवगुण क्या है, जिन अंगों को भुजाओं के रूप मे आचार्यो ने उल्लेख किया है।

यहाँ आचार्य कहते है —

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावै धीमान ॥

इस काव्य में चार बाते स्पष्ट की हैं। वह है मानव शरीर को रथ बताया है, आत्मा को चालक, इन्द्रियों को घोडा और घोड़ा पर सवारी करने वाले को बुद्धिमान।

आचार्य भद्रबाहु और नवग्रह विधान।

इसी प्रकार ठीक दुर्गा की आठ भुजाओं की साकारता आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने अपने हस्तलिखित ग्रन्थ नवग्रह विधान के मंगलाचरण में कही है।

(दोहा)

इस ही जम्बूद्वीप में, रवि शशि मिथुन प्रमान।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिषचक्र प्रमान ॥
तिनही के अनुसार सों, कर्मचक्र की चाल।
सुख दुख जानें जीव कों, जिन बच नेत्र विशाल ॥
ज्ञान प्रश्न व्याकरण में, प्रश्न अंग हैं आठ।
भद्रबाहु मुख-जनित जो, सुनत कियो मुख पाठ ॥

(१) हम यहा आठ भुजाओ का वर्णन अवस्थानुसार करते है। इसलिए कि मुरेना जिला परगना अम्बाह के ककन मठ सोनिया (सुहानियाँ) जहा पर जैन मन्दिर और शिवालय दोनो ही एक साथ विद्यमान है। तथा.—

(२) खजुराहा छतरपुर के निकट मध्यप्रदेश में ही विद्यमान है। यहा पर भी जैन मंदिर व शिवालय साथ ही साथ बने है।

(३) अजन्ता और एलोरा दक्षिण में विद्यमान हैं। यहां पर भी यही बात है कि जैन मूर्तिया और शिव जी का संबंध बतलाया है।

हम ऊपर बता ही चुके है कि जब तक बुराईयो को सामने नही रखते उस समय तक अच्छाई का पता नही लगता और जब तक अच्छाई को सामने नही रखते तो बुराई का। यह मापने अर्थात् तौलने का यत्र है। इसीलिए पूर्वाचार्यों ने साथ साथ रखकर मार्गदर्शन कराया है। यह उनकी विशेष प्रखर विद्वता का उदाहरण प्रत्येक मानव समाज के लिए कल्याणकारी है।

अष्ट-भुजायें

प्रथम (१) .—हाथ मे नाग-पाश क्यो है ?

उत्तर .—इसलिए कि बाल्यकाल जो कि रत्नो का समय है अर्थात् विद्या एक रत्न है जिसे खेल कूद मे खो देता है और जब यौवनावस्था आती है तो अपने वस्तु के स्वभाव धर्म को भूल जाता है और अर्थ तथा काम की ओर इसकी दृष्टि जाती हैं। कामान्धी अवस्था एक आसुरी अवस्था है। इसे नारी कामरूप नागपाश मे बाधकर कमल (मृत्यु समय) को आव्हान करती है। उसे अपनी शक्ति के द्वारा सासारिक खेल खिला खिला कर मारती है।

बैरी मारे दाव दे, ये मारे हस खेल ॥

यह नाग-पाश जिसे वैवाहिक बन्धन कहते है, बाँधा जाता है। नारी मे ९ ग्रह, १२ राशि, १० अवतार है। देखिये देवी भागवत —

गणेश ग्रह नक्षत्र, योगिनी राशिरूपिणीं।
देवी मंत्रमयी नौमि, मात्रिका रूपिणीं ॥

देखिये रुद्राष्टाध्यायी :—

चन्द्रमा मनसो जातः, चक्षोः सूर्यो अजायते।
श्रोतास्तथा मुखादग्नि—रजायत ॥

(२) द्वितीय —हाथ मे चक्र क्यो लिए है ?

उत्तर —आप यह भली प्रकार से जानते ही है कि नारी के हाथो मे चूडियाँ हैं, यह वही चक्र है जिसे ससार का चक्र कहते है। यह ससार समुद्र के नाम से भी वर्णित हैं। जब इसका मथन होता है तो इसमे से रत्न पैदा होते है। वह नर और नारी के रूप मे विद्यमान है। नारी को रत्न क्यो कहा ? इसमे कितने रत्न है ? आपको दूसरी अवस्था में दिखायेगे। नारी ससार की रचियता है। स्वार्थी, आलसी, विषयलोलुपी, भोगो मे आसक्त, भोगो मे आनन्द मानता है, उसमे ही सुखी समझता हैं और वियोगावस्था मे दुख।

(३) तृतीय--हाथ मे पुष्प किन्तु दोनो सिरो पर काँटे क्यो है ?

उत्तर.—नारी एक गुलाब के पुष्प की भाँति है। इस वृक्ष में काटे होते है। काटो मे मानव

उलझ जाता है तो दु.ख का आभास मानता है और इसके भोगों में सुख । अर्थात् यह सुख और दु.ख की दाता है। कहा है:—

फूल शूल दोनों ही जग के, उपवन में ही दिखलाते ।
किन्तु फूल के लेने हारे, नहीं शूल से दहलाते ॥

(४)चतुर्थ—हाथ मे शंख क्यो है ?

उत्तर—जिस प्रकार शख में से मधुर स्वर निकलता है उसी प्रकार से नारी के मुख से भी संगीतात्मक मधुर स्वर राग और विराग दोनों ही प्रकार के निकलते है। राग में हर्ष और विषाद मे विलाप का संकेत करती है।

(५) पंचम :—हाथ मे घन्टी क्यों है ?

उत्तर :—श्री कवि दौलतराम जी ने छहढाला में कहा है :-

पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तें मैली ।
नव द्वार बहें घिनकारी, अस देह करे किम यारी ॥
जो योगन की चपलाई, तातें ह्वै आस्रव भाई ।
आस्रव दुख-कार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हें निरवेरे ॥

यह पाँचवा हाथ इस बात का बोध कराता है कि इस शरीर में पांच काय के जीव रहते है जिन्हे पाँच तत्व भी कहते हैं। वह जल, अग्नि, वायु, वनस्पति और पृथ्वी क्रमशः हैं। यह शरीर सोने का महल है, नेत्र इसकी खिडकी हैं, जीवात्मा इसका राजा है, जो इस पर शासन करता है।

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण ।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥

इस शरीर रूपी महल में वही आनन्द मिलता है जैसा कि राजमहल मे ।

राज-महल

क्या देते आप किराया, इस मकान आलीशान का ।
पांच तत्व का ईट गिलाया, कारीगर ने खूब बनाया ॥
कर पाये नीचे लगवा कर, ऊपर महल चिनाया ।
रंगमहल के दश दर्वाजे, खिड़की कलश कंगूरा साजे ॥

सब से आला निकाला जीना, खुशबूदार बनाया ।
इकदर शब्द समद में जीना, इकदर होता खाना पीना ॥
जगह अलहृदा पर पाखाना, मोरी में नल लगवाया ।
अब तक बहुत दिनों तक टाली, करना होगा मकान खाली ॥
मालिक है सच राया, क्या देते आप किराया ।

इस प्रकार से यह पाचवा हाथ कालसूचक है, जागृत करता है कि :—

बिषय भोग जग में जिते, है सब दुख की खान।
इन में फंस कर हंस तुम, भूल गये भगवान ॥

(६) छठवा :—हाथ मे त्रिशूल क्यों है ?

उत्तर :—पूर्वाचार्यो ने बडी शोध बीन के उपरान्त त्रिशूल हाथ मे सकेत के लिये इस हेतु बतलाया है कि विषयी कामान्धी विषयो के रसास्वादन मे आनन्द मानता है। किन्तु 'शरीर व्याधिमन्दिरं' विषय एक रोग है, विषय एक विकार भावो का उत्पादक, बाणी तथा शस्त्र से, अपमान और घातक प्रहार करता है। विषय लोलुपियो को कालरूपीसिंह द्वारा मनरूपी मतग हाथी का स्वच्छन्दता मे (इच्छानिरोध तप.) कुत्सित भावनाओ को न रोकने पर विनाश कराता है। बैरी दाव देकर मारता है और नारी हस खेल कर मारती है। मन, वचन, काय, यह तीनो ही शूल अर्थात् काटे हैं, जिन्हे त्रिशूल से सकेत किया है।

हिन्दू धर्म के पुराणो मे दश अवतार निम्नाकित माने गये हैं.—

दो जलचर, दो वनचर, दो द्विज, दो भूपाल ।
इक मौनी, अरु अश्व पुनि, तुम पर सदा दयाल ॥

मन मछली के मानिन्द चिकना और चचल होने से	मच्छ	(१)	अवतार
मन की कठोरता और उसके सकुचन होने से	कच्छ	(२)	अवतार
मन की लोलुपता होने से	बाराह	(३)	अवतार
मन की विरागता होने से	नरसिंह	(४)	अवतार
मन मे वस्तुओ की याचना होने से	बामन	(५)	अवतार
अन्धकारमय विषय-विकार को नष्ट करने हेतु ज्ञान के फरसा से	परसराम	(६)	अवतार
धर्म की ग्लानि दूर करने के हेतु	कृष्ण	(७)	अवतार
मन मे परिणामो की विशुद्धता एव विषयो का त्याग होने से	राम	(८)	अवतार

मन की पवित्रता, परिणामों की विशुद्धता, विशेष
बुद्धिबल द्वारा स्व एवं पर का बोध और ज्ञानामृत को
लोक के कल्याणमार्ग में लगाने से बुद्ध (९) अवतार

इन्द्रियां घोड़े हैं। सयम की लगाम हाथ मे न रखने
से कलंक लगता ही है, इसलिए कलंकी (१०) अवतार

घोड़े पर सवार सकेत किया है। इसीप्रकार से नारी में ९ ग्रह, १२ राशि, ६४ योगिनी, २८ नक्षत्रादि जो मानव मे विद्यमान हैं, चित्राकित यथास्थान लेखबद्ध किया जा रहा है।

(७) सप्तम :—हाथ में तलवार का प्रहार क्यों बताया गया है ?

उत्तर :—प्रिय विद्वज्जन ! जिस शासक के हाथ में विवेकपूर्ण ज्ञान की तलवार है वही शासन कर सकता हैं। अन्धे ४ प्रकार के हैं :—

जन्मअन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।
स्वार्थअन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

एक शायर ने कहा है :—

बेशाख्ता, बुल-बुल चहक उठी, पूछा गुलिस्तां वालों से,
बर्बाद गुलिस्तॉ करने को, बस एक ही उल्लू काफी है।
हर शाख पै उल्लू बैठा है, अंजाम गुलिस्ताँ क्या होगा ॥

भावार्थ :-बेशाख्ता का अर्थ अचानक; बुल-बुल का अर्थ आत्मा से है। जो आज प्रत्येक आत्माये भीषण संकटकालीन स्थिति अर्थात् स्वार्थमय भावनाओ से त्रसित हैं चिल्ला रही हैं, चारो ओर हाहाकार मचा हुआ है। गुलिस्ताँ का अर्थ बगीचे से है। प्रत्येक मानव का शरीर बगीचा है, उसमें निवास करने वाली आत्माये; आत्माओं से पूछ रही हैं कि इस बगीचे को नष्ट करने के लिये जब स्वार्थमय एक ही उल्लू काफी है, जहां सर्वांग शरीर पर, प्रत्येक शाखाओं पर जो दशो इन्द्रियाँ है विषयो के स्वार्थमय उल्लू बैठे हो वहां इस बगीचे की क्या दशा होगी ?

पूर्ववर्ती और आधुनिक वीराँगनाओं का अन्तर देखिये:-

लालच और तलवार के भय से, सिया न हिम्मत हारीं।
थोड़े भय से धर्म गमावें, हाय आज कल नारी ॥

(८) अष्टम:—बाँये हाथ मे ढाल क्यों है ?

उत्तर:—यह बाँया हाथ दाहिने से कहता है—

दान मान सम्मान में, सदा रहेउ अगवान।
अब क्यों पीछे जात है, लगत दशानन बाण ॥

उत्तर— **रामचन्द्र के श्रवण तें, पूछन चाह्यों बात ।**
एक एक मस्तक हनूं, या हनूं एक ही साथ ।।

भाव यह हैं कि ढाल रक्षक शस्त्र है । इसी प्रकार से माता पुत्र की रक्षक, पृथ्वी जीवो की रक्षक, लक्ष्मी स्वास्थ्य की रक्षक है । अब देखना यह है कि भारतीय सस्कृति मे इन तीनो को माया क्यो कहा हैं । और इस माया के अवस्थानुसार नाम भी गुण एवं दोष के पृथक् २ उल्लेख किये है । उन नामो मे क्षमा नाम भी हैं । यह बिना किसी भेद भाव के हमारे प्रत्येक अपराधो को सदैव क्षमा करती है, इसलिये क्षमा की ढाल बतलाई है । वह हमारे दोषो पर क्षमता की ढाल से क्षमा करती है ।

(९) नवम .—प्राय दुर्गा जी के मस्तक पर तृतीय नेत्र क्यो बताया है ?

उत्तर —इस प्रकार से है कि, तृतीय नेत्र ज्ञान का है । जो वस्तु चर्मचक्षु से नही जानी जा सकती उसे बुद्धिमान ज्ञानचक्षु से ही अनुभव कर सकते हैं ।

(१०) दशम —यह है कि दुर्गा का वाहन सिंह क्यो है ?

उत्तर —है कि सिंह पुरुषार्थ करना सिखाता है। पुरुषार्थ ४ प्रकार का है। इसकी साकार मूर्ति हमे गुप्त काल की मिली है । सिंह काल का प्रतीक है ।

सिंह—पुरुषार्थ का भी प्रतीक हैं । पुरुषार्थ ४ प्रकार का है धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष । दुर्गा एक शक्ति है, जो माया के रूप मे है । माया ३ प्रकार की है —

धरा, कनक अरु कामिनी, ये है कडुवी बेल ।
बैरी मारे दावदे, ये मारे हँस खेल ।।

तीनो का योग शक्ति पर निर्भर है, जो देवी के रूप मे पूजी जाती है ।

(११) ग्यारह.—दुर्गा–महिषासुर को त्रिसूल क्यो मार रही है ?

उत्तर.—मानव की कामाधता का समय यौवनावस्था है । इस यौवनावस्था मे पदार्पण करते ही मानव काम की पीडा को पूरी करने की अभिलाषा से नारी के पैरो मे जो बतलाया है जिसे दुर्गा त्रिशूल मार रही है वह मन–वचन–काय का वाण है । जो कि उनकी वीरता का द्योतक है।

कच्छप अवतार

नारी मे १४ रत्न

वर्तमान की शिक्षा दीक्षा मानवीय मनोविज्ञान और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भिन्न है। मानवजीवन कल्याणकारी एव सत्पथप्रदर्शक है । इसकी महिमा पूर्व आचार्यो ने वेदो और ग्रन्थों मे वर्णन की है ।

आचार्यो और कवियों ने गाथाओं में और छन्द, सवैया, सोरठा, दोहा आदि में और कलाकारों ने अपनी कलाओ में मूर्तिरूपी प्रतीकात्मक वस्तु बनाकर खडी कर दी है। जिसे समझना और दूसरों के गले उतार देना साधारण सी बात नही और न आज तक किसी का ध्यान ही इस ओर गया हैं। अब आप कृपया इस चित्र पर और उसकी व्याख्या पर ध्यान दीजिए।

(१) समुद्र मंथन :– समुद्र क्यो बताया और वह कहां है जिसे देव और दानवों ने मथन किया था। वह समुद्र हमारा शरीर है। जीवन में आपत्ति और विपत्तियों के उतार चढाव होते हैं। और मगर मच्छो की भाति रोगों ने अपना घर बना रखा है, रोग अथाह है। और दूसरा है मन यह भी संकल्प और विकल्पो के ज्वार–भाटों से खाली नही है। देहधारियों को रोग, शोक, भोग, विलास और पारिवारिक विपत्तियाँ समुद्र में लहरो की भाति आती रहती हैं। इस कारण यह समुद्र है।

(२) मच्छावतार :– मन जिस प्रकार से चंचल हैं, उसी प्रकार से मीन (मछली) भी जो तूफानों मे निःसंदेह तीव्रगति से आगे बढ जाती है। उसी तरह से विरागी पुरुष भी संसार रूपी समुद्र से इस दरयाव में कूद कर पार हो जाते हैं। वही कर्म–निर्जरा कर मोक्ष प्राप्त कर विश्व के प्रागण में तीर्थंकर और अवतारी महापुरुषों में नामांकित होते हैं। वही मच्छावतार हैं।

(३) कच्छावतार :– विषयासक्त पुरुष तेजस्वी तथा प्रतिभाशाली होते हुए भी विषयों के कारण सासारिक भोगोपभोगादि विपत्तियों को अपने आप बुलाता है, वह है कुसंगति। इसकारण से वह अपने ज्ञान का सदुपयोग नही कर पाता है, कछुवे की भाँति। जिस प्रकार से कछवा अपने हाथ पैर और सिर को शरीर में छिपा लेता है वैसे ही ज्ञानी पुरुष आत्मीय ज्ञान के द्वारा ब्रह्म मे समा जाता है। यह है कच्छावतार। कच्छावतारी मनुष्य व्यवहार में नारी को रत्न मानता हैं। किन्तु उस नारी मे किस प्रकार से रत्न छिपे है यह नहीं जानता। उसका स्पष्टी–करण यहा करते हैं। वेदों में कहे गये १४ रत्न निम्न प्रकार हैं :–

श्री मणि रम्भा वारुणी, अमिय शंख गजराज।
कल्पद्रुम, शशि धेनु धनु, धन्वंतरि विष वाजि ॥

श्री—नारी गृहलक्ष्मी होने से श्री हैं। मणि—नारी मे शील रूपी आभूषण मणि है।

रम्भाः—आप अपरिचित स्थान से अपरिचित व्यक्ति की पुत्री का पाणिग्रहण अपने पुत्र के साथ करते हैं। वह आपके यहाँ आकर रम जाती है और समस्त परिवार की लाड़ली होकर सभी को प्यारी लगती है अर्थात् भा जाती है। वह रम्भा–रम्भा कहलाती हैं। रम्भा नाम अप्सरा का हैं। आप उस देवी को अप्सरा बनाकर अपने घर में लाते हैं। और वह शैय्या पर वेश्या, कार्य करने में दासी, भोजन के समय माता, और आपत्तिकाल में घर की मन्त्री है। कहा भी है—

कार्ये दासी रत्तौ वेश्या, भोजने जननीसमा।
आपत्तौ बुद्धिदात्री च, स भार्या भुवि दुर्लभा ॥

वारुणी —आप यह भली प्रकार से जानते ही है कि नवयुवक इतने व्यसनी हो गये है कि:—

सास तीरथ, ससुर तीरथ, और तीरथ सारा सारी ।
महतारी बाप गिरें कुआ में, बड़ो तीरथ घरवारी ॥

उन्हे सिवाय कामिनी के दूसरा कुछ नही सूझता। विषय-वासनाओं की पूर्ति स्त्री से होती है। इसका दूसरा नाम अबला है। यदि अ निकाल दिया जाय तो यह बला रह जाती है। यह घर और बाहर सभी जगह अपना करिश्मा दिखाती है। यह एक प्रकार की मदिरा अर्थात् शराब है।

अमिय —यह अमृत इस लिये है कि जिस प्रकार से अमृत फल (आम) का बार बार रसास्वादन करते है उसी प्रकार से नारी का रसास्वादन करते है। इसलिये यह अमृत के समान होने से अमृत है।

शख —शख का भावार्थ मूर्ख से है। यह सुख मे गीत गाती है और दुख मे विलाप करती है। अपने विवेकपूर्ण ज्ञान को खो देती है। लक्ष्मी का वाहन उल्लू इसलिये है कि जो इस नारी के चक्कर मे फस जाता है वह नारी अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये उल्लू बना लेती है। इसलिये आचार्यों ने इसे मूढा भी कहा है।

गजराज —नारी गजगामिनी क्यो कही है? इसलिये कि जब हाथी बाजार मे से निकलता है कुत्ते पीछे भोकते हुए चलते हैं और नारी जब सोलह श्रृगार कर निकलती है तो कामी पुरुष कुत्तो की भाति नाना प्रकार की अपवादयुक्त टीका-टिप्पणी करते है। जिस प्रकार हाथी कुत्तो का मान मर्दन करता है उसी प्रकार से वह नारी भी मस्त हाथी की भाँति मान-मर्दन कर देती है।

कल्पवृक्ष —नारी एक कल्पवृक्ष इसलिये है कि जिस प्रकार से कल्पवृक्षो से १० प्रकार की भोगोपभोग सामग्री पूर्वकाल मे प्राप्त करते थे, वह एक नारी से प्राप्त करते हैं। भगवत् शुभ-चन्द्राचार्य ने ज्ञानार्णव मे पृ० स० ३७८ श्लोक १७५ मे कहा है:—

मद्यतूर्यगृहज्योतिर्भूषणभोजनविग्रहाः ।
सुग्दीपवस्त्रपात्रांगा, दशधा कल्पपादपाः ॥

(१) मद्य-स्त्री का नशा। (२) वादित्र-सगीतयुत गायन। (३) गृह-गृहणी। (४) ज्योति-घर की शोभा। (५) भूषण-शील। (६) भोजन-समय पर आहार। (७) माला-भगवद्भक्ति मे ले जाने का मार्ग बताने वाली। (८) दीपक-वश परम्परा को स्थित रखने वाली कुल दीपक पुत्र जन्म दात्री। (९) वस्त्र-विषय-वासनाओ सबधी दोषो को ओढने का वस्त्र। (१०) पात्र-विषयो का पात्र। इन १० प्रकार के भोगो को देने वाली नारी कल्पवृक्ष हैं।

शशि —पूर्वाचार्यों ने अवस्थाओं के अनुसार यथा नाम तथा गुण की पूर्ति मे नारी को कामिनी इसलिये कहा है कि वह कामाग्नि को शीतलता प्रदान करती है। इसलिये वह शशि (चन्द्रमा) है। और इसके शशिकान्ता, शशिकुमारी, चन्द्रप्रभा आदि नाम हैं।

धेनुः—नारी एक प्रकार से महत्वपूर्ण कामधेनु है। जिस प्रकार से आप कामधेनु से इच्छित वस्तु की याचना करते थे। उसकी पूर्ति वही माता करती है जिसने जन्म दिया है। आप अपने बाल्यकाल के जीवन की घटना को याद करिये कि आप जब इच्छित वस्तु के लिये मचले थे, तो क्या माता ने पूर्ति नहीं की थी ? यह सृष्टि की रचयिता है इसलिये यह धेनुरूपी रत्न है।

धनुः—धनु का अर्थ धनुष से है। धनुष सुख के समय पीठ पर और आपत्ति काल में सामने आता है। उसी प्रकार से नारी सुख के समय पीछे और विपत्ति के समय आगे आती है और आपत्तियों का मुकाबला करती है।

धन्वन्तरि:—आदर्शवान-प्रत्येक गृहस्थ सम्पन्ननारी अपना, अपने परिवार, पडोसी, आदि के स्वास्थ का विशेष ध्यान रखती है। इसीलिये अस्पतालों में दाइयां रखी जाती हैं। वे बालक के जन्म से लेकर मरण पर्यंत तक वैद्य, डाक्टरों की भांति औषधोपचार कर जीवन-दान देने, सेवा सुश्रूषा करने मे धन्वन्तरि वैद्य के समान है।

विषः—विष भी एक रत्न है। संसार की जन्मदात्री विषय--सुन्दरी ही हैं। यह मानव--शरीर विषयों के द्वारा ही बना है। किन्तु वर्तमान के विषयी पुरुषों ने जिनके पास केवल यौवन ही हैं कहलवाया है—

यौवन था जब रूप था, गाहक थे सब कोय।
यौवन रतन गंवाय के, बात न पूछे कोय॥

विद्याभ्यासियों के लिये निम्नाँकित ८ बाते त्यागने योग्य है—

कामं क्रोधं तथा लोभं, स्वादं श्रृंगार कौतुके।
अतिनिद्रातिसेवा च, विद्यार्थी ह्याष्ट वर्जयेत्॥

बाजि.—गुणावलोकी सज्जन जिनका भविष्य उज्ज्वल है, जिनका उत्तम कुल मे जन्म हुआ है, जो आदर्शमय जीवन को बनाने में अग्रगण्य है। वह अपने माता पिता और गुरुजन की विनय करते और अनुशासन मे रहते है। वह सम्राट चन्द्रगुप्त के समान चाणक्य जैसे महान् तेजस्वी नीतिज्ञ विद्वान की शोध कर अपनी सूर्य के समान देदीप्यमान उज्ज्वल कीर्ति को दशों दिशाओ मे व्याप्त कर चिरजीवी बन जाते हैं। वह नारी के नेत्र रूपी सूर्य के प्रकाश मे इस प्रकार से रहते हैं जिस प्रकार से कीचड़ मे कमल। वैसे तो उससे ब्रह्मा, विष्णु, और महेश भी नही बच सके।

सूर्य का वाहन घोड़ा है। ध्यान दीजिये—विवेक, और इन्द्रियां घोड़े है। संयमी पुरुष ही इन पर सवारी कर सकता है और असयमी पुरुषः—

कहिये जनाब इश्क में क्या होता है।
डांट भी पड़ती और इंसल्ट बड़ा होता है॥

यहा १४ चौदह रत्नो का वर्णन किया । अब आप १४ रत्न पुरुष में किस प्रकार से हैं उन्हें भी ध्यान से पढ़िये, मनन कीजिये और रसास्वादन कर आदर्शवादी बनिये ।

ताश से क्या सीखा ?

संत लोग सब मिल कर खेले ताश रे सामलिया ।
दुक्की को दिल से निकाल कर, एक ब्रह्म को पहिचानों ॥
तिक्की से है तीन देव, और तीन लोक को पहिचानो ।
चौआ से है चतुर्भुजी, भगवान रे सामलिया ॥ टेक ॥
पंजा से है पंच तत्व, जिनसे शरीर तैयार हुआ ।
छक्का से है छत्रपती, जो निराकार से मिला हुआ ॥
सत्ता से है सत नारायण, भगवान रे सामलिया ॥ २ ॥
अट्ठा से है अष्टभुजी, जो दुर्गादेवी महारानी ।
नहला से वो निहाल करती, ऐसो है यह वरदानी ॥
दहला से वो दयावंत, मन गुलाम को जीत लिया ।
फिर बेगम पर अधिकार किया, आप बादशाह बन बैठे ॥
इक्के का कुछ ना ख्याल किया, कृष्णचन्द्र हरिगुन गान करो ।

कर्मो की विचित्र गति है कि भगवान शकर से भी भिक्षावृत्ति करा ही ली ।

स्वयं सुरेशः श्वसुरो नगेशः, सखा धनेशः तनयो गणेशः ।
तथापि भिक्षां कुरुते महेश, ललाट वन्हि अयमेव शेष ॥

भावार्थ —स्वय ईश है, स्वसुर हिमाचल है । मित्र कुबेर है; पुत्र गणेश जैसे विद्वान के होते हुए भी शकर भीख मांगते है । भाग्य मे यही लिखा था ।

कर्म की विचित्रता और भी देखिये कि.—

ब्रह्मायेन कुलालवन्नियमतो ब्रह्मांड भाण्डोदरे ।
विष्णुयेन दशावतार गहने, क्षिपतो महासंकटे ॥
रुद्रो येन कपाल पाणि कुटके, भिक्षाटनं कार्यते ।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगणे तस्मैः नमः कर्मणे ॥

भावार्थः—जब कर्म का उदय आया तो ब्रह्मा जी ने कुम्हार का रूप धारण कर सृष्टि की रचना की । विष्णु जी ने दस अवतार धारण कर सकट उठाया । रुद्र ने कपाल मे भिक्षावृत्ति की । सूर्य नित्य प्रति आकाश भ्रमता है । इसलिये हे कर्म । तुझे नमस्कार है ।

विधि कों कियो कुम्हार जिन, हरि कों दश अवतार ।
भीख मंगावत ईश कों, ऐसौ कर्म उदार ॥

भावार्थ :—कर्म ऐसा उदार है कि ब्रह्मा को कुम्हार और विष्णु को दश अवतार लेना पड़े और भगवान शंकर को भिक्षावृत्ति करना पड़ी । इसलिये कि संसार-परिभ्रमण दुःख का कारण है ।

(वास्तविक सच्चा परिवार)

मेरे सम कौन बड़ी परिवारी, सुन मूरख संसारी ।
सत है पिता धर्म है भाई, लज्जा है महतारी ॥१॥
शील बहिन संतोष पुत्र है, क्षमा हमारी नारी ।
आशा सासु तृष्णा है साली, लोभ मोह ससुरारी ॥२॥
अहंकार है ससुर हमारे, जो सबके अधिकारी ।
मन दीवान सुरत है राजा, बुधि मंत्री अति भारी ॥३॥
काम क्रोध जो चोर बसत है, उनकौ डर मोय भारी ।
सम्यग्दर्शन मित्र हमारे, ज्ञान चरित अधिकारी ॥४॥
इन पर तू विचार रे मूरख, रामचन्द्र कह डारी ।
मेरे सम कौन बड़ी परिवारी, सुन मूरख संसारी ॥५॥

卐

वंदना

ब रु ना, च क ती, कर गहे, ब ग हा के असवार ।
प ला स हित रक्षा करे, बाढ़ै वंश तुम्हार ॥

शब्द — अर्थ —

व:— ब्रह्मा के हाथ कमंडलु, हंस की सवारी, स्त्री-सरस्वती ।

रु:— रुद्र अष्ट कर्मों पर रत्नत्रय धारण कर कैलाश पर तपस्या की, जिनका चिन्ह वृषभ है और स्त्री जिनकी शिव-रमणी है ।

ना:— नारायण-जिन्होंने असि, मसि, कृषि आदि सृष्टि के पालन का मार्ग-दर्शन (कल्पवृक्षों के लुप्त हो जाने से) कराया था, जिनकी आयुधशाला में १४ रत्न और ९ निधियां थीं जो जनन से ही

मति श्रुतादि ज्ञानरूप गरुड पर आरूढ थे। जिनके चरणों में पुण्य योग से मोक्ष जैसी लक्ष्मी प्राप्त थी।

च·— चक्र, जो ससाररूप चक्र से विजय प्राप्त कर चुके है।

क·— कमडलु मे भरे वाणीरूप गगाजल से जिन्होने ससार को पवित्र कर दिया है।

ती — जो जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी है–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान--त्रिशूल।

व — वृषभ जिनका बाहन है। वृष धर्म का प्रतीक है, जो धर्म का धारण करने वाला है।

ग.— गरुड जिनका बाहन है। अर्थात् जो ज्ञान पर सवारी करते हैं।

हा — हस जो चेतनरूप हस पर सवार है।

प — पद्मासनी–जिनकी यह तीन स्त्रिया भव-सागर से पार उतारने में अग्रसर है ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान श्री ऋषभदेव स्वामी तुम्हारे वंश की बृद्धि करे। जो तीन पदवी के धारक, छह खड के जीतने वाले है, उन्हे मै मन, वचन, काय से नमस्कार करता हूँ।

ला – लक्ष्मी . कमलासनी।

स — सरस्वती हसवाहनी।

※

प्रकीर्णक

अष्टात्म–निवेदन

श्रवणं कीर्तन विष्णोः, स्मरणं पादसेवनं।
अर्चनं वंदनं दास्यं, सत्यमात्मनिवेदनं॥

सप्त क्षेत्र

जिनविम्ब जिनागारं, जिनयात्रा प्रतिष्ठितम्।
दान पूजा सितान्तं, लेखनं सप्तक्षेत्रकम्॥

गृहस्थ के षट् द्रव्य

खंडनी, पिसनी, चुल्ली, उद्कुंभ प्रमार्जनी।
पंच शून्या गृहस्थस्य, षष्टं द्रव्यमुपार्जनं॥

जैनियों के तीन चिन्ह (लक्षण)

जल छानन, निशि तज अशन, जैनी चिन्ह हैं तीन।
प्रतिदिन दर्शन जो करै, सो जैनी परवीन ॥

वैद्य के लक्षण

कर्मरोग की प्रकृति पावै, यथायोग्य औषधि फरमावै।
उदय नाड़िका की गति जानै, सो सुवैद्य मेरे मन जानैं ॥

ज्योतिषी के लक्षण

नव रस रूप निरह पहिचानै, बारह राशि भावना भानै।
सहज संक्रमण साधै जोई, ज्योतिषराय ज्योतिषी सोई ॥

वैष्णव-लक्षण

तिलक तोप माला विरति, मति मुद्रा श्रुति छाप।
इन लक्षण सों वैष्णव, समुझै हरि परताप ॥

उत्कृष्ट वैष्णव

जो हरि घट में हरि लखै, हरि बाना हरि बोह।
हर छिन हरि सुमिरन करै, विमल वैष्णव सोह ॥

चार वर्ण

शूद्र जन्म से सब लखौ, संस्कार द्विज गाय।
श्रुताभ्यास से शास्त्री, ब्राह्मण ब्रह्म रमाय ॥

नरक के चार दरवाजे

प्रथम द्वार निशि असन अरु, द्वितीय संग पर नारि।
तीजा संधाना, तुरिय कंद, नर्क चउ द्वार ॥

ब्रह्म-भेद

सुख दुख अनुभव ज्ञानमय, कर संकल्प विचार।
राग द्वेष अरु पुण्य को, ब्रह्मभेद निरधार ॥

चतुर्मृत्यु

ईर्षा मद अविवेकता, निर्दयता घुन जान।
बहु अनर्थ इक ही करै, चारों मौत समान ॥

सरस्वती

कुंडासना जगद्धात्री, बुद्धमाता जिनेश्वरी
जिनमाता जिनेन्द्रा च, शारदा हंसवाहिनी ॥

१० इन्द्रिया

(ज्ञानेन्द्रियां)

इन्द्रिय	स्वामी	विषय
१–चक्षु	सूर्य	रूप
२–कर्ण	वायु	शब्द
३–नासिका	अश्विनी कुमार	गघ
४–रसना	जल	स्वाद
५–त्वचा	(वायु)	स्पर्श

(कर्मेन्द्रियाँ)

फैलाना, सकोडना, ऊपर नीचे करना और फेंकना ।

१–कर	कार्य करना
२–पैर	गमन
३–गुदा	अपानादि वायु
४–शिश्न (लिग)	विषयेन्द्रियजन्य सुख
५–वाणी	अर्थ शब्द विषयक

गिरा अर्थ जल वीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।
बन्दो सीता राम पद, जिन्हे परम प्रिय खिन्न ॥

हरि किसे कहते है ?

हरति कष्टान् इति हरि । शिव, ब्रह्म, बौद्ध, कर्त्ता, अर्हन्, कर्म इत्यादि नामो से उच्चरित हरि भगवान ।

यं शैवाः समुपासते शिव इति, ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः, कर्तेति नैयायिकाः ॥
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः ।
सोऽय वो विदधातु वांछितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥

शिव के लक्षण

एकाकी निस्पृहः शान्तः, पाणिपात्रो दिगम्बरः ।
कदा शम्भो भविष्यामि, कर्मनिर्मूलनक्षमः ॥

दोहा

एकाकी इच्छा रहित, पाणिपात्र दिग्वस्त्र ।
शिव शिव हों कब होउंगो, कर्मशत्रु को शस्त्र ॥
ब्रह्म ध्यान धरि गंग तट, बैठूंगी तजि संग ।
कबधों वह दिन होयगो, हिरण खुजावत अंग ॥
(भर्तृहरि)

सवैया

विभूति लगावत शंकर के, अहिलोचन मध्य परो झरके ।
अहि की फुफकार लगी शशि के, तब अमृत बूंद परयौ खस के ॥
वहां तो हते जमराज, जब जाग पड़े अर्राय रहे अड़के ।
सुरभी सुत बाहन लै जु भगे, तब गौर हंसी मुख आंचल दे के ॥

भावार्थ—भगवान शकर ने कैलाश पर तपस्या की विभूति लगाई तो, हृदय पर पड़े हुये काम क्रोधादि की माला रूप सर्पो की आखों मे, तपरूप विभूति की धूल खिसक कर पड़ी तो सर्पो ने क्रोधित होकर, शाँतिस्वरूप चन्द्रमा को फुसकार दिया । तब शाँतिस्वरूप चन्द्रमा में से अमृत की बूंद टपक पडी तो तृष्णा और क्षुधारूप बधराज (सिह) निद्रा त्याग कर जागे और अकड कर गरजने लगे। यह पेटू वधराज जागृत होकर शंकर जी के वाहन बैल (बृष, धर्म) को धारण करने वाला वृषभ कृषिप्रधान देश का आवश्यक पशु है, अनाज उत्पन्न करने को लेकर चले उस समय सुमति रूप गौरा जी मुख मे आँचल दाब के खूब हंसती है ।

स्वार्थी ससार

काहू ने भांग धतूरे की बौड़ी, सो काहू ने दूब को पोड़ो दियो है ।
काहू ने चावल चार चढ़ायके, काहू ने प्रातहि नाम लियो है ॥
गौरा हंसी मुख आँचल दाबके, देखो भई ठग लोग भयो है ।
भोरौ सौ कंथ हमारौ ही जान, धतूरो हि देय धन लूट लियो है ॥

प्रार्थना

जो जग जन्म दियौ करुणानिधि, सो सुख संपति दो नन्दलाला ।
खाने को भंग नहाने को गंग, चढ़न को तुरंग ओढ़न को दुशाला ॥
पान पुरान सुहागिन हो, और संग लिये इक सुन्दर बाला ।
ये वर माँगत हों शिवशंकर, दो मृगनैनी या दो मृग--छाला ॥

भावार्थ—प्रभो ! यदि आपने इस असार ससार मे जन्म दिया है तो ऐसी सुख और सम्पत्ति दो जो आवागमन रहित हो। खाने को ऐसा भाग का नशा दो—

ज्ञान का गाँजा बनाले, गुण चिलम तैयार कर ।
कर्म का कंकर लगाले, तन तंबाकू डाल कर ॥
योग की अग्नि चढ़ाले, भक्ति स्वापी धोय कर ।
प्रेम से तू दम लगा, बेडा को अपना पार कर ॥

जिससे आत्मस्वरूप मे लीन होकर ज्ञानरूप गगा मे स्नान कर सकू । चढने के लिये विवेकरूप घोडा, ओढने के लिये ज्ञान की चादर (दुशाला) दो, साथ मे एक सुमति रूप ऐसी स्त्री दो जो सदैव सौभाग्यशालिनी हो (शिवरमणी-मोक्षबधू) ऐसी मृगनयनी दो। जिस प्रकार मृग चौकडी भर कर आत्मरक्षा का उपाय करता है वह त्याग-तपस्यारूप छाल प्रदान कीजिये। आत्मा का हित सुख है और वह सुख आकुलता रहित है।

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये ।
आकुलता शिव माँहि न, तातें, शिव मग लाग्यो चहिये ॥

(छहढाला दौलतराम)

चौदह विद्या

राग रसायन नृत्य गत नट विद्या वेदंग ।
तुरी चढ़न रथ हांकवौ, जानत ज्योतिष अंग ॥
जल तैरन धीरज धरन, चोरी अरु ब्रह्मज्ञान ।
यह चौदह विद्या कही, सुनलो परम सुजान ॥

बत्तीस गुण

हंस बगुल मृग मीन, मोर माली केहरि ।
लोह बार गुण एक एक कोकिला गयंदर ॥
तमचर के गुण चार, चार सिर चांद गणिज्जै ।
तीन गर्द षट् श्वान, पंच गुण काग भणिज्जै ॥
लक्षण बत्तीस एसे कहे, चतुर पुरुष चित्तहि धरे ।
पिंगल ग्रंथ इम उच्चरहि, सो राज काज सो ही करे ॥

भिन्न रीति (दोहा)

क करि के पुनि भाग कर, फिर गुण लेहु सुजान ।
ता पीछे ऋण धन करो, भिन्न रीति पहिचान ॥

शब्द	अर्थ
क:—	कर्त्तव्य
भाग:—	अगो का अध्ययन
गुण:—	अध्ययन से जो प्राप्त हो ।
सुजान:—	उत्तम जानकर
धन:—	गुणसमूह एकत्रित कर
ऋण.—	गुण दूसरो को सिखाना अर्थात् वितरण करना

यह भिन्न की रीति है ।

पचेन्द्रिय–विषय (छप्पय)

कान निरंतर गान, तान सुनवे को चाहत ।
आखे निरखत रूप, रैन दिन रहत सराहत ॥
नासा अतर सुगन्ध, चहत फूलन की माला ।
त्वचा चहत सुख सेज, संग कोमल तन बाला ॥
रसना नित चहत रहत, खाटे मीठे चरपरे ।
ए पंचन पर-पंच मिल, भूपन कों भिक्षुक करे ॥

हस–बगुला परीक्षा (दोहा)

हंसा बगुला एकसा, मानसरोवर माँहि ।
बगुला ढूंढ़े माछली, हंसा मोती खाँहि ॥
हंस काग की परख को, सतगुरु दई बताय ।
हंसा मोती कों चुगे, काग नरक पर जाय ॥
सब की गठरी लाल है, बिना लाल कोई नहीं ।
बना फिरे कंगाल, गांठ खोल देखी नहीं ॥
जब लग लाल समुद्र में, तब लग लख्यौ न जाय ।
निकसि लाल बाहर भयो, मंहगे मोल बिकाय ॥
मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदै माँहि ।
आड़ी टाटी कपट की, यातें दीखत नाँहि ॥

ज्ञान-सूर्योदय

महिष--र्मादनी और उदयगिरि विदिशा म० प्र० गुफा नं० ६
आचार्य भद्रबाहु का भगवती की मूर्ति द्वारा
सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को सदुपदेश

भारत मे मूर्तिकला के निर्माण की आवश्यकता होने का मूल कारण बाम-मार्गियो द्वारा घोर हिंसा ही है।

कामी क्रोधी कृपण खल, भिक्षुक व्यसनी जान।
इनके हृदय दया नहीं, हो कितनी ही हांन ॥

ऐसी भयकर निर्दयता को नष्ट करने के लिये इस पुण्यभूमि भारत मे समयानुसार महा-पुरुषो का अवतार होता ही आया है।

भगवान महावीर के अनुयायी धर्मप्रचारक अनेको जैनाचार्यो ने जिनमे कुछ के नाम—भद्रबाहु, जिनसेन, अमितगति, शुभचन्द्र, बादीभचन्द्र, समन्तभद्राचार्य, लोहाचार्यादि हैं। इन आचार्यो ने दैदीप्यमान तपश्चर्या के बल पर घोर हिंसा का डट कर मुकाबला किया और समय पडने पर जीवनाहुति भी दे दी है। भगवान भट्टाकलक देव ने अपने भाई निकलक को इस धर्म की बेदी पर बलिदान कर दिया था, यह बात किसी से छिपी नही है। इन्ही आचार्यों ने विपरीत मार्गगामी राजाओ को सन्मार्ग दिखाया और उन्ही के ही आश्रय से मूर्तिकला का निर्माण करा कर धर्मप्रचार किया। यह थी उनकी सच्ची तपश्चर्या।

भगवती के अनेक नामो में--

कुंडासना जगद्धात्री, बुद्धमाता जिनेश्वरी।
जिनमाता जिनेन्द्रा च, शारदा हंसवाहनी ॥१॥

शुक्लां बृह्मविचारसारपरमां, आद्यां जगद्व्यापिनी।
वीणा-पुस्तक-धारिणी, अभयदां जाड्यांधकारापहां ॥२॥

हस्ते स्फटिकमालिकां, विदधतीं पद्मासने संस्थितां ।
...............................बुद्धिप्रदां शारदां ॥३॥

(भवानी सहस्रनाम)

आचार्य भद्रबाहु ने सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य को दिग्विजय से लौटते समय विदिशा नगर में स्थित उदयगिरि गुफा न० ६ मे महिषमर्दिनी, गुफा नं० ५ में बाराह अवतार, गुफा नं० १३ में शेषशायी विष्णु, गुफा नं० १९ के बाहरी सभामंडप के दरवाजे पर समुद्रमंथन तथा शिव-परिवार की मूर्तियां जो उत्कीर्ण करवा कर उन्ही के द्वारा जीवन को सार्थक करने वाले जिनमार्ग को बतलाया और सम्राट् ने जिनधर्म स्वीकार किया। यह थी जैनाचार्यों की जैनधर्मप्रचार-पद्धति।

हम यहा महिषमर्दिनी का विवरण आपके समक्ष उपस्थित कर रहे है। भगवती महिष-मर्दिनी के प्रत्येक अंग से क्या परिलक्षित है यह सम्राट एव आचार्य के प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत है। ध्यानपूर्वक मनन करने की कृपा करे।

(१) सम्राट :—भगवती महिषा की पिछली दोनो टाँगे क्यो पकड़े है ?

आचार्य—राजन् ! विषय और कषाय यह दोनो ही भैसे की टाँगे है। यह दोनो ही आत्मा के प्रवल शत्रु हैं। विषयों में बाधा आने पर जो कषाय उत्पन्न होती है वह क्रोध, मान, माया, लोभ को सकेत करती है। यह चारो ही एक साथ उत्पन्न होकर प्रचण्ड रूप धारण कर लेते है। यदि इनपर विजय पाई है तो केवल वीतरागी पुरुषो ने ही।

विषय कषाय बराबरी, बैरी जिय के नाँहि।

ज्ञान विराग विवेक से , हितू नाँहि जग माँहि ॥

विषय—शनि ग्रह है। शनि, काल, यम, इन तीनो का वाहन भैसा है।

सम्राट—भैसे के सिर पर भगवती पैर क्यों रखे है ?

आचार्य- **जो विषया संतन तजो, मूर्ख ताह लपटात।**

ज्यों नर डारत वमन सो, श्वान स्वाद सों खात॥

विपयों का जव तक दमन नही किया जाता है जीवन सुखमय नही बन सकता। यह महान् भयकर रोग है। संसार परिभ्रमण, जामन-मरण का मूल कारण और झगड़े की जड़ यदि है तो केवल विषय ही है। इसलिए संतपुरुषों ने इसका त्याग किया हैं। मूर्ख विषय-लंपटियों ने इनका रसास्वादन कर अनंत दुख उठाये और उठा रहे हैं। जिस प्रकार से मानव वमन करता है और उसे श्वान बड़े स्वाद से खाता है। श्वान और विषयलंपटी मानव में कोई अन्तर नही है।

सम्राट—भैसे की पीठ मे भगवती त्रिसूल क्यो मार रही हैं ?

आचार्य—यह शनि ग्रह-विषय हमारे दर्शन, ज्ञान, चारित्र जो मानव के धर्मरत्न हैं, उनको चुराने वाला है। इसे नष्ट किये विना मुक्ति नही मिल सकती। इसलिये इसे त्रिशूल (दर्शन, ज्ञान, चारित्र) से मारते हुये दर्शाया गया है। सम्यक्‌दर्शन, ज्ञान, चारित्र को हर व्यक्ति धारण नही कर सकता । इन्हे वीतरागी पुरुष ही धारण कर सकते है। वही इन्ही तीनो शूलो से विजय पाते है। यही उनका शस्त्र है। यह दाहिना हाथ न० ५ से सकेत किया गया है।

सम्राट—महिषासुर क्या राक्षस है ?

आचार्य—हाँ, यह राक्षस है। यह मन की गति को चचल बनाकर राक्षसी वृत्ति उत्पन्न करता है। यही विषय कहलाते है।

(२) सम्राट—भगवती के दाहिने हाथ न० ६ मे घण्टी क्यो है ?

आचार्य—राजन् ! यह काल (समय) सूचक यन्त्र है, जो मृत्यु और सकटापन्न स्थिति का पूर्वाभास कराता है ।

(३) सम्राट - बाँये हाथ मे सहस्रदल कमल क्यो है ?

आचार्य—राजन् ! यह लक्ष्मी, राज्यवैभव, शक्ति आदि का प्रतीक है।

इस राज्यलक्ष्मी ने-

माया ठगनी ने ठगा , यह सारा संसार।
पर माया जिनने ठगी , तिनको बहु बलिहार ।।

यह माया-

धरा कनक अरु कामनी ये है कडुवी वेल।
बैरी मारे दाव दे, ये मारे हंस खेल ।।

राजन् ! माया मनुष्य को अन्धा बना देती है।

जन्मअन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।
स्वार्थअन्ध मानव तथा , जग में अन्धे चार ।।

यह विष्णु की पत्नी है, चचला है। इसका वाहन उल्लू है। जिसके पास यह पहुच जाती उसे अन्धा बना देती है।

जो व्यक्ति चाहे वह पढा लिखा और विद्वान क्यो न हो अपनी भूल को भूल नही मानता और उसे सुधारने का प्रयत्न नही करता वह क्या गधा नही कहा जाता है ? इसलिए मूर्ख के चिन्ह लक्ष्मी का वाहन उल्लू और रावण के सिर पर गधा का सकेत पूर्वाचार्यो ने किया है ।

मूर्ख के ५ लक्षण हैं—

(१) गर्व करना (२) खोटे वचन बोलना (३) क्रोध करना (४) अपनी भूल को भूल न मान कर हट करना (५) दूसरे के बचनों का अनादर करना। हम प्राय. पढे लिखे पुरुषों में जो आज के विद्वान और शासकगण है उनमें ये लक्षण पाते हैं। ऐसे व्यक्ति लक्ष्मी को पाकर क्या क्या अनर्थ नही कर रहे है ?

कामी क्रोधी लालची, इनसे भक्ति न होय ।
भक्ति करे कोई सूरमा, जाति वरण कुल खोय ।।

सम्राट—बाये हाथ नं० ३ मे धनुष क्यो है ?

आचार्य—यह धनुष ध्यान की ओर सकेत करता है।

राजन् ! आपका ध्यान राज्यवैभव और भोगों की ओर होने से आपकी प्रवृत्ति हिसामय है। धन, सपत्ति और वैभव भोगों की खान है। आपका शरीर रोगों की खान है। अज्ञान और अविवेक दुखो की खान है। यदि सुख है तो केवल विवेकपूर्ण ज्ञान मे ही है।

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खान।
ज्ञान सुखों की खान है दुःख खान अज्ञान ।।

सम्राट दाहिने हाथ नं० ४ मे बाण क्यो है ?

आचार्य—हे भद्र पुरुष ! बाण तो अनेक है किन्तु मुख्य चार है-(१) नैन बाण (२) बचन वाण (३) काम बाण (४) विचार बाण। तीन को भोगी लोग उपयोग में लाते हैं किन्तु योगी पुरुष विचार-वाण को उपयोग मे लाते है।

बिना सोचे बिना समझे, वशर जो काम करता है।
वह अपने हाथ से अपना, बुरा अंजाम करता है ।।
प्रथम ही जो सोच कर, बात है कहता नहीं ।
वह विना लज्जित हुये, संसार में रहता नहीं ।।

क्योकि—

मन मतंग माने नहीं, मन के मते अनेक ।
जे मन पै असवार हैं, ते हजार में एक ।।
मन मतंग हाथी भयौ, ज्ञान करो असवार।
पग पग पर अंकुश लगे, कस कुपंथ चलि जाय ।।

यह बाण अपने लक्ष-भेदन के लिये संकेत करता है।

सम्राट—माता भगवती अपने सिर पर दाहिने हाथ व बायें हाथ न० १ से पोटली क्यो पकडे हैं और इसमे क्या रखा है? इस पर सूर्य और चन्द्रमा जैसा प्रकाश क्यो हो रहा है?

आचार्य—हे विद्वान्! इसमे रत्न रखे हैं। किन्तु यह रत्न चर्मचक्षु से नही देखे जा सकते हैं।

परस सकती नही रत्नों को, हर इंसान की आंखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हों ज्ञान की आंखें।।

इस पोटली मे सम्यक्‌दर्शन, सम्यक्‌ज्ञान, सम्यक्‌चारित्र रूपी तीन रत्न रखे है। इनकी रक्षा करो।

सम्राट—दाहिने हाथ न० ३ मे दोनो ओर नुकीला शस्त्र क्या है?

आचार्य—राजन्! यह दो धारा शस्त्र विषय और कषाय हैं। रागद्वेष के पैदा करने वाले है। इनका आना, रहना, बसना और सगति करना सदैव दुखकारक योग है।

सम्राट—बाँये हाथ न० २ मे ढाल क्यो है?

आचार्य—राजन्! यह मानवशरीर पृथ्वी है। पृथ्वी के नामो मे क्षमा नाम भी पृथ्वी का है। पृथ्वी की आकृति गोल है। पृथ्वी पर रत्न उत्पन्न होते है। इस मानवशरीर मे जो गुण सम्यक्‌दर्शन, सम्यक्‌ज्ञान, सम्यक्‌चारित्र रूपी तीनो रत्न है, जोकि आपमे भी विद्यमान हैं।

नेत्र मे जो गोल काली पुतली है उसी मे तो प्रकाश है। जिस प्रकार से सूर्य की आकृति गोल है और उसके प्रकाश मे आप विश्व को देख रहे है। नेत्र का प्रकाश सूर्य हैं। जो ढाल मे प्रदर्शित है।

मुख को चन्द्रमुख कहते है। आपके मुखचन्द्र को देख कर लोग आनन्दमग्न हो जाते हैं। यह भी ढाल मे दिखाया गया है। यह ढाल क्षमा को सकेत करती है।

सम्राट—दाहिने दूसरे हाथ मे खड्ग क्यो है?

आचार्य—महान् विजेता सम्राट्! यह सद्ज्ञान और सद्‌विवेक की खड्ग (तलवार) है, जिसके भय से घोर हिसा करने वाले दानव मानवता के पथ पर लाये जाते हैं। यह वीतराग वाणी की तलवार है।

इसी क्षमा की तलवार से भगवान महावीर ने नरमेध और अश्वमेध यज्ञो का प्रचार रोका था। इसी से श्री विष्णुकुमार मुनि ने बलि को पराजय देकर अकपनाचार्यादि ७०० मुनियो के जीवन की रक्षा की थी। जिसकी रक्षा का सूचक रक्षाबधन पर्व सर्वत्र मनाया जाता है।

इस प्रकार की मूर्तियो के निर्माण का कार्य जैनाचार्यो की सूझ बूझ का ही फल है।

श्री वादिचन्द्र सूरि कृत ज्ञानसूर्योदय नाटक

(वि० सं० १६४८ की)

एक साकारता

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देवगढ (ललितपुर) उ० प्र० में

२० भुजी अनुप्रेक्षा जिनशासन देवी--माता अम्बिका के हाथों का परिचय

पूर्वकाल मे जैनाचार्यों ने अपने विवेकपूर्ण ज्ञान और ज्ञाननेत्र से मानवमात्र के कल्याण-कारी जैन साहित्य को जो साकारता दी है वह है २० भुजी जिनशासनी देवी माता अम्बिका। वह क्या कहती है, सो सुनो।

(चौबोला)

तन तरुवर सों सघन, दुःख के हिंस्र पशुन सों मांचा है।
बुधि-जल विन सूखो, आशा की, विकट अनलमय आंचा है॥
नाना कुनय--मार्ग सों दुर्गम, यह भव-वन गुरु जांचा है।
यामें पथदर्शक शरण्य इक, जिनशासन ही सांचा है॥

मन—कुछ जीवन का भी उपाय है।

अनुप्रेक्षा—ज्ञानरूप गरुड़।

हे मन! इस अपवित्र शरीर में प्रमोद क्यों मानता है? देख, कहा है कि—

रुधिर-मांस-रस-मेदा-मज्जा, अस्थि-वीर्यमय अशुचि अपार।
घृणित शुक्र औ रज से उपजा, जड़स्वरूप यह तन दुखकार॥
इसमें जो कुछ तेज कान्ति है, समझ उसे चैतन्य विकार।
इससे मोद मानना इसमें, सचमुच लज्जाकारी यार॥

भ्रम में क्यो पडा हुआ है?

ज्ञानसूर्योदय माता अम्बिका की मूर्तिका रहस्य—

मोहादिक भाव सब उपाधिरूप चेतन के,
दुखदाई जान वृथा चित्त न भ्रमाइये।
ज्ञानादिक भाव ते तौ आप ही के स्वभाव,
तिनको हितकारी जान चित्त को रमाइये॥

जिनवानी जोर विना ज्ञान की ना शक्ति कछू,
तातें जिनवानी बिना घरी ना गमाइये ।
ताके अनुसार ध्यान धारि मोह को विडारि,
केवलस्वरूप होय आप में समाइये ॥

(श्री भागचन्द्र कवि)

जैन आचार्यों ने अहिंसामय धर्म को बाममार्गी मांसभक्षी, निर्दयी, राक्षसी वृत्ति के धारक स्वार्थ एवं जिह्वालोलुपी, कामी जनो को, जोकि देवमूर्तियों को जोवों की बलि चढ़ा कर घोर हिंसा करते थे बुद्धिबल द्वारा लोहा लिया था और उन्हे पराजय दी थी। दूध और पानी को हंसकी भांति राग और वैराग के दोनो पहलुओं को दर्पण के समान बतलाया था। देखिये माता अम्बिका अपने सिर पर दोनो हाथो से एक चक्र को पकडे हैं। यह कालचक्र है, जो संयमी और असंयमी दोनो के ही सिर पर अनन्तकाल से छाया हुआ है।

अनुप्रेक्षा

यह भोला संसार अनित्य पदार्थों को नित्य समझ कर अनन्तकाल से भ्रमण कर रहा है। फिर उसमे यह बेचारा पराधीन जीव जिनेन्द्र भगवान के बतलाये हुए आत्मा के चित्स्वरूप को कैसे देख सकता है ?

(दोहा)

विद्युत वत अतिशय अथिर, पुत्र मित्र परिवार ।
मूढ़ इन्हें लखि मद करत, बुधजन करत विचार ॥
महा दुखद मरुभूमि में, देख दूर सों नीर ।
भोले मृग ही प्यास वश, दौरि सहें बहु पीर ॥
चंचल लक्ष्मी वय चपल, देह रोग को गेह ।
तौहू इहि संसार में, स्वातम सों नहिं नेह ॥

(राग खेमटा)

बतलाओ हे बुधिवान, विधि सों कौन बली ॥ टेक ॥
अणिमादिक वर महिमा मंडित, सुरपति विभव निदान ।
ताको लंकापति ने मार्यो, जानत सकल जहान ॥ विधि० ॥
पुनि तिहि रावण राक्षस को हू, रामचन्द्र बलवान ।
पारावार अपार लांघिके, मस्तक काट्यो आन ॥ विधि० ॥
किन्तु हाय वे रामचन्द्र हू, रहे न रघुकुल प्रान ।
काल कराल ब्याल के मुंह में, भये विलीन निदान ॥ विधि० ॥

इस कालचक्र का प्रतीकात्मक चिन्ह अम्बिका के सिर पर दोनो हाथों से पकड़ने का सूचक है। (ज्ञान सू० पृ० ८५-८६)

भरत चक्रवर्ती विचार करते है—

(दोहा)

मेरी आज्ञा में रहें छहों खंड के भूप।
मो चक्री को हू ग्रसै, काल महा भयरूप॥
नारायण नर-लोक में, महा शूर बलवन्त।
तीन खण्ड आज्ञा बहै, तोहू काल ग्रसंत॥

(कालाष्टक, ब्रह्मविलास पृ० १४८)

माता भवानी कहती हैं कि हे जीव!

विक्रमशाली नर बिना, बल निर्बल ह्वै जाय।
सैन्य सहित हू 'करन' विर, जय न लही 'कुरुराय'॥

इसलिए राजा मन की दो स्त्रिया है जो नीचे खड़ी घुटनो के यहाँ हैं। एक कामिनी जिसका संकेत बाये हाथ नं० ९ मे सर्प जिसे विषधर या काम की सज्ञा दी है पूछ के द्वारा संकेत किया है कि काम पर विजय किसी ने नही पाई, यदि विजय पाई है तो केवल वीतरागी महा-पुरुषों ने, जोकि ऊपर तीन बतलाये हैं, दो खड्गासन और एक पद्मासन। यह तीनों तीर्थंकर तीन तीन पदवी के धारी हुये है। अतएव कामिनी एक तीक्ष्ण धारा है। दूसरे दाहिने हाथ नं० ९ में अग्नि को पकडने का सकेत मूर्तिका हाथ यह बतलाता हैं कि जो दाहिने घुटने के यहाँ एक स्त्री खडी दिखाई है, वह अग्नि है। यह चिन्ता की ज्वाला है। काम के द्वारा उत्पन्न हुई सतति मोहादिक राग और द्वेष को उत्पन्न करते है। यह दो धाराओ को ऊपर के दाहिने हाथ नं० २ में एक दोनो ओर नुकीला शस्त्र सकेत करता है। वह ही दोधारा कहलाता है। संकटापन्न स्थिति पैदा करता है। वह है काल की सूचक टेलीफोन की घटी, जिसका सकेत बाँये हाथ नं० २ मे हैं। कि यह काम और क्रोध की अग्नि दोनो ही अतिशय दुखदायी है। इसकी विजय का साधन हाथ न० ३ दाहना जिसमे एक कुल्हाड़ी है।

यह ज्ञान की सूचक अज्ञानता रूप काष्ठ को काटने के लिए विवेकपूर्ण ज्ञान की कुल्हाड़ी है।

(कवित्त '३१ मात्रा')

कच-कलाप जूं का निवास, मुख चाम-लपेट्यौ हाड़ समूह।
माँसपिंड कुच, विष्टादिक की पेटी पेट, भरी बदबूह॥

जघन जंत्र मल--मूत्र झरन को, करन थंभ तिहि के आधार।
घृणित अपावन कामिनि-तन यों, ज्ञानी लखहि न यामें सार॥

मन एक उन्मत्त मतग है। विषयो की लालसा से स्नेह करता है। पेट में भरी विष्टा को शूकर और कौए ही खाने की अभिलाषा करते है। वीतरागी पवित्र आत्मा जिसे हंस कहते हैं नही करते। इस प्रकार के उत्कृष्ट विचार-बाण से कामदेव को धराशायी कर दिया।

बायां हाथ न० ३ क्षमा की ढाल है।

क्षमा

क्रोध के सम्मुख निर्भय होकर आ गई, किन्तु क्रोध क्षमा को देखकर ललकार कर बोला-अरी क्षमा! तू मेरे सामने से हट जा। मैंने तेरा कितने बार घात किया, कुछ स्मरण है! आज प्रबोध की सहायता से तू क्या वैक्रियक शरीर धारण करके आ गई? तो सुन—

(भुजग-प्रयात)

किती बार जीते नहीं मै नरेशा, किती बार प्रेरे न मैंने सुरेशा।
किती बार त्यागी तपाये नहीं मै, किती बार लोप्यौ न धर्मं यही मै॥

इस प्रकार कहकर क्रोध क्षमा को मारने के लिये झपटा। उसके भय से क्षमा पलायन करना चाहती थी, त्यो ही शांति ने आकर धैर्य देकर कहा-माता! यह डरने का समय नही है। तुम किसी प्रकार का भय मत करो। और फिर हिंसा के सम्मुख होकर कहा-हिंसा! आज इन तेजस्वी पुरुषो को देखते हुये इस समर भूमि मे मेरे सामने आ। और अपना धनुष हाथ नं० ७ में और बाण हाथ नं० ८ मे बाया (धनुष बाण) धारण करके उस प्रचंड बल को प्रगट कर, जिसे धारण करके तू मेरी बडी बहिन दया को मारने के लिये आई थी। क्या तू नही जानती है कि-

(नरेन्द्र छन्द)

तौलो दुःख शोक भय भारी, रोग महा भारी है।
अदया अकृत दरिद्र दीनता, अरु अकाल जारी है॥
तौलों ही विष शत्रु, भूत ग्रह, डांकनि शांकनि डेरा।
जासों विमल बुद्धि वारे नर, जपें नाम नहि मेरा॥

यह दाहिना हाथ न० ५ जिसमें माला को संकेत किया है।

बस, यह सुनते ही और शाति के हाथ मे माला देख कर हिंसा भाग गई।

बांया हाथ नं० ५ अंकुश का संकेत करता है। मन उन्मत मतग (हाथी) है। इसे सयम के ही अंकुश से वश मे किया जा सकता है। इसलिये अकुश बाये हाथ मे है।

शरीररूपी विष्णु--परिवार--

(दोहा)

सत्य माता पिता ज्ञानं, धर्म भ्राता दया सखा।
शान्ति पत्नि क्षमा पुत्रः, एते षड् मम बांधवाः॥

शरीररूपी विष्णु के शत्रु--

क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम।
ये ही तेरे शत्रु है, समझो आतमराम॥

इस चचल मन ने कामदेव की कृपा से पूर्वकाल में पद्मनाभ ने द्रोपदी के लिये, अर्ककीर्ति ने सुलोचना के लिए, अश्वग्रीव ने स्वयंप्रभा के लिए बड़े बड़े युद्ध किये। ब्रह्मा जी ने सरस्वती के साथ, पाराशर महर्षि ने मछली के पेट से उत्पन्न हुई योजनगन्धा के साथ, और व्यास जी ने अपनी भाई की स्त्रियों के साथ रमण किया। यह सब कामबाण से ही पीड़ित होकर किया है। कामवाण से आहत होकर सूर्यदेव कुन्ती पर, चन्द्रमा अपने गुरु की स्त्री तारा पर और इन्द्र गौतमऋषि की स्त्री अहिल्या पर आसक्त हुआ था। अतएव हे चचल मन! मनुष्य, मुनि और देवों के पराजय करने के कारण मै त्रैलोक्यविजयी विवेकपूर्ण ज्ञान-बीर हूँ। और प्रवोधादि के वश करने के लिए तो एक स्त्री ही बस है। यह कौन नही जानता कि—

तबलों ही विद्या व्यसन, धीरज अरु गुन मान।
जबलों बनिता नयन बिष, पैठ्यौ नहिं हिय आन॥

बायां हाथ न० ९ का सर्प अपनी पूंछ से कामिनी स्त्री की ओर संकेत करता है। कि यह विषधर (नागन) है।

दाहिना हाथ न० ९ अग्नि को पकडने का संकेत करता है। कि यह कामाग्नि को प्रज्वलित कर चिन्ता की ज्वाला मे जीवनभर जलाती रहती है। जो अग्निरूपी स्त्री दाहिने ओर चंवर धारिणी के रूप मे खडी है, सकेत कर रही है।

दाहिना हाथ नं० ३ दोधारा का संकेत करता है, कि यह काम और कामाग्नि दोनों ही दो धाराये है। और शुभोपयोग में दो धाराये यम और नियम का बडा भारी बल है। यह भी दो धाराये है। इस काम ने अपने अतिशय प्यारे मित्र सप्त व्यसनो का साथ लेकर युधिष्ठिर को द्यूत व्यसन से, वक राजा को मास खाने से, यदुवशियो को मदिरापान से, चारुदत्त को वेश्या सेवन से, राजा ब्रह्मदत्त को शिकार से, रावण को परस्त्री अनुराग से नष्ट किया है। फिर सबके युगपत सेवन से तो ऐसा कौन है जो बचा रहेगा? इससे हे मन! तू खेद मत कर।

कनक तजै कामिनि तजै, तजै जाति को नेह।
एक मान को त्यागवौ, तुलसी दुर्लभ एह॥

अहंकार राजा मोह से कहता है स्वामिन्! आप आज कुछ चिन्तातुर जान पड़ते हैं। नीतिशास्त्र मे कहा है कि-पुरुषो के लिए एक सत्य ही प्रशंसनीय पदार्थ है। पक्ष का ग्रहण नहीं। देखो बाहुबली ने सत्य का अवलम्बन करके भरतचक्रवर्ती को पराजित किया था। सूर्य अकेला है उसके रथ का एक ही पहिया है। सारथी भी एक पैर से लंगडा है। सर्पों की लगाम है। घोड़े भी कुल सात ही हैं। और आकाश का निरालम्ब मार्ग है। तो भी वह प्रतिदिन अपार आकाश के पार जाया करता है। इससे सिद्ध है कि महापुरुषो के कार्य की सिद्धि उनके (सत्य) तेज में रहती है। उपकरण मे, सहायक वस्तुओ में नही रहती है। अर्थात् जो सत्यवान (कीर्तिवान-तेजस्वी) होता है, वही अपने अभीष्ट की सिद्धि कर सकता है।

(वीर सवैया '३१ मात्रा')

मेरे सम्मुख कौन निशाकर, कौन वस्तु है तुच्छ दिनेश।
राहु केतु की बात कहा है, गिनती मे नहि है नागेश॥
सत्य कहूं हे मोहराज! नहि, डरो जरा है कौन यमेश।
केवल भौंहों के विकार से, जीतो मैं सुर सहित सुरेश॥

ऐसे प्रबल काम और क्रोध तथा अहकार को जीतने के लिए सयम का अंकुश है। जो माता अम्बिका के हाथ मे सकेत किया है। भरत चक्रवर्ती विचार करते हैं कि—

मैं चक्री पद पाय निरंतर भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनिक भये नहि पूरन, भोग मनोरथ मेरे॥
राज समाज महा अघ--कारण, बैर बढ़ावनहारा।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल, या का कौन पतयारा॥

यही तो रागद्वेष को पैदा करने वाला दो-धारा है। जो द्वन्द मचाता है।

सुव्रत शील संतोष अरु, वर विवेक सुविचार।
तुव विन सारे विफल हैं, तुही सदा सुखकार॥

ऐसा प्रबोध ने कहा।

दया कहती है—

भाग्य उदय सो मनुज के, सुर-गन होत सहाय।
ताके उलटे होत हैं, स्वजनहु दुर्जन राय॥

प्रभो! मैंने यहा से अयोध्या जाकर प्रात काल ही धर्मोपदेश रूपी प्रकाश के द्वारा जगत के जीवो का अज्ञानान्ध उड़ाने वाले श्री अरहत भगवान का एकचित्त होकर इस प्रकार स्तवन किया।

(प्रभाती)

जगजन अघहरन नाथ, चरन शरन तेरी ।
एकचित्त भजत नित, होत मुक्ति चेरी ॥ टेक० ॥

होती नहिं विरद चारु, सरिता सम तुव अपार ।
जनम मरन अगिनि शांति, होत क्यों घनेरी ॥ १ ॥

कीनों जिन द्वेष भाव, तुम ते तिन करि कुभाव ।
रवि सन्मुख धूलि फेंकि, निज सिर पर फेरी ॥ २ ॥

शिवस्वरूप सुखदरूप, त्रिविध--व्याधिहर अनूप ।
विन कारण वैद्य भूप, कीरति बहुतेरी ॥ ३ ॥

बाँये हाथ न० ४ मे ढाल संकेत करती है। यह ढाल क्षमा की है। विधाता के प्रतिकूल होने पर सुख कैसे मिल सकता है ?

जानकी हरन, वन रघुपति गमन औ,
मरन नरायन कौ वनचर के वान सों ।
वारिधि कौ बंधन, मयंक अंक क्षयी रोग,
शंकर की वृत्ति सुनी भिक्षाटन वान सों ॥
कर्ण जैसे बलवान कन्या के गर्भ आये,
विलखे वन पांडुपुत्र जुआ के विधान सों ।
ऐसी ऐसी बाते अवलोक जहां तहाँ बेटी,
विधि की विचित्रता विचार देख ज्ञान सों ॥

क्षमा कहती है—बहिन दया का घात करने के लिए हिंसा को भेजा है । ऐसा सन्देश मिला है। इससे मेरा चित्त चिन्ता से व्यथित हो रहा है। स्मशान की भस्म शरीर से लपेटे हुए, हाड़ों की माला का आभूषण बनाये हुये, दोनो भुजाओ से आलिंगन करते हुए, लाल नेत्र किए हुए भैरव का भक्त अपनी स्त्री से कहता है—

(मत्त गयन्द)

पीजिये प्यारी ! मनोहर मद्य, मनोज की मौज बढ़ावत जोई ।
खाइये खूब पराक्रमि मांस, जवानी के जोर में उद्धत जोई ॥

गाइये गान अनंग जगावन, वीणा बजाइये आइये दोई।
बोलिये बात यही दिन रात, कि 'देह से भिन्न न आतम कोई' ॥

क्षमा (ढाल) कहती है–संकेत करती है। यथार्थ में ये स्व एवं परात्म शत्रु तेरे तत्वों को नही समझ सकते हैं। इनके यहाँ दया का कोई प्रयोजन नही है। यह मत केवल इस लोक सम्बन्धी सुख भोगने के लिए बना है। यह तोते के समान तो राम राम का जप करते हैं परन्तु वैसा मनोज्ञ आचरण नही करते हैं। मुख से राम और नेत्रों से रामा का दर्शन करते हैं, परन्तु देव की ओर अथवा उनके पवित्र चरित्र और गुणों की ओर नही देखते हैं। ऐसे द्वन्द से बचने के लिए यह ढाल का संकेत किया है।

बाँये तीसरे हाथ मे घंटी काल (समय-ट्रंककाल) की सूचक है।

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥

यह तन हरियर खेत, तरुणी हिरणी चर गई।
अजहूँ चेत अचेत, अधचर चरा बचायले ॥

यह शरीर सोने का आत्मा का महल है। श्वाशोच्छ्वास इसमें राजा है। नेत्र इसकी खिड़कियां हैं। और यह शरीर एक खेत हैं जिसे यौवनवती हिरणी कामिनी तेरे शील (ब्रह्मचर्य) को खाती जा रही है। ऐसे अधचरे खेत को श्री अर्हंत भगवान की वाणी जिनशासनी देवी माता अम्बिका उपसर्ग दूर करने को सावधान करती है कि दु:ख--समुद्र की तरंगों से निकल जा। मृत्युकाल को संकेत करने के लिए यह घंटी हैं।

दाहिना हाथ नं० ६ में व्रज है।

(जोगीरासा, नरेन्द्र छन्द)

बज्र अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई।
धर्म--रत्न के चोर चपल अति, दुर्गति पंथ सहाई ॥

मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानें।
जो कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन मानें ॥

विषय—विष बज्र अग्नि है। यह धर्मरत्न के चुराने वाले चचल चोर हैं। प्रबल मोह के उदय से यह अज्ञानी जीव भोगो को भुजग न मान कर भले ही करके मानता है। और यह भी जानता है कि विषय-विष एक खुजली का रोग है। मृत्यु और संकटापन्न स्थिति को उत्पन्न करता है। यह मेरी आत्मा के प्रबल शत्रु हैं। इसलिये—

बाँये हाथ न० ६ मे शख मूर्खता का प्रतीक है। जिस प्रकार से शंख का पेट फटा हुआ

है उसी प्रकार से विषय–लोलुपी को माता अम्बिका का उपदेश इस कान सुना और उसे पेट में न रखकर दूसरे कान से निकाल देना, गुणों का चिंतवन नही करना मूर्खता को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ८ की खड्ग (तलवार) संकेत करती है। दाहिने हाथ नं० ८ की तलवार का सकेत ऊपर बताते हैं। तीन पदवी के धारी तीर्थंकरो को जिनकी मूर्तियों के चित्र खड्गासन में दो और पद्मासन में एक है। यह चक्र पुरुषों को संबोधित कर यह प्रमाणित करता हैं कि शासन इन्ही का इस भरत क्षेत्र में प्रवर्त रहा है जिनको किसी भी जीव से राग–द्वेष नही। सबके साथ समानता है। वृष का अर्थ धर्म और बैल से या नादिया से भी है। यह शिव जी का बाहन है। शिव का अर्थ कल्याण से है। इसलिए बैल का संकेत किया है। और सिंह पराक्रम का प्रतीकात्मक चिन्ह है। यह पुरुषार्थ को संकेत करता है। जो चक्रवर्ती पुरुष हैं, जिन्होंने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन किया है वही शिव (कल्याण) कारी हैं। उनमें किसी भी प्रकार का विरोधाभास नहीं हैं। इसलिये सिंह और बैल दोनों को एक घाट यानी जैनियों के प्रतीकात्मक चिन्ह झंडे में गाय और सिंह को एक ही पात्र में पानी और भोजन करते दिखाया है। हिंसामय धर्म, धर्मात्माओं का लक्षण नहीं, किन्तु राक्षसी वृत्ति को संकेत करता हैं।

दाहिना हाथ नं० ७ में मशाल संकेत करती हैं—

जाको जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान ।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

मशाल—कीर्ति की द्योतक है। जिसकी कीर्ति संसार में सूर्य के समान देदीप्य मान है। प्रकाश की सूचक एक मिशाल है। वही विश्व का कल्याणकारी पुरुष जीवित है।

हाथ नं० २ चक्र संकेत करता है कि चक्र पुरुष ६३ शलाका के पुरुष यह २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ११ रुद्र, १२ बलभद्र जो ६३ शलाका के पुण्य पुरुष हैं उन्हीं की ओर संकेत करता है।

इस प्रतिमा के चित्र में चेतन, कर्म और पुद्गल का बर्णन माता अम्बिका ने बताया है। विशेष विवरण आचार्य वादिचन्द्र सूरि ने ज्ञानसूर्योदय नाटक जोकि जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई में छपा है, पूरा उल्लेख पुरातत्व अनुसंधानकों को मिलेगा।

बांया हाथ नं० २ में गदा है। गदा शस्त्र यह संकेत करता है कि तीन चीजों के बगैर तीन चीजें नही ठहरतीं। (१) विद्या बादविवाद के बिना, (२) शासन बिना प्रभाव के, (३) माल बिना व्यापार के नहीं ठहरता। भारत की भविष्यवाणी सम्राट को चन्द्रगुप्त के १६ स्वप्न में स्पष्ट कर दिया है।

जो शासक धार्मिक प्रवृत्ति का है, न्यायवान है, सदाचारी है, श्रावक के छह आवश्यक कर्मों का सदैव पालन करता है, परोपकारी और दानी है, विद्याविलासी है, उसी शासक की कीर्ति सदैव काल चिरजीवी रहती है। और वह मरने के बाद भी जीवित रहता है। इसका प्रतीक गदा है।

दाहिना हाथ न० १०-दाहिने घुटने के यहाँ चक्र अग्नि को सकेत करता है।

बाया हाथ न० १०-बाये घुटने के यहा चक्र काम को सकेत करता है। यह दोनो ही घुटनो के यहा बताये गये चक्र ससारचक्र से सम्बन्ध रखते है। जिसने ससार के स्वरूप को समझ लिया है और त्याग कर तपश्चरण कर मोक्षमार्ग मे लग गया वही मुक्त जीव कहलाता है। उसी की दिव्य कीर्ति ससार मे चिरजीवी रहती है।

कामिनी और अग्नि के बीच मे ज्ञानरूप गरुड है, जिसपर कि भगवती अम्बिका बैठी है। कान मे (दाहिने) कर्णफूल कानो का आभूषण है, जो शास्त्रश्रवण सद्‌वचन सुनने के लिये सकेत करता है। और बाँये कान मे जो शख है वह मूर्खता को सकेत करता है कि हे मानव ! तूने गुरुओ के मुख-कमल से सुनी वीतराग-वाणी को इस कान सुना और दूसरे कान से निकाल दिया। मनन नही किया।

मस्तक पर तृतीय नेत्र ज्ञान का है। हे मानव ! तू विवेकपूर्ण ज्ञान के नेत्र से देख। यह भाव इस मूर्ति के दर्शन से अनुसधान किये हैं। विद्वद्‌ समाज से अनुरोध है कि किसी भी प्रकार की मूर्ति को आप जिसका कि किसी विद्वान ने भाव न समझ पाया हो, कृपया उसका हस्त-चित्र ले कर पूरी जानकारी लेखक से प्राप्त करें।
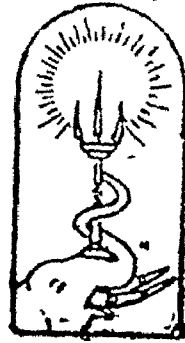
आध्यात्मिक संवाद

पाषाण की दुर्लभ प्रस्तर-मूर्ति का एक रेखा-चित्र है। जोकि गुप्तकालीन (विजय मन्दिर) एक भग्न-मन्दिर से निकली हुई है। इस मन्दिर की ऊचाई १०५ फुट, आधा मील लम्बा व चौडा था। वाममार्गियों के आतक, हिंसा एवं पापाचारमय भावनाओ की निवृत्ति हेतु कल्याणकारी कल्पना की सूझबूझ आचार्य समन्तभद्र को उत्पन्न हुई। आचार्यश्री का जन्म दक्षिण देश में हुआ था। वे जाति के ब्राह्मण थे, जिन्होने वाद-विवाद का लोहा निम्नाकित देशो मे जाकर लिया था। यथा—

> पूर्व पाटलिपुत्र नाम नगरे भेरी मया ताड़िता।
> पश्चान्मालव--सिंधुढक्यविषये कांचीपुरे वैदिशे॥
> प्राप्तोऽहं करहाटकं बहुभटं विद्योत्कटं संकटं।
> वादार्थी विचराम्यहं नरपते, शार्दूलविक्रीडितम्॥
>
> (समंतभद्र)

मूल प्रतिमा शिव और पार्वती जी की है। दाहिनी ओर ब्रह्मा जी चतुर्भुज। चतुर्भुज मे ऊपर के दोनों हाथ मे वेद, नीचे एक हाथ मे अमृत, एक हाथ वरदहस्त मुद्रा है। बाँयी ओर भगवान विष्णु, चतुर्भुज, ऊपर के दाहिने हाथ मे गदा, बाँये हाथ मे शख, नीचे के बाँये हाथ मे अमृत और दाहिने हाथ की मुद्रा वरदहस्त है। शिव जी के दाहिनी ओर स्वामी कार्तिकेय त्रिशूल लिये है। इनके दो हाथ है। बायी ओर विशाल मस्तक, बड़े कान, लम्बी सूड, आँख व जीभ छोटी, हाथ दो, बाये हाथ में लड्डू, दाहिना हाथ सबोधित मुद्रा मे।

शिव जी के चार हाथ-ऊपर के, दाहिने हाथ मे तीन फण का सर्प, नीचे के दाहिने हाथ मे अमृत, ऊपर के बाँये हाथ मे एक फण का सर्प, नीचे का बाँयाँ हाथ स्तन पर। हृदय पर सर्प, कण्ठ मे विष, मस्तक पर तृतिय नेत्र, चन्द्रमा, जटा से गगा, दाहिने पैर के नीचे बैल। बायी जांघ पर पार्वती जी। पार्वती जी के दो हाथ, एक बाँये हाथ मे दर्पण और दाहिने मे कधे के स्पर्श का उल्लेख हमारे इतिहासकार विद्वानों ने स्पष्ट नही किया और न हमे किसी शाला की पाठ्य-पुस्तकों मे पढने को भी मिला।

इस प्रकार की मूर्ति का निर्माण हमारे पूर्वाचार्यो ने क्यो कराया ? कौन से अद्भुत भाव इस कलाकृति मे छुपाये हैं ? जिन्हे हम समझ ही नही सके। पार्वती के बाँये पर के नीचे सिंह का सिर दबा है। यह पाषाण की मूर्ति ढाई फुट ऊची, डेढ फुट चौडो है। कला बडी सुन्दर भव्य भावो सहित सौम्य मुद्रा मे है। अरक्षित यवनों के मर्घट मे एक वृक्ष के नीचे रखी हुई है। इसके निकट अन्य और भी मूर्तिया है जिनके सम्बन्ध मे क्रमश उल्लेख करू गा। विज्ञ पाठक कला एव साहित्यिक त्रुटियो को क्षमा करेंगे, ऐसी आशा है। मेरे निजी निवास स्थान पर एक सग्रहालय है। नगर को नालियो, घूरो पर हमारी सांस्कृतिक निधिया अस्त व्यस्त पडी नष्ट हो रही है। शासन से कोई सुरक्षा को आशा नही, न किसी को इस ओर रुचि है। इस कारण मेरे हृदय मे दुख हुआ। और यह सेवा का अवसर आया।

मुझे खजुराहा मे देशी–विदेशी दर्शको को उपहास करते देखकर अत्यन्त ही दुख हुआ। यह हमारी सास्कृतिक सभ्यता के लिए महान कलक है। अतएव इस सेवा करने की अभिलाषा से अनुसधान लेखबद्ध करना आवश्यक प्रतीत हुआ। वर्तमान एव भावी सतति आदर्शवान बने, होनहार युवक–युवतियो मे धार्मिक सस्कार, माता–पिता–गुरुजन–इष्टदेव आदि के प्रति श्रद्धा और भक्ति का स्रोत उत्पन्न हो, महापुरुष बने, इसलिये—

प्रतिमायें अवलोकते, हट जाता अज्ञान ।
इसीलिये सब पूजते, मान उन्हे भगवान ॥

प्रतिमाओं का हृदय पर, पड़ता बतहु प्रभाव ।
जैसे रूप विलोकते, तैसा होता भाव ॥

वीरो की फोटू निरख, स्वयं फड़कते अंग ।
वारांगनाओं को निरख, सुभग शील हो भंग ॥

लड़कों ने आवारा बनकर, शान को अपनी बेच दिया ।
लड़कियों ने फैशन के बदले, आन को अपनी बेच दिया ॥

✕

शिवसंवाद का आध्यात्मिक तथा भावात्मक चित्रपरिचय—

चेतन–ब्रह्म, शिव एक है। अवस्थाये प्रथक् प्रथक् हैं। चेतन और कर्म अनादिकाल से चारो गतियो (नरकगति, मनुष्यगति, तिर्यचगति, और देवगति) मे मिथ्यात्व के वशीभूत गाढ--निद्रा मे सोया हुआ है। जब भव–स्थिति घटी और काल--लब्धि का आगमन हुआ तब ज्ञानदृष्टि से स्व--पर का बोध हुआ, तब सुबुद्धि (माता पार्ववती जो) बोली-कत (शिव) भो स्वामिन् ! तुम्हारे साथ बडे बलवान योद्धा कर्म लगे हं और चारो ओर से घेरे है। तब शिव जी कहते हैं कि ऐसी युक्ति बताओ जिससे छुटकारा मिले।

तब श्री माता पार्वती जी दर्पण दिखा कर शिक्षा देती हैं कि प्रथम आत्मचिंतवन, दूसरे भगवत स्मरण करो। इतना सुन शिव जी ध्यानमग्न हो गये। इतना देख कर कुबुद्धि रिसा गई और कहने लगी कि यह कुलक्षणी कहा से आ गई मैं राजा मोह की बेटी और चेतन की विवाहिता स्त्री हूँ।

चेतन उत्तर देते हैं—अब तुझसे स्नेह नही, अब मेरा मन सुबुद्धि के गुणों की ओर लग गया है। तब कुबुद्धि अप्रसन्न हो पिता मोह के पास पहुंची। पिता ने पुत्री की प्रार्थना सुन सम्पूर्ण दूतों के सरदार कामदेव को भेज दिया। चेतन ने कामदेव को त्रियोग (तीन फण के सर्प) द्वारा वश में कर लिया और दूत को क्रोधित हो (एक फण का सर्प) समय को पकड़ लिया। चेतन और मोह का युद्ध प्रारम्भ हुआ। चेतन विचारता है कि यदि मैं मोह के जाल में फंसा तो वह मुझे मार डालेगा अर्थात् अज्ञानान्ध में फंस कर अपने आत्मस्वरूप को भूल जाऊ गा।

कामदेव चेतन से छूट कर पिता मोह के पास जाता है और ससैन्य अपने दो मन्त्री रागद्वेष को प्रधान बनाकर लाता है। इनके पीछे समस्त परिवार है।

आठ कर्म क्या कहते है ?

ज्ञानावरणी कर्म कहता है—मेरे पास पांच प्रकार की सेना है। जिसके द्वारा ससार के जीवो को कैद कर रखा है। दर्शनावरणी कर्म कहता है—मेरे पास उनमादी नौ रस के वीर हैं। उन सबके प्रसाद से संसार के सभी जीव अंधे हो रहे हैं। वेदनी कर्म कहता है—मेरे पास दो बड़े योद्धा हैं जो तीर्थंकरो के समक्ष खड़े रहते हैं। आयु कर्म कहता है—मेरे पास चार जाति के शूरवीर हैं। उनसे कोई कायर युद्ध नहीं कर सकता। जब तक आयु कर्म बलवान है उसी स्थिति तक वह रहते हैं, अन्यथा मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

नाम कर्म कहता है—मैं पुद्गल का स्वरूप हूँ, इसमे आत्मा बसती है। मेरे बगैर संसार नहीं चल सकता। मेरे में रूप रस गंध वर्ण इत्यादि बहुत से रंग हैं और तेरानवे साथी हैं। जो इनकी बराबरी करेगा वह जन्म और मरण अवश्य करेगा। गोत्र कर्म कहता है—मैं स्वभाव से सूर्यवंशी हू। छिनमें राजा और छिन में रंक बना देता हूँ। अंतराय कर्म कहता है—देखो महाराज सबके आगे पांच सुभट योद्धा हैं। आत्मा की सुधि बुधि का हरण करते, हाथ में हथियार नहीं लेने देते, निराधार रण में युद्ध करते है। ऐसे एकसौ वीस सुभट योद्धा हैं। उनके गुणो को ईश्वर ही जानते है। इस प्रकार राजा मोह के सुभटों का वर्णन किया।

इस प्रकार तृतिय बाँया हाथ शिव जी का माया मोह से विरक्तता का सूचक है। त्याग मे ही सच्चा सुख है। जो इस अमृत का पान करेगा वह आवागमन से रहित हो जायगा। इस प्रकार पार्वती जी अपना दाहिना हाथ शिव जी के दाहिने कंधे पर रख कर सम्बोधित करती हैं।

चेतन सुनकर सावधान हुये और ज्ञान को बुला कर सलाह की।

ज्ञान ने कहा—अपनी फौज तैयार करो और राजा मोह का मान भंजन करो।

ज्ञान ने अतमूहूर्त मे सेना तैयार की। (१) स्वभाव (२) सुध्यान (३) चारित्र (४) विवेक (५) संवेग (६) समभाव (७) सतोष (८) धैर्य (९) सत्य (१०) उपशम (११) दर्शन (१२) दान, शील, तप, भाव। इस प्रकार सेना तैयार कर चेतन को ज्ञान ने दिखाया। हे प्रभो ! तुम्हारी शक्ति अनन्त है। अनन्तचतुष्टयादि अपार बलवान सुभटो सहित सेना तैयार है, जिनकी संख्या का अन्त नही आ सकता।

मोह मिथ्यापुर का राजा है, जिसने समस्त देशो पर अधिकार किया है। जिसके साथ अज्ञानभाव के अनेको शूरवीर हैं। जिसके राग-द्वेषादि सेनानायक और मत्रीगण हैं। संशय जिसका अटूट गढ है। विषय वासनाये जिसकी रानी है। क्रोध, मान, माया, लोभ जिनके सूरवीर सेनापति पुत्र है। और अव्रतपुर के महत हैं। भ्रमचक्र जिनका आयुध है। अनेको नागफाँस की विद्यायें है, कठोर भाव के जिनके वाण हैं। इस प्रकार राजा मोह ने चेतन पर अनादिकाल से जाल डाल कर चौरासी लाख योनियो मे नाम धारण कराये।

इस प्रकार से माता पार्वती और ज्ञान ने चेतन को राजा मोह की महान सेना का वर्णन किया। ज्ञान ही चेतन का तृतिय नेत्र है। जब तृतिय नेत्र ज्ञान का खुलता है तभी शाति उत्पन्न होती है। शाति का द्योतक शिव जी के मस्तक पर चन्द्रमा है।

धीरज जाको पिता, क्षमा है जाकी जननी।
सत्य वचन है मित्र, दया है जाकी भगिनी॥
शान्ति सुवा सी नारि, सरि सज्जा लहि पौढ़े।
ऐसे मुनि द्रगराज पौढे देखे हम द्रगन॥

(चेतन कर्म चरित्र भगवती दास कृत से उद्धृत)

(चौपाई १५ मात्रा)

मोह सराग भाव के थान, मारहिं खेंच जीव को तान।
जीव वीतरागहिं निज ध्याय, मारहिं धनुष बाण इहि न्याय॥
तबहिं मोह नृप खडग प्रहार, मारै पाप पुण्य दुइ धार।
हंस शुद्ध वेदै निज रूप, यही खडग मारें अरि भूप॥
मोहचक्र ले आरत ध्यान, मारहिं चेतन को पहिचान।
जीव सुध्यान धर्म की ओट, आप बचाय करै पर चोट॥
मोह रुद्र बरछी गहि लेय, चेतन सन्मुख घाव जु देय।
हंस दयालु भाव की ढाल, निजहि बचाय करहि पर काल॥

मोह अविवेक गहैं जम दाढ़ि, घाव करैं चेतन पर काढ़ि ।
चेतन ले थम धर सु विवेक, मारि हरैं वैरी की टेक ॥

चेतन क्षायक चक्र प्रधान, वैरिन मारि करहिं घमसान ।
अप्रत्याख्यान मूरछित भये, मोह मारि पीछे हट गये ॥

जीत्यौ चेतन भयो अनन्द, बाजहिं शुभ बाजे सुख कंद ।
आय मिले अव्रत के भाग, दर्शन प्रतिमा आदि संयोग ॥

व्रत प्रतिज्ञा दूजो भाव, तीजो मिल्यो सामायिक राव ।
प्रोषध व्रत चौथो बल वन्त, त्याग सचित व्रत पंच महंत ॥

षष्ठ सुब्रह्मचर्य दिन राय, सप्तम निश दिन शील कहाय ।
अष्टम पापारंभ निवार, नवमों दश परिगह परिहार ॥

किंचित ग्राही परम प्रधान, महा सुबुधि गुण रत्न निधान ।
दशमों पाप रहित उपदेश, एकादशम भवन तज वेश ॥

प्रासुक लेय अहार सु जैन, कहिय उदंड विहारी ऐन ।
ये एकादश भूप अनूप, आय मिले श्रावक के रूप ॥

चेतन सट सों करे जुहार, परम धरम धन धारन हार ।
निज बल हंस करहिं आनन्द, परम दयाल महा सुखकन्द ॥

(दोहा)

इह विधि चेतन जीतकें, आयो व्रत पुर मांहि ।
आज्ञा श्री जिनदेव की, नेकु विराधैं नांहि ॥

जिह जिह थानक काज के, कीन्हें सब विधि आय ।
अब भावैं वैराग्य तह, सुनहु भविक मन लाय ॥

ज्ञान ही गणेश हैं। जिनका विशाल मस्तक गुणों का सागर है जो लम्बोदर कहलाते हैं जो दूर से ही गुणों का भोजन करते है। सूंड ही जिनका लम्बा हाथ हैं। दो विशाल कान और छोटी एक जीभ इसलिये है कि—

कम कहना सुनना अधिक, ये हैं परम विवेक ।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ॥

प्रथम दर्शन आवश्यक—

सब संसारी जीव को पहिले दर्शन होय।
ताके पीछे ज्ञान है, उपजें संग न दोय ॥
उपजें संग न दोय, कोइ गुण किसि न सहाई।
अपनी अपनी ठौर, सबै गुण लहै वड़ाई ॥
पै श्री केवलज्ञान को, होय परम पद जब्ब।
तब कहुं समै न अंतरो, होंहि इकट्ठे सब्ब ॥
दर्शन सुज्ञान चारित्र मय, यह है परम स्वरूप मम।
कारण सु मोक्ष को आपु तें, चिद्‌विलास चिद्रूप क्रम ॥

— गुरुरुवाच —

गुरु बोले समकित बिना, कोऊ पावै नांहि।
सबै ऋद्धि इक ठौर है, काया नगरी मांहि ॥
काया नगरी जीव नृप, अष्ट कर्म अति जोर।
भाव अज्ञान दासी रचे, पगे विषय की ओर ॥
विषय बुद्धि जहाँ है नहीं, तहां सुमति की चाह।
जो समती सो कुल त्रिया, इहि याकौ निरवाह ॥
आप पराये वश परे, आपा डारयो खोय।
आप आपु ना जानहीं, कहो आपु क्यों होय ॥
आप न जानें आपको, कौन बतावनहार।
तबहिं शिष्य समकित लह्यो, जान्यो सबहिं विचार ॥
इहि गुरु शिष्य चतुर्दशी, सुनहु सबै मन लाय।
कहै दास भगवंत को, समता के घर आय ॥

(कवित्त)

कोटि कोटि कष्ट सहे, कष्ट में शरीर दहे।
धूम्रपान कियो पै न, पायो भेद तन को ॥

बृक्षन के मूलि रहे, जटान में झूलि रहे ।
मान मध्य भूलि रहे, किये कष्ट तनको ॥
तीरथ अनेक न्हये, तिरत न कहूँ भये ।
कीरति के काज दयो, दान हू रतन को ॥
ज्ञान बिना बेर बेर, क्रिया करी फेर फेर ।
कियो कोऊ कारज न, आतम जतन को ॥

इस प्रकार स्वामि कार्तिकेय सबोधित कर कहते हैं।

ब्रह्म-निर्णय-चतुर्दशी

(दोहा)

अ सि आ उ सा जु पंच पद, बन्दौं शीस नवाय ।
कछु ब्रह्मा कछु ब्रह्म की, कहूं कथा गुण गाय ॥
ब्रह्मा ब्रह्मा सब कहैं, ब्रह्मा और न कोय :
ज्ञानदृष्टि धर देखिये, यह जिय ब्रह्मा होय ॥
बृह्मा के मुख चार है, याहू के मुख चार ।
आंख नाक रसना श्रवण, देखहु हिये विचारि ॥
आंख रूप को देख कर, ग्रहण करे निरवार ।
रागी द्वेषी आतमा, सबको स्वादन हार ॥
नाक सुवास कुवास कौ, जानत है सब भेद ।
राचै विरचै आतमा. यों मुख वोलै वेद ॥
रसना षटरस भुञ्जती, परी रहै मुख माँहि ।
रीझै खीझै आतमा, मुख यातें ठहराँहि ॥
श्रवण शब्द के ग्रहण को, इष्ट अनिष्ट निवास ।
मुख तो सो ही प्रकट है सुख दुख चाखै तास ॥
ये ही चारों मुख बने, चहुं मुख लेय अहार ।
तासों बृह्मा देव यह, यही सृष्टि करतार ॥

हृदय कमल पर बैठिकें, करत विविध परिणाम ।
करता नाहीं कर्म को, ब्रह्मा आतमराम ॥

चार वेद ब्रह्मा रचे, इनहू तजे कषाय ।
शुद्ध अवस्था ये भये, यह विन शुद्ध कहाय ॥

नाना रूप रचे नये, ब्रह्मा विदित कहान ।
नाम कर्म जिय संग ले , करत अनेक विनान ॥

ब्रह्मा सोई ब्रह्म है, यामें फेर न रंच ।
रचना सब याकी करै, तातें कह्यो विरंच ॥

ब्रह्मा जी के दोनो हाथो मे वेद है। वेदो मे लिखे हुये अमृत का पान, पठन-पाठन और मनन से ही होता है। जो विद्या पढेगा वह ज्ञानामृत का पान करेगा। यही अमृत है जो तृतीय हाथ मे है। और चतुर्थ हाथ बरद्हस्तमुद्रा मे सबोधन करता है।

अहं—विष्णु

देखो मेरे चार हाथ हैं—ऊपर के बांये हाथ मे शंख है। जो मेरे संगठन; न्याय; धर्म एवं राजनीति का सबोधक है। जो मेरे त्याग, क्षमता, उदारता एवं दया को भावनाओं का प्रतीक है। जो मेरे शखनाद को सुनकर मनन और अध्ययन करता है उसको विश्व मे अवश्य विजय होती है। तथा मेरे दूसरे दाहिने हाथ में गदा है जो मेरे राज्यसचालन, दंडविधान का द्योतक है। बिना भय के राज्य नही चलता। तीन चोजें तीन चीजो के बगैर नहीं ठहरती—(१) इल्म बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के (३) माल बगैर तिजारत के।

देखो मेरे तृतीय हाथ मे अमृत है। और चतुर्थ हाथ संबोधन मुद्रा मे है। मेरा राज्य संचालन युक्तियुक्त है। मैं ही ससार का पालनकर्ता विष्णु हूँ।

मेरी स्त्री लक्ष्मी है। लक्ष्मी के कई नाम हैं। इसे माया भी कहते हैं। वह तीन प्रकार की है—पैसा, पृथ्वी, स्त्री।

माया छाया एक है, घटै बढ़ै छिन मांहि ।
इनकी सगति जे लगें, तिनहिं कहूँ सुख नांहि ॥

एक दिना लक्ष्मी प्रतें, पूछत हैं कवि एम ।
दाता पडित सूर तजि, रहै सूम घर केम ॥

लक्ष्मी कहती है—

(कवित्त)

सूर घर जाऊं तो अकेली रह जाऊं रांड ।
वो तौ जूझि जूझि मरि जाय रण-थान में ॥
दाता घर जाऊं, तौ मै आदर न पाऊं नेक ।
वो तौ भरि भरि थाल फैंकि देत दान में ॥
पंडित के घर जाऊं, सौति विद्या से लड़ाई रहै ।
दोय तलवार न समॉय एक म्यान में ॥
तातें सेठि सूमचंद ढूंढ लियो ठीक मैंने ।
खरचै न खाय, जोड़ि धरत मकान में ॥

ब्रह्म—विष्णु कहते हैं मेरा वाहन गरुड है, जो सांसारिक विषय भोगादि सर्पों का भोजन करता है। नाग मेरी शैय्या है जो मोह के वशीभूत आत्मस्वरूप का रसास्वादन नही करने देता है। उसे मैंने दबा रखा है ।

एक दिन आत्मा ने शरीर से कहा—

सोलै श्रृंगार विलेपन भूषण, सों निशि वासर तोहि संवारे ।
पुष्ट करी बहु भोजन पान दे धर्म रु कर्म सबै हि विसारे ॥
सेय मिथ्यात्व अन्याय किये बहु, तो तन कारन जीव संहारे ।
भक्ष गिनौ न अभक्ष गिनौ, अब तौ चलि काय तू संग हमारे ॥

शरीर का उत्तर—

ये अन-हौनी कहौ कहा चेतन, भांग खई कि भये मतवारे ।
संग चली न चलूं कबहूँ, लखि ये तौ स्वभाव अनादि हमारे ॥
इन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्रन के नहिं, संग चली, तुम कौन विचारे ।
कोटि उपाय करौ क्यों न चेतन, मैं न चलूं अब संग तुम्हारे ॥

ज्ञान की साकारता

ज्ञान के घट को जानने के लिये उपयुक्त होना (निश्चय करना) साकारता है। ज्ञान की साकारता का साधारण अर्थ यह समझ लिया जाता है कि जैसे दर्पण में घटादि पदार्थों का प्रतिविंब पडता है उसी समूह ज्ञान का भी घटाकार हो जाना ज्ञान का घट में प्रतिबिंब पहुच जाना हैं। पर वास्तव मे ऐसा नही है। घट और दर्पण दोनों मूर्त और जड़ पदार्थ हैं। उनमें एक दूसरे का प्रतिबिंब पड सकता है। परन्तु चेतन और अमूर्त ज्ञान में मूर्त जड़ पदार्थ का प्रतिबिंब नही आ सकता और न अन्य चेतनान्तर का भी ।

चैतन्यशक्ति के दो आकार होते हैं। (१) ज्ञानाकार (२) ज्ञेयाकार। ज्ञानाकार प्रतिबिंब शून्य शुद्ध दर्पण के समान पदार्थ विषयक व्यापार से रहित है।

ज्ञेयाकार सप्रतिबिंब दर्पण को तरह पदार्थ विषक व्यापार सहित होता है। साकारता के सम्बन्ध मे जो दर्पण का दृष्टांत दिया जाता है उसी से यह भ्रम हो जाता है कि ज्ञान में दर्पण के समान लम्बा, चोड़ा, काला प्रतिबिंब पदार्थ की आभा है। और इसी कारण ज्ञान साकार कहलाता है। यहाँ दर्पण के दृष्टांत का इतना ही प्रयोजन है कि चैतन्य धारा ज्ञेय को जानने के समय ज्ञेयाकार होती है। शेष समय मे ज्ञानाकार। (धवला—प्र० पु० पृ० ३८० : तथा जयधवला-प्र० पु० पृ० ३३७)

हंस--वाहन का अर्थ क्या है ?

जोवात्मा ही हंस है। इसे ब्रह्म, चेतन, जीव, विष्णु, शिव, ब्रह्मा कहते हैं। इसी हंस पर जिनराज की वाणी जिसे सरस्वतो, विद्या, माता कहते हैं यही जैन शासन देवो है, जो वीतराग पुरुषो द्वारा कही गई है। स्याद्वादवाणी कही जाती है। यह पठन पाठन और स्मरण तथा मनन से ही इस हस-मयूर पर आरूढ होती है। इसी वाणो में दूध और पानो को पृथक करने की अपूर्व शक्ति है। इसे पहिचानने के लिये सद्गुण युक्त हंस पक्षो को आचार्यो ने सम्बोधनार्थ वाहन बतलाया है।

आत्मचिंतवन के लिये ज्ञान दर्पण है। ब्रह्मा की स्त्री सरस्वती पुण्य के साथ शुभरूप और पाप के साथ अशुभरूप आत्मा को अपवित्र करने वाले भयंकर सर्प हैं जो संसार कूप में मुंह फाड़े बैठे हैं।

शुभ भावो का परिणमन होने पर त्याग और तपस्या द्वारा ही छुटकारा मिलता है। यह माता पार्वती जी जो ज्ञान दर्पण हाथ मे लिये हैं बोध कराती हैं। ज्ञान प्राप्त होते ही तृतीय नेत्र ज्ञान का खुल जाता है। आत्मा मे शान्ति का स्रोत पैदा होता है अर्थात् चंद्रमा का उदय होता है, जो शिव जी के मस्तक पर दिखाया गया है। चन्द्रमा का उदय होते हो संशय और विभ्रम की जड़ें नष्ट हो जाती हैं। स्व और पर का बोध होता है। पांच ज्ञान-(१) मतिज्ञान, (२) श्रुतज्ञान, (३) अवधिज्ञान, (४) मनःपर्ययज्ञान और (५) केवलज्ञान रूप लक्ष्मी प्रकट हो जाती है।

यह पवित्र मन ही कैलाश हैं, जिसे राग-द्वेषादिरूप रावण अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर उठा रहे हैं। (चित्र में देखिये) सुमति रूप गौरा जो क्रोधरूप सिंह को अपने बाँयें पैर से दबा रही हैं। जो कि इनका बाहन हैं।

शिवजी का बाहन बैल है। जो शिवजी के पैर की आड़ में बैठा है। वृष धर्म को कहते वृषभ धर्म धारण करने वाले को इस ही कारण से वृषभ कहा गया हैं।

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे को आदर नहीं, तीन करें भड़ फेर ॥

ज्येष्ठ पुत्र धर्म का आदर न होने से ही हमारी मनोवृत्तियाँ और हार्दिक प्रेम इस विज्ञान के युग में पतन की ओर तो है ही, किन्तु चरित्र और भी गिरता ही जा रहा है।

धन यदि गया, गया नहिं कुछ भी, स्वास्थ गये कुछ जाता है।
सदाचार जो गया मनुज का, सर्वस्व ही लुट जाता है ॥

सच्चरित्र व्यक्ति तेजस्वी होता है। भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है। इसी देशमें महापुरुषों का जन्म हुआ है।

पशु की तो पनहीं बने, नर को कछू न होय।
नर जो कछु करनी करे, तो नर नारायण होय ॥

(कवित्त)

भूलि मत जैयो यह, माया महाराजन की।
राज मई करम यह, फुहारे की नहर है ॥
बदा बदी हांके देत, आवत अंधेरी पाख।
डांके सब चाँदनी सी, कला ना ठहर है ॥
करल्ले निकाई-करवी, कीरति दीनन पैं।
करहो निकाई संग, सोई तौ ठहर है ॥
पाई राज द्वारो पुन्य, डगर सुधारो आप।
राजद्वारे की बहार यारो, पारे की लहर है ॥

भगवान आदिनाथ का चिन्ह वृषभ है। इन्हीं ने कृषि उत्पादन क्रिया बतलाई। इन्हीं ने कल्पवृक्ष लुप्त होने से बृषभ ही उपकारी प्राणी बताया था। जिसके ऋण से मानव कभी भी उऋण नही हो सकता। जिस देश में घी और दूध की नदियाँ बहती थीं आज प्रायः लुप्त सा होता जा रहा है।

इन प्राचीन कलामय मूर्तियो में पूर्वजो ने अमूल्य दैन छुपा रखी है। यदि समाज तथा शासन का सहयोग प्राप्त हुआ तो प्रकाश में लाने के लिये आकाँक्षी हूँ। मध्यप्रदेश शासन गौरव-वृद्धि को प्राप्त हो, इस मंगल-कामना से दो हजार अदभुत मूर्तियां, अनेकों भाषाओं के शिलालेख, ताम्रपत्र इत्यादि संग्रहालय सम्बन्धी सामग्री अर्पित करने का भी लेखक अभिलाषी है।

✻

अध्याय—११

सम्राट् अशोक की ससुराल विदिशा के जैन श्रेष्ठि के घर क्यों ?

विदिशा में सम्राट् अशोक (वर) एवं श्रेष्ठिपुत्री असंघमित्रा (वधू)

प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार के प्रधान मन्त्री महोदय प० जवाहरलाल नेहरू ने दिनाक १२ मई १९६३ को लखनऊ मे दिये भाषण मे बताया था कि–हर गाव मे सग्रहालय निर्माण किये जाय। किन्तु स्वप्न साकार कैसे हो सकता है ? जबकि पक्षपात और विद्वेषात्मक भावनाओ के साथ सेवाओ मे रुचि लेने वाले अधिकारीवर्ग अपनी उदारता का परिचय न देवें तथा विरोधी बने रहे।

सबसे प्रथम व्यक्ति प्रधान मन्त्री जी के स्वप्न को साकार बनाने वाला—विदिशा नगर-निवासी पुरातत्व अन्वेषक राजमल मडवैया है, जो विदिशा और भोपाल नगर के सग्रहालयो को समस्त प्रकार की सामग्री (मूर्तिया, शिलालेख, ताम्रपत्र, स्तभ, स्तभशीर्ष, तोरणद्वार, मुद्राये, चित्र, हस्त लिखित ग्रन्थ आदि) प्रान्तीय शासन को अर्पित करने को तैयार है।

संग्रहालय कैसे निर्माण होगे ?

सम्राट अशोक की प्रस्तर-प्रतिमा साची मे लगे तोरणद्वार के पाषाण की, सफेद रग, लम्बाई ८, चौडाई ४।।।, मोटाई १।। फुट। द्रव्यलोलुपियो ने स्थानान्तर करने मे सम्राट अशोक के हाथ कोहनी से कोचा तक तोड दिये है। तथा महारानी के सीने के नीचे से कमर तक का भाग भी टूटा हुआ है। (ल० ५-३,-१।। क्रमश है)

लोग कहते थे कि बदलता है जमाना अक्सर।
मर्द वह है, जो जमाने को बदल देता है ॥

अभी तक तो इतिहासकार लिखी-पढी बातो से सम्राट अशोक की ससुराल विदिशा को बताया करते थे। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण सम्राट अशोक (बर) एव महारानी असघमित्रा (वधू)

के वेष मे प्रतिमाये बडी मनमोहक प्राप्त हुई है। कलाकार ने अद्‌भुत कारीगरी की है। जिस प्रकार से लेखक अपनी कलम से मनोनीत भावों का प्रदर्शन करते है उसी प्रकार से कलाकार ने भी कोई कमी नही की है। जो प्रतिमा के अंग-प्रत्यंग से अपनी प्रतिमा का दिग्दर्शन कर रहे है।

चित्र--परिचय

सम्राट के चरित्र, वैभव, शक्ति, प्रभा, पुरुषार्थ, उदारता, गुणग्राह्यता, परोपकार-बुद्धि, विरागता और जीवन के आदर्श को साचे में ढालकर अमर बना दिया है। यह सभी जानते हैं कि राज्यलिप्सा के पीछे अपने १० भाइयो का जोकि प्रथक् प्रथक् गवर्नर थे प्राणघातक बना। और लाखों मनुष्यो को मौत के घाट उतार दिया।

परिणति सब जीवन की, तीन भांति बरणी।
एक पुण्य एक पाप, एक राग हरणी॥
बालापन हंस खेल गमायौ, ज्वानीपन में तकुआ से।
आये बुढ़ापे माला ले लई, राम जानलये घपुआ से॥

योवनावस्था मे मानव विवेक रहित अन्धा बन कर, सत्कर्म या दुष्कर्म को नही देखता। यौवनावस्था अकेली विनाश का कारण बन जाती है। यदि धन, सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेकता साथी बन जांय तो कौनसी कमी बाकी रह जाती है?

उद्यम, साहस, धीरता, पराक्रमी, मतिमान।
एते गुण जा पुरुष में, सो निर्भय बलवान॥

कलिग-विजय मे नरसहार देख कर, मानव-जीवन की क्षणभंगुरता का चित्रपट समक्ष में आया। विचारो मे विरागता पुण्यप्रकृति ने समक्ष मे ला दी। युद्ध बन्द कर उज्जैन की ओर प्रस्थान कर दिया। पुण्ययोग से मार्ग मे एक ब्राह्मण का बालक अपने पिता से कह रहा था कि पिता जी! यदि अशोक मेरी बात सुने, समझे और मनन करे तो उसे मै विश्व का एक ऐतिहासिक महापुरुष बना सकता हूँ। (वह जीवों पर दया करे, अपनी राज्यसमृति में फलदार वृक्ष, धर्मशालाये, कुये, बावडी, बाग, स्तंभो पर सुभाषित तथा शिलालेखादि निर्माण के सम्बन्ध मे चर्चा कर रहा था), किन्तु पिता उसे बुरी तरह से धमका रहा था और कह रहा था कि वह बडा निर्दयी और हत्यारा है। जिसने वंश के वंश नष्ट कर डाले हैं। क्या तू हमारे वंश को भी नष्ट कराना चाहता है?

यह बात एक गुप्तचर ने सुनी और रात्रि की घटित घटना सम्राट को कह सुनाई। प्रात.काल ही सम्राट ने पिता-पुत्र ब्राह्मण को दरबार मे बुलाने का आदेश दिया। ब्राह्मण को बुलाने जब सैनिक आये तो वह भय से कांप गया, किन्तु सैनिक उसे सम्मानपूर्वक दरबार में ले गये। बालक बडा साहसी और बुद्धिमान था। निर्भीकतापूर्वक अपनी शुभ कामनायें अशोक को

कह सुनाई। सम्राट ने उस वालक की चातुर्यता और निर्भीकता पर प्रसन्न होकर वह आदर्शपूर्ण कार्य किया जिससे आज सम्राट हजारो वर्ष बीत जाने पर भी जीवित हैं।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सम्मान ॥

जव अशोक ससैन्य विदिशा मे आये तो एक विद्वेषी ने बदले की भावना से विदिशा के एक श्रेष्ठि की पुत्री को हरण कराने का सकल्प करके पुत्री असवमित्रा के रूप-लावण्य, धार्मिक बुद्धि और पराक्रम की प्रशसा कह सुनाई।

अशोक ने श्रेष्ठि से कन्या को लाने का आदेश दिया, किन्तु श्रेष्ठि यह जानता ही था कि यह आतताई है, स्वधर्म रक्षा कठिन है। वह उपाय सोच कर धैर्य को साथ लेकर मिला और सम्राट से वार्तालाप किया।

पुत्री के प्रकरण मे उसने आदर्शपूर्ण कार्य करने (साँची मे बौद्ध विहार बनाने) के लिये प्रश्न उपस्थित कर दिया। और अहिंसा की छाप अशोक के हृदय-पटल पर अकित कर दी। श्रेष्ठि की वात स्वीकार कर लेने के पश्चात् विवाह की तैयारी की गई। उस समय सम्राट अशोक और महारानी दोनो बर--वधू के वेश मे थी। कलाकारो से मूर्ति निर्माण कराई गई थी, जो अनुसंधान से प्राप्त हुई है।

मर कर होवे अमर, वही बस मरना होवे।
लघु कुटुम्ब हो नहीं, जिसे सारा जग रोवे ॥

अशोक के सिर पर ११ फण का सर्प राज्य के दबदबे का सूचक है। जिनके अष्टांग और त्रियोग चारो ही पुरुषार्थ मे अवतरित हैं।

धर्म, अर्थ अरु, काम का. साधन यही अमोल।
कबहूं मती बजाइये, निज स्वारथ का ढोल ॥

सिर पर पुण्यकार्यो मे भाग लेने के लिए धर्मचक्र का वोधक सेहरा (मुहर) विवाह समय जो वॉधा जाता है, रत्नजटित पगडी के पेंचो से वधा सुशोभित है। जिनका हृदय मान सत्कार्यो के लिये सदैव को नम्रीभूत हो गया है।

कानो मे कुडल इसलिये सुशोभित हैं कि—

कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक ॥

मुख की शोभा—

शब्द सम्हारे वोलिये, शब्द के हाथ न पांव।
एक शब्द औषधि करे, एक शब्द करे घाव ॥

कण्ठ की शोभा—

सत्य कण्ठ–भूषण कहा, कर का भूषण दान ।
शास्त्र श्रवण भूषण सुभग, कहत जिनागम कान ॥

गले में रत्न गोप परोपकार का सूचक है—

भर लेते है पेट, सभी है जिनके काया ।
पुरुषसिंह है वही, भरे जो पेट पराया ॥

इसलिये विद्याध्ययनार्थं विश्वविद्यालय निर्माण कराकर अशोक की ओर से चार दान (विद्या, औषधि, अभय, आहार) की राज्य की ओर से व्यवस्था की गई थी।

हाथ में कमल लक्ष्मी का द्योतक है, इसलिये कहा है—

दधिसुत सुत सोहे नहीं, दधि की सुता न होय ।
भुआ भतीजे के बिना, बात न पूछे कोय ॥

हृदय पर मौतियों का हार क्या संकेत करता ?
एक मौती क्या कहता है ?

मोती अकेला कान में या नाक में है झूलता ।
मलद्वार का सेवक बना, कर जाति की प्रतिकूलता ॥

सम्पूर्ण मोती क्या कहते हैं ?

जब तक न माला में मिलेगा, वह न उरपर आयगा ।
कर जाति का अपमान कोई, मान कैसे पायगा ? ॥

कमर क्यों कसी हैं ?

काम मर्दों का नहीं, कौल अधूरा करना ।
जिस राह में कदम रखो, उसे पूरा करना ॥

धर्म, न्याय, नीति, दया, क्षमा, सतोष धारण कर सत्कार्यो द्वारा अशुभ कर्मों की निर्जरा करना और आगे बढ़ना । जिन महापुरुष ने अपने राजकीय गौरव को इतिहास के क्षेत्र मे जीवित रखा है चिरस्थाई बनाया है सद्शिक्षाये लेना हैं।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान ।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

महारानी असंघमित्रा का चित्र-परिचय

विकसत सब गुण शील में, शील सुगुण की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ॥

प्राचीन भारत मे यथा नाम तथा गुण के अनुसार ही नाम रखने की प्रथा थी। जीवन मे घटित घटनायें, योगी जनो के अनुभवी ज्ञान का एक चित्रपट है। जो प्राय: सभी धर्मों में प्राप्त है, समझने की वस्तु है। यह सभी जानते हैं कि नारी को नागन कहा है, क्योकि यह विषयो की आगार है। सिर के बालो से स्पष्ट है कि सिर की चौड़ाई और चोटी का अन्तिम सिरा सर्प के समान है। यह हसते खेलते ही अपने विषय-वासनाओ द्वारा जीवनयात्रा समाप्त कर देती है, तथा क्रोधाग्नि प्रज्वलित कराती है। क्रोध एक प्रकार का सर्प है। इसका काटा हुआ नही बच सकता। किन्तु सर्प के काटे की औषधि एँवं मंत्र है। किन्तु इसके काटे की कोई औषधि नही है। और क्रूर स्वभाव के कारण यह सिहनी भी है। इसका दूसरा नाम लक्ष्मी भी है। यह आते हसती और जाते रुलाती है। लक्ष्मी का दूसरा नाम दौलत है। इसमे दो लतें हैं—पहले तो गर्व कराती और जाते समय कमर तोड देती है। नारी और लक्ष्मी दोनो का मद चढता है। इसके चार बेटे हैं—

लक्ष्मी के सुत चार है, धर्म अग्नि नृप चोर ।
जेठे कौ आदर नहीं, तीन करें भड़फोर ॥

नर नारी का मन समुद्र है, वाणी गगा है, चेतन-आतमा बहन हैं। शरीर से क्रियायें होने से ब्रह्मा भी है। (अह ब्रह्मास्मि) पालनकर्ता होने से अह विष्णु. भी हैं। पैसा, पृथ्वी, स्त्री इन्हे सत जनो ने झगडे की मूल माया कहा है।

नारी के उन्नत स्तन मासपिंड, रक्त पीपादि से भरे होने पर भी कामी जन मसलने और स्पर्श करने मे आनन्द मानता है। और भोग भोगता हुआ तृप्त नही होता।

काल हाथी है—जो इस ससार को सूड से पकड कर चतुर्गति रूप सर्पों के मुंह मे डालना चाहता है।

नाग चतुर्गति मुख फैलाये, काल करी ने खींचा है।
यह संसार बृक्ष है जिसको, सुख आशा ने सींचा है ॥
योवन पाया धन जन पाया, सभी बृथा है पाना।
अगर नही दुनियां के हित में, अपना हित पहिचाना ॥

आचार्यो ने नारी के शरीर मे (क्षत्रचूडामणि मे) कहा है—

नारी जघनरंध्रस्थ, विण्मूत्रमयचर्मणा ।
बाराह इव विड्भक्षी, हन्त मूढ़ाः सुखायते ॥

चर्म से बनी, मल मूत्र से भरी, रक्तादि बहने वाली नदी के समान घृणायुक्त अपवित्र वस्तु को योगीजनों ने निन्दनीय माना है। कामीजन बार वार छूता संघर्षण करता हुआ आनन्द मानता है। और शूकर अपवित्र वस्तु को खाने मे आनन्द मानता हैं। दोनो के एक ही मार्ग हैं। इसी लिये योगीजनो ने कामीजन को शूकर की समानता दी है।

महारानी असंघमित्रा का बाया हाथ कमर पर रखा अधोभाग की ओर सकेत कर रहा है। 'यथा नाम तथा गुण' के अनुसार दोनो बर एव बधू निषेध कर रहे हैं। नारी (महारानी) के सिर पर ५ फण का सर्प पाचों ही इन्द्रियो से सम्बन्ध रखता है।

(१) विवाह का प्रतीक सत्कार्यों मे भाग लेने के कारण सेहरा (मुहर) बंधा है।

(२) राज्यवैभव का प्रतीक सिर पर सर्पो का फण दबदबे और विष का सूचक है।

(३) सिर पर बेदा और बोर सौभाग्य का प्रतीक एव विवाह के समय का बोध कराता है।

(४) हाथ मे कमल से भावार्थ है कि मैं लक्ष्मी हूँ, मै ही गार्हस्थ जीवन की नौका की केवट हूँ, और दशो ही अवतारों की जननी हूँ।

आचाय कहते है—

नर तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान ।
इन्द्रिय गण घोड़े विरल, चढ़ पावे धीमान् ॥

जिनका मन पवित्र है, राग परिणति से रहित है, जिनका आत्मीय बल, पराक्रम, बुद्धि, गुणग्राह्यता, व्यवहार, चरित्र पवित्र है। जो शोक रहित हैं। इन्द्रियों पर विजय पाने में श्रेष्ठ पुरुष रागपरिणति को हरण करने वाले वीतरागी पुरुष ही शोक रहित हैं। अर्थात् अशोक नाम से प्रसिद्ध हैं।

इन्ही सम्राट अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री सघमित्रा दोनो बहिन भाई चन्द्रमा और लक्ष्मी ने अपने भतीजे बुध को साथ लेकर अपनी विवेकबुद्धि से विदेशो में धर्मप्रचार किया था।

फूट का दुष्परिणाम

सिंघई वंश-परिचय

(इस नगर का नाम आलमगीरपुर क्यों पड़ा ? आगे पढ़िये)

ऐमदराय जी टडैया भेलसा नगर में विक्रम सवत् १६२५ में बुन्देलखड से आकर बरईपुरा मे रहे। इनके पुत्र समदराय थे। संवत् १६५५ मे स्वर्गवास हो गया। समदराय को पहलवानी का शौक था। हाकिम टाँका लेकर आते जाते थे। उसके साथी पहलवानों से कुश्ती मे विजय

पाते रहे। इनकी वीरता की हाकिम प्रशंसा करते और सम्मान भी करते थे। इधर डाँकों के कारण प्रजा त्रसित थी। डाकुओ के पकडने के लिए एक बीड़ा रखा गया था।

पान स्वाद की खान है, पान शान की जान ।
बीड़ा लेकर पान का, मर्द निवाहत आन ॥

उस बीड़े को कचहरी मे समदराय ने उठाया। साधुओं के वेश में जमात तैयार कर ग्रामो मे भ्रमण करना शुरू किया। डाकुओ के ३ गोल थे। पता लगाया, प्रत्येक गोल में ३०-३० बदमाश थे। जिसके २ गोल मे पिंडारे और एक गोल मे मेवाती थे। गिरफ्तारी की। हाकिम ने प्रसन्न होकर इन्हे रुतबा देकर दूसरे गोल की गिरफ्तारी को शासकीय सहायता देकर भेजा। समदराय ने एक बणिक् की बारात बनाई जिसमें कुछ सैनिकों को औरतो के वेष में नकली बच्चो को लेकर चले और उस गाँव मे पहुचे जहाँ डाकुओ का सन्देह था। ऐसे मुकाम पर बारात ठहराई जहाँ से आदमी मुश्किल से निकल सके।

समदराय बारात को मुकाम पर कर के कजड़ का वेष बना कर उन डाकुओ के गोल मे गये और गोल के सरदार से बारात का हाल इस ढंग से कहा जिससे डाकुओ को सन्देह न हो। और बारात लूटने को साथ हो गये।

लुटेरो को ऐसे स्थान पर ले जाया गया जहाँ दोनो ओर की दीवालें बहुत ऊची थी। रास्ता सकडा और पथरीला था। केवल बैलगाडी ही जा सकती थी। मुकाम पर पहुचते ही बरात सामने आने लगी। बराती भी सातो हथियारो से सुसज्जित थे। एक सीटी की आवाज आई और गोली बरसना प्रारम्भ हो गया। इधर बरातियो ने भी धावा बोल दिया। पीछे से सैनिकों ने भी अपना पराक्रम दिखा कर डाकुओ को बहादुरी के साथ पकड़ लिया। समदराय को शासन की ओर से सम्मान मिला और इनके दबदबे और बुद्धिमानी से डाकू दल कापने लगा। इनका ९२ वर्ष की अवस्था मे स्वर्गवास हो गया।

समदराय के पुत्र समोखनराय मिष्टभाषी थे।

आलमगीर बादशाह ने भेलसा के ऊपर बेतवा नदी के किनारे जहा महल घाट बना है युद्ध की दृष्टि से पड़ाव डाला। उस समय नदी छोटीसी थी। मनुष्य आसानी से आता जाता था। यहा पर ही सूर्यमन्दिर था, जिसे तोड़ कर यह महलघाट बनाया। इस मन्दिर का एक शिलालेख प्राप्त हुआ है जिसका प्रकाशन भारत सरकार के एपीग्राफी आफ इंडिया उटकमंड के श्री डी० सी० सरकार ने अपने इंडोएशियन कल्चर पृष्ठ २१० नं० ३६ दो शिलालेख माह दिसम्बर सन् १९५२ मे प्रतिलिपि करके ले गये थे, जिसकी प्रतिलिपि व फोटो संलग्न है।

समोखनराय ने बवरची खाने के दरोगा से मिलकर रसद की व्यवस्था अपने हाथ मे ले ली और लश्कर वालो से भी मित्रता की। जिस कारण हजारों रुपया पैदा किया। और ४६ वर्ष की उम्र मे स्वर्गवास हो गया। उस समय इनके ६-७ वर्ष का बालक ताराचन्द्र था। सती होने की प्रथा थी, किन्तु सती होना उचित न समझ पत्नी धमसाधन करती रही। ताराचन्द्र को

सस्कृत के जैन शास्त्रों का अच्छा ज्ञान था। तथा यंत्र मंत्र सीखने का शौक भी था। संस्कृत के विद्वान होने के कारण जती, सेवड़ा, मंत्रवादी, सभी सम्मान करते थे। बाल्यकाल मे पिता के स्वर्गवास के कारण गृहस्थी का भार आ जाने से लेन देन का कारोबार बड़ा लिया था। और २० वर्ष की आयु में भेलसे मे ही विवाह किया।

इस समय नगर के सेठ विजयराम जी मारवाड़ी चार-पाँच लाख के धनिकों में माने जाते थे और ताराचन्द जी ढाई लाख के। चोर गली में जो बड़ी इमारत दिखाई देती है वह दिगम्बर जैन मन्दिर की है।

व्यापार के कारण विजयराम मारवाड़ी और ताराचन्द्र के बीच वैमनस्य की गांठ पड़ गई। इसलिये ताराचन्द्र ने विद्याबल से पलग पर सोई हुई उनकी धर्मपत्नी को उठवा कर मंगवा लिया। और सूचना पहुचा दी कि सेठानी जी हमारे यहाँ आई हैं। शर्मिन्दा किया और सेठानी जी को पूर्ववत् सम्मानपूर्वक वापिस विदा कर दिया। इससे आपसी वैमनस्य समाप्त किया। ताराचन्द्र की अधिक मान्यता हो गई। ६२ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया। यानी स० १७७६ में।

परवार दिगम्बर जैन मन्दिर भेलसा के निर्माण का चन्दा

लगभग सं० १७०० में जब विजय मन्दिर का विध्वंस हो गया और जैनियों का अधिकार जाता रहा तो समाज ने एक छोटासा मन्दिर धर्मसाधन के लिए बना लिया था। समाज के लोग लगभग ३०० घर के थे। अतएव ताराचन्द्र जी के स्वर्गवास के पश्चात् इनके पुत्र रतीराम जी ने दूरदर्शिता से पंचायत को बुला कर ८० हजार का चन्दा एकत्रित किया, जिसमे ६० घर अच्छे धनी और सम्पन्न माने जाते थे। शुभ घड़ी और शुभ नक्षत्र में मन्दिर-निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया गया।

विजय मन्दिर में देवी-देवताओं, ऋषि-मुनियों और तीर्थंकरों की मूर्तियाँ थीं, उनको उसने तुड़वाया और सड़कों में, दर्वाजों के मार्गों मे बिछवा दिया।

इस विजय मन्दिर के कई शिलालेखो के टुकड़े मिले है, जिनके पढने से यह स्पष्ट होता है कि परमारो ने जो महाराजा भोज के वशज थे निर्माण कराया था। जोकि जैन धर्म के पालने वाले थे। यह भोजराज तीन भाई थे। सबसे बडे भाई का नाम शुभचन्द्र और मझले भाई का नाम भर्तृहरि था, जिनका वर्णन 'भोज और भोपाल' जोकि राजधानी का इतिहास लिखा है उसमे पढिये।

विनाशकाले विपरीतबुद्धिः

रतीराम जी के जुगराज जी नामक पुत्र पूर्वपुण्योदय से देवो के समान रूपवान और भाग्यशाली हुए, किन्तु इन्हे अय्याशी और दुर्व्यसनो मे गाँजा, भग, चरस, चडूल आदि कुसंगति के कारण मुह लग गये और अधिकतर यह बात यौवनावस्था मे सपत्ति, प्रभुता, अविवेकता प्राप्त कर ही होती है, इस कारण पिता के सुयश पर कालिमा लगाई गई। इस वजह से पिता ने इन्हें प्रथक् कर दिया।

यह अधिक व्यंभिचारी थे। नगरवासी इनकी नजरो से अपनी बहू बेटियो-को बचाने लगे किन्तु यह अपनी पूर्ति कोई रुपयो से करता हैं वहाँ यह अशर्फियो से पूरी करने लगे। इन्हे इस दुर्व्यसनियो के ससर्ग से गायनविद्या का योग मिला। अच्छे गवैयो को पराजय दी। किन्तु जो कार्य-भार जैन मन्दिर निर्माण का हाथ मे इनके पिता ने लिया था न हो सका। इस कारण जैन समाज के अन्दर क्षोभ हो गया और इसका कार्यभार जुगराज जी पर इसलिये डाला कि इनकी प्रवृत्ति इस ओर लगे और दुर्व्यसनो से बच जावें।

इन्होने पुन चन्दे की पानडी बनाई। ५० हजार रुपया लिखा; २५ हजार समाज से एकत्रित किया गया। दुर्व्यसनो की ओर से मुह मोड कर कार्य मन्दिरनिर्माण का शुरू करते ही थे कि मर गये। कोई यश प्राप्त न कर सके। रतीराम जी के द्वितीय पुत्र जोमदराय थे। इस समय मीरशाही मे सिंघई वश की ७ स्त्रियाँ विधवा हुई थी। दुर्व्यसन का पाप इनके समय मे अ पडा। इस हाथ कर लो और इस हाथ देख लो।

मीर–शाही

नवाब मीरखाँ चार भाई थे। दूसरे का आलगीर तीसरे का चीतू, चौथे का करीमखाँ नाम था यह अफगानिस्तान के रहने वाले थे। जमइयत लेकर भारत मे बगावत करते आये और १८६० मे बगावत करने भेलसा पर आये। और लुहागी पर तोपे रखी और ६ माह तक इस भेलसा को घेरे पडा रहा, किन्तु फतह न पा सका। इस समय यह ग्वालियर राज्य के अधिकार मे था किन्तु ठेके पर रहा करता था। इसका प्रबन्ध अच्छा था। गुर्जो पर तोपें रखी थी, गोलदाजी होती रही जब इसका राशन समाप्त होने लगा तो यहाँ से जाते समय गधी दर्वाजे की तोप के गोले ने लुहागी पर रखी मीर साहब की तोप को लुहाँगी के नीचे पटक दिया। इस कारण यह यहा से चल दिये और नटेरन होकर जा रहे थे कि एक घोड़े पर बैठ कर डालसिंह नवाब मीर खा से आकर मिले।

पाठको! यह नटेरन जिला भेलसा परगना बासौदा का भेलसा और पछार (अशोक नगर) रोड पर कागपुर के निकट है। २३०-४६ उत्तरी और ७७०-४९ पूर्वी रेखाओ पर स्थित है। १८वी शताब्दी मे यह ग्राम डालसिंह नामी रघुवंशी के पास था।

एक जगह सन् १८०० ई० मे डालसिंह ने मीरखा से मिलकर भेलसे को लुटवाने मे सहायता देने और प्रोत्साहित करने का लिखा था। सहायता दी थी और भेलसे को लुटवाया था। इसके पश्चात् डालसिंह गिरफ्तार कर लिया गया। इसका नटेरन की गढी जगह जगह से नष्ट भ्रष्ट करके वर्वाद की गई और उसे दारुण दु ख दिये। गये उन दु.खो को पाते हुये उसकी मृत्यु जेल मे हो गई।*

---

*गजेटियर ग्वालियर जिल्द पहली सन् १९०८ से प्राप्त।

डालसिंह तरफदार की सहायता से किलेदार को धोखा देकर वैसदरवाजे की खिडकी यह कह कर खुलवाई कि दुश्मन नटेरन से गुजर चुके हैं। मुझे सूवा साहब से समाचार कहना है। किलेदार ने जैसे खिडकी खोली कि साधुओ के वेष मे छुपे मुगल सैनिको ने अन्दर घुसकर मारकाट शुरू करदी और फाटक खोल दिया। बस क्या था, बात की बात मे सैनिक किले के अन्दर दाखिल हो गये और लूटमार शुरू कर दी, और किले पर अधिकार कर लिया। उस समय सिघई जी के वशज उत्तमचन्द्र का किलेदार से प्रेम था इसलिये साधू का वेष बनाकर निकल जाने को कहा और अन्य किसी को नही जाने दिया। ५ असर्फी चोटी मे रख कर और छुप कर रायसेन में लखमीचन्द्र के यहाँ पहुचे।

लूट मार का तरीका

नगरवासियो को प्रत्येक घर से बुलाना और उनकी हैसियत से दुगना जुर्माना करना। चांदी, सोना, जवाहरात, तांवा, पीतल, आदि जो भी वस्तु मिले वसूल करना। जो बाकी बचे उसकी बसूली में मिरचों के तोवडा चढाना और गरम तोपो पर नगा करके बिठाना, नारियों के सतीत्व को लूटना, कत्ले आम मचाना। इस प्रकार से जनता को कष्ट पहुँचाया। भेलसे को बर्बाद किया। इसी प्रकार से सिघई वश के व्यक्तियो को बुलाया गया। उत्तमचन्द्र भाग निकले थे। इनकी जायदाद से चार लाख रुपया जुर्माना किया और इसी प्रकार से ६ माह तक लूटा और सिघई वश के लोगो को मार डाला। १७ गाड़ी सोने की नथनी, और चादो के जेवरात, तावा, पीतल आदि धातु का कोई हिसाब नही था।

विजय मन्दिर के पास वाली खारी बावड़ी में लाशें लबालब भर गई थीं। इस बावडी के दो खम्भों पर जो सुन्दर मूर्तियाँ खुदी हैं विजय मन्दिर के निर्माता का जीवन-चरित्र है। जिसका एक इतिहास लिखा जा सकता है। शासन की इसकी सुरक्षा और अनुसधान इतिहास के लिये चारो ओर से साफ कराना आवश्यक है।

मीरखा ने भेलसा को लूट कर अरबों रुपयों का माल लिया और इस कस्बे का नाम आलमगीरपुर रखा। यह जाति के पिंडारे थे। इनके आतंकों से इन्दौर, ग्वालियर और कोटा राजस्थान के राजाओं ने टौक का नवाब बनाकर निकट संबंधी जागीरे देकर एक राज्य स्थापित कर दिया जो भारतीयों की फूट और आपसी वैमनस्य का प्रधान कारण बन बैठा।

अद्‌भुत चमत्कार

परबार दिगम्बर जैन मन्दिर में एक भगवान के बैठने की बडी बेदी है और वह देशी लाल पाषाण की कलामय बनी है। उसी बेदी मे तीसरे तीर्थंकर भगवान संभवनाथ स्वामी की मूर्ति है। दोपहरी का समय था कि मंहगूशाह जिनका वंश आज भी है, जिनदर्शन को आये। दर्शन करते समय उनकी दृष्टि भगवान संभवनाथ जी की मूर्ति पर पड़ी। इन्होंने मूर्ति का हाथ उठा हुआ देखा जिसका संबोधन था कि ठहरो और विचार करो, भयंकर आपत्ति आने वाली है। ऐसे उठे हुए हाथ को देखकर मंहगूशाह जी मंदिर के बाहर आये और समस्त जैन समाज को शीघ्र ही एकत्रित कर मूर्ति के हाथ उठने का बृतान्त कह दिया।

विवेकवान दूरदर्शी विद्वद् समाज ने भविष्य पर विचार कर और अनुमान लगाकर समझ लिया कि कोई न कोई आपत्ति अवश्य आने वाली है। इस कारण मन्दिर की सुरक्षा आवश्यक है। यह विचार कर समस्त मूर्तियां यत्र तत्र तहखानो मे छुपा दी। किन्तु तीन मूर्तियाँ जो रायसेन के किले के जैन मदिर के समवशरण मे विराजमान हैं, वह न उठ सकी। जैन समाज ने वडी कोशिस की। आपत्ति का समय निकट ही आ चुका था। उन्हे यथास्थान ही छोड देना पडा।

घड़ी-नक्षत्र और मूर्ति का चमत्कार

यह घटना सवत् १८६० की है जबकि वह मीरखा इस मन्दिर मे लूटने की नियत से मन्दिर के अन्दर गया था, किन्तु वहाँ पर समस्त मदिर खाली पाया। और इन्ही तीन मूर्तियो को वगैर सिर के देख कर मन्दिर के बाहर आ गया। मगर कुछ लोग जो मीरखा के साथी थे वह मदिर के अन्दर पीछे रह गये थे। इन्होने वह तीनो मूर्तियाँ सिर सहित सागोपाग देखी। और मीरखा से आकर कहा-मूर्तियाँ सिर सहित हैं, सिर रहित नही हैं। पुनः मीरखा बदनियती से मन्दिर के अन्दर गया तो तीनो मूर्तियो को बे-सिर के पाया। जो साथी मन्दिर मे रह गये थे उन्ही से पूछा तो मालूम हुआ कि वह साबुत है।

नत-मस्तक

अब तो मीरखा को यकीन हो गया कि यह बुत तो बाबा आदम की है। और मेरे को दीदार करना चाहिये। जो मैं वदनियती से जाता था वह बदनियती मैं दूर करता हूँ। ऐसा कहकर जब मीरखाँ मूर्तियो के सामने आया तो तीनो मूर्तिया सिर सहित देख कर आश्चर्यचकित हो गया। और जितने दिन भेलसे मे रहा रोजावा दर्शन को आता रहा। और पसेरियो लोवान का हवन करता रहा। किन्तु जब तक इसे यह चमत्कार नही दिखा उस समय तक इसने जो प्राचीन ग्रन्थ हस्तलिखित २६ पट्टाधीश आचार्यो का अपूर्व सग्रह शास्त्र भडार जला कर भस्मीभूत कर दिया। जितना लूट पाट मीरखा ने किया। उससे आज तक भेलसा सरसब्ज न हो सका। यही है हमारी फूट का मुख्य फल।

सदैव दिन एकसे नहीं रहते

पिंडारो के आतक से प्रजा अत्यन्त त्रसित थी। कुछ लोग भाग कर ग्वालियर नरेश के समक्ष पहुचे और पिंडारो का अत्याचार कहा तो महाराजा ने तत्काल ही फौजें रवाना कर दी। इसमे समय ६ माह का व्यतीत हो गया। जब फौजें आई तो मीरखाँ भाग गया। उसके पीछे उत्तमचन्द भेलसा आये। इनका जन्म स० १८३५ का है। इनके दो पुत्र थे। बडे पुत्र का नाम गोपालदास था। इनका विवाह स० १८९८ मे सिरोज मे हुआ था। और सिरोज मे इनकी स्मृति मे निसई जी नामक पहाडी पर एक धर्मशाला बनी है, जो जुगराज वालो की कहलाती है। दूसरे पुत्र का नाम जुगराज था।

पुण्य से देव भी सहायक हो जाते है

जुगराज जी (न० २) के वश मे दयाराम का जन्म हुआ। यह वालको के साथ खेल रहे

थे कि अचानक एक दिन पत्थर गढ़ के कौठे में से आकर और बालक के रूप मे बन कर इस व्यंतर देव ने दयाराम से मित्रता की। और सब मित्र मंडली के लड़कों को मिठाइयाँ खिलाते रहे। सद्शिक्षाये देते रहे और उत्तम खेल खिलाते रहे।

पत्थरगढ़ का कोठा क्यों ?

इसलिये कि बादशाह मुहम्मद गौरी के हुकम से महाद जी सेंधिया गुलाम कादर का सिर काट कर पत्थर गढ से लाये थे। साथ मे दो तोपे मय मेगजीन के व बारूद गोला के रखा गया था। इससे यह पत्थर गढ का कोठा कहलाता था। इसके पीछे इसे जेल खाना बना दिया गया था। किन्तु बगल में ही लगा हुआ सिं० जुगराज जी का मकान था। कैदी औरतों को छेड़ते और गालिया बकते थे इसलिये इनके वशज श्री जवाहरमल जी ने लश्कर जाकर १९००) रु० में पत्थर गढ का कोठा खरीद लिया था और उसमे कुआ खुदवाया।

सोनागिरि का गजरथ सेठ गुलाबचन्द्र जी तथा सिं० जुगराज वालों का महाराजा दतिया नरेश से मिलन। इस सम्बन्ध में नीचे पढ़िये।

पाठकगण चन्देरी का नाम प्रायः जानते ही हैं, किन्तु इस रत्नगर्भा वसुन्धरा मे कैसे विलासी, प्रतिभाशाली, दानी और विरागी व्यक्ति होते थे। और वह आज मरने के बाद भी इस वसुन्धरा पर जीवित किस प्रकार हैं। क्या आज उनकी समानता करने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं ? यही कहना पड़ेगा कि नही हैं। इन शासकों का जीवन पशुओं से भी गया बीता है। चूंकि पशु, पक्षी, कीड़े मकोड़े किसी न किसी प्रकार से परोपकार मे अपना सर्वस्व अर्पण कर कर्तव्य निभाते हैं किन्तु यह अपनी ईर्षा मद, अविवेकता और निर्दयता की धुन में सवार रहा करते हैं। इन विलासियो और पूर्व विलासियो का अन्तर देखिये।

पूर्व विलासी भोग भोगते हुये अपने परोपकारमय गुण को नहीं त्यागते थे। आज इन्होने उस परोपकारमय परम्परा को रसातल में पहुचा दिया।

वह दान देते थे यह दान माँगते हैं भिखारी बन गये। पूर्व शासक जीवों पर दया कर हिंसावृत्ति को रोकते थे, यह उनका उत्पादन करते और उनका व्यापार करते और आप स्वय हिसक बन, दूसरों को हिंसा का शिक्षण देकर माँसाहारी बनाते जा रहे हैं। पहिले विद्यार्थियो को सद्शिक्षाये दी जाती थीं वहाँ आज सभ्यता से लूटने खाने की शिक्षा दी जाती हैं। पहिले एक कमाता था और समस्त परिवार बैठ कर आराम से खाता था वहाँ आज जितने कमाते हैं उनका पेट नही भरता। अब अधिक न लिखकर आपको एक महत्वपूर्ण घटना का दिग्दर्शन कराते है।

सौनागिर का गजरथ

यह सवत् १८९६ है। जहाँ सुवर्णगिरि (सोनागिरि) बम्बई दिल्ली के बीच और ग्वालियर के निकट दतिया राज्य का स्थान है। और रेलवे स्टेशन सोनागिरि है। यहाँ का जलवायु उत्तम है जो रेल में से बहुत से मन्दिर दिखाई देते हैं यह वही स्थान है। यहां पर लाला सवाईसिंह जो चन्देरी वालो ने गजरथ चलाया था।

भेलसा की भजनमंडली और गजरथ

इस गजरथ मे भेलसा जैन समाज की भजन मंडली गई हुई थी। एक ओर तो गजरथ की मन्द मन्द गति और एक ओर भेलसा जैन समाज के कलामयनृत्य ने श्री जिनेन्द्र के चरणों मे दुन्दुभी वादित्रो के साथ अपनी अद्‌भुत कला का परिचय दिया, जिसपर श्रीमंत दतिया नरेश श्री विजय बहादुर जी ने अपनी प्रसन्नता के साथ पारितोषिक देते हुये सम्मानित किया। यह थी राजाओ की दान-परम्परा।

लाला सवासिंह कौन थे ?

लाला सवासिह दिगम्बर जैन धर्मावलबि खडेलवाल जैन कुल भूषण एक चौधरीवंश जिनकी बडी भारी जागीर थी उस घराने के प्रधान कारिन्दा थे। आपकी कार्यप्रणाली, बुद्धिबल अत्यन्त ही प्रशसनीय था। आप नीतिशास्त्र के अच्छे विद्वान माने जाते थे। यदि इन्हे चाणक्य कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी।

लाला सवासिह का रग श्याम था जिस प्रकार चाणक्य का था। जिस प्रकार से शस्त्र और शास्त्र विद्या मे चाणक्य प्रवीण थे उसी प्रकार से लाला सवासिह भी थे। आपके मालिक को कोई नही जानता था, इन्ही को मालिक जानते थे।

लोढा रंडी

इन्ही के पास एक लोढा रंडी थी जो इनकी वीरता-विद्वत्तादि पर मुग्ध थी। प्रतिक्षण लाला सवासिह के प्रत्येक कार्यो मे मन्त्री की तरह काम करती थी और सहयोग देती थी। बड़े निर्भीक और वीर पुरुष थे। किन्तु समाज इनसे इस रडी के सम्पर्क के कारण अप्रसन्न रहा करती थी। कई बार समाज ने सम्बन्ध विच्छेद के लिये प्रयत्न किये, जुर्माने मे दावतें खाई। क्यो-

जलन की साधना संसार में सस्ती नहीं होती।
मधुर मुस्कान की कीमत चुकाते अश्रु के मोती॥

समाज जुर्माना करती थी और यह उनके कथनानुसार जुर्माने का भुगतान करते रहते थे। जिस प्रकार से कुत्ता अपने पेट के लिए मालिक के समक्ष दुम हिलाता रहता है उसी प्रकार से पेट के लिए समाज दुम हिलाया करती थी। इसी प्रकार से वर्तमान मे शासन की दशा हो गई है। ऐसा कोई विभाग नही बचा जिसमें भ्रष्टाचार न हो।

यह लोढा रडी बडी नीतिज्ञ और कार्यकुशल थी। राजकीय कार्यो मे बड़ी सहायक था। इस कारण कठिन से कठिन कार्य इनके सुलभ हो जाते थे।

राजमहल के पीछे दक्षिण की ओर लोडा रंडी की स्मृतिस्वरूप एक छत्री बनी हुई है। और पश्चिम दिशा मे बडी भारी गणेश जी की एक प्रतिमा भी है, जो दर्शनीय है।

वीर बुन्देला क्षत्री और लाला सवासिंह

लाला सवासिंह का समस्त बुन्देलखंड के क्षत्रीय वीर पुरुषों से घनिष्ट सम्बन्ध था और वह बिना लाला सवासिह की सलाह के कोई कार्य नही करते थे और अनुशासन मे चलते थे। इतना सम्मान था।

दौलतराव सिंधिया द्वारा लाला सवासिंह की परीक्षा

ग्वालियर नरेश महाराजा दौलतराव सिंधिया लाला सवासिह को सम्मानपूर्वक छल से बल की परीक्षा हेतु ग्वालियर ले गये और अफवाह फैला दी कि लाला सवासिंह की गिरफ्तारी हो गई। इतनी बात सुनते ही वीर बुन्देलो ने बात की बात में गंगाजली लूट ली। श्रीमन्त दौलतराव जी सिंधिया ने लाला सवासिंह से कहा कि गंगाजली लुट गई तो लाला ने उत्तर दिया वापिस आ जायगी। वह कैसे ? फिर क्या था, वापिस लाला सवासिह आये और गंगाजली वापिस लुटी हुई पहुच गई। यह है एकता और सत्यनिष्ठा का चित्रपट।

पूर्व शासक और वर्तमान शासकों का अन्तर प्रदर्शन

पूर्वकाल के राजनीतिज्ञ शासक विद्वानों, वीर पुरुषो का यथोचित सम्मान करते थे। पूर्वापर विचार कर न्यायदृष्टि समभाव रख कर ही न्याय करते थे। शासकगण राज्य के द्रव्यादि का उपयोग और उपभोग केवल प्रजा के हित के लिए ही करते थे। और स्वार्थ भी हो तो प्रजा के हित के लिए। कभी भी प्रजा को कष्ट नही पहुँचाते थे और पुत्रवत् मानते थे। आज जिस प्रकार भी हो सब कुछ शासन का है, प्रजा कहा से लाई !

है राज्य की शोभा प्रजा, राजा प्रजा का दास है।
राजा प्रजा में भेद हो तो, सर्व सत्यानाश है ॥
मुश्किल है मिलना चोर का जब, घर के ही सब चोर हैं।
कैसे चलेगा राज जब, सारे ही रिश्वतखोर हैं ॥

राज्यसंचालन–पद्धति

यदि आधीनस्थ कोई शासक या जागीरदार अथवा बागी मनुष्य प्रजा को सताता था तो उसे देश काल योग्यतानुसार दन्डित कर या सम्मान देकर लोकप्रिय बना लेते थे। चारो नीतियो का उपयोग करते थे। इसी कारण वह शासक आज हजारों वर्ष बीत जाने पर भी सूर्य के समान इस वसुन्धरा में चमक रहे है। विरोधी पैदा नही होने देते थे। यह थी उनकी न्याय और सिद्धांत की रक्षा।

जब कोई व्यक्ति अपने देव, गुरु, राजा और वैद्य के समक्ष मनोवांछित भावनाओं को लेकर जाता था तो कुछ न कुछ भेट अवश्य ले जाता था, इसलिये कि वह आगन्तुक के शुभाशुभ

का ज्ञान करने के लिये एक मार्ग था जिससे भविष्य की परीक्षा होती थी न कि वह रिश्वत थी। देव के समक्ष करुणा, दया, आत्मज्ञान के लिए, गुरु के समक्ष ज्ञान के लिये, राजा के समक्ष अपनी दरिद्रता निवाणार्थ और वैद्य के समक्ष स्वास्थलाभ की कामना लेकर ही जाते थे। और वह पूर्ति करते थे। आज समय ने पल्टा खाया।

पूर्व शासक जब कभी शिक्षा सस्था, मन्दिर, धर्मशाला, देव मन्दिर आदि के अवलोकनार्थ जाते थे तो बच्चो तथा गरीबो को भोजन मिष्टानादि बटवाते थे, पारितोषिक देते थे, इससे जनता और राजा मे स्नेहबृद्धि होती थी और इसी को सुकाल कहते थे।

स्वाथ की बात लाला सवासिह और बुन्देलो मे नही थी। वह तो उन्हे अपना राजा मानते थे। लाला सवासिह ने सवत् १८७५ मे एक चौबीसी बनवाई जिसमे २४ तीर्थंकरो की शास्त्रोक्त रंग वाली पाषाण की २८ मूर्तिया ४-४ बैल की गाडियो मे ९-९ मन रुई मे रख कर लाये। ८४००० रुपया उस सस्ते समय मे न्योछावर मे लगा था। प्राणप्रतिष्ठा कराई। जो अति दर्शनीय है।

दतिया नरेश की कंजूसी !

जब लाला सवासिह की भावना सोनागिर जी मे गजरथ चलाने की हुई। तो श्रीमन्त महाराजा श्री विजयबहादुरसिह जी दतिया नरेश से जाकर मिले और अपना विचार महाराजा के समक्ष रखा। राजा साहब ने गजरथ चलाने की अनुमति दे दी। जब प्रीतिभोज देने के लिये खाद्य सामग्री की सुविधाओ का प्रश्न आया तो स्वीकार नही किया। और कुछ कठोरता दिखाई। तथा यह भी कहा कि बनियो को कोई सुविधा नही दी जा सकती। यह बात लाला सवासिह को बहुत बुरी लगी। इस पर लाला सवासिह चन्देरी आ गये।

घर आकर समस्त सैनिको और बुन्देलो को बुला कर अपने पुनीत कार्य का विवरण समक्ष रखा और सब लोग समस्त सामग्री और सुविधाओ तथा व्यवस्था जमाने मे लग गये। अल्प समय मे ही सामग्री एकत्रित हो गई।

सवत् १८९६ मे सोनागिरि मे रथयात्रा के लिये पहुँचे। उस समय चन्देरी से खाद्यादि समस्त वस्तुए बैल गाडियो मे भर कर प्रस्थान किया और गाडीवालों को यह आदेश दिया कि दतिया शहर के बीच बाजार मे होकर राजमहल के नीचे से होती हुई, सोनागिर को जानेवाली सडक पर से ही जाना है। ध्यान रखे। गाडिया प्रात.काल ८ बजे के वक्त दतिया शहर से निकले। एक गाडी की नक्की दूसरी गाडी की पिछाडी से बराबर लगी रहे, कोई भी आदमी इधर से उधर न जाने पावे। आदेशानुसार जिस समय गाडियाँ शहर मे पहुची तो पानी वाली जहा की तहा रुक गई। तीन दिन रात तक खाद्य तथा अन्य वस्तुओ की गाडियो का निकलना बन्द नही हुआ। नगर मे बडी हल चल मच गई। और राजा साहब के पास यह सन्देश पहुच गया।

अब महाराजा विजयबहादुरसिह ने अपने राजमहल पर से कोसो तक गाडियों को जाते हुए कतार देखी तो आश्चर्यचकित रह गये। और लाला सवासिह को लोहपुरुष मानना ही पडा। क्या यह पूर्व पुण्य का ठाटबाट नही ? महाराजा विजयबहादुरसिह ने अपनी भूल स्वीकार की

और यही मानना पड़ा कि यह बनियां नही, कोई रईस है। यह कोई तराजू तौलने वाला बनिया नही है, जो राजाओ का मान मर्दन करता है। यह है एकता और संगठन।

जय तीन दिन बाद गाड़ियों का तांता समाप्त हुआ उस समय स्त्रियां पानी लेकर घर जा सकी।

लाला सवासिंह ने सोनागिरि में एक जिनमन्दिर बनवाया, जिनबिम्ब विराजमान किये, गजरथ चलाया और प्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न किया। यह है समाज के रत्न, गौरवशाली महापुरुष के जीवन की यशोगाथा, जिस कारण उनकी कीर्तिरूप सुगंधी अभी भी फैल रही है।

इसी रथोत्सव में श्रीमान् सेठ गुलाबचन्द्र जी सिंघई जुगराज वालों का महाराजा दतिया नरेश से मिलन हुआ था।

चन्देरी के दर्शनीय स्थल

(१) बूढी चन्देरी नई चन्देरी से १५ मील शिवपुरी रोड पर १० वे मील पर उतर कर इमला से पश्चिम मे ५ मील जगल में जाना पड़ता है। यहाँ पर ७५ मन्दिरों के भग्नावशेष पड़े हुए हैं। यहां पर एक झरना से पानी गिरता रहता है और कहते हैं कि इस पानी में स्नान करने से कोढ़ किसी भी प्रकार का हो नष्ट हो जाता है। यह यहाँ की महिमा है।

(२) इसी के पास नदी के किनारे बीठला नामक ग्राम है। यहां पर पूर्व काल में बस्ती रही होगी। इसी ग्राम के भग्न जैन मन्दिर से माणिक रत्न की भगवान पद्मप्रभु की १७ इंच की मूर्ति सौराष्ट्र के एक जौहरी महोदय ले गये, जिसकी रिपोर्ट पुरातत्व विभाग प्रदेशीय और केन्द्रीय दोनो को की, किन्तु शासन मौन है।

(३) मामौन नामक स्थान है तथा मियादान, यह उर्वशा नदी के ही किनारे पर है। रास्ता जगली है। शेर, चीता आदि शिकारी जानवरों का भय रहता है। इस क्षेत्र में जैन मंदिर अधिक मात्रा मे ही मिलते है और यह प्रदेश जैन वस्तुओं का भण्डार है।

(४) सिंहपुर के महल भारत वर्ष की अनुपम कला है। अभी भारत में इस शानी का महल दूसरा देखने में नहीं आया और न है। यह चन्देरी से अशोकनगर रोड पर लगभग ४ मील है।

(५) दिल्ली दरवाजा—यह शहर से ही लगा हुआ है और शिवपुरी रोड पर दिखाई देता है। यहा बादशाही कतबे-शिलालेख खुदे हुए लगे हैं। जिसमें गौरी का नाम खुदा हुआ है और गौरी खानदान अभी मौजूद है।

(६) बत्तीसी बावड़ी—कहा जाता है कि यह किसी बंजारे ने बनवाई थी, जो एक महत्वपूर्ण और दर्शनीय है।

(७) मालन खोह-इसकी विशेषता यह है कि यहाँ पर एक कुण्ड अतिशययुक्त है जो कि एक हाथ गहरा, दो दो हाथ लम्बा व चौड़ा है। कितना भी पानी निकालिये अंत नही आता। और वहा एक गुफा है जिसमे सिद्धो का स्थान है।

(८) मुंगावली रोड पर जामामस्जिद-आप यह भली प्रकार जानते है कि जब जब भारत मे यवनो ने आक्रमण किये फूट के ही कारण हुए। और आक्रमणकारियो ने बनाया कुछ नही केवल उनकी तूमा पलेटी ही रही है। इसी प्रकार से यह जामामस्जिद भी है।

(९) यहां से एक सीधा मार्ग रामनगर को जाता है। घाटी चढते ही एक कटी घाटी मिलती है, जिसे बादशाह गौरी ने बनाया था, जो कटी घाटी के नाम से प्रख्यात है। इसमे एक शिलालेख भी लगा है।

(१०) आगे चल कर २ मील पर रामनगर है। यह ग्राम भी चन्देरी से विशेष संबधित है। यहा प्राचीन राजाओ के महल आदि बने हुए हैं। एक रमणीक तालाब भी है। जो कला की दृष्टि से अत्यंत महत्व पूर्ण है।

(११) श्री खंधार जी—यह स्थान जैनियो का परम तीर्थ हैं और पहाड़ी को काट कर ही गुफा में जैन प्रतिमाये निर्माण कराई और उनकी प्रतिष्ठा भी कराई गई है, जो लगभग ४-५ शताब्दी की मालूम होती हैं।

(१२) यहा पर एक किला पहाडी की चौटी पर है और इसे कहा जाता है कि राजा मर्दनसिंह बुन्देला ने बनवाया था। इसी के अन्दरूनी हिस्से में एक बावड़ी भी है- जिसे गिलौआ ताल कहते हैं। तथा यहा पर मुगलो के आक्रमण के समय नारिया सती हुई थीं, उन्होंने अपने शील (ब्रह्मचर्य) की रक्षा आतातायियों से की थी, अपना जौहर बतलाया था। इसलिये यहाँ पर जौहर तलाई भी है। तथा राजमहल भी दर्शनीय है।

(१३) श्रीमंत सरकार माधवराव जी सिंधिया ने अद्वितीय कलामय एक कोठी का भी निर्माण कराया था, जो आज सिंधिया वश की स्मृति अपनी प्रतिभा राज्य परम्परा की याद दिला रही है।

(१४) क़िले से उतरने पर दूसरे मार्ग से जागेश्वरी देवी का मन्दिर है। यहा भी झरना झरता ही रहता है। गर्मियो में बडा ही शीतल मन्द सुगन्ध वायु मण्डल से स्वर्ग के सुख का आनन्द आता है। यहां एक कुण्ड है और नीचे उतरने को शहर की ओर सीढिया बनी हुई हैं।

(१५) इस किले के दो दरवाजे हैं। एक का नाम खूनी दरवाजा है। जहाँ आक्रमणकारियो ने नगरवासियो को मौत के घाट उतारा था। इसलिए यह खूनी दरवाजा कहा जाता है और दूसरा है ढोलिया दरवाजा।

(१६) एक ऊँट-सार भी अद्वितीय ढंग की बनी हुई है जो बीच शहर में बड़े गणेश जी और लोढा रडी की छतरी के ही निकट मे है।

(१७) राजा मर्दनसिंह का महल गगनचुम्बी अति दर्शनीय-है। इसके कुछ भाग शासन ने उतरवा दिये हैं। जो काम विनाश का मुगल साम्राज्य न कर सका वह इस राज्य के

मनचले मिनिस्टरों ने किया। और उसकी मरम्मत न करा सके। इसका नाम है बावर महल। इसी में एक पाताली कुआ भी है, जो पहाडी को चातुर्यता से काट कर बनाया गया है। इस महल में कई तलघर भी हैं, जो गुप्त हैं।

(१८) यहा पर चौबीसी जैन मन्दिर हैं, जिसे चौधरी सवासिह जी ने बनवाया था।

(१९) मुंगावली जाते समय मार्ग में हरकुंड भी है, जिसमें चारों ओर रमणीक घाट बने हुये है।

(२०) अशोक नगर रोड पर उर्वशा नदी की रमट से थूवौन जी अतिशय क्षेत्र को मार्ग जाता है। पक्की सडक बन गई है। चन्देरी से लगभग २० मील है। यहाँ २५ विशाल जैन मन्दिर गगनचुंबी पाडाशाह के बनवाये है। एक मन्दिर में हनुमान जी दो दिगम्बर जैन मुनियो को कधे पर लेकर आकाश-मार्ग से जा रहे हैं। इससे प्रतीत होता है कि—

जब राम ने हनुमंत को गढ़ लंक पठाया।
सीता की खबर लेने को सह सैन्य सिधाया॥
मगबीच्च दो मुनिराज की लख आग में काया।
झट बार मूसलधार से उपसर्ग बचाया॥

इस चित्रण से यह पता लगता है कि रामचन्द्र जी के आदेशानुसार सीता की शोध में हनुमान जी लंका को जा रहे थे कि उन्हे भीषण अग्नि मे जलते हुये दो मुनि दिखे, जिन्हें अपने विद्यावल से मेघो द्वारा जलवृष्टि कर रक्षा की थी। इस सम्बन्ध मे बडा भारी पुरातत्वीय संग्रह अरक्षित दशा मे पड़ा है। दिन प्रतिदिन नष्ट होता जा रहा है। इसकी फिकर धनाभिमानी या राज्याभिमानी नही कर सकता, करेगा वही जिसे प्राकृतिक लगन हो, किन्तु उसके पास तन और मन तथा लेखनी ही है।

गदर विक्रम संवत् १८१४, सन् १८५७

श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रतिपालक भिड निवासी गोलापूर्व जाति के भायजी श्री बच्चीलाल जी इस भेलसा नगर में पधारे। आप मंत्रविद्या के अद्वितीय विद्वान थे। आपका जैन समाज से परिचय हुआ। पारस्परिक प्रेमालाप के पश्चात् सिं० गुलाबचन्द्र जी के मकान के दरवाजे पर एक यत्र लिख कर इसलिये लगाया कि कोई भी व्यक्ति सिघई जी के मकान में लूटने की नियत से न घुसे और न हानि ही पहुंचा सके। इसी कारण यह घर छोड कर नहीं भागे।

पिशाच और भायजी

एक दिन प्रातःकाल भायजी और गोपालजी अपने कई साथियो के साथ काजी जी के मकान के पास विजय मन्दिर की गली में से निकले, तो देखते हैं कि एक पिशाच दो मकानों

की दीवारों पर पैर रखे खडा है। और नीचे सड़क काफी चौड़ी है। अगर कोई निकले भी तो पिशाच की दोनों टांगो के बीच मे से निकलना पड़े। उस पिशाच का सिर आसमान तक चला गया ! ऐसा देखते ही लोगो के छक्के छूट गये। किन्तु भायजी ने अपने मंत्र बल द्वारा उसे हटा दिया और धैर्य के साथ समझाया। उस समय भायजी के मंत्र बल पर और उनकी विद्वत्ता पर अधिक विश्वास हो गया।

भेलसा का गजरथ

रात्रि के पिछले पहर मे जनकाबाई जी (जिनका द्वितीय नाम लालो वहू भी था यह सि० मूलचन्द्र जी की धर्मपत्नी थीं) ने स्वप्न देखा कि मूलचन्द्र जी भाग रहे है। बड़े मन्दिर जी की समवशरण की शिखर पर सुवर्ण कलश बहुत बडा चढा हुआ है। और श्री जिनेन्द्र पच-कल्याणक के उत्सव सयुक्त पूजन देखी। गजरथ, जिनेन्द्र बरात देखते ही निद्रा समाप्त हो गई। प्रात.काल स्नान कर पूजन के पश्चात् अपने पतिदेव से स्वप्न का पूर्ण समाचार कह सुनाया।

पश्चात् श्री सिघई मूलचन्द्र जी ने समाज के समक्ष अपने विचार व्यक्त किये। शुभ मुहूर्त मे गजरथ की तैयारी हेतु स्थानीय अधिकारियो से मिलना ही चाहते थे कि एक साधु यहा आये और मोहनगिरि के बगीचे मे ठहरे। जनता दर्शन को गई हुई थी कि जनता के समक्ष उन साधु ने कहा कि यहाँ के सूवा के आज से १०वें महीने मे पुत्र होगा। किन्तु सूवा सा० के संतान नही थी और उम्र भी ढल चुकी थी, फिर भी लोगो ने सूवा सा० को यह सदेश साधु का जाकर कह ही दिया। इस पर से सूवा साहब साधु के दर्शनार्थ आये और सूबा साहब को पुत्र होने का आशीर्वाद मिला। इस पर सूबा सा० ने कहा हमे इस उपलक्ष मे क्या करना है ? कहा तुम्हारे द्वारा एक महान कार्य और होगा, वह है जिनेन्द्र पच कल्याणक। बस क्या था, सि० जी शासन का सहयोग चाहते थे। अनायास ही इन्हे प्रोत्साहित किया गया। बाबा माधवराव जो सूवा के ही आदेशानुसार तैयारी को गई। किन्तु यह जानते ही है कि शुभ कार्यो मे हो विघ्न आया करते हैं। वह है वास्तविक परीक्षा।

फूल शूल दोनों ही जग के उपवन में हैं दिखलाते।
किन्तु फूल के लेने हारे, नही शूल से दहलाते ॥

द्वितीय जेठ शुक्ला ११ को नवीन शिखर पर कलश चढाने का मुहूर्त था। कि विद्रोहियो ने अष्टमी के दिन ही पहरेदारों से मिल कर मन्दिर का दरवाजा खुलवा लिया और मन्दिर का शिखर तोडना शुरू कर दिया। किन्तु शासन की सहायता से उपद्रवकारी पकड लिये गये और उन्हे इस नीच कृत्य से शर्मिन्दा किया। किन्तु जब सूबा सा० का सहयोग देखा तो सूबा सा० को लोग बुरा भला कहने लगे। इससे और भी गहरा सहयोग मिला।

द्वितीय जेठ शुक्ला ११ वि० सं० १९३४ को रात्रि के समय प्रतिद्वन्दीयो ने सैनिको को मिला कर रथ तुडवाना शुरू कर दिया। किन्तु सूबा साहब ने तत्काल ही सैनिक बदल कर

व्यवस्था ठीक कर ली। गजरथ के संचालक त्यागी केशरीमल जी, भायजी पं० खेमचन्द्र जी खुरई निवासी थे।

भयंकर तूफान

इसी समय एक बड़े जोर की घटा आंधी के तूफान के साथ उठी और जल बरसना प्रारम्भ हो गया। ऐसी भयंकर घटना को देखकर लोगों का हृदय काप रहा था। सब लोगों को यही मालूम हो रहा था कि रथ की फेरी नहीं हो सकती। किन्तु त्यागी केशरीमल जी और भायजी पं० खेमचन्द्र जी ने मंत्रोच्चारण करना प्रारम्भ कर दिया। इस कारण आंधी का तूफान समाप्त हो गया और जल बरस गया। और जयघोष के साथ रथ की फेरी फिरना प्रारम्भ हो गयी।

आश्चर्य

जहाँ यात्रियों का निवास था और जहां पर रथ का क्षेत्र था, फेरी के स्थान पर एक बूंद पानी नहीं आया और न कोई हानि ही हुई। और सर्वत्र मूसलाधार पानी बरसा। इस आश्चर्यजनक घटना का लोगों पर बड़ा ही प्रभाव पड़ा। और जय जयकार होने लगी। इधर सूबा साहब के घर पुत्रोत्सव होने से आचार्य का कहना भी पूर्ण हुआ। सिंघई जी को पदवी से विभूषित किया गया। इस रथ में १ लाख रुपयों का खर्च आया। इस समय महाराजा जियाजीराव सिंधिया थे। इनके दीवान दादा खटके सरसूबा माधवराव थे और यह जिला ईसागढ से लगता था और उन्हीं के प्रयत्न और आदेश से यह रथ चलाया जा सका। यह बड़े धर्मात्मा थे, पूजा पाठ में सदैव संलग्न रहा करते थे।

१८

हिन्दू समाज का ह्रास क्यों ?

यह बात भी समझने के योग्य आवश्यक है कि जब जब राज्यों पर विपत्ति के बादल आये तो वणिक् वर्ग ने ही साथ दिया। जैसे—भाभा शाह।

कितना बडा त्याग उस दानी ने किया और किस आपत्तिकाल में। और इसी कारण से वणिकों को खजानची बनाया जाता था कि वह उसकी रक्षा भली प्रकार करना जानते हैं। और किस समय उसका उपयोग किया जाना चाहिये यह भी जातते हैं। किन्तु ओछे आदमी और छोटे नाले अपने पीछे गंदगी ही छोड़ जाते हैं। वही दशा इस अभागी भारतीय हिन्दू समाज की है। यह पक्षियो से भी गये बीते हैं। देखिये, मुर्गा क्या सिखाता है ? कि अपने परिवार का भरणपोषण करके जो पीछे खाता है वह सम्पन्न गृहस्थ कहलाता है। और जो अधिकारी, समाज का नेतृत्व करने वाला, या राजा अपने नगर, समाज और प्रजा का भरणपोषण का ध्यान नही रखता और न्यायदृष्टि नही रखता तो वह कभी भी यशस्वी नही बन सकता और वही मृतक समान है। इसी कारण से इस दक्षिणी समाज का ह्रास हुआ। यह पेशवा कहलाते थे, किन्तु ईर्षा और फूट ने इन्हे किस प्रकार मिटाया। जिसका एक नमूना—

सवत् १९३४ में यह भेलसा भद्रावती क्षेत्र कहलाता था। जैन धर्मावलंबियो को रथ के लिये नागरिक बधुता को परम्परागत चलाने हेतु अपनी न्यायपूर्ण उदारता का परिचय देने हेतु सनातन धर्म के श्रद्धानी श्री माधवराव जी सूवा पूजन पाठ करते हुये कचहरी का काम करते थे। किन्तु कुछ समाज के विद्रोहियो ने जो उन्हीं की कीर्ति नहीं चाहते थे तथा केसू भैया धर्माधिकारी, नरसिंहराव आवा जी, आपी जी राक्षस, इनकी मंडली में यह चर्चा चल रही थी कि समाज मे एकता नही। यह बात सूबा साहब को भी मालूम हो गई और वह भी दुखी थे। और वह इस वैमनस्य को समाप्त करना चाहते थे। किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि सूवा सा० के ऊपर चढाई कर दी। किन्तु जिसके हाथ सत्ता हो उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है। आतंकवादियो ने अपनी राजनीति से प्रवन्ध कर लिया।

महाराष्ट्र समाज के रत्न श्री अण्णा साहब तहसीलदार, अन्ता जी व दामोदर सित्ते ने अपनी उत्तम व्यवस्था के साथ रथ निकलवाया था।

जिस प्रकार से यज्ञ करने पर ब्राह्मण समाज मे दीक्षित होते है उसी प्रकार से सेठ मूलचन्द्र जी मानिकचन्द्र जी को सिंघई की पदवी दी गई। यह जानकारी श्री सदाशिवराव जी मुले से उन बातो से जो इस विदिशा के ही मूल निवासी है। उन्ही की जीणशीर्ण हस्तलिखित डायरी से प्राप्त किया।
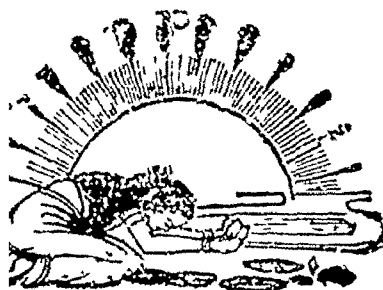
महत्वपूर्ण वंशावलि और नामावलि

वंशावलि

मोरू जगन्नाथ मुले उर्फ मोरूपंथ अम्बेडकर मोरूभैया सेउ वाले भेलसा

महाप्रभु

रंगा जी	रामा जी	कृष्णा जी	अन्ता जी
नारायण	बाला जी	आवा जी	बामना जी
विनायक	विश्नु	सदाशिव	
		मारेश्वर — मोरूमंत	
सदाशिव		जगन्नाथ	
विनायक	वसत	प्रभाकर	

अन्ता जी दामोदर सितु सूबा भेलसा की वंशावलि

दत्तक माधोराव सितुत

नारायण राव	सदाशिव
आनन्दराव	दत्तक–रामचन्द्र राव

चौबे जी का मन्दिर

शिलालेख

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। अथ शुभ संवत्सरे अस्मिन्नृपति विक्रमार्कराज्यतः। संवत् १८३३ शालिवाहनशके १६९८ पवगनाम संवत्सरे दक्षिण देशे, दुर्मुख नाम सवत्सरे ग्रीष्म ऋतौ मासाना मासोत्तमे मासे ज्येष्ठमासे शुक्लपक्षे पंचम्यां पुण्यनक्षत्रे तद्दिने श्री सिद्धेश्वर जी कस्य देवालये निर्मिते।

श्रीमन्त पंतप्रधान सवाई माधवराव जी कस्य राज्ये गोपाल सवाजी रची है। फरतेन प्रतिष्ठापिते दरोगा बाबूराय जिणशी सोवतकर वतनाने वगेनड कोक हस्ताक्षर मुकद मन मोहनलाल कानूगोई गोलावा।

कारीगर चौ यारी माने साध गजायराव। धरम गोरेहार नीये किसोरी इसननु लघेसी।

मन्दिर के पुजारी का जागीरदारी परिचय

कवायद जागीरदारान जिल्द २ ग्वालियर राज्य पृष्ठ स० २८३ हालात नाथूराम पुरोहित।

चौबे जी का मन्दिर

इस खानदान के मालिक को पेशवा शासन से आराजी वगैरह वास्ते खर्च मन्दिर श्री गोपालकृष्णजी को दी गई थी। जिसका असल ताम्रपत्र मोरखा की वगावत के समय लूटमे चला गया।

सिंधिया शासन के अधिकार मे आने पर हिरदेराम चौबे को महाराजा दौलतराव सिंधिया ने मन्दिर के खर्च के लिये २८५ रुपये ७ आने का ताकीद पत्र दिया।

संवत् १९११ सन् १८५४ मे रोजाना भोग पोशाक श्री जी के लिये दिया जाता था, उसे बन्द कर एवज मे ५५० रुपया कायम किया गया।

सवत् १९१८ सन् १८६१ मे ८३० रु० मिलता रहा। फिर कमी होकर ५५० रु० मिलने लगे। सवत् १९३२ सन् १८७५ मे कमी होकर २५९ रु० २ आना बाकी मिलता रहा।

वंशावलि-चौबे जी

हिरदेराम के बाद-सांवलाराम, ध्यानदास, फुन्दीलाल उनके बजाय भोगचन्द्र के पुत्र नाथूराम। फुन्दीलाल के लड़के रामचन्द्र, और रामचन्द्र के पुत्र दुर्गाप्रसाद के पुत्र जानकीप्रसाद और जानकीप्रसाद और जानकीप्रसाद के लडके शकरप्रसाद, बाबूप्रसाद, रामाशंकर, चन्द्रशेखर के नाम दाखिल खारिज हैं। ये माफीदार रहे।

माफी मे—मौजा पड़रिया १६ आना, सुआखेडी मे ४१ बीघा आराजी, कस्बा भेलसा मे बाग सहित ६७ बीघा, लश्करपुर मे २५ बीघा ७ विस्वा कुल मीजान ६५३-५ आदमनी १४७ रु० मर्दन शुमारी १५।

चौबे जी का मन्दिर संवत् १८३४ में निर्वाण हुआ था। सुन्दर और मजबूत बना है। इस मन्दिर में गणेशोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया जाता था। उस समय जब कि महाराजा सिंधिया का राज्य था और धर्मप्रेमी शासक थे। अब इस धार्मिकता का अभाव हैं।

इस मन्दिर के पुजारी पं० नाथूराम जी चौबे थे, जिनके दो लड़के हैं। इनकी इस मन्दिर से लगी जागीर पड़रिया नामक ग्राम रंगई के निकट है। सं० १९९२ में पं० नाथूराम जी का स्वर्गवास हो गया, ग्राम कोर्ट आफ वार्ड की निगरानी में ले लिया गया। उस समय उनकी पत्नी ने २९ सनदे सुप्रिन्टेन्डेन्ट सा० को पेश की थी जो वापिस नहीं दी गईं। पड़रिया का मिसल नं० [illegible] तहसील भेलसा में देखे।

✻

विदिशा के हिन्दूधर्म समाज के मन्दिरों की

नामावलि

१—त्रिवेणी घाट पर रामचन्द्र देवालय।

२ चरणतीर्थ पर खण्डेराव जी शिवालय।

३–टूटा हुआ शिवालय चंदेलों का।

४—छतरी शिवजी की विश्रामघाट।

५—छतरी शिवजी की लखेरा घाट के ऊपर।

६—चरणतीर्थ महाप्रभु जी की बैठक माहेश्वरी समाज।

७–महन्त कांकड़े राव की बगिया।

८—टीले पर मंगलदास का मन्दिर।

९—विजय मन्दिर।

१०–लछमन भोई का देवी का मन्दिर।

११–वाला जी का मन्दिर, गरुड़ मन्दिर, राम मंदिर, कृष्ण मंदिर। यहाँ पर चार मंदिर हैं। लेख नहीं है। किंवदन्ती के आधार पर, लाला प्रयागदास कायस्थ समाज जागीरदार विदिशा द्वारा मदिर का निर्माण काल १८०१।

१२–रूपा की बजरिया में श्रीराम जी गुलावचन्द्र जी पीपर खेरे वाले पुत्र श्री रेवाराम जी के पौत्र श्री उमाशंकर जी भृगुवंशी ने कृष्णेश्वर महादेव की स्थापना शुभ मिती वैशाख सुदी ५ सं० १९५१ में कराई।

१३–विजय मन्दिर के सम्बन्ध में पं० जय जयराम जी कार्तिकचौक विदिशा का कहना है—

विजय मन्द्र बना नग्र भेलसा ठाम।
संवत इन्दु विन्दु वसु सिन्धु के मांहि॥

अर्थः—इन्दु का अर्थ=चन्द्रमा १; बिन्दु का=शून्य । वसु=अङ्क आठ । सिन्धु=समुद्र १ ।

१४–चौवे जी के मदिर के पास फणीस साहब का मन्दिर ।

१५–ढौली बुआ का मदिर दक्षणी ।

१६–नन्दवाना मे बड़े बाला जी का मदिर ।

१७–लक्ष्मीनारायण का मदिर ।

१८–रामा किशन जी चन्देरी वालो का राधाकृष्ण मदिर ।

१९–एक मदिर गाडी अड्डे मे शकर जी का है ।

२०–पावर हाउस पर हनुमान जी का मदिर हैं ।

२१–रामकुअर बाई भारतन गुसाइं का मन्दिर ।

२२–शिवालय अप्पा जी राव ।

२३–समाधि जैन भट्टारक विश्राम घाट ।

२४–औघड का मन्दिर विश्राम घाट ।

२५–छतरी शिवजी पोकरदास मानकचन्द्र की धर्मशाला के पास । माहेश्वरी समाज ।

२६–धर्मशाला भड़भूंजा समाज ।

२७–धर्मशाला अहीर अजुद्दीलाल ।

२८–मन्दिर सरयूदास का ।

२९–हवेली मे रघुनाथ जी का मन्दिर ।

३०–गुप्तेश्वर महादेव मन्दिर ।

३१–व इन्ही का एक मन्दिर भी है ।

३२–मूलचन्द्र जी जटाधारी का सत्यनारायण जी का मन्दिर ।

३३–राम मन्दिर दक्षणी समाज ।

३४–रंगियापुरा मे चमारो का मन्दिर ।

३५–श्री जी का मन्दिर ।

३६–श्री विश्वम्भरदयाल सक्सेना वकील भेलसा ने एक धर्मशाला व महारानी सिंधिया की मूर्ति निर्माण कराई थी । अब महारानी सा० के बजाय शंकर जी की मूर्ति विराजमान की गई है, माधव गज मे ।

३७–त्रिवेणी घाट पर रामचन्द्र जी के पुत्र प्रानचन्द्र जी गनेशराम जी दिगम्बर जैन परवार छोवर मूर फागुल गोत्र खेरुआ निवासी जिनके पुत्र मोतीलाल जी के चिरंजीव गोरेलाल; सुमत प्रकाश, मलूकचन्द्र हैं इनकी सत्ती हैं रामचन्द्र देवालय के सामने और सिंघई मोतीलाल जी, चम्पालाल जैन की सत्ती की छतरी और घाट चरणतीर्थ पर है ।

विदिशा के दर्शनीय स्थान

इस परम पवित्र विदिशा नगर में दर्शनीय स्थान हिन्दू धर्म के मुख्य मन्दिर जिनमें उत्कृष्ट सांस्कृतिक कला और विज्ञान की दृष्टि से इन्जीनियर लोगो को आश्चर्य में डालने वाली बाला जी के मन्दिर की छत हैं। एक बार इन्जीनियरिंग पढ़ने वाले विद्यार्थी और पढाने वाले प्राचार्य महोदय अवश्य देखें। इस छत की विशेषता—

इस छत में जिसकी लम्बाई लगभग ३५ फुट समानान्तर चौड़ाई में कोई सहतीर या गाटर वगैरह नही लगे हैं न कोई आर० सी० सी० का ही सिमेंटेड कार्य किया गया है किन्तु छोटे छोटे पत्थर की पट्टियों के जोड़ अवश्य दिखते हैं। छत एकसी लेबिल में है। यह छोटे बालाजी का मंदिर कहलाता है।

इस मन्दिर के सामने एक छोटा मन्दिर है जिसमें गरुड जी की मूर्ति है जो एक अद्वितीय कला और संस्कृति की हैं। इसके निकट में ही चौबे जी का मन्दिर है।

ग्वालियर राज्य के समय यहां गणेशोत्सव राज्य की ओर से बड़े उत्साहपूर्वक मनाया जाता था, किन्तु हिन्दू जाति के दुर्भाग्य से वह सांस्कृति सभ्यता धार्मिक प्रेम हिन्दूवंश परम्परा नाममात्र को ही रह गई है। यह गणतन्त्र राज्य की धार्मिक निष्ठा का एक नमूना।

नई खूबी नई आदत, नये अरमान पैदा कर।

तू अपनी खाक से, इक दूसरा इंसान पैदा कर॥

खाम बाबा जिसे भगवान विष्णु का बाहन गरुड़ है। विष्णु के मन्दिर के सामने था। विष्णु मन्दिर नष्ट हो चुका है। यहां पर एक कनारी के आकार का एक बहुत बड़ा पत्थर था जिसे ग्वालियर राज्य के समय बड़ी हिफाजत के साथ ले जाया गया है। किंवदन्ति है कि उसमें जवाहारात थे इस कारण से ले जाया गया है। इसे तात्कालिक राज्य शासन का रिकार्ड ही बता सकेगा।

इस खाम बाबा के सामने दक्षिण दिशा की ओर वैस नदी को पार कर दृष्टि डालेंगे तो आपको त्रिवेणी संगम पर राम जानकी का मन्दिर है। यहां पर पुरातत्व विभाग केन्द्रीय ने खुदाई की थी उसमें किले की दीवार के आसार मिट्टी के पाईप गंदे पानी के, मूर्तियां तथा अन्य सामग्री निकली किन्तु जनता के समक्ष नही बताई गई और न कोई इस सम्बन्ध में जानकारी ही दी गई जब भी हमें जाने और देखने की लालसा रही छिपाव ही रखा गया।

इस मन्दिर के पूर्व में सूबा खंडेराव जी का बीच वेतवा नदी में शिवालय सुन्दर और मजबूत ऊंची कुर्सी देकर बनाया गया है। यहाँ पर दो मन्दिर हैं।

इस दूसरे शिवालय के नीचे माहेश्वरी समाज की बल्लभकुल सम्प्रदाय की बनी हुई है। इसी

के पास एक मन्दिर ओधा पडा हुआ है। इसी के बगल मे चन्देले राजपूतो के प्रभुत्व की स्मृति और अंतिम दशा की प्रतीक धर्मशाला बनी किन्तु उनके बशज उसे पूरा करने मे असमर्थ हो रहे हैं आज की सन्तति अपने पूर्वजो के नाम पर कालिमा तो लगा सकती है किन्तु उत्थान मे नही ला सकती। आशा है कि उसे वशजगण समुन्नत बनायेंगे। इसके दक्षिण की ओर गिरधारीलाल जी अग्रवाल जिनके वश की प्रतीक केवल यह सीढिया ही शेष हैं।

विदिशा के वेत्रवती नदी पर घाट

(१) दाऊदपुरा घाट, (२) त्रिवेणी घाट, (३) चरणतीर्थ घाट, (४) विश्राम घाट, (५) तमोलियों का घाट, (६) तेलियो का घाट, (७) हनुमान घाट, (८) लखेरा घाट, (९) ताम्रकार घाट (१०) हरदेव हरनारायण अग्रवाल घाट, (११) केवगल मे एक घाट, (१२) महलघाट, (१३) चोर घाट, यहाँ पर प्राचीन सूर्य की मूर्ति और गगा की मूर्ति प्राप्त हुई थी जो सग्रहालय विदिशा मे विद्यमान है। तथा और भी कई मूर्तिया यहाँ पर हैं तथा मूर्तियो की जिलहरी काफी तादाद मे नदी मे पडी हुई हैं। (१४) बैरा बाबा घाट, (१५) रामघाट, (१६) सुनपुरा घाट, (१७) मौआ घाट, (१८) मढा घाट, (१९) बगला घाट, (२०) बन्दा घाट, (२१) रगई घाट, (२२) भोर घाट, (२३) बेरखेडी घाट तक मछलियो की व अन्य किसी जीव की शिकार करना ग्वालियर राज्यान्तर्गत कतई बन्द थी। किन्तु मत्स्योद्योग के विधान प्रस्तुत कर्ता हिंसक प्रवृत्ति धारक माँस लोलपियो ने इस अहिंसक भारत को माँसाहारी बनाया हैं। क्या यही मानवीयता और मानवता है या दानवता ?

अय सिहपुरुष कहलाने वाले अविवेकियो ! तुम्हारा पुरुषार्थ विषयो के पोषण के लिये नही। जैसा मासाहारी सिंह है वैसा तुम्हारा पुरुषार्थ यह पहला मुख—(१) तुमने राज्यलक्ष्मी के भोग के लिए एक मृगी जो राज्यलक्ष्मी है जिसके विषयो का भोग कर रहे हो तुमने भोगने की लालसा से दोनो हाथो से राज्याधिकार की कुर्सी जिसकी चारो टागें दोनो हाथो से पकड़ रखी हैं रसास्वादन ले रहे हो काम पुरुषार्थ है। अर्थ पुरुषार्थ को सिर पर बिठाया है। धर्म पुरुषार्थ और कल्याण की भावनाओ को भूले हुये हो यही चार पुरुषार्थ के चार मुख है। इनके विपरीत अर्थात् बाधायें आने पर विषय भोगियो को चार कषायें पैदा होती हैं। वह क्रमश —क्रोध, मान, माया, और लोभ यह चार मुख हैं। रसास्वादन जिव्हा तक ही रहता है। क्षणभगुर है। अपनी इन्द्रियो पर सयम न रखने वाला ही क्रूर प्रवृत्ति धारण कर लेता है। क्या यह राक्षस नही है। दश मुख एक सिंह, चार पुरुषार्थ, चार कषाय, एक मूर्खता का जिसे गधे का मुख कहते हैं इस प्रकार से दश मुख होने से दशानन कहलाने वाले राक्षस की मूर्ति रावण ग्राम मे एक तलैया के किनारे पर पड़ी हुई है। मानव इस वक्त काल भैरव बना हुआ हैं। यह मूर्ति भी रावण ग्राम के अन्दर हैं। काल भैरव नंगा क्यो है ? परिस्थितियो के कारण। पूर्ति के लिये भिक्षा पात्र हाथ में है। पूर्ति होने पर शासन करता है कृपाण हाथ मे है। तीसरे हाथ मे जो एक मानव का सिर हैं वह अपना स्वार्थ और दूसरे का विनाश बतलाता है। कुत्ता खून पी रहा है। हमारी नीति भ्रष्टाचार कर खून चूसने की बन गई है। डमरू हाथ में मदारी का प्रतीक है। हम तमाशा दिखा रहे हैं। हमारे हृदय पर पड़े सर्प छल कपट के प्रतीक हैं। मुंडमाल क्रोध, मान, माया, लोभादि की प्रतीकात्मक है। ऐसा कौन मानव है जो इस बात से बचा हुआ है ? पूर्वाचार्यों ने जो मूर्तियां

निर्माण कराई उनसे शिक्षा लेना चाहिये। इसलिये भारत मे वह देवता के रूप में आराध्य माने गये हैं।

शिलालेख (राम घाट) विदिशा, वेत्रवती तट

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

भिल्लस्थानमिति प्रसिद्धनगरं, देशेव्युचात्युत्तमम् ।
श्रीमद्वेत्रवतीतटे द्विजघटे, रामानि रामोदेवटे ॥
तत्रेवाति मनोहरंस्याति वस्यन्न मघट्टाभिधं ।
तस्मिन्सुन्दरमन्दिरे विरचितं, शंभोः प्रियं मुक्तिदं ॥१॥
सीताराम–पदारविंदमधुपो, पम्येन दामोदरस्यो ।
रस्येनघ्ननन्दरायविलसन्नान्मासु सत्कीतिना ॥
कृत्वा मंत्रिवरं सहाय सुहृढं श्रीलालबाधामिधं ।
रात्त शंकरपादकंज युगलेह त्रंहिजाया हरात ॥२॥
चुन्नीलाल षनीपिणेपुर रिणोः पूजार्यमाज्ञापिते ।
पुत्रायाशुर मेगभक्तिदयतः प्राणाहिचन्दस्यवै ॥
उपासद्धपसगत शुभ कर सद्धर्म शालेयुतं ।
कर्पू रोघधिनाथ कालि सहशं खंडं पवोयेरिव ॥३॥
विशेष कुमिदं प्रोक्तं केवलं सांव वर्णनं ।
सवोसेषरूढ़ द्वति श्रुति रघाह सादर ॥४॥
कर्ता कारयिता चैव स्यानं मुनिश्च पूजकः ।
द्रव्याणि चान्यर्धकिंचित् सर्वे शिवमयं स्मृतं ॥५॥
रामाकनाग भुयुक्तेवत्सरे माधवे सिते ।
द्वाद्धगो भार्गवो पेते प्रतिष्ठास्यव्यद्योनवीत ॥६॥

श्री अनन्तेश्वर जी की स्थापना संवत् १८९३ शाके ९५६ मिती वैशाख सुदी १२ शुक्रवार शुभं भवतु मंगलं।

भावार्थ—भेलसा नामक प्रसिद्ध नगर में वेतवा नदी के किनारे मुनि और भव्य धर्मप्रेमी जिज्ञासुओं की आत्मा को शांतिदायक पूजा का स्थान भगवान राम जानकी (राम सीता) एवं

राधा कृष्ण, तथा शिवालय का निर्माण कराकर मूर्तियों की प्राण प्रतिष्ठा कराई ऐसे श्री घननन्दराम जिनकी सत्कीर्ति करने में सहायक मंत्री श्री लालबाघ, चुन्नीलाल जिनके पुत्र भगवत्भक्ति में दत्तचित्त हैं इस मन्दिर घाट और धर्मशाला की प्राणप्रतिष्ठा कराने के पश्चात् भार्गव समाज के पंडित को पूजा पाठ के निमित्त सुपुर्द किया।

वेत्रवदी नदी के बहाव के नीचे की ओर एक बैराबाबा नामक घाट है। घाट पक्का बना है। घाट के ऊपर एक हनुमान जी का सुन्दर मन्दिर है और एक धर्मशाला सेठ देवीदास सूरजमल महेश्वरी की बनवाई हुई है। यह घाट भी लगभग १०० या १२५ वर्ष पूर्व का निर्माण किया हुआ प्रतीत होता है। इसमे कोई निर्माणकर्ता का लेख नही है।

पूर्व शासकों की अक्षुण्ण अहिंसा और वर्तमान के शासकों की अहिंसा का

अन्तर-प्रदर्शन का एक चित्रपट

१—सूचना पत्र

मिसल क्रमाक २७–०–३१ / २००१ | मिसल क्रमांक ११–०–३ / २००३

कार्यालय सूवात जिला भेलसा

विषय—बेतवा नदी मे शिकार का निषेध के सम्बन्ध में

बनाम—राजमल जैन मड़वैया विदिशा (भेलसा)

जर्ये हाजा आपको सूचित किया जाता है कि यदि जो प्रार्थना पत्र भेलसा निवासियों की ओर से आपके द्वारा प्रस्तुत हुआ था उसके सम्बन्ध में कष्ट दिया जाता है कि यदि आप मछली का शिकार नदी बेतवा मे रगई पुल तक न की जाने बावत मुमानियत चाहते हैं तो कृपया ट्रेसिग पेपर वास्ते ड्राइंग नक्षा कार्यालय तहसील मे प्रस्तुत करें। हे वि०

हस्ताक्षर—(मराठी)
३०–१–५०
असिस्टेन्ट माल

हस्ताक्षर (अंग्रेजी) अधिकारीगण
३०–०

ट्रेसिग पेपर हस्ते श्री रामजल जी मड़वैया से प्राप्त हुआ तो वास्ते मुरत्तिब पता तहसील मे क्रमांक १२२३ माखाना १ भेजा गया।

७–२–५०

हस्ताक्षर अंग्रेजी ९–२–५०

नम्बरान नदी बेतवा २४००

३९९ / ३९९ / ११ २	रामघाट / ८।।। २	वाटर वर्क्स १८।। २ / ११।। २ / महल घाट / २३९४ — २३१६

महल घाट ——————— चरणतीर्थ ———————

२८ ४ १

पुतली घाट के सामने से कच्चे पुल मोजा रंगई के नम्बरान

५ से १४	१५ १६	४७	१५१	१५१
१ २	६,३ । १०।।।	१	१	२
२-८ । ७		७। ४	५। ४	१०

१ से नम्बर २	२२	चोर घाट तक
१	१	

मदन खेड़ा के नम्बरान — १ — व १४ है। दौलतपुरा के नम्बरान ४/१ हैं

२—सूचना पत्र

आम खेड़ा के नम्बरान भट्टों से भोंर घाट तक

१ से २	।	२२ तक
१	१—३	१
७।। १		२९। २

रंगई भोंर घाट से पुतरी घाट के सामने तक

श्रीमान प्रेसीडेन्ट ओकाफ कमेटी
परगना भेलसा

विषय—

चीराबन्दी वेतवा नदी के दोनों किनारे शिकार निषेध के सम्बन्ध में

निवेदन है कि गजट दिनाँक ३-११-३४ सफा क्रमाक ९२५-९२६ में वेतवा नदी में शिकार नहीं करने के सम्बन्ध में आदेश प्रसारित हुए हैं। उसमे क्रमांक २४०० लगायत २३१६, २ भेलसा से ४८, १ दाऊद का पुरा तक शिकार की मुमानियत की गई है। इस फासले के अन्दर रंगाई पुल नहीं आता है बस प्रार्थना है कि रंगई पुल तक सरहद कायम फरमाई जावे। दिनांक २७-११-४२

अर्जी फिदवी
वासिन्दगान कस्वा भेलसा

मिसल क्रमांक ५, ३१
―――――――――――
८२ गवर्नमेन्ट

हस्बुल हुक्म कौंसिल आलिया ग्वालियर गवर्नमेन्ट तारीख ८-८-१९३४ ई० हर खास व आम को आगाह किया जाता है कि नदी बेतवा मे धुवघटा से दाऊद पुरा तक नदी बेतवा मे तथा बैस नदी मे से त्रिवेणी के आगे तक दोनो नदियो के दोनों किनारो पर व फासले लम्बाई सवा मील व चौडाई में किनारे से दो-दो जरीब तक शिकार खेलने की मुमानियत की जाती हैं। अगर इसकी कोई खिलाफवर्जी करेगा तो वह मुस्तेजब सजा हस्ब दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा।

सूवा (जिला भेलसा)

जमीमा ग्वालियर गवर्नमेंट गजट तारीख २० फरवरी सन् १९३२ ई०

होम डिपार्टमेन्ट

सेक्सन औकाफ

मि० न० $\frac{८०}{८५}$ १७ औकाफ

सरक्यूलर न० ३ संवत् १९८८

अक्सर देखने में आया है कि मुमानियत शिकार की बाबत जो सिफारिशें व नकशे वगैरह सूबा साहब की तरफ से महकमें हाजा में मौसूल होते हैं, वह ना मुकम्मिल होने की वजह से उनकी तकमील कराने मे बहुत वक्त जाया होता है। और मुआमले भी वक्त पर तय नहीं पाते हैं। लिहाजा इस दिक्कत और रफा करने की गरज से हस्बुल हुक्म कौसिल आलिया तारीख २३-८-३१ ई० यह स्टैंडिग फार्म जर्ये सरक्यूलर हाजा जारी किया जाता है कि आयन्दा अगर मुमानियत शिकार की बाबत कोई शिकार की सिफारिश की जावे तो फार्म मुसलिका हाजा के कलमो की खानापूरी पूरी तौर पर करके मय नकशे दो दो परती के भेजने की पाबन्दी रखी जावे।

सदाशिवराव पंवार
होम मेम्बर

फार्म मुताल्लिक इस्तदुआ मंजूरी मुमानियत शिकार।

१-मुमानियत शिकार की किस मुकाम पर जरूरत है।

२--मुकाम मजकूर मुतबर्रिक किस वजह से माना जाता है, और कौन लोग उसको मुतबर्रिक मानते हैं।

३--मुकाम मजकूर पर मुमानियत शिकार होने बाबत किन लोगों की ख्वाहिश या दरख्वास्त है।

४--जिस मुकाम पर मुमानियत शिकार की ख्वाहिश है उस मुकाम का कायदा स्केल मे ट्रेसिंग क्लाथ पर बना हुआ नकशा दो परती इस फार्म के साथ नत्थी किया जावे। और उसमे

मुकामात मन्दिर घाट वगैरा वाकायदा दिखाये जावें । और जिस कदर हिस्से में मुमानियत शिकार की जरूरत है वह हिस्सा सुर्खी से बताया जावे ।

५—जिस कदर हिस्से में मुमानियत शिकार की जरूरत है । उसकी लम्बाई और चौड़ाई और सिम्त के हद हुकूक के कुदरती निशानात का भी इजहार किया जावे ।

६—अगर मुमानियत शिकार मे किसी शख्स, अशखास या किसी फिरके के लोगों को उज्र हो तो वह उजरत क्या है और वह काबिले मानने के हैं या नहीं, अगर नही तो किस वजूहात से, यह बतलाया जावे ।

दायरा तारीख २९-१०-१९३४

रजिस्टर नंबर ८८२
———
२९-१०-१९३४

२४१०
मि० नं० ५
———
८९

३१ फे० नं० १७

सेक्रेट्री ओकाफ डिपार्टमेन्ट ग्वालियर गवर्नमेन्ट	कदून

रा०

सूबा साहब

जिला भेलसा । ग्वालियर गवर्नमेन्ट

मुकाम मोती महल तारीख २६-१०-३४ ई० संवत १९९१

वि० वि०

व मामले मुमानियत शिकार वाके भेलसा रंगई पुल से त्रिवेणी घाट तक परगना भेलसा जिला भेलसा ।

आपकी जानिब से जर्ये पत्र नं० ५०२ तारीख २२-७-३३ नकशे हुदूद दाखिल होकर मामला हाजा कौसिल आलिया में पेश किया जाकर पर हस्ब हुक्म कौसिल आलिया तारीख ८-८-३४ हुदूद नदी वेतवा मे नम्बर २४०० भेलसा से न० २०३० दाऊदपुरा तक व बैस नदी में नं० १४८ से ३२२ त्रिवेणी के आगे तक दोनों नदियों के दोनों किनारों पर व फासले लंबाई सवा मील व दोनों किनारों पर चौड़ाई दो दो जरीब तक शिकार खेलने की कतई मुमानियत की जाती है ।

अगर इसकी कोई खिलाफ वर्जी करेगा तो वह मुस्तेजिब सजा दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा ।

एक परत नक्शा बाद दस्तखत जनाब प्रेसीडेन्ट साहब वापिस किया जाता है। मौके पर मुमानियत शिकार की बाबत एक शाईन बोर्ड में मुमानियत शिकार और हुदूद की इबारत कन्दा कराई जाकर लगाया जावे और हुदूद पर चीरे नस्व करा दिये जावें।

महक्मे हाजा से नोटीफिकेशन वास्ते इशायत प्रेस को भेजा जा रहा है।

हे वि०
मा० १
ब० प्र०

हस्ताक्षर अंग्रेजो
सेक्रेट्री
औकाफ डिपार्टमेंट

१६-१०-१९३४

महक्मे सूबात जिला भेलसा

नोटिस

बनाम- हर खासो-आम

ब मामले मुमानियत शिकार वाके भेलसा रगई पुल से त्रिवेणी घाट तक
परगना व जिला भेलसा

हस्बुल हुक्म दरबार हर खास व आम को जर्ये हाजा आगाह किया जाता है कि हुदूद नदी बेतवा मे नं० २४०० भेलसा से नं० २३३० दाऊदपुरा तक व बैसनदी में ३४८ से ३२२ त्रिवेणी के आगे तक दोनो नदियो के दोनो किनारो पर चौडाई दो दो ज़रीब तक शिकार खेलने की कतई मुमानियत की जाती है।

अगर कोई शख्स इसकी खिलाफवर्जी करेगा तो वह मुस्तेजिब सजा दफा २८६ मजमुआ ताजीरात ग्वालियर संवत् १९८२ होगा।

फक्त तारीख

मि० नं० ५
————३१
८९

सांकल कुआ के शिलालेख की मूल-प्रतिलिपि

श्री गणेशाय नमः। श्री भद्रावती नाम नगर्यां नर्मदा उत्तर भागे विक्रमार्क समयातीत १८४४ कु———नर्मदा दक्षिण भागे श्रीमन्नृपति शालिवाहन शके १७०९ प्लवंगा———सनक्षत्रे शिवयोगे तद्दिनेराजेश्री गपुजा नन्दराव क्षे——निवासिना कूपः कृतः गगा सागराभिधान प्रतिष्ठित धर्मार्थकाम मोक्षाणा शुभ———कारीगर सुगर सिलावट।

भावार्थ—

इस शिलालेख से यह स्पष्ट होता है कि इस नगरी विदिशा का नाम भद्रावती पूर्व में

था और यह भी स्पष्ट है कि इस नगरी से नर्मदा नदी दक्षिण भाग में है और इस कुयें का नाम गंगासागर है। निर्माता का नाम अस्पष्ट है अक्षर टूट जाने से।

नीम तालाब का शिलालेख—

यह बन्द बहुक्म हुजूर श्रीमन्त सरकार महाराजा माधवराव साहिब सिंधे आलीजाह बहादुर दाम मुल्ककहू व अहतमाम सीगे आवपाशी तैयार हुआ। संवत् १९५० सन् १८९४।

सिंधिया शासन की अहिंसा

जमीमा ग्वालियर गवर्नमेंट गजट, ता० ९ अगस्त १९४१ ई०

डिपार्टमेंट आफ ला एन्ड जस्टिस

मि० नं० १८९ का० मुत०
९६

करेक्शन स्लिप नं० १६ ता० ६ अगस्त १९४१ ई० मुताल्लिक मजमुआ ताजीरात रियासत ग्वालियर संवत् १९८२ मजमुआ ताजीरात रियासत ग्वालियर संवत् १९८२ को दफा २८७ के दूसरे पैराग्राफ की मौजूदा इबारत के बजाय हस्वजैल इबारत कायम समझी जावे। और अगर कोई शख्स खरीद व फरोख्त गोश्त मादा गाय या नर गाय करे या इन जानवरों के गोश्त को फरोख्त करने की नियत से या खाने के स्तेमाल में लाये जाने की नियत से अपने कब्जे में रखे तो उसको दोनों किस्मों में से किसी किस्म की कैद की सजा दी जा सकेगी। जिसकी म्याद २ साल तक हो सकती है या जुर्माने की सजा या दोनों सजायें दी जायेंगी।

गोविन्दराव कृष्णराव शिन्दे
मिनिस्टर फार ला एण्ड जस्टिस

अदालत ड्रि० जज भेलसा

नं० मु० ४८
————इ० फौ०
९९

सरकार जर्ये कस्टम डिपार्टमेंट
बनाम
मुनीर शाह फकीर सा० चौपड़ा

शासन की चोरी से काटने के लिये ले जाते पकड़ा दिनांक ८-११-४२ और ३ माह कच्ची जेल भुगतने के पश्चात् ४ रु० जुर्माना कर छोड़ा गया।

गिरफ्तार कुनिन्दा
राजमल मड़वया, विदिशा

अदालत सुप्रिन्टेन्डेन्ट कस्टम एण्ड एक्साईज
जिला विदिशा

मि० नं० ७५ / ९९   २ / ७

दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक १७-१२-४२

श्री बामनराव जी रेवाडी कर सुप्रिन्टेन्डेन्ट कस्टम पोष्ट भेलसा व श्री गोपाल सहाय सुप्रि० पुलिस भेलसा की सहायता से मुहब्बतसिंह कानि० नं० ५८ दिनाक १७-१२-४२ द्वारा पीपलखेडा की हाट मे से जाते हुए ११ कसाइयो को सरहद्दी पर गिरफ्तार कराया था जिनके पास विना रवन्ना या चालान के ५ बैल १ पडा गिरफ्तार किये थे जिसकी ता० पेशी २७-८-४३ अदालत डि० सवजजी भेलसा मे थी यह अपराधी जुर्म न० ८४ कस्टम एक्ट २ व ११ के तहत गिरफ्तार हुये थे यह वैरसिया इलाका भोपाल के रहने वाले थे। खेमचन्द्र खगार चौकीदार बेंवची का भी सहयोग रहा था इस समय गोविंद गोपाल सायरदार ने बडी सहायता दी थी। चिट्ठी न० ८१। १७-१२-४२। आबक क्र० १०५३४ / २५-५-४३ मि० न० ७५ / ९९ । २ / ७ मुकदमो मे कामयावी मिली और २५ ग्वालियर राज्य से पुरस्कारादि भी प्राप्त हुये। यह थी सिंधिया शासन की अहिंसा।

चरण तीर्थ घाट

आपा खडेराव जी सूवा भेलसा ने अपने शासनकाल में स्मृतिरूप इस घाट का निर्माण कराया। और बीच नदी मे विशाल शिवालय निर्माण कराया यह हैं। उनकी धार्मिकता और भगवत् भक्ति का आदर्श। जो व्यक्ति धर्मात्मा नही वह प्रभुता प्राप्त कर भी पशु के तुल्य है। (धर्मेण हीना, पशुभि: समाना:)

मन्दिर के पीछे दक्षिण दिशा की ओर एक चबूतरे मे दिगम्बर जैन धर्म की मूर्तिया हैं जोकि विजय मन्दिर की निकली हुई हैं जो जैन धर्म और हिन्दू धर्म के समन्वय की द्योतक हैं।

शिलालेख

दक्षिण दिशा मे एक चबूतरे पर एक पत्थर मे सती लेख है।

अथ श्री विक्रमादित्य राज्य सवत् १८४१ शाके १७०६ मिती मगसिर सुदी १३ बुधवार ता दिन सती नदी धर्म भागवत वेद परस्त प० सूवे जी पारासर गोत्र भार्गव बूलचन्द्र जी तस्य पत्नी पतिव्रत परायण श्री वाकीलद्य वारा सरग पनकि श्री तिनकी आज्ञा से ये वह सावत सिंघ मुण ने चोतरा गत बनवायो शुभ भवतु।

माहेश्वरी बल्लभ कुल संप्रदाय

इस सती के पूर्व दिशा की ओर एक शिखर बन्द शिवालय है। इसके दरवाजे के बाहरी ओर दो खभे हैं जिनमे प्रति वर्ष कार्तिकी पूर्णिमा के दिन प्रात:काल दीपक भी जलाये जाते हैं और मेला भरता है।

इस मन्दिर के नीचे एक छोटी मढ़ी बनी हुई है जो बल्लभकुल संप्रदाय महेश्वरी समाज की है और महेश्वरी समाज इसकी पूजन आदि करते हैं।

सीढ़ियाँ

इस मन्दिर के पीछे दक्षिण की ओर विदिशा के पुराने मार्ग पर घाऊ काट कर जो सीढ़ियाँ बनवाई गई है वह अग्रवाल जाति के रत्न श्री गिरधारीलाल जी जो हलवाईगिरी का कार्य करते थे गरीब परिस्थिती के धर्मात्मा सज्जन थे इनके कोई संतान नहीं हुई और धार्मिक भावना के कारण अपने जीवनकाल की स्मृति में जनकल्याण को मार्ग की कठिनता को सरल बनाने की हुई और जिसे लगभग सं० १९८५ के बनवाई थी।

चरणतीर्थ के जाने का पुल

अचानक कभी कभी वर्षाकाल मे चर्णतीर्थ पर दर्शनार्थी बाढ आ जाने से कई दिनों तक मन्दिरों पर रुक जाया करते थे क्योंकि यह मन्दिर नदी के बीच में है। विदिशा निवासी पं० मूलचन्द्र जी जटाधारी ने सतत् प्रयत्न कर प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत मध्य भारत शासन-काल मे श्री मुख्य मन्त्री बाबू तखतमल जी से माघ शुक्ला ८ रविवार संवत् २०१२ दिनांक १९ फरवरी सन् १९५६ को सम्पन्न करवाया। सीढियों से लगा हुआ ही यह पुल है।

चरणतीर्थ घाट के चबूतरों पर

चरण पादुका में शिलालेख मिती फूस सुदी ८ संवत १९७० खुदा हुआ है।

द्वितिय चरणपादुका लेख

शंकरलाल माली भोपाल निवासी ने अपने पूज्य पिता जी की स्मृति मे जेठ वदी ४ सं० १९९४ मे निर्माण कराये।

श्रमण संस्कृति और चरणतीर्थ

चरणपादुका के उत्तर की ओर एक चीरे मे जैन मूर्ति के भग्नावशेष में एक लेख में सं० के अंक टूट चुके हैं अन्तिम अंक ३२ वर्षे फूस सुदी १० वि० घोल्हण प्रणमति नित्यं लाल रंग के पाषाण मे उत्कीरित है। इससे स्पष्ट है कि किसी श्रवण संस्कृति के स्नातक जिनधर्मावलंबी ने श्रमण आचार्य के सदुपदेश से मूर्ति का निर्माण कराकर प्रतिष्टा कराई हो।

इश्तहार

आपा श्री खडेराव जी के मन्दिर पर एक शिलालेख में लिखा हैं, वह निम्न है—रामघाट से त्रिवेणी घाट तक बेतवा नदी के दोनो किनारों पर शिकार खेलना, बुरे कपड़े धोना, मुर्दों की राख डालना मना है। मि० नं० ३–७४–१७

रूपनारायण दरसूवा, भेलसा।

चंदेल वंशी राजपूतों का प्रभुत्व

यवनों के आक्रमण के पूर्व क्षत्रियों ने अपनी वीरता का दुरुपयोग किया। एक दूसरे को लूटता था। जब मुगलों का आक्रमण हुआ और मुगल इन राजपूतों के यहां आश्रित होकर रहे इनकी फूट और प्रतिक्रिया को देखा तो वह इन्हीं राजपूतों के पथ प्रदर्शक बने और मुगलों ने इस प्रांत में अपनी राजधानी कायम कीं। जैसे भोपाल, कोरवाई, पठारी, हैदरगढ़–बारौदा और भेलसा (विदिशा) विदिशा मे रायसेन दरवाजे के अन्दर जो मसजिद है उसमे यह लिखा है—

बनाई मसजिद दरवाजा शहर जीविद मिरजा हुसेन दर शहर हाकिम व अदद खुसरो साहब कुरान शुद के शहराज अदल वजून गुलिस्ताने शुद वजी वजह दस्त सैयदी याकूत जो जनमसाल तारीख तमाइश बनाई मसजिद खुदराज मन्न शुद खुरूखशा खातिर निशाद शुद।

हिजरी १००० रौत कजशाह लौदकिन मंजा। स० २०२० इस मय है और हिजरी सन् १३८३ है इसलिये इसे ३८३ वर्ष हुये।

इस समय इन चदेल वंशी राजपूतो का दौर दौरा अच्छा खासा था। ग्वलियर महाराजा ने इन्हे जागीरदार बनाकर सम्मानित किया और हुकूमत सिंधिया नरेश की रही। इन्होने चरण-तीर्थ पर मन्दिर और धर्मशाला मे सुन्दर सुन्दर जालियो की एक धर्मशाला बनवाई जो अधूरी है इनके अभाव मे वशज विपरीत मार्गी मद्यपी कर्तव्यहीन और अयोग्य मन्त्रियो के कारण न बनवा सके और अपने गौरव को खो दिया।

गणतन्त्र राज्य मे विलीन यह जागीरें हो गई। जिन राजपूतो ने अपनी मान मर्यादा को स्थित रखने के लिये जीवनाहुति दी थी वह आज भी सूर्य के समान चमक रहे हैं। वह इस प्राचीन सांस्कृतिक वैभवयुक्त कलामय मूर्तियो मे आज भी चिरजीवी हैं। जिनकी न्यायपरायणता और वीरता सदैव जीवित रहेगी।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
याते यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥१॥

पूर्व वीर क्षत्री और वर्तमान क्षत्री में अन्तरप्रदर्शन

जिनकी आंखन तें रहे, वर्षंत ओज अंगार।
तिनके वंशज झेंपते, दृग झांपत सुकुमार ॥२॥

रहे रंगत रिपु रक्त से, समर केश निरवार।
तिनके कुल अब हीजड़े, काढ़त मांग संवारि ॥३॥

धारत हैं रण भूमि जे, अरि मुंडन को हार।
तिनके कुल के करत अब, सरस सुमन सिंगार ॥४॥

रह्यो सदा जिन हाथ को, यार एक हथियार ।
लखियतु अब तिन करन में, रमन-बाल हितहार ॥५॥

झूमत हैं जंह मत्त ह्वै, सहज सूर दिन रैन ।
लटक लजीले छैल तहं, मटकि नचावत नैन ॥६॥

निर्जीव राजपूत

दलित शीस पै बाँधिकें, रजपूती की पाग ।
कियो निलज ? नट-लों तऊ, बल-विक्रम को स्वांग ॥७॥

तुम रजपूतन में कहाँ, रजपूती की आस ।
प्रमदा-मदिरा-माँस के, भये आजु तुम दास ॥८॥

कुल में दाग लगाय धिक, बन्यो फिरत रजपूत ।
गरि-गरि गिरयो न गरभ तें, कादर क्लीव कपूत ॥९॥

मजबूती तो कहुँ नहीं, है सब काम निकाम ।
कहिवे कों बस रहि गयो, रजपूती को नाम ॥१०॥

कहा तुम्हें तलवार सों, है सब सूखी शान ।
मूंठ सुनहरी चाहिये, और मखमली म्यान ॥११॥

कुल कलंक कादर कुटिल, व्यभिचारी विन लाज ।
करत दुष्ट दावा तऊ, रजपूती को आज ॥१२॥

चाटत जग-पग स्वान ज्यों, फिरत हिलावत पूंछ ।
बनत कहा अब मरद तें, यों मरोरिकें मूंछ ॥१३॥

धिक्कार

जो देखत तुव भगिनी के, खेंचत पामर केश ।
जानि परत या बाहु में, रह्यो न बल को लेश ॥१४॥

रे निलज्ज ! जिनके अछत, अरिहिं झुकायो माथ ।
अब तिन मूंछन पै कहा, पुनि पुनि फेरत हाथ ॥१५॥

निज चोटी बेटीन की, सके राखि नहिं लाज ।
धिक-धिक दाढ़ी मूंछ ए, धिक धिक दाढ़ी आज ॥१६॥

भखत माँस मदिरा पियत, ताकत परतिय द्वार ।
धिक तेरो जीवन मरन, लंपट चोर लवार ॥१७॥

मरि है नहिं कबहूँ कहा, धसत न जो रण माँझ ।
उपज्यो कूख कुपूत तें, रही न क्यों विधि ? बाँझ ॥१८॥

भाज्यो पीठ दिखाय यों, धस्यो न जूझन मांझ ।
तो सम कादर जनन तें, भलि क्षत्रानी बाँझ ॥१९॥

अयोग्य नरेश

अपने ही तनु की न जो, तुम पै होत संभार ।
झूठ मूठ फिरि वनत क्यों, प्रजा-पाल-रखवार ॥२०॥

या वसुधा को भाग भरि, भोगत भुज मजबूत ।
कहा भोगि है भूमि ए, कादर क्रूर कपूत ॥२१॥

जगत का मिथ्यात्व

परखतु जीवन जौहरी, प्रान-रत्न जहं गूढ़ ।
ता सांचे संसार को, कहत असांचो मूढ़ ॥२२॥

जा जग की रोटीन तें, सूझत अलख अनंत ।
मिथ्या ताको कहत ए, निलज निठल्ले सन्त ॥२३॥

विविध

करै जाति स्वाधीन जो, सांचो सोइ सपूत ।
यों तो कहुँ केते नहीं, कायर क्रूर कपूत ॥२४॥

जिन समशेरन तें कबों, कटे दुवन सिर हाय ।
तिनतें काटत घांस तुम, अब हंसिया गढ़वाय ॥२५॥

मतवारे सब ह्वै रहे, मतवारे मत मांहि ।
सिर उतारि सत धर्म पै, कोउ चढ़ावत नांहि ॥२६॥

चूसि गरीबनु को रकत, करत इन्द्र सम भोग ।
तउ गरीब परवर उन्हें, कहत अहो ए लोग ॥२७॥

दिन दूनी लागी बढ़ै, बल बीरज की मांग
छैल चिकनियां हू रचै, धीर वीर के स्वांग ॥२८॥
नहि चाहत साम्राज्य सुख, नाहि स्वर्ग निर्वाण ।
जन्म जन्म निज धर्म पै, हरषि चढ़ावो प्रान ॥२९॥
भये न जो पढि सत्य व्रत, सबल सूर स्वाधीन ।
तो विद्या लगि बाद धन, समय शक्ति व्यय कीन ॥३०॥

वीरों के आभूषण

पेश कब्ज दृढ गुर्ज त्यों, बरछो बाँक कटार ।
हैं आभूषण वीर के, तुपक तीर तलवार ॥३१॥

प्रकृत वीर

औसर आवत प्रान पै, खेलि जाय गहि टेक ।
लाखनु वीचि सराहिये, प्रकृत वीर सो एक ॥३२॥

स्मशान

मातु पितु दारा भ्रात, भगिनी सुता औ सुत ।
इनके ममत्व भूलो, भ्रम के भंवर ३३॥
हाटक के हर्म्य हय, हाथी नहि साथी ह्वै हैं ।
संपदा अखूट, रहि जैहै धरो घर में ॥३४॥
चुन्नीकाल कल्ला, लगते ही शीस ढल्ला लेखि ।
छल्ला हू रती कौ, कोऊ छांड़ि है न कर में ॥३५॥
हल्ला राम नाम सत्य, माँचि हैं महल्ला वारे ।
फूंकि हैं इकल्ला, घरी राखि हैं न घर में ॥३६॥

विश्राम घाट-स्मशान भूमि

चन्देल वंशी राजपूतो के इस मन्दिर से लगा हुआ एक मन्दिर और भी था। जो गिरा हुआ क्यों पड़ा है? उसका उल्लेख यह है कि -

एक तो यह प्राय: डांका डालने का कार्य करते थे इस कारण इनकी मनोवृत्ति दूषित थी। और दूसरी बात यह भी थी कि अन्यायोपार्जित द्रव्य से विपरीत भावनाओ से प्रजा त्रसित थी।

ऐसे ही प्रसंग में एक मंत्रवादी से संघर्ष हो जाने पर उस मंत्रवादी ने घोषणा कर अपना चमत्कार इस मन्दिर पर बता कर गर्व को दूर किया था। उसी समय से इन राजपूतों का सितारा गिरता ही गया। इसी के पीछे पूर्व दिशा की ओर स्मशान भूमि है। वहाँ पर विदिशा के नगरसेठ श्री धनराज जी श्वेताम्बर जैन की धर्मशाला बहुत ही मजबूत बनी है।

लकड़ी के टाल हेतु दान

विदिशा के नगर निवासी दिगम्बर जैन धर्मपरायण दानवीर सेठ सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जी परवार ने सिंघई मोतीलाल जी जुगराज वालों के स्मरणार्थ आषाढ शुक्ला ३ श्री वीर निर्वाण संवत २४६४ विक्रम संवत १९९५ दिनांक ३०-६-१९३८ ई० को निर्माण करा कर सेक्रेट्री नगर—पालिका विदिशा के द्वारा चालू करवाया था, किन्तु इसकी दशा अब शोचनीय है।

दो चबूतरे श्मशान में

श्री सुन्दरलाल जी हीरालाल जी ताम्रकार भेलसा ने अपने पिता श्री जवाहरलाल जी की व श्री माता जी की पुण्य स्मृति मे वि० सं० १९५५ मे समाधि का चबूतरा निर्मांण कराया था। इनके वंशज श्री अशर्फीलाल जी व चम्पालाल जी के सुपुत्र पुरुषोत्तमदास हैं।

छतरी

सेठ विरदीचन्द जी की धर्मशाला से लगी हुई नौलक्खी की ओर सेठ सूरजमल जी लछमनदास जी महेश्वरी की है। इनके वंशज भी हैं।

औघड़ का मन्दिर

इस मर्घट मे व्यंतरादिक के बड़े कांड होते रहते थे, जनता बड़ी दुखी थी और यहीं एक मन्त्रवादी साधु जिसे औघड़ कहते थे स्मशान मे ही पडा रहता था। कभी कभी नगर मे भिक्षार्थ आजाया करता था। किसी एक दाता माता ने अचानक ही मकान की दूसरी मंजिल से दान देने को इशारा किया तो साधु ने तत्काल अपना भिक्षापात्र वहां तक पहुँचा दिया। इस चमत्कार से इस साधु की अधिक मान्यता बढ गई और उसने उस भिक्षा के द्रव्य से इस मन्दिर का निर्माण कराया और मर्घट को उसकी प्राणप्रतिष्ठा के समय कील दिया। जिससे व्यतरादिक के उपद्रव सदैव को समाप्त हो गए। यह थी हमारे देश की मन्त्र—विद्या। साथ ही उस साधु ने नगरवासियों को एक प्रीतिभोज भी दिया; ऐसी जनश्रुति है।

लोभ पाप का बाप

इस भेलसा में संवत १९५९ मे अलफखा, खूवाजी, कमालखाँ मेवाती और नीलगिर बाबा डांका डालने में बड़े प्रवीण थे और उनके नाम पर कई लोग खड़े होकर गिरोह बनाकर डांका डालते थे। उस समय यहाँ पर थूवड़ों का घना जंगल था और डाकुओं के अलावा जंगली शिकारी पशु भी रहते थे।

उस समय सोने का भाव करीब १५ रुपया तोले का था। एक डाकू ने सोना देना स्वीकार किया और स्थान इस औघड़ के मन्दिर का रखा। सायंकाल के वक्त लेना देना होता था। सोनी जो लोभ के वश ज्यादह तोल लिया करते थे यह बात डाकू को बुरी लगी अतएव एक दिन सोनी जी से रुपया छीन लिया और उनके तराजू बांट छीन लिये और जवान हलक से काट ली ताकि वह बोल न सके और सोनी जी पढ़े लिखे भी नहीं थे जो कि लिखकर ही बता देते। यह था बाप का बाप-लोभ।

घाट का निर्माण

ताम्रकार समाज के कुलगुरु स्वर्गीय श्री उतमप्रसाद जी तिवारी मुरादपुर डि० भेलसा परगना बासौदा की माता जी ने ताम्रकार समाज से द्रव्य संग्रह करके एक घाट का निर्माण सं० १९३५ विक्रमी के लगभग कराया। इस वंश में उनके नाती श्री कुन्जीलाल जी तिवारी हैं।

यह टाल श्री नगरसेठ विर्दीचन्द जी की धर्मशाला में रखा गया है।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी ने विश्राम घाट पर माता शक्करबाई जी की स्मृति में एक धर्मशाला बनवाई थी। तथा एक मुर्दा घर जिसमें दाह संस्कार होता है टीन शेड मौसिया सेठ सिताबराय जी की स्मृति में बनवाया था। यह सन् १९६६ की नदी की बाढ़ में गिर गये हैं।

चरणतीर्थ के खडेराव जी के मन्दिर से पश्चिम की ओर सिंघई मोतीलालजी चम्पालाल जी भेलसा का घाट तथा घाट के ऊपर सत्तिया भी है।

इसी घाट के ऊपर भारती गुसाई का मन्दिर है। इसी से उत्तर की ओर त्रिवेणी का घाट है। घाट के ऊपर एक धर्मशाला है जिसमें प्रायः बन-भोजन हुआ करते हैं। इस घाटके पश्चिम की ओर श्री रामचन्द्र देवालय है। इन दोनो के बीच नदी के मार्ग में प्रानचन्द जी मोतीलाल जैन परवार छोवरमूर फागुल गोत्र खेरुआ ग्राम निवासी की सत्तियां हैं। यहाँ वर्ष में दालवाटी अर्थात् वन-भोजन के लिये जाते हैं।

इसी रामचन्द्र देवालय के सामने नदी पार कर एक ऊंचा सा टीला हैं जिसे नौलक्खी कहते हैं। यहां पर भगवान राम वनवास के समय आये थे ऐसी किवदन्ती चली आ रही है।

इसी नदी बेतवा के नीचे की ओर आमाछावर नामक ग्राम है। वहाँ पर सम्राट अशोक के स्तम्भ के नीचे के भाग थे। ऐसा ज्ञात होता हैं कि यहां पर कोई विशाल मन्दिर रहा हो। पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री यत्र तत्र मिलती है।

दाऊद पुरा घाट नदी वेतबा के बीच में एक प्राचीन मार्ग था और उस समय का पुल भी बना हुआ है जिस पर पानी अधिक रहा करता है। इसी स्थान पर अनेकों विशालकाय प्रतिमायें नदी के गहरे जल मे पड़ी हुई हैं जिनके निकलवाने के लिये शासन से प्रार्थना की गई किन्तु किसी भी शासक ने प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया।

इसी नदी में विशाल बावड़ियाँ भी पूर्वकाल की बनी हुई हैं।

वैस नदी में ऊपर की ओर वैस ग्राम के निकट नदी मे भी बावडिया बनी हुई हैं। तथा कई जगह स्तंभ भी विद्यमान हैं। यहां पर प्राय: प्राचीन मुद्रायें तांबे चांदी आदि की प्रचुर मात्रा में मिलती ही रहती हैं।

यही प्राचीन वैस नगरी है। इसमें कई मन्दिर धराशायी हुए हैं जिनके अवशेष के साथ साथ भग्नावशेष जो भूगर्भ मे छिपे पडे हैं, अधिकांश तौर पर नीव या गड्ढा खोदने मे मिलते हैं।

लखेरे घाट से दक्षिण की ओर एक सडक के किनारे सरजूदास जी वैष्णवी वैरागी ब्राह्मण का राम जानकी का मन्दिर है जिसका जीर्णोद्धार रामगढ के श्री ठाकुर लाल साहब ने कराया है।

वैस नदी के किनारे माता जी का मन्दिर

यह स्थान बैस नदी के किनारे पुल के पास ही है। जिमींदार ग्राम टीला के श्री किशन प्रसाद जी खत्री के सुपुत्र श्री गणपतलाल जी ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार सं० २००५ के लगभग कराया था। यह स्थान प्राचीन विदिशा नगरी का है। इस वर्ष गणतन्त्र राज्य के अन्तर्गत पुरातत्व विभाग केन्द्रीय सेन्टर सर्किल भोपाल द्वारा उत्खनन का कार्य हुआ है।

अन्य घाट

विश्राम घाट से दक्षिण की ओर नदी के किनारे पर एक चबूतरा बना है। यहाँ पर दक्षिणी समाज का स्मशान है। इससे ऊपर की ओर पुल के उस पार बीच नदी में ठाकुर प्रतापसिंह जी ग्राम इमलिया वालो का घाट है। इसी घाट से पूर्व की ओर हीराबाई लश्करनी अग्रवाल सिंहल गोत्री का घाट है। इसके पूर्व की ओर एक भडभूजे का घाट है। इसके पूर्व की ओर वीरभान अहीर के पुत्र राधेलाल तोपपुरा वालो ने बनवाया है। इसी से लगा हुआ चौरसिया समाज का घाट है। इसी से लगा हुआ कालूराम पटवा का घाट है। तेलियो की पंचायत का घाट हैं। इसी से लगा हुआ लखेरा समाज का घाट हैं। इसी से लगा हुआ मूलचन्द लखेरा का घाट है। इसी से लगा हुआ श्री पोकरदास जी मानकचन्द जी माहेश्वरी डागरा गोत्री नदवाना का घाट और धर्मशाला है। इसके दक्षिण की ओर एक लखेरन की धर्मशाला विक्रम स० १९५५ मे निर्माण की गई थी। और उत्तर की ओर एक कसेरन की धर्मशाला हैं। यह दोनों मातायें विधवा थीं और कोई सन्तान का पता नही लगा।

इसके दक्षिण की ओर वीरभान अहीर की धर्मशाला कहते हैं। वास्तव मे धर्मशाला और घाट के निर्माण कर्ता श्री ऊंकार जी के सुपुत्र श्री अजुद्दीप्रसाद पाठक हैं जो माह सुदी १५ सं० १९४८ मे बनाई गई थी। इसका लेख घाट पर एक तुरसाने मे प्राप्त है। बगीचा इसी घाट से लगा हुआ काकड़े राव वैष्णव समाज के साधु की है और आजकल श्री महन्त मगलदास जी जो धर्मज्ञ और उदार पुरुष के अधिकार में है। इनकी उदारता प्रशंसनीय इसलिए है कि यह ग्रामों से भिक्षावृत्ति करके लाते हैं और आगन्तुक अतिथि साधुओं को आहार दान देते हैं। इन्होंने एक मन्दिर तथा साधुओ को विश्राम के लिये धर्मशाला भी बड़ी लम्बी चौड़ी बनवाई है।

घाट और धर्मशाला

इसी बगिया से लगा हुआ एक बगीचा धर्मशाला और घाट श्री हरदेव जी हरनारायण अग्रवाल का है।

दानियों का पतन

इसके ऊपर की ओर पन्नालाल जी भैयालाल जैन सर्राफ की भूमि और बगीचा है। दु:ख है कि विधवायें तो घाट और धर्मशालाये बनवा सकती हैं किन्तु अभागी जैन समाज के द्रव्य का सदुपयोग न हो सका। पूर्व में जलयात्रा का उत्सव भजन कीर्तन, गोट आदि लखेरे घाट पर होती थी किन्तु समाज के कर्णधारों ने उसको बन्द कर दिया जो कि प्रभावना का एक अंग था।

पुतली-घाट

यह स्थान वर्तमान विदिशा नगर से लगभग दो मील पश्चिम दिशा की ओर वेत्रवती नदी का एक घाट है। इस नदी मे से पूर्व-पश्चिम की ओर मढ़वाई ग्राम पर से सांची को मार्ग जाता है। पूर्वकाल में राजमार्ग होना सम्भव है।

इधर वेत्रवती और उदयगिरी के पश्चिम की ओर बैस नदी है। इन दोनों नदियों के दोनों किनारों पर सिंधिया राज्यवश के शासन काल में रंगई के पुल से त्रिवेणी संगम से एक मील आगे दाऊदपुरा तक व फासले दो दो जरीब के मछली की व अन्य पशुओ की शिकार करना कतई निषेध था, जिसके नंबरान इस पुस्तक में मय आदेशों के उल्लिखित हैं। ऐसा क्यों था ?:—

इसलिये कि यह प्राचीन विदिशा हिन्दुओं और जैनियों का परम पवित्र तीर्थस्थान रहा है। यह एक महान ऐतिहासिक क्षेत्र है इसके भूगर्भ मे तथा नदी के अथाह जल मे प्राचीनकाल की मुद्राएं, मूर्तियां, शिलालेखादि मिलते ही रहते हैं। यह अपनी प्राचीनता की साक्षी दिया करती हैं यही एक प्रमाण है।

जीवदया की परम्परा हिन्दू संस्कृति में धार्मिक भावना का प्रतीक भारत में माना गया है।

पुतली घाट से राजमार्ग होना इसका प्रतीक यही है कि यात्रियों के आवागमन में धर्मप्रेमी और श्रद्धालुओं को आत्मशुद्धि और मन की पवित्रता के लिये दर्शन पूजन जो कि मानव मे नवधा भक्ति होना परमावश्यक है तथा श्रावक के छह कर्म बतलाने की सूचक हैं। सुविधा के लिये बीच नदी में एक बड़ी भारी चट्टान पर दो प्रतिमाए कायोत्सर्ग जिन्हे खड्गासन ध्यान मुद्रा मे उत्कीर्णित हैं यह प्रतिमाए भगवान भरत और बाहुबली जी की हैं। जो कि पुतली के नाम से विख्यात हैं। इसी कारण से पुतली घाट नामाकित हुआ हैं।

यह भगवान भरत और बाहुबलि कीहैं। इसका तर्कपूर्ण उत्तर यह है कि दोनो भाई भगवान ऋषभदेव के पुत्र थे जोकि भागवत ग्रन्थ मे आठवें अवतार माने गये हैं और जैनियों के यहां प्रथम तीर्थंकर हैं। इनका चिन्ह बैल है और भगवान शंकर का वाहन बैल है। भगवान ऋषभदेव ने कैलाश पर तपस्या की है और भगवान शंकर जी ने कैलाश पर तपस्या की है। वे युग के

आदि में कल्पवृक्षों के लुप्त होंने पर असि, मसि, कृषि आदि की शिक्षा देने से आदि ब्रह्मा, विष्णु और महादेव कहे गये हैं।

भगवान भरत जी का शरीर बाहुबलि जी से कुछ छोटा था। इनके हाथ घुटने के ऊपर थे। सिर पर सर्प फण इसलिये था कि यह चक्रवर्ती थे जो दबदबे का सूचक है।

भगवान भरत ने बाहुबलि को नमस्कार न करने पर युद्ध किया था। भरत जी ने बाहुबलि से पराजय पाई किन्तु राज्यवैभव झगड़े का मूल कारण जान भावों में वीतरागता आई। अन्त मे बाहुबलि ने तपस्या करना ही सर्वोपरि समझा था। इसका प्रमाण श्रवणबेलगोल में आज भी विद्यमान है कि संसार में इतनो बडी बाहुबलि जी की प्रतिमा के समान अन्य प्रतिमा नहीं है। इनके हाथ घुटनों से नीचे हैं। यह दोनो ही प्रतिमायें दिगम्बर जैनियों की हैं।

यह भरत चक्रवर्ती अपने राज्यसिंहासन पर आरूढ़ थे। भगवान बाहुबलि जी को यह शल्य थी कि मैं भरत के राज्य में तपस्या कर रहा हूं। इस शल्य के कारण केवल ज्ञानउत्पन्न न होने से देवो का आसन कंपायमान हुआ। देवों ने अवधिज्ञान से यह जाना कि भगवान बाहुबलि को केवलज्ञान शल्य के कारण नही हो रहा हैं। जिस प्रकार से सूक्ष्म फास की पीड़ा शरीर को कष्ट-दायक होती है।

फांस तनक सी तन में साले,
चाह लंगोटी की दुख भाले।

देवो ने भगवान भरत के समक्ष यह सन्देश पहुँचाया तो भरत जी तत्काल वहां आये और नमस्कार कर कहने लगे भगवन्! इस भूमि पर अनन्तानन्त भरत हो चुके हैं, यह किसी एक की होकर नहीं रही। इतना झगड़ा भरत बाहुबलि का किस लिये था? वह केवल इस बात का कि मैं बड़ा हूँ तू मुझे आकर नमस्कार कर; तो उत्तर बाहुबलि जी ने दिया था कि जिस तीर्थंकर का तू पुत्र है उसी का मैं भी, इसमे न कोई बड़ा है और न छोटा। सच है, अहंकार मनुष्य का पतन करता है। १२ वर्ष तपस्या करने के बाद बाहुबलि को केवलज्ञान हुआ। भरत जी को वस्त्र उतारते ही केवलज्ञान हुआ था।

विदिशा महिमामय क्यों है ?

विदिशा नगर की प्राचीनता क्यो है और यह प्राचीन नगर कैसे सही माना जाय ?

इसका उत्तर केवल यही है कि-यशस्वी प्रतिभाशाली विदिशा नगरी में भगवान शीतलनाथ के तीन कल्याणक हुये। भगवान राम का वनवास के समय आगमन हुआ। भगवान कृष्ण के तीन युगल भ्राताओं का लालन पालन अलका नाम वैश्य के यहा हुआ। भगवान नेमिनाथ का आगमन समवशरण के साथ साँची पर हुआ। कृष्ण के भ्राताओं को लेने के लिये। तीस जैनाचार्य पट्टाधीश यहाँ पर हुये जिनका समस्त शास्त्रसंग्रह मुगलकाल मे भस्मीभूत कर दिया गया।

सम्राट चन्द्रगुप्त को प्रथम बार आचार्य भद्रबाहु जी द्वारा उपदेशामृत मिला। जिनधर्म स्वीकार किया। अशोक ने नगरसेठ की लड़की से शादी की और उसकी स्मृति मे भगवान

नेमिनाथ के समवशरण की रचना खुदवाई। जो चिरकाल तक जीवित रहेगी।

लोहाचार्यों ने बाममार्गियों से शास्त्रार्थ का लोहा लिया था। समन्तभद्राचार्य ने बाम मार्गियों से लोहा लिया। आचार्य श्रीमद् भट्टाकलंकदेव ने ग्यारसपुर विदिशा और निकटवर्ती क्षेत्र में भ्रमण करके बौद्धों को पराजय दी।

सांची पर बुद्धिवर्द्धक सांकेतिक भाषा में जो कथायें मूर्तियों में संकेत करके बतलाई हैं उनमें अद्भुत ज्ञान छुपा हुआ है।

हमारी जैन समाज धनाभिमान के वशीभूत हो संशोधनकर्ताओं को अपमानित करती हैं और अपने आपको बनिये कहते हैं वह वास्तव में बनिये नहीं बिगडिये हैं। मैं उन महानुभाव समाज और शासन के अधिकारी वर्ग का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे सहयोग नहीं दिया, सेवाओं का लाभ नही लिया, अपमानित किया। मैं उन लोगो को महानता इसलिये देता हूं कि यदि वह मुझे घृणा की दृष्टि से न देखते तो मेरे जीवन का उत्थान वास्तव में न मालूम किस ओर जाता। मुझे आज यदि उत्थान दिया है तो विरोधियों ने, मैं उनकी बन्दना करता हूँ।

आचार्यों ने दुर्जन की बन्दना सबसे प्रथम और सज्जन की पीछे इसी लिए की है—

पहिले दुष्ट प्रणामिये, पीछे सज्जन सोय।
जैसे पहिले सोंचिये, पीछे मुखड़ा धोय ॥

सज्जन दुर्जन दोय, ये उपकारी एक से।
यह चिर जीवें दोय, वह उपकृत वह दोषहर ॥

इसलिये—

निन्दक नियरे राखिये, आंगन कुटी बनाय।
विन साबुन विन नीर के, निर्मल होत स्वभाव ॥

निन्दक मेरा ना मरे, मै ही मरूं कबीर।
निन्दक का मुख सोंधनी, निर्मल करत शरीर ॥

आज भारत में चारों ओर हमारी मूर्तियां चोरी जा रही हैं। उसका उत्तरदायित्व पुलिस अधिकारी, जिले के समस्त अधिकारी, पुरातत्वाधिकारी नीचे से ऊपर तक के समस्त अधिकारियों पर ही है जिन्होने अपने आस्तीन में साप पाल रखे हैं। लेखक के अनुभव, लगन, उत्साह, ज्ञान का लाभ स्वयं भी नहीं लिया और न किसी को लेने दिया। यही देशद्रोहिता, संस्कृतिद्रोहिता, धर्मद्रोहिता है। यह बात भी सत्य है कि गुण की परीक्षा अवगुण से और बिना तुलना किये नहीं होती।

हमें गुणावलोकी होना अनिवार्य है। देव, राक्षस, वनस्पति, पशु, पक्षी आदि प्रत्येक वस्तु

हमारी गुरु है। जिस प्रकार से श्री दत्तात्रय स्वामी के २४ गुरु थे। तो हमारे लिये जिस वस्तु से ज्ञान मिलता है वही हमारी उपकारदाता गुरु है।

दाऊदपुरा घाट पर बीच वेतवा नदी में विदिशा का प्राचीन गौरव महाराजा कर्ण और उनकी पत्नी की विशालकाय प्रतिमा

यह सभी को ज्ञात है कि महाभारत के पूर्व पांडवों को वनोवास की यातनायें भुगतना पड़ी थीं। और यह भी भली प्रकार से ज्ञात है कि महाराजा कर्ण का दान प्रसिद्ध है। उनकी दान मुद्रा, मुखाकृति, शरीर की विशालता, गले का रत्नहार, हाथों के आभूषण, सिर के जटाजूट वस्त्राभरणादि की वेशभूषा आदि से सम्पन्न एक मूर्ति नदी वेतवा मे वर्षों से आड़ी पड़ी हुई थी। जिसका सिर का भाग शरीर से पृथक था और दाहिने हाथ की मुट्ठी का भाग टूटा हुआ था तथा इसकी लम्बाई १२ फुट ६ इच, मोटाई ३ फुट और चौडाई ४ फुट है। इसे यक्ष की मूर्ति के नाम से पुकारते हैं और पत्नी को यक्षी कहते हैं। इस मूर्ति के तीन टुकड़े थे। कमर से ऊपर का भाग कमर से घुटने तक और घुटने से नीचे का भाग जिसको मिलाकर ८ फुट लम्बाई ३ फुट चौड़ाई और २ फुट मोटाई लगभग होगी, इसकी भी कर्ण के समान दानमुद्रा मुखाकृति गले और हाथों के आभूषण, सिरके बालो की कलाकृति और वस्त्राभरणादि बड़े ही मनमोहक हैं, जो इस समय शासकीय सग्रहालय विदिशा मे रखी हुई हैं।

यह नदी वेतवा के ५ फुट गहरे जल में पड़ी हुई थी, जिन्हें शिकारी प्रायः दाने बाबा के नाम से पुकारते थे।

इन्हे नदी मे से निकालने के लिये श्रीमान् कलेक्टर साहब वि० व० ओक शासन कर रहे थे उन्हे सूचना लेखक राजमल मड़वैया पुरातत्व अधीक्षक विदिशा ने दिनाक १७-६-५२ को ट्रेक्टरों के द्वारा निकलवाकर विश्रामगृह पर प० जवाहरलाल जी नेहरू के प्रधानमन्त्री भारत सरकार के प्रथम बार विदिशा मे पदार्पण के समय खड़ी कराई गई थी।

और इस सम्वन्ध मे पुरातत्व विभाग से मनियार्डर नं० ५२८ दिनाक १२-२-५६ द्वारा पारितोषिक रु० ५० प्राप्त हुए थे।

इस प्रकार की अनेको आश्चर्यजनक कलामय वैभवयुक्त मूर्तियों की जानकारी राजमल मड़वैया को है। किन्तु विभाग इस सम्बन्ध मे उदासीन हैं और राजमल मडवैया की सेवाओं का लाभ लेकर मध्यप्रदेश शासन के गौरव की वृद्धि इसलिये नही चाहते कि उनका जो स्वार्थ निहित है उस पर बडा भारी आघात पहुचता है। तथा व्यापार जो चल रहा है उसकी रोक थाम नहीं करना चाहते, और न विनाश कार्य को रोकना ही चाहते है। इस कारण उद्देश्य की पूर्ति के लिये शासकीय अधिकारो की माग के लिये प्रार्थनायें की किन्तु विभागीय क्लर्कों का सम्बन्ध स्वार्थ लिप्सा के वशीभूत होने से अधिकारीवर्ग को अपनी श्रेणी मे मिलाकर शासन की कीर्ति पर कालिख लगाई और इसी का परिणाम है कि आज पुरातत्व विभाग उन्नति के शिखर पर नही पहुँच सका। इस उद्देश्य की पूर्ति के उपलक्ष मे यह पुस्तिका लिखने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अन्धे चार प्रकार है जिनमे तीन अन्धे भयकर घातक हैं किन्तु जन्मान्ध किसी को आघात नहीं पहुँचाता।

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महामद धार ।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार ॥

विजय मन्दिर और स्वामी समन्तभद्राचार्य

पाठक यह समझ गये होंगे कि शमशुद्दीन अल्तमश ने बिदिशा का विजय मन्दिर जो कि १०५ गज ऊंचा और आधा मील लम्बा व चौड़ा था नष्ट किया था । इस समय सन् १२३३-३४ था । जब सुलतान अल्तमश ने बड़ी फौज लेकर मालवा पर हमला किया । इस भेलसे के किले पर अधिकार किया । इस युद्ध का वर्णन इतिहासकार लेखक मिन्हाजुद्दीन ने 'तबकाते नासरी' में लिखा है मुसलमानों ने एक मन्दिर को तोड़ डाला जो १०५ गज ऊंचा था । और यह मन्दिर ३०० वर्ष में बना था । जो नौवीं या दसवीं शताब्दी का मालूम होता है । इस मन्दिर की शोभा अपूर्व थी जबकि खिलजी सुलतान जलालुद्दीन फीरोजशाह दिल्ली के तख्त पर बैठा था । उस समय उसके भतीजे ने बादशाह से आज्ञा लेकर अकारा का गवर्नर अलाउद्दीन था सेना लेकर आया और भेलसे को लूटा । और लूट का माल सुल्तान को दे दिया ।

विजय मन्दिर में एक चौखंभे पर शिलालेख

इस शिलालेख में जो लिखा है उसकी मूल प्रति निम्न प्रकार से है—

सिद्धम् । वि——रणस्य—प्र—साक्षत्——पति——कलियुगे——भुवि——चादि परवां—यादि भावि वियुक्तां कु स्यामि जिनेन्द्रैः स्थावरहत्वर संसिद्धि पदस्य लब्धिः ॥ १ ॥ इति महाराजाधिराज परमेश्वर श्री नरवदेवस्य निर्वाणान्तरायस्य परनारी सहोदरस्य चर्चिकाख्या समाख्याता देवी सर्व जनप्रिया । यस्याप्रसादमात्रेण लेभेः संसारयोगिनां ॥२॥

कृतिरियम् ठक्कुरस्तपटसुत ठक्कुराणीजास सुत ठक्कुर सीमादेवस्य परनारी सहोदरस्य द्विजस्य माथुर वंशजस्य मंगलं महामोढान्वये महतं श्री देवराजः प्रणमति नित्यं ॥३॥

इस शिलालेख में तीन श्लोक हैं जिनका भावार्थ स्पष्ट है कि यह आचार्य समंतभद्र की वादशाला रही है और वाममार्गियों से इन आचार्य ने वाद विवाद का लोहा लिया था । और यह भी स्पष्ट है यहां २६ आचार्य पट्टाधीश हुये हैं । सर्वप्रथम श्लोक में ऊपर की लाइन के कुछ अक्षर टूट गये हैं । फिर भी जो अक्षर शेष हैं उनको पढने से स्पष्ट है कि सिद्धों को नमस्कार किया है । भावों की विरक्तता को स्थापित रखते हुये जिनेन्द्र को नमस्कार किया है जिन्होंने मोक्षलक्ष्मी जैसी लब्धि प्राप्त की है । यह प्रथम श्लोक का भावार्थ है ॥१॥

तत्पश्चात् मनुष्यों में देवस्वरूप निर्वाण पद प्राप्त करने वाले ऐसे परमेश्वर जो महाराधिराजों द्वारा पूजनीय ज्ञानान्तराय को दूर करने वाली स्व-पर का बोध नारियों-भाइयों में तत्वचर्चा कर समानता का मार्गदर्शन कराने वाली सम्पूर्ण मनुष्यों को प्रिय ऐसी सरस्वतीदेवी

जिसके प्रसादमात्र (आशीर्वाद) से योगी जनो को संसारसागर से पार उतारने का लाभ मिलता है। यह दूसरे श्लोक का अर्थ है ॥२॥

महामोढाम्नायी माथुर वशी ठाकुर सीमादेव जिनकी दो ठकुराणी उनके पुत्र श्री देवराज नित्यप्रति प्रणाम करते हैं।

आचार्य समन्तभद्र के आगमन के सम्बन्ध मे जो श्लोक आया है वह स्वामी समन्तभद्र और विदिशा का है।

बिजय मन्दिर की कोठली में शिलालेख

इस शिलालेख मे पशु, पक्षी और मनुष्यो की उत्कृष्ट आयु का प्रमाण दिया है। मूल श्लोक निम्न प्रकार है—

> नाग लावक पुंसि विंशति शतं, द्वात्रिंशद् श्वे समा.।
> पंचोत्मीलित विंशतिः खरमायागा माहिषु सेक मुक ॥
> मेषच्छागमृगेषु षोडष दश द्वाम्यां सहस्र व्रजे निर्णीत भुवि।
> सर्वदेव कृतिना सत्कीर्तिनायुः परम् ॥

भाव एवं शब्दार्थ

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
द्वात्रिंशद्—	३२	अश्व—	घोडा	नाग—	हाथी
लावक—	लवा पक्षी	पुंसि—	पुरुष	विंशति शत—	१२०
समाः—	वर्ष	पञ्चोन्मीलितर्विंशतिः—	२५ रखे या मिलावे	खर—	गधा
गो—	गाय	महिष —	भैस		

यानी २५ मे से एक वर्ष कम करके सेक मुक्त —गधे की संख्या में से एक कम करके आयु जाना।

मेढा १६, बकरा १०, हिरन १२ या १८, द्वाम्यां सह-स्व व्रजे=कुत्ता पिछला १०। मिलाकर १२ वर्ष कुत्ते की आयु जाना। श्री सर्वदेव पडित जोकि बडे कीर्तिवान थे उन्होने यह परम आयु निर्णय की।

इसी शिलालेख की पुष्टि मे वाराहमिहर आचार्य के वृहज्जातक ग्रन्थ के आयुर्दाय अध्याय में निम्न श्लोक हैं—

> समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुज करिणां पंच च निशाः।
> हयानां द्वात्रिंशद् खर कर भयोः पंचक कृतिः॥
> विरूपा सात्वायुः वृष महिषयोः द्वादश शुनाम।
> स्मृतं छागादीनां दिशक सहिताः षट् च परमं॥

अन्वय-- मनुज करिणां द्विघ्नाः षष्ठिः समा; पंच च निशाः।
च हयानां द्वात्रिंशद् समाः खर कर मयोः पंचक कृतिः ॥समाः॥

वृष महिषयोः विरूपा सा आयुः, शुनाम द्वादश समाः
छागादीनां दिशक सहिताः षट् समाः च आयुः परमं स्मृतं ॥

मनुष्य और हाथियों के परम आयु के प्रमाण को दुगुना ६० अर्थात् १२० वर्ष और पांच दिवस ।

घोड़ों की परम आयु ३२ वर्ष खर, करम (ऊंट) पांच गुणित पांच योग २५ पंचक वर्ग--पंचक कृति पांच गुणा पांच अर्थात २५ वर्ष ।

रूप--एक। सः--वह। वह का अर्थ २५ जो पहिले बताया है यानी वि--कम; २५ में से एक कम २४ वर्ष वृष यानी बैल-भैंस की आयु। शुनाम--कुत्ता की आयु १२ वर्ष। बकरा--भेड़ आदि की परम आयु १६ वर्ष दिशक सहिता षट समाः १० और ६ जानना ।

उदयपुर (चटुवा) गेट के पास प्राप्त शिलालेख में नागरी लिपि संस्कृत भाषा पंक्ति २४ में विष्णु मन्दिर के निर्माण का उल्लेख है। तथा मालवा के परमारों का विस्तृत विवरण वंशवक्ष दिया हुआ है।

भा० सू० सं० १६५७ ग्वा० पुरा० विभाग रि० सं० १९७४ सं० १०३ अन्य उल्लेख भाग १ पृष्ठ २२२ इस प्रशस्ति के अनुसार परमार वंशवृक्ष उपेन्द्र राज उसका पुत्र सीयक उसका पुत्र वाक्पति, उसका पुत्र बैरिसिंह बज्रट (द्वितिय) उसका पुत्र श्रीहर्ष जिसने राष्ट्रकूट के राजा खोट्टिग को हराया था। उसका पुत्र वाक्पति द्वितीय जिसने त्रिपुरी के युवराज को हराया। उसका छोटा भाई सिन्धुराज उसका पुत्र भोजराज और फिर उदयादित्य इनके द्वारा दिये गये दान का एक शिलालेख उसमें विजय मन्दिर के निर्माण (भेलसा) विदिशा जो आज यवनों की ईदगाह बनी हुई है। और केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के अधिकार क्षेत्र में है। (इसका एक शिलालेख के अवशेष भाग मड़वैया संग्रहालय विदिशा में रखा हैं) उसमें निम्नांकित उल्लेख हैं--

रायसेन के जैन मन्दिर का शिलालेख

श्री संवत १८२१ फाल्गुन मासे कृष्ण पक्षे तिथौ एकादश्यां शनिवासरे अथ देवालय प्रतिष्ठितं श्री मूल सघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे श्री कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये भट्टारक श्रीमंतर्द्धकीर्ति गुरूपदेशात् तिष्ठति नरेसे मगधदेसे मछोयढ़ रायसेन राजे श्री नवाब फेजमुहम्मद वा विजये तस्य मन्त्री दगे श्री किसोरसिंह वा किलेदार श्री हुसेनखां जीतस्यभयेज्येवासि जाति परिवार बावामूंत श्री शाह नन्दराम वा भामीबाई उदो तस्य पुत्र नृपो ज्येष्ठ पुत्र समाचन्द्र दश झगाराम वा गोपाल मति परि पुत्रादि खुशालचन्द्र वा मानकचन्द्र जी वा फभेतेचन्द्र जी वा सर्व परिवार को रक्षा करि देश विदेश के रक्षा करु देवा के प्रसाद से बलवीर्य राजस्य बृद्धिभवति भवति कल्याण भवति हिन्दु व मुसलमान को कसम है जो यो ऊपर बुरी नजरां करे सो सौगंध है देह की बुरीकाष्ठा तै मोजे हीन की पंडित समान नाथ जी। (अन्दर दरवाजे के ही ऊपर लगा है)

अध्याय – १३

३१-जैनाचार्य और स्वामी समन्तभद्र

पक्ति नं० (१) कमलसि (२) दुः श्रीमदुदये (३) भाइल्लस्वामी श्री यमदि (४) तरथगति तीव्र किरणं नु भाद्र (५) विजय नृणान्ठ दिष्यातदियुत (६) भाइल्लस्वामयरणय वालयइव कले (७) हवती भविभावहु वदिताउन्य कम्यस्वभवल (८) म्येमधोघाघिव्य धिव्यय ननय दारिद्रविधु (९) यि उमल ना-तरति मेयीत्वय्छील्येव (१०) भाइल्ल स्वामी विविध विधुराती हरवः [य रोग] (११) ही क मतिक दरिद्र य द व्यंयज रमजर साधु वि (१२) कर नृविन्वो विधिः यस्य भाइल्ल स्वामी ह (१३) इयं तव्यःमहिणह वदय मन्दाह्मलि (१४) तिय दुतष इति चद्रलयदेवोत्छ (१५) भाइल्ल स्वामि हुव भवि य (१६) कलटछग्ररटवर क्यबुकर्षपुरं रिछत्य (१७) जन त इदम्न विल स्फुटतिभत्तवाय-स्थनिय (१८) तं य भाइल्लस्वामी नित्ययत्यह (१९) विधुवभुग्वोन्याग्रीलाद उतस्य पदवी (२०) मन्नीचोत्यु पद मार्धघयत्थ न (२१) नतिप्रवि।

इस लेख का आशय यह है कि—(इस लेख के दो टुकड़े प्राप्त हुये हैं और इसके कुहिस्से के अक्षर न होने से पूर्ण शब्द पढे नही जा सकते किन्तु जो भाव मिल सका वह निम्न प्रकार से है)

सिद्धो के चरण कमलों में नमस्कार करते हुये चन्द्रप्रभु के देवालय में सूर्य के समान देदीप्यमान किरणों वाले दिगम्बर जैन साधु स्वामी समन्तभद्र जिन्होने सप्त तत्व नव पदार्थो का वर्णन कर पापो का नाश करने के मार्ग का जन्म, जरा, मरण के रोग रूप दारिद्र का नाश करने के लिये ब्रह्मा समान हैं। मोक्षरूपलक्ष्मी के मार्ग को दिखाने वाले साधु हैं। मैं उनकी नितप्रति वन्दना करता हूँ।

यह मन्दिर परमार वंशी क्षत्रियो के द्वारा ही निर्माण कराया गया था। यह कदमपुरी जिसे वर्तमान मे कदवाया कहते हैं जोकि गुना जिले मे है। स्वामी समन्तभद्र ग्रन्थ लेखक पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार प्रकाशक जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय हीराबाग पोष्ट गिरगाव बम्बई प्रकाशन २५ जुलाई प्रथम सस्करण। (मगाकर देखिये)

स्वामी सामन्तभद्र क्षत्रियकुलभूषण कदम्ब, गंग, पल्लव राजघराने के राजपुत्र थे। इन्हीं वंश के कितने ही राजा वर्मान्त नाम को लिये हुये हो गए हैं। कदम्बो मे से शांतिवर्मा नाम का भी राजा हुआ है।

कदम्ब वशी राजा शांतिवर्मा और सामन्तभद्र दोनो एक ही व्यक्ति थे। पृ० ९-१० देखिये।

वंश-परिचय

स्वामी सामन्तभद्र के पुत्र का नाम मृगेश वर्मा पौत्र का रवि वर्मा प्रपौत्र का हरि वर्मा

और पिता का नाम काकुत्स वर्मा था, क्योंकि काकुत्स वर्मा मृगेश वर्मा और हरि वर्मा के दानपत्र अथवा जैन संस्थाओं को दिये हुये हलसी और वैजयन्ती के मुकामों पर पाये जाते हैं इनसे इस वंश परम्परा का पता चलता है। कदम्बवंशी राजा प्राय: जैनी ही हुए हैं। और दक्षिण देश वनवास के राजा हुए हैं। शुभचन्द्राचार्य ने आपको भारतभूषण वादीवाग्मी कवि और गमक लिखा हैं। इन स्वामी समन्तभद्राचार्य के सम्बन्ध में जैन सिद्धांत भास्कर आरा के ऐतिहासिक मुखपत्र भाग १ किरण १ जुलाई से सेप्टेम्बर १९१२ पृष्ठ ५९ में स्वामी जी का चमत्कार--दिल्ली के तख्त पर फीरोजशाह तुगलक ने अपने मन्त्री राघो और चेतन मंत्रवादियों द्वारा लगभग सं० १४०३ में दिल्ली के राज्य सिहासनाधिरूढ़ हो भारत की भाग्य डोर हाथ में ले ली । अपने राज्य शासन काल में सभी धर्मों की परीक्षा करने लगा अन्यान्य धर्मों के साथ साथ जैनियों को भी अपने धर्म की परीक्षा देने की आज्ञा मिली परन्तु उस समय उत्तर भारत में जैनियों के गुरु अथवा विद्वान न थे, जो उनसे शास्त्रार्थ कर सकते । इसलिए बादशाह से छह महीने का अवकाश माँग कर दुखित हृदय जैनी गुरू की खोज में दक्षिण देश को गये। (भद्दिलपुर भूपाल के नजदीक जोकि आजकल भेलसा नाम से प्रसिद्ध है वहीं सब लोग आये। वहीं से महासेन नाम के आचार्य को वहाँ (दिल्ली) ले गए। महासेन स्वामी ने दिल्ली के बादशाह के दरबार में आकर राघो-चेतन नामक विख्यात दो राज्यमान्य विद्वानों को शास्त्रार्थ और मन्त्र विद्या में पराजित कर वहां बड़े प्रभाव के साथ जैन धर्म की ध्वजा फहराई। उस समय की बादशाही सनदें अभी तक कोल्हापुर के भण्डार में हैं। उसी समय से भट्टारकों की गद्दी वहां स्थापित हुई और ये लोग राजगुरु माने गए। इन लोगों को बादशाह ने वस्त्र धारण कराया और अनेक बादशाही खिल्लत छत्र चमरादि और पट्टस्थ की बत्तीस उपाधियां दे बड़े सम्मान के साथ इनका गौरव बढ़ाया। इस समय में भी हमारे जैनाचार्यों ने अनेक ग्रन्थ रचकर धर्मरक्षा की। परन्तु इसके बाद रक्षा करने में जब आचार्यों को अत्यन्त कठिनाई जान पड़ने लगी तब उन्होंने इन धर्म ग्रन्थों की रक्षा का एकमात्र उपाय समझा और उन लोगों ने बड़े परिश्रम के साथ जहां जैनियों का समूह था वहाँ उनके घरों की कोठरियों में और जहां भट्टारकों का मठ था वहाँ तहखाने में रख कर सुरक्षित किया और लोगों को यहां तक मना कर दिया कि किसी को इसकी जरा भी सूचना न मिलने पावे। नहीं तो यह भी बची बचाई धार्मिक तथा ऐतिहासिक सामग्रियाँ नष्ट हो जावेंगी।

उपर्युक्त समय में जब जैनधर्म-विद्वेषी अन्य धर्मावलंबी राजा तथा विद्वानों के कारण लाखों ग्रन्थों का नाश हुआ तब हमारे महर्षियों ने तथा पूर्व पुरुषों ने धर्म की हानि होती हुई देख अपनी जान पर खेल कर जैनधर्म को ग्रन्थ-रक्षा द्वारा बचाया। अंग्रेजी शासनकाल में सबों की स्वाधीन धर्म-जागृति के समय में भी हमारी मूर्खता से जैन धर्मावलंबी उसी परम्परा को निभाते हुए, शास्त्रों को तहखाने में सड़ाते हुए संसार में भावी धार्मिक उन्नति तथा पवित्र जिनवाणी माता के प्रचार का मार्ग रोक रहे हैं। देखिए जैन सिद्धांत भास्कर, जैन सिद्धांत भवन आरा द्वारा प्रकाशित फरवरी सन् १९१३ अप्रेल से जून भाग १ किरण ४ इस अंक में यह बतलाया गया है कि मध्य प्रदेशांतर्गत राजधानी भोपाल के अंचल में विदिशा नगर वेसनगर जिसे भेलसा, भद्दलपुर भद्रावती, आलमगीरपुर, विदिशा आदि नाम रहे हैं जिनमें इस विदिशा का कितना

भविष्य उज्वल रहा है। यहाँ पर २९ जैन आचार्यो के पाठ पर बैठने का समय विक्रम के राज्या-भिषेक से लिया गया है। पृष्ठ ७८ नन्दी संघ की पट्टावलि के आचार्यों की नामावलि जिसे इंडियन एन्टीक्वेरी मे प्रकाशित किया है। उसकी प्रतिलिपि यहा लिखते हैं—

(१) भद्रबाहु द्वितिय ४ (२) गुप्तिगुप्त २६ (३) माघनन्दी ३६ (४) जिनचन्द्र ४० (५) कुन्दकुन्दाचार्य ४९ (६) उमास्वामि १०१ (७) लोहाचार्य १४२ (८) यशःकीर्ति १५३ (९) यशोनन्दी २११ (१०) देवनन्दी २५८ (११) जयनन्दी ३०८ (१२) गुणनन्दी ३५८ (१३) वज्रनन्दी ३६४ (१४) कुमारनन्दी ३८६ (१५) लोकचन्द ४२७ (१६) प्रभाचन्द्र ४५३ (१७) नेमचन्द्र ४७८ (१८) भानुनन्दी ४८७ (१९) सिंहनन्दी ५०८ (२०) श्रीवसुनन्दी ५२५ (२१) वीरनन्दी ५३१ (२२) रत्ननन्दी ५६१ (२३) माणिक्यनन्दी ५८५ (२४) मेघचन्द्र ६०१ (२५) शांतिकीर्ति ६२७ (२६) मेरुकीर्ति ६४२ (२७) श्रुतकीर्ति १०७९ (२८) भावचन्द्र १०९४ (२९) महाचन्द्र ११११५ (३०) माघचन्द्र ११४० ।

यह ३० उपयुक्त तीस जैनाचार्य दक्षिण देशस्थ इस भद्दिलपुर जोकि साची रेलवे स्टेशन है। यहा भगवान नेमिनाथ का समवशरण कृष्ण जी के ३ युगल भ्राताओ को लेने आया था। उस स्मृति मे सम्राट अशोक से जैन धर्मानुयायी सेठ के कन्या के विवाहोपलक्ष मे निर्माण कराया था। इस साची पर बौद्ध धर्मावलबियो का अधिकार जैनो की उपेक्षावृत्ति से हुआ और राज्य शासन ने दर्शकों से टेक्स वसूल कर व्यापार बना लिया हैं। पूर्व जैनाचार्यो ने बनाया और वर्तमान जैनियो ने खोकर अपनी यशस्वी प्रतिष्ठा पर कालिमा लगाई। इस प्रकार से ३० जैनाचार्य पट्टाधीश यहा हुये। भारतवर्ष का सबसे प्राचीनतम क्षेत्र विदिशा हैं। इसके साथ १०वे तीर्थंकर भगवान शीतल-नाथ की यहाँ जन्म नगरी रही, ३ कल्याणक हुए। तृतिय कल्याणक महोत्सव पूर्व दिशा मे २२ मील दूरी पर ग्यारसपुर पर तपकल्याणक हुआ। यह भी जैनियो का अनुपम तीर्थक्षेत्र हैं। यहा पर भी दर्शनीय जैनमन्दिर प्राचीनकाल के पहाडियो को चोटियो पर बने हुए है। दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी को इस ओर ध्यान देना चाहिए। तथा स्थानीय जैन समाज का प्रथम कर्त्तव्य है कि ऐसे क्षेत्रो को विकाश में लाकर स्याद्वाद की दुदुभी बजती रहे।

भगवान नेमिनाथ के आने का और ३ युगल भ्राता कृष्ण के पालन का प्रमाण महापुराण उत्तरपुराण पृ० स० ४८३ श्लोक स० ३८५ मे देखिये इस महापुराण में निम्नाकित श्लोक आया है—

दिविजो नैगमषीख्यो भद्रिलाख्य पुरेलका ।
वणिकसुतायानिक्षिप्य पुरस्तातत्सुतान मृतान ॥

भावार्थ—सुदृष्ट नामा सेठ जिनकी धर्मपत्नी का नाम अलका रेवती नामा धाय थी। सेठानी के मृतक पुत्र होते थे। जब उन्हे श्मशान भूमि मे ले जाते थे तो उन्हे देव गण देवकी के युगल पुत्रो को वहा रखते थे तो उन्हे वहा जीवित बालक मिलते थे। वह सेठानी के प्रसूतिगृह में रख कर पालन पोषण करते थे। और मजे की तो बात यह थी कि सेठानी के भी युगल बालक ही होते थे। किन्तु यह गुप्त बात सेठानी को जाहिर नही होने देते थे।

इसी प्रकार से युगल मृत बालक देवकी के प्रसव गृह मे रख दिये जाते थे जिन्हे देखने

श्री वसुदेव जी इस भद्दिलपुर नगर में आये थे और उन बालकों को गुप्त रूप से देखकर वासुदेव नगर जहां पर श्री वसुदेव जी ने अपने स्थान ठहरने का रखा था उस स्थान का नाम जनता ने वासुदेव नगर रखा किन्तु वह नगर वर्तमान में गंजबासौदा के नाम से प्रचलित है।

जन्मे जब गाया नहीं, मरे न रोया कोय।

बीच दशा सुख भोगते, नारायण पद होय ॥

आपको यह भली प्रकार से विदित है ही कि—कृष्ण जी का जन्मकाल संकटकालीन स्थिति में हुआ। क्योंकि मामा कंस ने देवकी का प्रसवगृह अपने जेलखाने में रखा था। और लालन पालन माता यशोदा जोकि एक ग्वालन थी उसके यहां हुआ था। इसलिए जन्म के गीत नहीं गाये गए। और अन्तिम अवस्था में जब द्वारिका में आग लगी तो उन्हे द्वारिका का मोह त्याग कर वन में आये प्यास लगी भाई बल्देवजी पानी लेने गये उसी समय व्याधे ने आकर बाण मारा जिससे कृष्णजी का शरीर छूट गया। इसका उल्लेख बड़ोह-पठारी के शिलालेखों में भी है। यहां पर भी प्राचीनकाल की एक गड्गासन प्रतिमाओं की चौबीसी बड़ी मनोहर बनी हुई है। अद्वितीय दर्शनीय स्थान है। इन पर भी तीर्थक्षेत्र कमेटी को ध्यान देना आवश्यक हैं।

पश्चात इन तीन युगल भ्राताओं के लेने हेतु गिरिनार पर ५६ दिनों तक भगवान नेमिनाथ छद्मस्थ रहकर केवल ज्ञानी हुये। और यहाँ विदिशा में उन्होंने अपना प्रथम उपदेश यादवों को साँची पर दिया। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण दरवाजों में उत्कीर्ण शिल्पकला है जोकि महाराजा अशोक के श्वसुर और उनकी रानी असंधिमित्रा जिनके पुत्र व पुत्री संगमित्रा थी और वह बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ विदेशों में गये थे। सम्राट अशोक के विवाह समय की बर-बधू की प्रतिमायें और स्तंभादि भी प्राप्त हैं जो जंगलों में अस्तव्यस्त दशा में हैं के द्वारा यह तोरण द्वार बनवाये गये थे। यह जैनाचार्यों की सूझ बूझ और धर्मप्रचार की पद्धति थी। देखिये—

गिरिनार गौरव—लेखक बाबू कामताप्रसाद जी जैन अलीगंज एटा के पृष्ठ २७ पर।

द्वारका भस्म क्यों हुई ?

धर्मचक्र के प्रवर्तन के लिये आये हुये भगवान नेमिनाथ ने देवकी के छह युगल पुत्रों को धर्मोपदेश देकर दीक्षित किया और मुनि संघ में सम्मिलित कर विहार किया।

कृष्ण जी ने भगवान नेमिनाथ से पूछा था कि क्या यादव वंश इसी प्रकार से सदैव रहेगा ? तो भगवान ने अपनी दिव्यध्वनि में कहा था कि आज से १२वें वर्ष पश्चात द्वीपायन मुनि के कोप से और यादवों के मदिरापान के कारण द्वारिका में आग लगेगी और केवल कृष्ण और बल्देवजी के सिवाय कोई नहीं बचेगा और तीर की ओर संकेत कर कहा कि इस तीर के द्वारा जरतकुमार के हाथ से मृत्यु का कारण बनेगा। बारह वष बीते, वही दिन आया जो भगवान ने कहा था, वही हुआ।

भगवान की वाणी झूठी बनाने के लिये द्वीपायन मुनि ने अज्ञात वास लिया। जरतकुमार ने बाण को घिस कर समुद्र में फेंका उसे मछली निगल गई। मछली धीवर ने पकड़ ली। उसके पेट मे बाण निकला उसने पुन. उसी बाण को तैयार कर लिया। और उस बाण को धीवर से जरतकुमार ने छीन लिया। इधर मदिरा बनने वाले पदार्थ जगलो में फिकवाना प्रारम्भ किया वर्षा प्रारम्भ हुई यत्र यत्र गड्ढों मे पानी भर गया उन्ही में वह मादक पदार्थ सड़कर मदिरा बन गये। ग्रीष्मकाल आया। प्यास से कठ सूखने लगे। यादव लोग वनो में से वनक्रीड़ा करते निकले और द्वीपायन मुनि को देखकर कहने लगे—अरे इस मूर्ख के दर्शन हो गये, इससे तो द्वारिका मे आग लगेगी आदि अश्लील शब्द कहते हुए अपमानित करते उन्हे पत्थरों से पूर दिया। अन्त में उसी समय कुत्ता आया उसने उनपर पेशाब करदी इससे मुनि के क्रोध का ठिकाना नही रहा। उनके बाँये कधे से एक जलता हुआ अग्नि का पुतला निकला और उसने द्वारिका मे घुस कर आग लगादी। नगर मे हाहाकार मच गया। जहाँ पानी से बुझाते थे वहाँ पानी तेल की भांति जलता था और कोट के किवाड वज्र की भाति लग गये कोई बाहर जा अपना जीवन नहीं बचा सका। केवल कृष्ण और बलदेव जो ने मुनि से अपराध की क्षमा याचना को विनती की तो उन्होने दो अगुलो से संकेत करके कह दिया कि तुम दोनो ही बचोगे और वही हुआ। यह साक्ष्य हरिवश-पुराण जिनसेनाचार्य कृत ३५ वा सर्ग अरिष्ट नेमि का चरित्र वसुदेव ने अतिमुक्तक मुनि के मुख से सुनकर परम हर्षित भये। पृष्ठ ३२६ समवशरण आने धर्मोपदेश देने त्रय युगल पुत्रो को मुनिव्रत धारण करा कर साथ ले जाने के सम्बन्ध मे पृष्ठ ४७२ पर उल्लेख है।

महापुराणान्तर्गत उत्तर पुराण पूर्व ७१ अध्याय २४ पृष्ठ ५३१ पर श्रीमद् गुणभद्राचार्य विरचित अनुवादक पं० लालाराम जी आगरा चावली प्रकाशक श्री श्रुतभण्डार व ग्रन्थ प्रकाशन समिति फलटण, जिला उत्तर सतारा श्री वीर निर्वाण सवत् २४८१ देखिये।

भद्रिलाख्य पुरे देशे मलये ८ जनि रेवती सुदृष्टि श्रेष्ठिना श्रेष्ठा श्रेष्ठिनी सालकाख्य वर्द्धि ॥ २९३ ॥ प्राक्तना: षट् कुमाराश्च यमीभूस्तव त्रय: तदानीमेव शक्रस्य निदेशात्कंसतो भयात् ॥२९४॥ ते नैगमर्षिणा नीता. श्रेष्ठिन्यात्वलकाख्यया। वर्द्धितादेवदत्ताश्च देवपाश्नोनुस्त्वत: ।२९५। पृष्ठ ॥५३२॥

शीतलाख्य जिनाधीश तीर्थे धर्मे विनंक्ष्यति।
भद्रिलाख्यपुराधीशो नाम्नामेघरथो नृप: ॥३०३* ॥
प्रेयसी तस्य नन्दाख्या भूतिशर्मा द्विजाग्रणी:।
तस्यासीत्कमला पत्नी मुंडशाला यनस्तनयो: ॥३०४॥

भावार्थ—रेवती का जीव मलयदेश के भद्रिलपुर नगर के सेठ सुदृष्टि के अलका नाम श्रेष्ठ सेठानी हुई है। छहो राजपुत्रो के जीव–१ देवदत्त, २ देवपाल, ३ अनीकदत्त, ४ अनीकपाल,

* शीतलनाथ तीर्थंकर के बाद जब धर्म का विच्छेद हुआ था तब भद्रिलपुर नगर मे राजा मेघरथ राज्य करता था ॥ ३०३ ॥

(५) शत्रुघ्न (६) जितशत्रु क्रमशः देवकी के गर्भ में आये । कंस के जेलखाने के अन्दर जन्म लिया । कंस के डर से इन्द्र की आज्ञा से नैंगमर्षी नाम के देव ने उन पुत्रों को उठाकर अलका नाम की सेठानी के घर पर रख दिया इसलिए अलका ने ही उन पुत्रों का पालन किया । वे छहों भाई नई अवस्था में ही जिनदीक्षा धारण कर आहार के लिये नगर में आये थे इसलिए उन्हें देख कर उनमें तेरा (देवकी का) पूर्व जन्म का चला आया स्नेह उत्पन्न हो आया है ॥ २९७ ॥

भगवन-नेमिनाथ को वैराग्य का कारण

भगवान नेमिनाथ जी कृष्ण जी के लघु भ्राता थे और यदुवंश में उनका जन्म हुआ था । भगवान नेमिनाथ एक दिन फाल्गुन मास में जलक्रीड़ा के लिये गये हुए थे । वहां भावज सत्यभामा ने भगवान नेमिनाथ के वस्त्र भिगो दिये । जब वस्त्र बदले और भीगे वस्त्रों को निचोड़ने के लिये भावज सत्यभामा की ओर संकेत किया तो उसने बड़े गर्व के साथ उत्तर दिया कि मेरे पति ने अनेकों शत्रुओं का मान मर्दन किया है और शंखध्वनि की है । आप अपना बल दिखाइये । यह सत्यभामा के अभिमान युक्त बचनों को सुनकर लज्जा के कारण कुछ न कह कर आयुधशाला में जा नाक के स्वर से शंखनाद कर दिया जिससे कृष्ण भयभीत होकर निमित्त ज्ञानियों को बुलाकर राजनीति पर विचार करने लगे । चतुर रुकमणी ने वस्त्र निचोड़ कर सुखा दिया । निमित्तज्ञानियों ने बतला दिया कि नेमिनाथ राज्य नहीं करेंगे । वह वैराग्य धारण करेंगे । इनके वैराग्य का कारण पशुवध के लिये घिरा होना होगा ।

बस अब क्या देर थी, जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की राजकुमारी राजुल के साथ सगाई का दस्तूर बड़े ठाटबाट के साथ किया गया और व्याह की तैयारी हुई । जब बारात जा रही थी तो कृष्णजी ने भगवान नेमिनाथ को वैराग्य हो और यह विवाह न करने पावें और गिरनार पर जिनदीक्षा ले लेवें, इस हेतु उन्होने पशुओं को एक कठघरे में घेर रखा था । जब भगवान नेमिनाथ ने इस आनन्द के उत्सव मे उन पशुओं को बन्दी बना देखा तो वह कृष्णजी से पूछने लगे दादा यह क्यों बन्द किये गये हैं ? तो दादा मौन हो गये और सारथी तत्काल बोल उठा कि यह पशु आपके विवाह में मारे जावेगे । और इनका मांस आये हुये मांसाहारी महमानों को पका कर खिलाया जावेगा । भगवान नेमिनाथ ने उन मूक पशुओं की चीत्कारमय प्रार्थना को सुनकर उन्होंने तत्काल रथ को रोका और उन पशुओं के बंधन को खोला और उन पशुओं से क्षमा मांगने लगे कि मेरे एक जीव के विवाह में अनेकों जीवों का विध्वंस हो । ऐसे जीवन और विवाह को धिक्कार है । और तत्काल ही उनको वैराग्य हुआ । बारह भावनायें भाते ही लौकांतिक देव पालकी लेकर आये । भगवान ने तत्काल कंकणादि तोड़ कर फेंक दिये और पालकी में सवार हो गये । जब देव पालकी उठाने लगे तो मनुष्यों ने पालकी उठाने से उन्हें रोक दिया । और कहा कि हम

उठावेंगे। तदुपरात यह निर्णय हुआ कि देवों को मोक्ष नहीं होता। मनुष्य पर्याय धारण कर ही मोक्ष होता है इसलिये पहिला अधिकार मनुष्यों को पालकी उठाने का है। और मनुष्यों ने पालकी उठाई। पश्चात् देवों ने वह पालकी शेषावन के अन्दर पहुचा दी। वहा भगवान ने केशलुंचन कर ध्यानमुद्रा धारण की।

इधर राजुल की एक दासी जो चतुर थी वह भगवान नेमिनाथ को रथ से उतरते देख कर दौड आई थी और उसने समस्त बात को सुनकर राजुल को समस्त वृतान्त कह सुनाया। राजुल यह वृतान्त सुनते ही कि मेरा पति वैराग्य धारण कर गया, तत्काल ही बेहोश होकर भूमि पर गिर पडी। शीतोपचार के पश्चात् जब मूर्छा हटी तो वह भी गिरनार पर जाने लगी। पिता ने बहुतेरा समझाया कि तेरा विवाह किसी दूसरे राजकुमार से कर देगे। किन्तु राजुल ने स्वीकार नही किया और यह बताया कि मेरा साथ नौ भव से है। और विवाह को ठुकरा कर गिरनार पर पति के पास ही आर्यिका की दीक्षा लेकर तपस्या करने लगी। यह है आदर्श जिसे जैनाचार्यों ने शास्त्ररूप मे लिख कर जैनसस्कृति को जीवित रखा है। हमारे अन्य इतिहासकारों ने कभी जैन ग्रन्थो को नही देखा और यदि देखा भी है तो उसे प्रकाश मे लाने से छिपाया ही है जिससे जनसाधारण को सत्य जानकारी से वचित रहना पडा। मध्य भारत का इतिहास पृष्ठ १८४ पर जो चित्र प्रिन्ट किया है, जोकि विदिशा मे ही मिला था। जिसे बौद्ध स्तूप की बाढ के नाम से पृष्ठ ३२७ पर है। इस बात का स्पष्टीकरण देता है कि भगवान नेमिनाथ की जब बारात पहुँची थी जूनागढ के राजा उग्रसेन की लाड़ली राजकुमारी राजुल से विवाह करने के लिये तो भगवान नेमिनाथ क्या देखते हैं ?

एक कठघरे मे वनखण्ड के पशु हिरण, चीतले, सामर, रोज, खरगोश आदि बन्द हैं। बस क्या था, भगवान के अवधिज्ञान मे यह सब झलक ही रहा था कि मेरे भाई ने मेरे लिये यह जाल बिछाया है। भगवान कृष्ण से पूछते हैं—

भगवान ने पूछा कर चीत्कार,
मचा क्यों दादा हाहाकार ?

तो कृष्ण जी चुप हो गये क्योकि वह क्या उत्तर देते ?

किन्तु सारथी ने तत्काल ही उत्तर दिया कि—आपके विवाह मे आये हुये क्षत्रियगण को जो भोजन दिया जावेगा उसमे इनका मास भी होगा।

भगवान कहते हैं मुझे धिक्कार है कि मैं ससार के भोगो को भोगूं और यह निरपराध वन मे विचरने वालो का जो मुंह से कुछ कह नही सकते मारे जावें यह अनर्थ एक मेरे कारण को लेकर होवे यह कदापि नही होगा। बस देर क्या थी। भगवान नेमिनाथ ने उन पशुओ के पास जाकर मुक्त कर दिया और उनसे क्षमा याचना करने लगे। यह थी पूर्व की अहिंसा।

अब चित्र पर आइये।

चित्र में देखिये, ऊपर की ओर पशु कठघरे में बन्द हैं नीचे रथ में नेमिनाथ बैठे हैं उनके सिर पर छतरी लगी है। एक चंवरधारी सेवक चंवर सिर पर ढोर रहा है। सारथी रथ हांक रहा है। कृष्ण जी पीछे बैठे हैं।

इस प्रकरण के गूढ़ रहस्य का स्पष्टीकरण किसी भी विद्वान ने किसी भी इतिहास की पुस्तक में उल्लेख नहीं किया किन्तु पक्षपात के साथ उस जैन सांस्कृतिक साहित्य को जितना मिटाने की कोशिश की वह आपके सामने ही साक्ष्यस्वरूप प्रस्तुत है।

अब आप विदिशा और पद्मावती के नागवंशो राजाओं के संबंध में देखिये कि उन्हीं के मुद्राओं से यह साक्ष्य मिलता है कि यहाँ इनका राज्य काल रहा है। जिनमें जैन तीर्थंकर, आचार्य, साधु, आर्यिका, पशु, पक्षी, वृक्ष, मेंढ़क, मछली, आदि के चित्र दिये हैं। वह इस बात की साक्षी देते हैं कि यह शरीर पांच तत्व का पुतला है। समस्त संसार इस मानवशरीर में ही है। जिन्हें भी वर्तमान इतिहासकारों ने नहीं समझ पाया है। उसका स्पष्टीकरण हमने यथाशक्ति अपनी अल्पबुद्धि के अनुसार समझाने की कोशिश की है।

यहां इस प्रान्त में जैनाचार्य शिवनन्दी और वीरसेन पट्टाधीश हुए हैं। देखिये मध्य भारत इतिहास पृ० १८९ पंक्ति १८। हमारा उन ऐतिहासिक विद्वानों से नम्र निवेदन है कि वह यह बतावें कि जैन सास्कृतिक मूर्तियां जो कि जैन मूर्तियों के साथ साथ उत्कीर्ण कराई गई हैं उनका किस उद्देश्य से निर्माण कराया गया था और उनके आसन वाहन, शस्त्रास्त्र इत्यादि जो प्रतीकात्मक चिन्ह बतलाये हैं इनका कभी अपनी लिखित पुस्तकों में उल्लेख किया है और यह भी बताने का कष्ट करें कि उनका मानव जीवन से क्या सबंध है और हमें इससे क्या ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ? उसका कहीं भी उल्लेख नहीं किया जिसे जैनाचार्यों ने मूक भाषा में मूर्तिरूप देकर जीवित रखा है जिसका हमारे भारतीय संस्कृति के दुश्मन अनधिकार पूर्ण अधिकार कर व्यापार कर रहे हैं। यह है हमारी अनभिज्ञता और फूट। उपेक्षा, असहयोग, और विद्वेष की भावना कभी भी फलवती नहीं होती। पूर्व में जैनाचार्य यह प्रतिज्ञा करते थे कि हम पहिले (संख्या प्रमाणित कर) जैन बना लेंगे तभी आहार को जावेंगे। अब तो उसके विपरीत ही होता जा रहा है। संयम, सेवा, साधना और सुशिक्षा समाप्त हो गई। इसी का दुष्परिणाम है।

पट्टाधीश आदि की नामावलि

अब आपकी सेवा में यह बताना आवश्यक समझते हैं कि उज्जैन में भी १८ अठारह जैनाचार्य पट्टाधीश हुए हैं।

(१) महाकीर्ति ६८६ (२) विष्णु नन्दी ७०४ (३) श्रीभूषण ७२६ (४) शीलचन्द ७३५ (५) श्रीनन्दी ७४२ (६) देशभूषण ७६५ (७) अनन्तकीर्ति ७६५ (८) धर्मनन्दी ७८५ (९) विद्यानन्दी ८०८ (१०) रामचन्द्र ८४० (११) रामकीर्ति ८५७ (१२) अभयचन्द्र ८७८ (१३) नरचन्द्र ८९७ (१४) नागचन्द्र ९१६ (१५) नयनन्दी ९३३९ (१६) हरिनन्दी ९४८ (१७) महीचन्द्र ९७४ (१८) माघचन्द्र।

चार आचार्य (बुन्देलखण्ड) के पट्टाधीश हुए स्थान चन्देरी में। (१) लक्ष्मीचन्द्र १०२३ (२) गुणनन्दी १०३७ (३) गुणचन्द्र १०४८ (४) लोकचन्द्र १०६६।

कुण्डलपुर (दमोह) जिला सागर मध्य प्रदेश मे हुए पट्टाधीश बारह-जैनाचार्य ।

(१) ब्रह्मनन्दी ११४४ (२) शिवनन्दी ११४८ (३) विश्वचन्द्र ११५५ (४) हृदिनन्दी ११५६ (५) भावनन्दी ११६० (६) सूरकीर्ति ११६७ (७) विद्याचन्द्र ११७० (८) सूरचन्द्र ११७६ (९) माघनन्दी ११८४ (१०) ज्ञानन्दी ११८८ (११) गगकीर्ति ११९९ (१२) सिंहकीर्ति १२०६ ।

ग्वालियर में होने वाले १४ चौदह जैनाचार्यों की पट्टावलि ।

(१) हेमकीर्ति १२०९ (२) चारुनन्दी १२१६ (३) नेमिनन्दी १२२३ (४) नाभिकीर्ति १२३० (५) नरेन्द्र कीर्ति १२३२ (६) श्रीचन्द १२४१ (७) पद्मकीर्ति १२४८ (८) बर्द्धमानकीर्ति १२५३ (९) अकलंकचन्द्र १२५६ (१०) ललितकीर्ति १२५७ (११) केशवचन्द्र १२६१ (१२) चारुकीर्ति १२६२ (१३) अभयकीर्ति १२६४ (१४) बसन्तकीर्ति १२६४। अतिम भट्टारक हरिश्चन्द्र जी को गणतन्त्रराज्य मे गोली से मार डाला यह नेत्रविहीन १९१३ मे जीवित........ थे ।

नोट :—इन्डियनववेरी की जो पट्टावलि मिली हैं उसमे उपर्युक्त चौदह जैनाचार्यों का पट्ट पर ग्वालियर मे बैठना और होना लिखा है किन्तु वसुनन्दी श्रावकाचार मे इनका होना चित्तौड मे भी लिखा है पर चित्तौड के भट्टारकों की अलग भी पट्टावलि है जिनमे ये नाम नही पाये जाते। सम्भव है कि ये पट्ट ग्वालियर मे ही हो। इनको ग्वालियर की पट्टावलि से मिलाने पर निश्चय होगा । चित्तौड़ की पट्टावलि नीचे दी जाती है ।

अजमेर मे होनेवाले ५ पाँच जैनाचार्यों की पट्ट पर बैठने होने की नामावलि (१) प्रख्यात-कीर्ति १२६६ (२) शुभकीर्ति १२६८ (३) धर्मचन्द्र १२७१ (४) रत्नकीर्ति १२९६ (५) प्रभाचन्द्र १३१० में हुए ।

तीन जैनाचार्य पट्टाधीश दिल्ली मे हुए है।

(१) पद्मनन्दी १३८५ (२) शुभचन्द्र १४५० (३) जिनचन्द्र १५०७

चित्तौड़ मे होने वाले १६ जैनाचार्य पट्टाधीशो की नामावलि ।

(१) प्रभाचन्द्र १५७१ (२) धर्मचन्द्र १५८१ (३) ललितकीर्ति १६०३ (४) चन्द्रकीर्ति १६२२ (५) देवेन्द्रकीर्ति १६६२ (६) नरेन्द्रकीर्ति १६९१ (७) सुरेन्द्रकीर्ति १७२२ (८) जगत्कीर्ति १७३३ (९) देवेन्द्र-कीर्ति १७७० (१०) महेन्द्रकीर्ति १७९२ (११) क्षेमेन्द्रकीर्ति १८१५ (१२) सुरेन्द्रकीर्ति १८२२ (१३) सुखेन्द्रकीर्ति १८५९ (१४) नयनकीर्ति १८७९ (१५) देवेन्द्रकीर्ति १८८३ (१६) महेन्द्रकीर्ति १९३८।

नागौर के २६ भट्टारकों की नामावलि

(१) रत्नकीर्ति १५८१ (२) भुवनकीर्ति १५८६ (३) धर्मकीर्ति १५९० (४) विशालकीर्ति १६०१ (५) लक्ष्मीचन्द्र (६) सहस्रकीर्ति (७) नेमिचन्द्र (८) यशकीर्ति (९) भुवनकीर्ति (१०) श्रीभूषण (११) धर्मचन्द्र (१२) देवेन्द्रकीर्ति (१३) अमरेन्द्रकीर्ति (१४) रत्नकीर्ति (१५) ज्ञानभूषण (१६) चद्रकीर्ति (१७) पद्मनन्दि (१८) सकलभूषण (१९) सहस्रकीर्ति (२०) अनन्तकीर्ति (२१) हर्षकीर्ति (२२) अनन्त-कीर्ति (२३) हेमकीर्ति यह आचार्य १९१० माघ शुक्ला द्वितिया सोमवार को पट्ट पर बैठे।

इनके बाद क्षेमेन्द्रकीर्ति हुए इनके पट्ट पर मुनीन्द्रकीर्ति हुए और अब नागौर की गद्दी पर श्री कनककीर्ति महाराज विराजमान हैं।

बाममार्गी शिलालेख

संवत् १३२० वर्षे वैशाख सुदी ३ गुरौ अद्ये श्री तउल स्वामी देवपुरे अक्षयसिंह देव राज्ये पदाधिपक पं० मदनसिंह व श्रेयनिमित्तक प्तकापदेघी भानुमतो द्वजिषु प्रदत्रयोनदादाति तस्य भावद्द्सो जत्राति माता गर्दभो जनाति।

इस शिलालेख के नीचे एक चित्र घोड़े का बना हुआ है और वह घोडा एक स्त्री से संभोग करता बताया है। जिसका षट्मत् पर जैनाचार्य श्री समन्तभद्राचार्य ने बाद का लोहा लिया और विजय पाई, इसलिये वह लोहाचार्य कहलाये। विवेकी ध्यान देवें।

बाममार्गियों का उपदेश था कि सुरापान करने वाला सीधा स्वर्ग को जाता है। उस समय इन जैनाचार्य श्री समन्तभद्राचार्य जोकि क्षत्रिय कुल के एक कदम्ब वंशी राजा शान्तिवर्मा जिनका नाम था राज्य का परित्याग कर जैन आचार्य हुये और इन्ही अग्रवाल समाज के राजा दिवाकर को जैनधर्म की दीक्षा दी। माथुर गच्छ का हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। जिस सम्बन्ध मे एक शिलालेख स्वामी समन्तभद्र द्वारा उल्लिखित विजय मन्दिर के एक खंभे पर उत्कीर्ण है जो माथुर वैश्यों से सम्बन्धित है। माथुर वैश्य जाति इस ओर ध्यान देवे कि पहिले हम कौन थे और अब क्या हैं। हम किस ओर बहे जा रहे हैं।

विजय मन्दिर में एक कोठली के अन्दर एक शिलालेख और लगा है जिसमें मनुष्य हाथी, घोड़ा, ऊट, बैल, भैंस, कुत्ता, बकरा, भेड की उत्कृष्ट आयु का प्रमाण हैं। उसे भी देखिये। यह वह जातक पृष्ठ ६४ आयुर्दाय में उल्लेख हूँ। बाराह मिहर जैनाचार्य ने लिखा हैं इनका लिखा एक सामुद्रिक शास्त्र भी प्राप्त हुआ है।

गोलापूर्व जैन समाज की वंशावलि एवं गोत्रावलि—

(१) इन्द्र महाजन (२) कनकपुरिया (३) कपासिया (४) करैया (५) कहारिया (६) कोनिया (७) खड़ेरे (८) खाग (९) खुदेले (१०) खैरानियाँ (११) गन्धर्प:गन्धकार (१२) गड़ौले (१३) गुबारिहा (१४) गोदरे (१५) गोरिहा (१६) गुगौरिया (१७) चन्देरिया चादेलीय (१८) चारखेरे (१९) चौंसरा (२०) छत्रेले (२१) छोकड़े छोड़कटे (२२) जतहरिया (२३) जुझौतिया (२४) टीका के रावत (२५) टैटवार (२६) तिगैले (२७) दण्ड धार (दण्डकार) (२८) दुगैले (२९) द्विज महाजन (३०) दरगैया (३१) घना (३२) धमोनया (३३) नाहर (३४) निर्मोलक (३५) पचरसे (३६) पटारिया (३७) पटौरिया (३८) पड़ेले (३९) पतरिया (४०) पिपरैया (४१) पंचरत्न (४२) पचलोरे (४३) पैयवार (४४) पपौरहा (४५) प्रेमपुरिया (४६) फुसकेले (४७) बड़घरिया (४८) बदरौठिया (४९) बनोनया (५०) बेरिया (५१) बचैया (५२) बोदरे (५३) बिलबिलया (५४) भरतपुरिया (५५) भिलसैयां (५६) मरैया (५७) मझगैयाँ (५८) मेघवार (५९) रस (६०) राघेले–रहदेले, राघेलीय (६१) रौतेले (६२) सनकुटा (६३) सपेले (६४) साधारण (६५) साधेले–साधेलीय (६६) सिरसपुरिया (६७) सोनी (६८) सोंघनो (६९) सोंरया (७०) सरखड़े (७१) सौतिया (७२) सपोलिहा (७३) शेखर (७४) हीरापुरिया (७५) लखनपुरिया (७६) थवोलिया।

अग्रवाल समाज और महासेन

अग्रवाल जैन समाज जिन्हे आचार्य स्वामी समन्तभद्र अपर नाम महासेन लोहाचार्य जिन्होंने काष्ठा सघ स्थापित किया । माथुर गच्छ, पुष्कर गण, हिसार पट्ट और लोहाचार्याम्नाय प्रचलित किया था, उस समय नवीन काष्ठासघ ने आहार दान रोग समाप्ति। बाद दिया था ।

यह लोहाचार्य जी दक्षिण देश भद्दलपुर जिसे वर्तमान में भेलसा नाम से परिवर्तित किया गया और विदिशा नाम से पुकारा जाने लगा जो मध्य प्रदेश की राजधानी के निकट ३२ मील पूर्व दिशा मे है साची यहा नेमिनाथ भगवान का समवशरण आया था और रचना सम्राट अशोक के द्वारा उन्ही के स्वसुर जो जिनधर्म के पालक थे, उपदेश से विवाह मे प्रतिज्ञा कराई थी निर्माण कराया है । इसी के ५ मील पूर्व मे विदिशा है। यहा का जो किला बना हुआ था उसे नगरपालिका विदिशा ने अवैधानिक तौर पर विध्वस किया। यह किला आचार्य स्वामी समन्तभद्र की बादशाला को जो कि १०५ गज ऊची आधा मील लबी आधा मील चौडी थी, जिसे बादशाह शमशुद्दीन अल्तमश ने विध्वश किया था जिसमे माथुर गच्छ जहा वर्णन किया है। यहा एक शिलालेख मे माथुर वश का वर्णन आया है । इन्ही लोहाचार्य ने अग्रोहे के निकटवर्ती हिसार मे पहुँचे वहा इन्हे असाध्य रोग हुआ था जिससे वे मूर्छित हो गये थे वहा के श्रावको ने उनको सन्यास मरण स्वीकार कराया था। इसके बाद कर्म से स्वभावत लघन होने के कारण त्रिदोष पाक होने से आप निरोगी हो गये थे । निरोगी होने पर जब होश हुआ तो इन्होने भ्रमरी वृत्ति (भिक्षावृत्ति) से आहार करना विचारा। पीछे संघ ने उनसे कहा कि महाराज ! हम लोगो ने आपकी रुग्णावस्था तथा मूर्छितास्था मे यावज्जीवन आपसे सन्यास मरण की प्रतिज्ञा करवाई हैं और आहार भी परित्याग कराया है । अत. यह सघ आपको आहार नही दे सकता। यदि आप नवीन सघ स्थापित कर कुछ जैनी बनावें तो वहाँ आप आहार कर सकते है । तथा वे लोग दान दे सकते हैं। तत्पश्चात् प्रायश्चितादि शास्त्रो के प्रमाण से उक्त वृतान्त सत्य जान लोहाचार्य जो वहा से विहार कर अग्रोहे नगर के बाह्य स्थान मे पहुचे । वहाँ एक बडा पुराना ईंटो का पजाया-ढेर था जो बहुत ऊचा था उसी के ऊपर बैठ कर ध्यान निमग्न हुए । अनभिज्ञ लोग अद्वितीय साधु को वहाँ आये हुए देख कर दूर से ही बड़े आदर के साथ प्रणाम करने लगे । मुनि महाराज के आने की धूम सारे नगर में फैल गई । हजारो स्त्री पुरुष इकट्ठे हो गये । कारण विशेष से एक वृद्धा श्राविका भी किसी दूसरे नगर से आई थी। यह भी नगर मे महात्मा आये हुए सुन उनके दर्शनो के लिये वहा आई। यह वृद्धा (बुढिया) दिगम्बराचार्य के वृत्तान्त को जानती थी इसलिये ज्यो ही इसने महात्मा को देखा त्यो ही समझ गई कि ये तो हमारे श्री दिगम्बर गुरु है बस क्या देर थी धीरे धीरे वह उस ईंटो के ढेर पर चढ गई और मुनि महाराज के निकट जाकर बडी विनय के साथ नमोस्तु नमोस्तु कह कर यथा स्थान बैठ गई । मुनि महाराज लोहाचार्य जी ने भी धर्मवृद्धि कह कर धर्मोपदेश दिया । यह घटना सबो ने देखकर बडा ही आश्चर्य मानकर अहो भाग्य इस बुढिया का कि ऐसे महात्मा इससे बोले । अब सब मुनिमहाराज के निकट उपस्थित हुए। मुनि महाराज ने सभी को श्रावक धर्म का उपदेश दिया। उपदेश सुनने के साथ ही सब का चित्त व्रत ग्रहण करने के लिये उतारू हो गया । पहिले अग्र वशीय राजा, दिवाकर ने अपने कुटु-

स्त्रियों के साथ श्रावक धर्म को स्वीकार किया। और पीछे इनके देखा-देखी सवा लाख अग्रवालों के घर जैनी हो गये। पहिले छान कर पानी पीना, रात्रि में भोजन नहीं करना और नित्य प्रति देव दर्शन करना तीन मुख्य व्रत जैनियों के बतलाये गये।

जल छानन निशि तज अशन, जैनी चिन्ह हैं तीन।
प्रति दिन दर्शन जो करें, सो जैनी परवीन॥

इस संघ की पट्टावलि अन्यत्र प्रकाशित है। इस संघ के पट्ट पर उस समय से लेकर आज तक बराबर अग्रवाल जाति के ही भट्टारक अभिषिक्त होते जाते हैं।

यह वर्णन जैन सिद्धान्त भास्कर काष्ठासंघ उत्पत्ति पृष्ठ १२-१३-१४ किरण ४, सन् १९१३ से लिया गया है। जिन्हें संदेह हैं वह देख सकते हैं।

अब आपके समक्ष अग्रवाल जाति के गोत्र जो कि संख्या में १७॥ हैं जो कि ३ गोत्र परवारों में भी मिलते हैं कास, बासलऔर गोयल। इस अग्रवाल जाति के इतिहास लेखक सत्यकेतु विद्यालंकार हैं। मुद्रक देहली कमर्शियल प्रेस चांदनी चौक देहली है।

अम्बाला कमिश्नरी, हिसार जिला में अग्रवालों की संख्या सबसे अधिक है। अग्रोहा में अग्रवालों का बिकास हुआ है। अग्रवालों की अच्छी बड़ी संख्या जैन-धर्म की अनुयायी है। जैन अग्रवालों को सरावगी कहते हैं। पंजाब और दिल्ली में जैन अग्रवालों की संख्या विशेष है।

—: दानवीर महाराजा कर्ण :—

जो १२॥ फुट लम्बी मूर्ति कुबेर की नदी बेतवा से राजमल मड़वैया ने निकलवाई थी और प्रचार श्रीबाबू तखतमल जी के सुपुत्र का नाम सन् १९५२ के चुनाव क्षेत्र में जिय प्राप्ति के लिये प्रकाशित किया गया था और जिस पर डायरेक्टर पुरातत्व बिभाग ग्वालियर ने भूल स्वीकार की है निकलवाई थी वह मूर्ति कुबेर की नहीं है किन्तु महाराजा कर्ण की है। इस संबंध में यह प्रमाण मिलता है कि महाभारत के इस प्रकरण में पृष्ठ ५९ पर अग्रवाल जाति के इतिहास में अध्याय चौथा अग्रवाल जाति की उत्पत्ति में यह वर्णन आया है कि महाभारत के समय राजाकर्ण हस्तिनापुर से दिग्विजय प्रारम्भ कर पश्चिम की ओर विजय यात्रा करते हुए विविध राज्यों को विजय किया। उन राज्यों में से अनेक गणराज्य थे। राजा कर्णद्वारा विजय किये गये गणराज्यों में से अन्यतम आग्रेय गण भी था जो रोहतक और मालवगणों के बीच में स्थित था। प्राचीन भारतीय इतिहास में मालवगण बहुत प्रसिद्ध था। सिकन्दर के यूनानी ऐतिहासिकों ने भी इसका उल्लेख किया है। संस्कृत साहित्य में अन्यत्र भी अनेक स्थानों पर इसका जिक्र आता है। यह मध्य पंजाब में स्थित था। रोहतक गण का वर्तमान प्रतिनिधि स्पष्ट रूप से रोहतक है। हस्तिनापुर के पश्चिम की तरफ विजय यात्रा करते हुए कर्ण ने पहिले रोहतक को जीता, फिर आग्रेय को और फिर मालव को।

यह उल्लेख इस बात की पुष्टि करता है कि महाराजा कर्ण का यहां आना सिद्ध होता है और यह मूर्ति जो कि वर्तमान मे शासकीय संग्रहालय मे विद्यमान है और इसके साथ जो भी मूर्तियाँ एकत्रित की गई हैं और संग्रहालय निर्माण की योजना आदि सब का श्रेय इस पुस्तक के लेखक को मिलना चाहिये था किन्तु शुभ कार्यो मे बाधायें अवश्य आती हैं। शासन मे कोई भी व्यक्ति इस रुचि का नही मिला और जिस वृक्ष को जिस प्रकार का फलता फूलता वृक्ष बनाना था मन की मनमे लेखक के रहगई। और श्रीमान् इतिहास के विद्वान श्री, वि० श्री० वाकणकर साहब भारतीय भवन के आग्रह से लिखने का कार्य प्रारभ किया जो कि आज आपके समक्ष यह पुस्तक के रूप मे सेवा प्रस्तुत है ।

भारत के सम्राटो की विशेषतायें थी सहनशीलता, होने से राजनीति विशारद निःस्वार्थी त्यागी पवित्र हृदय आचार्यों को अपने मत्री पद पर नियुक्त करते थे। जिससे राज्य के रीति रिवाज नियमो और प्रथाओ के अनुसार शासन भली प्रकार से चल सके चलाये थे। किन्तु वर्तमान गणतन्त्र राज्य मे विपरीतता देखने मे आती जा रही है। जिस प्राचीन भारत मे घी, दूध की नदिया बहती थी वहा घी, दूध के वृक्षो को राज्य शासको ने सिल्लीखाने बना करके खाया और रहा सहा है उसे भी नेश्तनाबूद्ध करने पर उतारू हैं गो बध बन्द नही करते समस्त भारत मे हिंसा की बाहुल्यता बढती जा रही है। आहार बिहार मे काफी परिवर्तन आ गया है ।

खान पान का चित्र पर पड़ता अमिट प्रभाव ।

जैसा शुद्ध अशुद्ध हो, वैसे बनते भाव ॥

जितने भी शासक बनते हैं केवल पाँच वर्ष के लिये और वह भी कौन जो हीन वर्ण के हैं जिनके वशजो ने जीवन भर नगर की सफाई की मैला फेंका, जो मासाहारी रहे, जिन्होंने रात दिन डांके और चोरियाँ की, जिसमे लेश मात्र भी दया का नाम नही, जिन्हे केवल पैसा ही मां बाप है। जिन्हे उत्तम पदार्थ दर्शनो को भी प्राप्त नही होते थे जिन्हे आज जलेबिया भी मुख मे गडती हैं करकरी लगती हैं ऐसे लोग शासन की न्यायपूर्ण गद्दी पर राज्यारूढ अपने छल-बल से प्राप्त कर बैठ जाते हैं ।

राज्यो ने कभी व्यापार नही किया। राज्य का व्यापार प्रजा के हाथो मे रहता था। प्रजा मे सेठ लोग अपने धन का सदुपयोग विपत्तिकाल मे राज्यो को दिया करते थे। जैसा कि महाराणा प्रताप को विपत्तिकाल मे भामाशाह ने दिया था ।

दूरदर्शिता

श्रीमन्त माधवराव जी सिंधिया के शासन काल मे एक प्रस्ताव यह आया था कि एक नगर सेठ के घर की खाना तलाशी लेना है और वह भी पुलिस के द्वारा ।

तो उत्तर मे श्रीमन्त स्वर्गीय महाराजा ने अपनी दूरदर्शिता और पूर्वापर विचार कर उत्तर दिया कि यदि मैं आज्ञा देता हूँ तो यह पुलिस के लोग हर एक की तौहीन करेंगे और अपना घर भरेंगे दूसरो की इज्जत आबरू धूल मे मिला देगे किन्तु आज भारतीय शासन मे ऐसा

न्यायप्रिय शासक देखने में नहीं आता। सब पंचवर्षीय योजना लेकर आते हैं और अपनी मनमानी करके अपने भारत के भविष्य पर विपत्तियों के नये नये बादल टैक्स, कानून के छोड़कर भारतीय भविष्य की सन्तति के लिये गहरी खाई खोदकर चले जा रहे हैं। इसका मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा? धर्म कर्म समस्त बिगाड़ा जा रहा है। शिक्षा का प्रचार अधिक है किन्तु वह शिक्षा धार्मिक नही हैं। किसी भी व्यक्ति से पूछिये जो एम. ए. की डिग्री प्राप्त है तो उसे भी अर्थ लगाना नहीं आता, वह अर्थ विपरीत ही लगाता हैं। कहते हैं सर्प काटता है उसके खाने से आदमी मर जाता है। ध्यान दीजिये और क्रोधी, स्वार्थी, कामी पुरुष जो विषयासक्त है वह भी भयंकर है इसलिये कि विषधर का अर्थ सर्प से है और विष का धारने वाला पुरुष का शरीर विषयों से बना हुआ है और विषयो की ही पूर्ति में रात दिन लगा हुआ है इसलिये विषधर (सर्प) है और मणिधर सर्प उससे भी अधिक भयंकर विषैला है इसलिये कि उसके पास एक मणि जो वेश कीमती है जिसके प्रकाश में वह विचरण करता फिरता है और देखता समझता हैं। वह है ज्ञान। ज्ञान मनुष्य मात्र का तृतिय नेत्र है जो शिवजी के मस्तक पर बतलाया है।

परख सकती नहीं रतनों को, हर इन्सान की आँखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो न हों ज्ञान की आंखें॥

इन शासको को केवल स्वार्थ व अपने शारीरिक सुखों का ही ध्यान है परमार्थ की ओर लेश मात्र नही। इसलिये यह उस ज्ञान मणि के संसर्ग का दुर्बुद्धि के कारण दुरुपयोग करते है। हृदय में विशालता और आदर्शमय जीवन का लक्ष्य नही है। यही पतन का मुख्य कारण हैं।

ज्ञान का करें गलत उपयोग, खतरनाक हैं ऐसे लोग।

यह बात जहां तक मान्य है वह आपके समक्ष है। इसलिये यह ज्ञान का दुरुपयोग करने वाले अधिकारी वर्ग मणिधर सर्प से कम नहीं हैं। विवेकी ध्यान देवें। क्या यह बात असत्य है? क्या ऐसे पुरुष प्रजा, राज्य शासन, शिक्षा, धर्म, समाज-सेवा, कर सकेगे? उन्हें तो अपनी कुर्सी कायम रखना है।

राजनीति की चासनी मुंह लागे इकबार।
लगी रहत धुन उसी की जीत होय या हार॥

और यह विजय पाते हैं फूट से। आप समझते है कि फूट नाम का फल क्या शिक्षा देता है:—

खेत में उपजे सब कोई खाय, घर में आवे घर बहिजाय।

यह नेता गण आपस में एक दूसरे के दोष देखते हैं किन्तु सन्मार्ग प्रदर्शक नही है। जिस घर मे फूट हो क्या वह घर सरसब्ज हो सकता है? कदापि नहीं। इस पर कवियों ने निम्नांकित दोहे कहे है—

गुल तो क्या हार तक न बचा हाय लूट से ।
भारत का बाग उजड़ गया आपस की फूट से ॥
फूट ऊपजै जौन कुल, सो कुल वेग नशाय ।
युग बांसन की रगड़ ते, सगरो वन जरिजाय ॥
गुलों को गुल लगे खाने, अरे सैयाद क्या करना ।
जहां बेदर्द हाकिम हो वहाँ फरयाद क्या करना ॥

वही हमारे राज्यशासन के अधिकारियो की है । भारत का भविष्य खतरे से खाली नहीं है । पूर्व में खान पानादि के संबंध में बड़ा विचार करते थे । और आज कल संयम नियम खान पानादि का कोई भेद भाव नही रहा ।

पर का जूठा अन्न जल ना गहु महा अभक्ष ।
पर काढ़त ही श्वांस तें रोग होत प्रत्यक्ष ॥

तपेदिकादि रोगों में वृद्धि क्यों होती जा रही है ? क्योंकि हमने संयम नियम को तिलांजलि दे दी है । सभी की जूठी प्यालियों में खाते और पीते फिरते हैं । एक दूसरे के रोग के कीटाणु एक दूसरों को लग जाते हैं और उसका दुख भोगना पड़ता हैं ।

कुलानि जातिः श्रेणीश्च गणान् जान पदान् अपि ।
स्वधर्म चलितान् राजा विनीय स्थापयेत् पथि ॥

याज्ञवल्क्य स्मृति १, ३६०

जाति जानपदान् धर्मान् श्रेणिधर्माश्च धर्मवित् ।
समीक्ष्य कुलधर्माश्च स्वधर्म प्रतिपादयेत् ॥

मनुस्मृति ८, ४१

भारतीय आचार्यो ने स्वधर्मः (आत्मीय धर्मः) वस्तुस्वभावो धर्मः के पालन करने में दृढ रहने पर अधिकाधिक ज्ञानवर्द्धन पर शास्त्र लिखे हैं । और बोध कराया है । वही एक शासन और विश्व के लिये उपयोगी है । इसकी परीक्षा मगध के महाराजा उपश्रणिक ने अपने पुत्र श्रेणिक जिन्हें बिम्बसार कहा है । यह भगवान महावीर स्वामी के मौसिया थे । यह विवरण श्रेणिक चरित्र में पूर्णरूप से पढ़ने पर मिलेगा ।

अग्रवालों के १८॥ गोत्र

अग्रवालों में विवाह के अवसर पर निशान, नगाड़ा छत्र, चंवर जो कि राज्यचिन्ह माने गये हैं पुराने आग्रेय राज्य का स्मारक है प्रयोग में लाते हैं । संस्कृत ग्रन्थ अग्रवैश्य-वंशानुकीर्तन में पूरे अठारह गोत्रों की सूची दी गई है, जो निम्नलिखित है :—

(१) गर्ग (२) गोइल (३) गावाल (४) वात्सिल (५) कासिल (६) सिंहल (७) मंगल (८) भंदल (९) निंगल (१०) ऐरण (११) धैरण (१२) ढिंगल (१३) तित्तल (१४) मितल (१५) तायल (१६) गोभिल (१७) गवन (१८) तुन्दन (१९) मित्तल। गवन आधा गोत्र हैं इसलिये १८।। गोत्र हैं।

१ जिस प्रकार से परवारों में विवाह के समय स्वयं का और मामा का गोत्र बचाया जाता है उसी प्रकार से इन्होमे और अन्य समाजों में भी बचाया जाता है।

ब्राह्मणों के आठ गोत्रः—

(१) विश्वामित्र (२) अमदग्नि (३) भारद्वाज (४) गौतम (५) अत्रि (६) वशिष्ठ (७) काश्यप (८) अगस्त्य ।

राजा अग्र की सत्रह रानियाँ थीं उनके नाम निम्न प्रकार से हैं—

(१) मित्रा (२) चित्रा (३) शुभा (४) शीला (५) शिखा (६) शान्ता (७) रजा (८) चरा (९) शिरा (१०) शची (११) सखी (१२) रम्भा (१३) भवानी (१५) सरसा (१६) समा (१७) माधवी। माधवी इनमे पट्ट रानी थी।

अग्रवाल जाति के इतिहास में यह बात बतलाई है कि इनके यहाँ अश्वमेघ यज्ञ होते थे और उसमें घोड़ों का हवन किया जाता था। यह परम्परा बाममार्गी ब्राह्मणो ने चलाई थी जिस सम्बन्ध मे एक पाषाण पर एक शिलालेख नहीं किन्तु विदिशा नगर मे किले के चारों ओर ४ शिलालेख इस सम्बन्ध में प्राप्त हैं जिनमें एक शिलालेख मड़वैया संग्रहालय विदिशा में मौजूद हैं जो किले की दीवार में लगा था और वह एक मुल्ला जी को पत्थरों में नगरपालिका ने बेचा था। उसमें वह उनके हाथ पड़ा और उन्होंसे राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक विदिशा को मिला।

मत्स्य वराह का रागी और वीतरागी दर्शन

सांकेतिक चिन्ह तथा भावदर्शन

मछली—मछली वराह के सिर पर क्यों संकेत की है ? भगवान वीतरागदेव ने जो सदुपदेश दिये हैं, उन्हे आचार्यों ने शास्त्रों मे लेखबद्ध किया हैं, किन्तु मूर्तिकला के द्वारा उन्हें और भी स्पष्ट कर दिया है। जिस जीव ने इस संसार में जन्म लिया है वह सुख चाहता है और दुःखों से डरता है। इस पर श्री दौलतराम जी ने छहढाला में कहा है।

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहें दुख तें भयवन्त ।

उक्त चित्र में संकेतों द्वारा निम्न भाव प्रदर्शित किये गये हैं :—

बाराह का मानव शरीर—मानव शरीर को आचार्यों ने संसार सागर कहा है जिसमें मन मछली है। मछली मध्य कमल के ऊपर चित्रित है। अनेक प्रकार के भोगों में लिप्त का भी पुरुष विषयों में आनन्द मानता है। जब कि बाराह (शूकर) अपवित्र वस्तु में आनन्द मानता है।

त्रिकमल—१ मोक्ष, २ चंचल मन, तथा ३ माया की ओर संकेत करता है; वहं माया—

दोहा—

धरा कनक अरु कामिनी, ये हैं कडुवी बेल ।
बैरी मारे दाव दे, यह मारें हंस खेल ॥

लक्ष्मी—लक्ष्मी का साकेतिक चिन्ह कमल है । सासारिक भोगोपभोग वस्तुए विना लक्ष्मी द्रव्य, अर्थ, जिसे व्यवहार के रूप मे रुपया पैसा धन, लक्ष्मी कहते हैं । जिसकी सहायता से सांसारिक भोग भोगे जाते हैं और यही भोग रोग के कारण बनकर संकटापन्न की स्थिति उत्पन्न करते हैं । मछली की पूंछ के नीचे की ओर जो कमल अंकित है वह मोक्ष लक्ष्मी को ही संकेत करता है ।

वीतरागी पुरुष चारो पुरुषार्थ सम्पन्न होते हुये भी भुजंग के समान भोगों को मान कर त्याग देते हैं । जबकि रागी पुरुष उन्हें दांतों से पकडता है । जो कि इस चित्र में अंकित कर दर्शाया है ।

त्रिकमल नाल—यह कमल नाल लक्ष्मी, काल, मृत्यु, को आमन्त्रित करती है । काल एक सर्प के रूप में जहाँ पर बताया है उसे पांच फणका इसलिये माना है कि पंचेन्द्रिय जनित विषय कषायादि इस त्रिकमल से लिपटे हुये हैं । यह मृत्यु को संकेत करते हैं ।

शंख—वाराह मूर्ति और विष्णु के हाथ में जो शंख पकड़ा हुआ बतलाया है वह:—

फटो पेट दरिद्री नाम, उत्तम घर में वाको ठाम ।
श्री को अनुज विष्णु को सारो, पंडित होय सो अर्थ विचारो ॥

को संकेत करता । क्योकि हम अपने गुरुओ अनुभवी विद्वानों, माता और पितादि की दी गई शिक्षा को मान्यता नही देते हैं । अपने पेट की गोपनीय बात को बाहर निकाल देते हैं । यह शंख और महाशख कहा जाता है । हम अपनी शक्ति का दुरुपयोग करते हैं, सासारिक भोगों में आनन्द मानते हैं, गुरुओ की शिक्षा को ठुकरा देते हैं इसलिये हम शंख हैं ।

उल्लू—विष्णु की पत्नी लक्ष्मी और उनका वाहन उल्लू इसलिये हैं कि लक्ष्मी चंचला है यह स्थिर नही रहती । जिसके पास यह पहुँच जाती है वह इन्ही मे तल्लीन हो जाता है । लक्ष्मी, विद्या, शक्ति, वैभव, राज्याधिकार, बहु कुटुम्ब और यौवनास्था जिसके पास है क्या क्या अनर्थ नही करता है ! मूर्खतापूर्ण कार्य करने वाले को क्या उल्लू से संबोधन नही करते ।

गधा—मूर्खता पूर्ण कार्य करने वाले, और संसारिक गृहस्थी के भार से लदे हुए मानव को तथा विषयाशक्त मानव मानव को प्राय: क्या गधा नही कहते, इसी कारण से रावण के सिर पर गधा का संकेतात्मक चिन्ह बताया है ।

अग्नि—अग्नि चार प्रकार की है—कामाग्नि, क्रोधाग्नि, जठराग्नि, चिन्ताग्नि जो निरन्तर जलाती रहती है । और यह प्रज्वलित लक्ष्मी के ही कारण से होती है। इस लक्ष्मी के चार बेटे हैं।

दोहा—

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म अग्नि नृप चोर।
जेठे को आदर नहीं, तीन करें फड़फोर ॥

यह लक्ष्मी सांसारिक भोगों को भोगने के लिये अति आवश्यक है। और आज इमी के पीछे मानव निंद्य से निंद्य कार्य कर बैठता है । यह एक माया है, इस पर यदि विजय पाई तो केवल वीतरागी पुरुषों ने ।

माया ठगनी ने ठगा यह सारा संसार ।
पर माया जिसने ठगी, तिनको बहु बलिहार ॥

बाम कन्धे पर माया रूपी स्त्री बैठी है—जो पुरुष विवेकवान हैं और वीतरागी जिनके परिणाम हैं, वह इसके चक्कर से बचने का उपाय कर लेते हैं । क्यों ?

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान ।
सुखदाई सब जीव को, यही भक्ति परमान ॥

बाराह की चार भुजायें—दाहिने प्रथम हाथ में पकड़ी हुई कमलनाल पंचेन्द्रिय जनित विषय और पाँच पापों को और द्वितिय हाथ जांघ की ओर संकेत किया है जिसकी अंगुलियाँ नीचे की ओर पतन का संकेत करती हैं क्योंकि भोग भुजंग के समान हैं इस प्रकार से संकेत किया गया है ।

बाम भुजायें—इस ऊपर के हाथ में जो चक्र बतलाया है वह वाराह जो कि—विष्णु का अवतार माना गया है उसे प्रत्येक मानव स्वयं में दृष्टि डाल कर देखे तो नारी एक माया है। मानव विषय भोगी है, विषयों की दाता नारी के चक्कर में फंसा हुआ है। चक्र के बीच में जो अंगुलियां फैली हुई बतलाई हैं वह पाचों इन्द्रियों की ओर संकेत करती हैं । जिस प्रकार से मक्खी को मकड़ी अपने जाल में फसा लेती है । विषयान्धी मानव फसा हुआ है ।

चतुर्थ बाम हाथ मे शंख--शख मानव की मूर्खता को सकेत करने का प्रतीकात्मक चिन्ह है । क्योंकि सद्‌गुरुओं द्वारा हमें जो भी ज्ञान प्राप्त होता है तथा हमें अनुभवी ज्ञान द्वारा सद् शिक्षाये प्राप्त होती हैं उन्हें हम शंख की भांति अपने पेट में न रख कर बाहर फेक देते हैं । और विषय भोगादिक में ही सुख मान लेते हैं। जब हमारी इन्द्रियां वृद्धावस्था में शिथिल हो जाती हैं पुत्र, स्त्री, आज्ञाकारी नहीं होते हैं उस काल हमें पूर्व योवन काल की घटनायें स्मरण हो जाती हैं। फिर विचार करते हैं कि:—**कहां गये वे दिन मूरख बोल, कर कर विविध कलोल ।**

मानव शरीर का बाराह मुख क्यों—बाराह मुख काम को संकेत करता है।

मानव के दोनों पैर – जिस प्रकार से सिंह अपनी दैदीप्यमान कीर्ति, और तेजस्वी प्रतिभा द्वारा विश्व के प्रांगण में इच्छित वस्तु प्राप्त कर लेता है और चिरकाल तक पूर्व महा पुरुषो की परम्परा को जीवित रखता है, इसी प्रकार यदि आप प्रत्येक अग के सकेतो पर यथोचित रूप से दृष्टि डाले तो आपको यह जानकारी स्पष्ट रूप से प्राप्त हो सकेगी ।

गले मे रत्नहार – सम्यक्‌दर्शन, सम्यक्‌ज्ञान, सम्यक्‌चारित्र यही तीनो रत्न हैं।

विकसत सब गुण शील में, शील सुगुण की खान ।
शीलहीन नर नारि के, सब गुण धूल समान ॥

आचार्य सबोधन :—

आग लगी है बृक्ष को, जलने लागे पात ।
तू क्यों जलै है पंखिया, पंख है तेरे साथ ॥

मानव एक वृक्ष है और उस पर श्वासा हंस पक्षी है – मानव का शरीर एक बृक्ष है इसमे काम, क्रोध, और चिन्ता की अग्नि लगी हुई है सासारिक भोगो को भोगने के लिये । आचार्य कहते है अय हंस ! जब तेरे पास ज्ञान के पख हैं तो क्यो नही उड जाता है ? अर्थात् तू विषयो का त्याग क्यो नही करता है ।

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताह लिपटात ।
ज्यों नर डारत बमन सो, श्वान स्वाद सों खात ॥
यही भोग रोग के कारण हैं, तृष्णा को सदा बढ़ाते हैं ।
कामाग्नि में जल कर प्राणी, अपने प्राण गमाते हैं ॥

पक्षी (हस) का उत्तर –

फल खाये इस बृक्ष के, गन्दे कीने पात ।
अब यह मेरा धर्म है, जल जाऊं इसके साथ ॥

इस मानव बृक्ष के सुपुत्र मीठे फल यश हैं जो दान के रूप मे माने गये हैं। वह चार प्रकार का है ।

दान औषधि पुण्य यश कर, बचैं वृष घन प्राण हैं ।
जग में शिरोमणि नर वही, जो देत जीवन दान हैं ॥

विवेकपूर्ण ज्ञान इसके पत्र हैं । जो साहित्य के रूप में अमर बनाते हैं ।

अन्धकार है वहां जहां आदित्य नहीं है ।
है वह अन्धा देश जहां साहित्य नहीं है ॥

हमारी दुर्बुद्धि कुपुत्र है जो हमें रात दिन माया के जाल में फंसाकर चिन्ता की ज्वाला में जलाती रहती है ।

पुष्प माल—पुष्पमाल जो मानवकृति वराह के गले में घुटनों तक डली हुई है, विजय को संकेत करती है ।

विषय त्याग वैराग है, समता कहिये ज्ञान ।
सुख-दाई सब जीव को, यही भक्ति परमान ॥

हाथ, गला, कान के आभूषण—

सत्य कण्ठ भूषण कहा, कर का भूषण दान ।
शास्त्र श्रवण भूषण सुभग, कहत जिनागम कान ॥

ज्ञानियों के लिये सोने, चांदी के आभूषण आभूषण नहीं हैं, किन्तु उन्हीं का आभूषण ज्ञान है जिसे कोई छीन नहीं सकता है ।

रत्न—व्यवहारिक और जीव के उपयोगी रत्न तीन ही हैं ।

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि, जलमन्नं सुभाषितं ।
मूढ़ः पाषाणखण्डेषु, रत्न संज्ञा विधीयते ॥

यही तीन रत्न जीवधारियों के लिये नितान्त आवश्यक हैं—

मधुर मनोहर सत्य युत बचन बोलिये नित्य ।
अक्षर कम अरु अर्थ बहु, जो नहिं होय अनित्य ॥

मत्स्य वाराह का प्रत्येक अंग एक अनोखी शिक्षा देता है। यह सूझ बूझ जैनाचार्यों की है। जैन मन्दिर और निकटवर्ती अन्य हिन्दू और वैष्णव मन्दिरों में घनिष्ट सम्बन्ध है । केवल दोष हमारे इन नेत्रों का और समझ का ही है। कोई अन्तरंग से देखता है कोई बाह्य अंग से। केवल यही भेद है । इसे स्वयं समझें और दूसरों को समझाने का प्रयास करें । इसका स्पष्टीकरण आचार्यों के उपदेशामृत से और राज्याश्रय एव दानियों के सहयोग से मूर्तिकला में जो अनोखा ज्ञान भर दिया है वस्तुस्थिति की साकारता पाषाण में किस प्रकार दर्शायी है इसे ज्ञानी जन ही भली प्रकार से ज्ञानवर्द्धन के उपयोग में ला सकते हैं। आज के युग में ऐसे अपूर्व पुरातत्वीय वस्तु कला का विनाश कार्य पुरातत्व के दुश्मनो द्वारा होता जा रहा है। इस विनाश से बचाइये।

✻

विदिशा लटेरी

महाकालेश्वरके ज्योतिर्लिंग से विभूषित भगवान कृष्ण को गुरु भूमि कालिदास के मेघ को मार्गच्युत करा देने वाली वत्सराज और विक्रमादित्य का राज्यश्री धर्म, अर्थ, काम मोक्ष, वैभव,

और विलास की क्रीड़ाभूमि विशाल अवन्तिकापुरी का महत्व तो इस प्रदेश में अन्यतम है ही, परन्तु पुराणों, एवं जैन साहित्य और बौद्ध ग्रन्थो मे वर्णित वैश्य नगरी विदिशा का महत्व भी प्राचीन भारत के मान चित्र पर भी नही है। आज के मध्यप्रदेश को राजनीति के क्षेत्र मे गौरवान्वित करने वाला राजधानी के मध्य तथा राज्यान्तर्गत छुपा हुआ पुरातत्वीय ऐतिहासिक संग्रह ही है। भोजपुर, समसगढ़, कुराना; महलपुर पाठा, साँची विदिशा आदि इसी के अंग हैं। साँची और विदिशा का प्राचीन काल से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। यह पर्वत काकनाम या काकनाद वोट से भी प्रसिद्ध था।

प्राचीन विदिशा का विस्तार बहुत अधिक था। वह उस दशार्ण देश की राजधानी की मुख्य नगरी थी। जिसमे तलवारो की तीक्ष्ण धार बनाई जाती थी आज बैस नामक ग्राम वैश्यों के निवास का पूर्व मे स्थान रहा है उदयगिरी पर्वत और साची इसी के अङ्ग थे।

महर्षि यमदग्नि और परशुराम भार्गव के सिरोंज के निकट लैटेरी नामक ग्राम में छोटी और बडी मदागन है। यमदग्नि के पिता का नाम शतविन्दु और माता का नाम श्रीमती था स्वभाव के अत्यन्त ही क्रूर थे उन्होने अनेको ग्रन्थो का पठन किया। बहुत अच्छा बोलने वाले थे। बुद्धि विपरीत वितण्डावाद उत्पन्न करने मे प्रवीण थे। कुमारावस्था में माता मर गई, इष्ट जनो से विरह और अपमान सौतेली माता के तिरस्कारित वचनों का प्रहार सह नहीं सके और वह तपस्वी बन गये। पैर ऊपर सिर नीचे पंचाग्नि तपते हुये तपस्या करने लगे। उस देश का राजा दृढग्राही और हरि वर्मा नामक ब्राह्मण १८ पुराणो के अर्थ करने में पारगामी था। यह ब्राह्मण अजामेध, अश्वमेध यज्ञ जिसमे बकरे, घोड़े मारे जावें, क्रियाकाण्ड करने वाला था बड़ा ही उन्मत्त और अभिमानी था, सोमवल्ली के पत्तों को ढूंढ रहा था और यज्ञादि कर्म करने में बहुत ही चतुर था। निमित्त कारण पाकर राजा दृढग्राही ने जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और ब्राह्मण तपश्चरण कर आयु के अन्त मे मरकर ज्योतिषी जाति के देवो के विमानो में देव हुआ। और राजा सम्यग्दृष्टी देव सौधर्म स्वर्ग मे बड़ी ऋद्धिधारक देव हुआ।

जिस तपस्या में हिंसा हो साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती है। जो वेद हिंसा के उपदेशों से भरे हो कल्याणकारी नही होते। इस प्रकार उन देवों मे परस्पर वार्ता होकर दोनों देव परीक्षा के लिये पृथ्वी तल पर आये और यमदग्नि की आलोचना व परीक्षा करने के लिये वे दोनो देव चिड़ा व चिड़िया बन गये राजा का जीव देव ज्योतिषी देव जो चिड़िया बना है बड़ी उत्सुकता के साथ उन मुनि की मूछो मे घोंसला बनाकर रहने लगे। कुछ समय बीत जाने के बाद माया से चिड़ा के रूप मे बना हुआ सम्यग्दृष्टि देव चिड़िया के रूप मे बने हुये ज्योतिषी देव से कहने लगा कि हे प्रिये! मैं किसी दूसरे वन में जाता हूँ। अपनी चोच से चावलों के कण लाकर जल्दी ही लौटूंगा तब तक मेरी आज्ञा से तू यहां ही रहना।

चिड़ा की यह बात सुनकर चिड़िया ने कहा कि हे कान्त! तेरे लौटने का मुझे विश्वास नहीं है। क्योंकि जब मनुष्य पर-स्त्रियों के द्वारा रुक जाते हैं तब वे अपनी स्त्रियों का स्मरण तक नही करते।

चिड़िया—यदि आपके हृदय में लौटने की इच्छा ही है तो हे प्रभो ! मुझे सौगन्ध दे जाइये। आप यह निश्चय रखें कि विना सौगन्ध दिये मैं आपको कभी नहीं जाने दूंगी ।

चिड़ा—यदि मैं लौटकर न आऊं तो मुझे हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह इन पांचों पापों को करने वाले अथवा जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना आदि सातों व्यसनों के सेवन करने वालों को और गो हत्या, बाल हत्या, मुनि हत्या, आदि घोर हिंसा करने वाले मनुष्यों को जो पाप लगता है वह मुझे लगे या बहिन बेटी के साथ व्यभिचार करने वालों; रात्रि में अशुद्ध भोजन, वगैर छना जल पीना, दावानल अग्नि में जलना, दूसरों की निन्दा करना इनमें जो पाप लगे वह मुझे लगे; इन सब सौगन्धों में से जो तुझे पसन्द हो वही सौगन्ध मैं तुझे दे सकता हूँ ।

चिड़िया—हे नाथ ! इन सौगन्धों में से मुझे कोई पसन्द नहीं है । इससे कुछ अधिक सौगन्ध देनी चाहिये ।

चिड़ा—हे प्रियतमे ! तेरे मनमें जो सौगन्ध हो उसी को कह डाल । तेरा विश्वास करने के लिये मैं तुझे वही सौगन्ध दे जाऊंगा ।

चिड़िया—अच्छा हे नाथ ! आप मुझे यह सौगन्ध दीजिये कि यदि मैं लौटकर न आऊं तो इस जमदग्नि मुनि की जो होनहार गति है वह मुझे प्राप्त हो ।

चिड़ा—इस सौगन्ध को छोड़कर और जो तेरी इच्छा हो सो कह ।

चिड़िया—और कोई सौगन्ध नहीं लेना चाहती ।

चिड़ा-चिड़िया दोनों की इस बात को सुनकर जमदग्नि क्रोध से संतप्त हो गया । उसके दोनों नेत्र रूपी कमल लाल हो गये । उसने अपने दोनों हाथों से उन चिड़ा व चिड़िया दोनों पक्षियों को बड़ी कठोरता से पकड़ लिया और क्रूरता से वह उन दोनों को मारने के लिये तैयार हो गया । परन्तु वे दोनों पक्षी उसके हाथ से छूटकर देवों के रूप में उसके सामने आ खड़े हुये ।

इस प्रकार से दोनों पक्षियों को देव रूप में खड़े देखकर जमदग्नि ऋषि को बड़ा आश्चर्य हुआ । और उसने उन दोनों देवों से कहा कि तुम दोनों कौन हो और तुमने किस कारण से मेरे तप की निन्दा की हैं ।

जमदग्नि की बात सुनकर वे दोनों देव कहने लगे कि आप क्रोध न करें क्योंकि जिस प्रकार छाछ से दूध नष्ट हो जाता है उसी प्रकार इस क्रोध से आपकी सज्जनता नष्ट हो जायगी । हम दोनों देव हैं, आप जो तपस्या कर रहे हैं अशुद्ध, अज्ञानतापूर्वक की जा रही है । यही समझाने के लिये आये हैं जो दुर्गति का कारण है ।

हे जमदग्नि ! तू कुमार अवस्था से ही ब्रह्मचारी है इसलिये तेरे कोई सन्तान नहीं है । जो मनुष्य सन्तान का घात करने वाला होता है उसे नरकगति के सिवाय क्या हो सकता है ?

सून सदन संतान विन, दिशा बन्धु विन सून ।
विद्या सूनो विन पढ़े, सरव सून धन ऊन ॥

जिसके पुत्र नहीं उसकी कोई गति नहीं । उसे स्वर्ग नहीं मिल सकता । हे मूर्ख ! क्या तूने यह ऋषियों का वाक्य नही सुना जो तू व्यर्थ ही कायक्लेश कर रहा है ? इसलिये सबसे पहिले तू किसी कन्या के साथ विवाह कर, उससे सन्तान उत्पन्न कर, फिर शुद्ध तपश्चरण धारण कर । यह कहकर वे दोनों देव उस यमदग्नि ऋषि से कहने लगे कि स्त्री के ग्रहण करने में कोई दोष नही है ।

जमदग्नि उन देवों की बात को यथार्थ मानकर कामदेव से पीडित हो भ्रष्ट बुद्धि किसी कन्या के साथ विवाह करने के लिये तैयार हो गया ।

आचार्य कहते हैं कि मिथ्यात्व के वशीभूत कुतप, जीव को ससार समुद्र में ही पटकने वाला हैं । विद्वान पुरुषो का मन, वचन, काय की शुद्धिपूर्वक १८ दोषों से रहित जिनेन्द्र भगवान का ध्यान करना चाहिये ।

यह वर्णन सुभौम चरित्र में जमदग्नि को तपश्चरण च्युत होने का पृष्ठ ३४ पर मिला है।

परशुराम और इन्द्रराय राज्यलाभ वर्णन

जमदग्नि देवों का उपकार मानकर तपश्चरण छोडकर अज्ञानतापूर्वक विचारने लगा । मुझे कन्या किस प्रकार प्राप्त होगी । मैं बूढा, कुरूप, तपसी, दरिद्री हूँ मुझे ऐसा कौन राजा है जो गुणों से परिपूर्ण अपनी पुत्री दे देगा । उसे स्मरण आया कि कुजपुर मे पारत नाम राजा मेरा मामा है उसकी सौ कन्या हैं वह मेरा पहिले का सम्बन्धी है मुझे अपनी कन्या दे देगा । कन्या मिलने के लोभ से जमदग्नि भानजा अपने मामा के पास चला गया ।

वहा के राजा पारत ने अपनी बहिन के पुत्र जमदग्नि को आया जान उसे वस्त्राभूषणादि से सुसज्जित सम्मानित किया । उच्चासन पर बिठा हाथ जोड़कर नमस्कार कर पूछा आपका शुभागमन कैसा हुआ ? हे स्वामिन् ! आपके पधारने से मैं और मेरा घर तथा नगर पवित्र हो गया ।

मामा के इस प्रकार विनयपूर्वक वाक्य सुनकर वह निर्लज्ज, देवों द्वारा ठगा हुआ और मोह से अत्यन्त मोहित जमदग्नि कहने लगा हे मामा ! मुझे कन्या दो ।

कानों को अत्यन्त कडुवे, निन्दनीय जमदग्नि के वचनों को सुनकर राजा पारत विचारने लगे । यदि इसे कन्या न दी गई तो श्राप देगा। डर से अत्यन्त दुखित हृदय राजा पारत ने उस सभा में कह दिया कि मेरे सौ कन्यायें हैं । उनमे से जो तुझे चाहेगी उसी उत्तम कन्या को मैं तुझे दे दूगा । उस राजा को डर से इस प्रकार कहना ठीक ही था । क्योंकि भयभीत मनुष्य क्या नही कर डालता अर्थात् सभी कुछ कर डालता है ।

सज्जन लोग भानजे को पूज्य समझते ही हैं। और यदि भानजा मुनि व तपसी हो जाय तो फिर कहना ही क्या है। सुवर्ण सदा अच्छा लगता है, उसमें सुगन्धी और हो जाय तो फिर कहना ही क्या है !

कामान्धो जमदग्नि ऋषि इस प्रकार अपने मामा पारत की आज्ञा लेकर उन कन्याओं के समीप पहुँचा, परन्तु नंगे फिरने वाले उस ऋषि को देख कर सब कन्यायें भयभीत हो गईं।

उस समय जमदग्नि का रूप भूत, अध जले मुर्दे के समान जान पड़ता था। उसका एक दांत मुंह से बाहर निकला हुआ था। तपश्चरण से उसका शरीर जल रहा था। उसका मुंह कौऐ के समान काला, सिर के बाल सुअर के समान कठोर थे, आंखें अन्दर को बैठ गईं थीं। ऐसे उस जमदग्नि को विकराल स्वरूप देखकर वे सकल कन्यायें दशों दिशाओं में भाग गईं।

जमदग्नि ऋषि मन में विचार करते हैं कि मैं दोनों ओर से ही भ्रष्ट हो गया, न कन्या ही मिली और न तपश्चरण ही निर्दोष रहा। इस प्रकार चिंता रूपी पिशाच के जाल में फंस लज्जा के कारण आर्तध्यान से दुखी हृदय ने उसी समय धूल में खेलती हुई एक अकेली कन्या को देखा। उसे देख कर वह प्रसन्न हुआ और उसके समीप पहुंच कर एक केला देकर कहने लगा कि यह तेरे बदले में भेंट है। इसे ले। वह कन्या इशारे को समझ ही नहीं सकती थी वह केवल उस केले को लेना चाहती थी इसलिये उसने अपना हाथ फैला दिया और कहने लगी लाओ लाओ दो। सो ठीक ही है, क्यों कि लोभ तो सब जीवों के ही रहता है।

उस कन्या को प्रसन्न होते देख कर जमदग्नि ने कहा कि यदि तू मुझे वरण करले तो तुझे मैं यह केला दूं। सो ठीक ही है, क्यों कि समय के अनुसार जो कार्य को समझ ले वही पण्डित गिना जाता है।

वह कन्या कुछ जानती तो थी नहीं इसलिये उसने कह दिया कि यह केला मुझे दो, मैं तुम्हीं को अपना बर बनाऊंगी, मुझे और मनुष्यों से क्या प्रयोजन। उसकी यह बात सुनते ही उस भयंकर कामान्धी जमदग्नि ने उसी समय उस कन्या को गोदी में उठा लिया और राजा से जाकर कह दिया कि यह कन्या मुझे बरना चाहती है।

जमदग्नि की यह बात सुनकर राजा पारत का हृदय बहुत दुःखी हुआ। उसके श्राप से डर रहा था इसलिये उसने वह कन्या उसे दे दी। एक वस्तु के जाने पर सब कुशलतापूर्वक बच जाय सो उसे दे देना ही चाहिये। सो ठीक ही है।

जो लोग तपस्या को छोड़कर विषय सुन्दरी को ग्रहण करते हैं वह मूर्ख बहुमूल्य अनेक वर्णों के रत्नों को बेचकर कांच ग्रहण करते हैं।

उस समय जमदग्नि की पद पद पर चारों ओर निन्दा हो रही थी। उन सबको सुनता हुआ वह जमदग्नि, जिस प्रकार राहु चन्द्रमा की एक कला को ले जाता है, उसी प्रकार वह कन्या को लेकर वन में चला गया।

यह कन्या रेणु—'धूल' में खेलती हुई मिली थी इसलिये उसका नाम रेणुका रक्खा। और गन्धव विधि से उसके साथ विवाह कर लिया।

यह मनुष्य चाहे घर छोड़ वन में चला जाय, चाहे दीक्षा धारण करले, किन्तु विशुद्ध सम्यग्ज्ञान के विना किसी को भी मोक्ष की प्राप्ति नही होती।

जमदग्नि के मामा पारत की सर्वांग सुन्दरी राजपुत्रियों ने तिस्कारित किया परन्तु कामसे पीड़ित तपसी ने धन धान्यादि से रहित एक टूटी फूटी झोंपड़ी बनाई। और उसी में वह उस रेणुका के साथ भोगोपभोग सेवन करता हुआ रहने लगा। पूर्ण यौवनावस्था रेणुका की प्रारंभ हो गई, स्तनों के भार से अलस्याई रहने लगी

मूर्ख के पाच लक्षण—

मूर्खस्य पंच चिन्हानि, गर्वो दुर्वचनं तथा।
क्रोधस्य हठवादश्च, परवाक्येष्वनादरः॥

भावार्थः—मूर्ख के पाँच लक्षण हैं—१ गव करना, २—कुवचन बोलना, ३—क्रोध करना, ४—हठ करना, ५—और दूसरों के वचनों का अनादर करना।

अन्धे चार प्रकार :—

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महामद धार।
स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जग में अन्धे चार॥

भावार्थ—जन्म का अन्धा तो किसी का अहित नहीं करता किन्तु शेष तीन अहित करत हैं। १—काम से पीड़ित को इच्छित वस्तु न मिलने पर, २—अष्ट मदी। १—पितृ मद, २ मातृ मद, ३—रूप मद, ४—ज्ञान मद, ५—धन मद, ६—बल मद, ७—तप मद, ८—प्रभुता मद, यह आठ मद हैं।

और तीसरा स्वार्थान्ध यही महान प्राणघातक होते हैं। जब एक ही विनाश का कारण है तो यदि चारों मिल जांय तो क्या कोई शेष रह जाता है? नहीं।

ईर्षा मद अविवेकता निर्दयता धन जान।
बहु अनर्थ इक ही करे, चारों मौत समान॥

जमदग्नि के पास भी चार मद निम्न थे। १—राज्य कुल में जन्म, २—मामा का राजा होना, ३—कुसंगति से तपस्या से विचलित होना। ४—और अविवेकपूर्ण ज्ञान। यह चारों ही अनर्थ कारक योग थे।

जिनका देवमन्दिर के समीप निवास (१) पुजारी देव मन्दिर मे ही निवास करें (२) दीक्षा धारण कर उसे छोड़ देवें (३) जो विधवा आदि ५ प्रकार की स्त्रियों से उत्पन्न हुआ हो (४)

दया रहित कन्दमूलादि अभक्ष आहार विहार और वगैर छना जल पीने वाला (५) जमदग्नि तपस्वी में यह सभी बातें प्रायः प्राप्त थीं।

कामी क्रोधी लालची, इन से भक्ति न होय।
भक्ति करै कोई शूरमा, जाति वरण कुल खोय॥

भावार्थः—संतानोत्पत्ति के लालच के कारण काम और काम की पूर्ति न होने से क्रोध तथा क्रोध में तपस्या की समाप्ति अर्थात् यह पतन के मुख्य कारण हैं।

यह सब प्रमाण दया रहित क्रोधी स्वभाव, और तपस्वी का होना, किंवदन्ति परंपरागत निर्जन वन में झरना तथा कुण्ड-गुफायें-देव मन्दिर यह सभी बाते लेखक ने अनुसंधान कर स्वयं की दृष्टि से देख कर तथा और भी कई चिन्ह—**मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल के अंचल में विदिशा जिले के अंतर्गत सिरोंज के निकट लैटेरी नामक ग्राम व उसके वनखंड में जमदग्नि आश्रम के नाम से प्रसिद्ध स्थान प्रमाणित होता है।**

यमदग्नि ने रेणुका के साथ यौवनमद में केलि करते कुछ समय बीत जाने पर दो पुत्र उत्पन्न किये। वे दोनों ही पुत्र राज्य लक्षणों से सुशोभित थे। उनमे प्रथम पुत्र का नाम परशुराम और दूसरे का इन्द्रराम था। वे दोनों ही भाई बड़े बड़े बलवान, योद्धारूपी पर्वतों को नाश करने के लिये वज्र के समान प्रतापी थे। यौवनावस्था को प्राप्त होते ही समयानुकूल गुण रूपी सम्पत्तियों से वीरत्व की कलाओं से चन्द्रमा के समान शोभायमान हैं। ७२ कलाओं के ज्ञाता शस्त्र एवं शास्त्र विद्या में निपुण अपने प्रताप से संसार को वश में करने वाले थे। वे दोनों भाई सूर्य चन्द्रमा के समान देदीप्यमान सद्वृत्त अर्थात् गोल लम्बी किरणें धारण करते हुए सदृश वे दोनों भाई लम्बी भुजाओं को धारण करते थे। यह दोनों बालक ३२ शुभ लक्षणो से सुशोभित थे। और २१ वार राजवंशों के नाश करने वाले थे। सब लोग उन्हें मान्य समझते थे। उनकी आज्ञा का कोई उलंघन नहीं कर सकता था।

जमदग्नि और रेणुका दोनों ही स्त्री पुरुष दोनों पुत्रों के साथ काल यापन कर रहे थे कि रेणुका के शुभोदय से बड़े भाई तपोनिधि अरिंजय नाम के मुनिराज अपनी बहिन रेणुका को देखने पधारे। अकस्मात आये हुये मुनि रूप में देखकर प्रसन्न हुई। और प्रसन्नता पूर्वक नेत्र बिन्दुओं से चरण प्रक्षालन कर समक्ष में बैठ गई और अपनी घर में खाने, पीने, रहने, वस्त्राभूषणादि के अभाव में दुखित हूँ काल यापन कर रही हूँ आपके सत्कार में असमर्थ हूँ।

मेरे वंश परम्परा में बड़ी बहिनें राजाओं की रानियाँ हैं परन्तु जिस प्रकार विष का परित्याग किया जाता है उसी प्रकार से पूर्व जन्मान्तर के अशुभ कर्मोदय से उद्योग रहित बूढ़े दरिद्र भिक्षुक से संस्कार हुआ है। आपके द्वारा विवाह के उपलक्ष में कुछ भी द्रव्य नहीं दिया गया इसके लिये अब कुछ इच्छानुसार दान दीजिये जिससे कि मेरा दरिद्ररूपी रोग नष्ट हो जाय।

यदि मेरे ऊपर पिता के समान ही भाई की कृपा न हो तो भी ये दो भानजे तो पूज्य ही हैं। कम से कम इनको अनुकूल दृष्टि से तो देखिये।

दीनता से भरी हुई बहिन की बात सुनकर अरिंजय नामक मुनि को हृदय में दया उत्पन्न हुई। बहिन को धर्म धारण कराने के लिये उससे कहने लगे। हे भद्रे ! हे कल्याण करने वाली ! इस संसार मे सच्चे देव, गुरु, शास्त्र तीनों ही रत्नत्रय कहलाते हैं तीनों का विश्वास करना व्यवहार सम्यग्दर्शन है। इसके प्राप्त होने से जीव दुर्गति मे नहीं जाता, दरिद्री नहीं होता, स्त्री पर्याय धारण नही करता, नपुन्सक नही होता, भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी इन तीनों अधम देवों मे उत्पन्न नहीं होता। तिर्यंचो में जन्म नहीं लेता, कुरूपी रोगी नहीं होता और संसार में जितने भी दुःख के कारण हैं उनमे किसी मे भी उत्पन्न नहीं होता। मद्य, मास, मधु, बड़, पीपल, गूलर, अंजीर, पाकर इन पाच उदंबर फलो का त्याग करना गृहस्थो के आठ मूलगुण कहलाते हैं। हे भद्रे ! तू इन आठ मूल गुणों के साथ साथ सम्यग्दर्शन को धारण कर।

जुआ खेलना, मास खाना, शराब पीना, शिकार खेलना, चोरी करना, वेश्या सेवन करना, और परस्त्री सेवन करना यह सप्त व्यसन कहलाते हैं। हे बहिन ! इनका भी तुझे त्याग कर देना चाहिये।

असत्य भाषण करना, चोरी करना, बाह्य और अभ्यंतर दोनों प्रकार का परिग्रह लोभ के वश एकत्रित करना और शीलव्रत को नही पालना यह सब पाप कहलाते हैं। रात्रिभोजन; बिना छना हुआ पानी, कन्दमूल भक्षण करना, धर्म के स्वरूप को न जानना पापों का संचय करना है। यह सब त्याग करने योग्य है।

हे बहिन ! इस समय तुझे काललब्धि प्राप्त हुई है। इसलिये तू स्वर्ग के सुख देने वाले निर्दोष ऐसे इन श्रावकों के आचरणो को ग्रहण कर। क्योकि इस संसार में काललब्धि की प्राप्ति होना ही अत्यन्त कठिन है।

रेणुका ने उन मुनिराज के कहे अनुसार सब व्रत धारण किये। तथा उन व्रतों के धारण करने से उन मुनिराज के हृदय मे बहुत ही सन्तोष हुआ। सो ठीक ही है, क्योंकि इस संसार में अपने वचनो की सिद्धि होने पर किसको सन्तोष नही होता है ?

जिनके हृदय में उन व्रतों की रक्षा करने का वात्सल्य उत्पन्न हुआ है ऐसे उन मुनिराज ने अपनी बहिन के लिये इच्छानुसार फल देने वाली एक कामधेनु नाम की विद्या दी। विद्या से बनी हुई इस कामधेनु को मारने के लिये यमराज भी समर्थ नही हैं। औरो की तो बात क्या ? इस कामधेनु का प्रभाव इससे बढ़कर और क्या हो सकता है। अब उस रेणुका के घर इच्छानुसार मन की सब अभिलाषायें पूर्ण होती थीं। सो ठीक ही है। क्योंकि व्रतों के पालन करने से स्वर्ग की सम्पदायें प्राप्त होती हैं फिर भला कामधेनु का मिल जाना कौन आश्चर्य की बात है !

किसी भिखारी के हाथ में दिया हुआ रत्न किस प्रकार ठहर सकेगा। अथवा जिसको कोई बुरा भयानक रोग हो रहा है। ऐसे रोगी के पेट में पथ्य किस प्रकार ठहर सकेगा ! यह विचार

भी मुनिराज के हृदय में उत्पन्न हुआ। इन्हीं विचारों के अनुसार उन मुनिराज ने उस कामधेनु को सुरक्षित रखने की इच्छा से उस बहिन के लिये मन्त्र से सिद्ध किया हुआ एक फरसा भी दिया। सो ठीक ही है क्योंकि आपत्ति किस समय आती है यह किसी को भी मालूम नहीं होता ॥७९॥ होनहार को कोई टाल नहीं सकता। इस प्रकार से उपदेश कर अरिंजय नामा मुनिराज अपने बहिन तथा बहनोई को आशीर्वाद के वचन कहकर प्रसन्न किया और फिर वे ईर्षा–पथ शुद्धि के द्वारा अपने यथायोग्य स्थान को चले गये।

उन मुनिराज ने जो अपनी बहिन के लिए कामधेनु और फरसा दिया इसमें विद्वान् पुरुषों को, विचारशील पुरुषों को कुछ अधिक विचार नहीं करना चाहिये। क्योंकि यदि किसी सर्प को कोई निर्दयी मनुष्य मारता हो तो क्या दयालु पुरुषों को उसकी रक्षा नहीं करनी चाहिये? अवश्य करनी चाहिये। जमदग्नि और रेणुका को जो वह कामधेनु मिल गई थी और उससे जो शरीर को पुष्ट करने वाला, रसीले और उत्तम पदार्थ प्राप्त होते थे उससे वे दोनों ही अपने पुत्रों का पालन पोषण रक्षण करने लगे।

इसी बीच में काल के द्वारा प्रेरणा किया हुआ अयोध्या नगरी का राजा सहस्रबाहु अपने पुत्र कृतवीर के साथ उसी वन में आया। आये हुये सम्बन्धि अतिथियों को देखकर जमदग्नि के हृदय में उनके ठहराने और आदरपूर्वक भोजन कराने की इच्छा प्रकट हुई। यही विचारकर उसने अपनी स्त्री से कहा कि तेरे पुण्य कर्म के उदय से तेरे घर बड़े पाहुने आये हैं। इसलिये तू उनके लिये भोजन की सामग्री तैयार कर ॥८८॥

जमदग्नि की यह बात सुनकर रेणुका ने बाहर निकलकर कहा कि हे प्रिये! आप तो बड़े विद्वान् हैं फिर भला आपने यह कैसी बात कही! हम तो भिक्षुक हैं। राजा महाराजाओं को आदर सत्कार कर भोजन देना हमारे लिये उचित नहीं है। घर में रहने वाले गृहस्थ और विना घर के वन में रहने वाले मुनि विशेष दाता और विशेष पात्र गिने जाते हैं। अर्थात् गृहस्थ सदा दाता रहता है और मुनि सदा पात्र रहते हैं। न तो मुनि कभी दाता बन सकता है और न गृहस्थ ही कभी पात्र बन सकता है। यदि इसके विपरीत विधि की जायगी तो उसका फल भी विपरीत ही होगा। यदि अनुक्रम से अनुकूलतापूर्वक विधि की जायगी तो उससे होने वाला कार्य व फल भी अनुकूल ही होगा।

सहस्रबाहु का भोजन

आप वर्णाश्रम के अनुसार गुरु हैं। आपको योग्य अन्न पानादि भी गृहस्थों के ग्रहण करने के योग्य नहीं हैं। इसलिये आप इस आग्रह को छोड़ दीजिये। शास्त्रों में लिखा है कि देव द्रव्य और गुरु द्रव्य से जो सुख सेवन किया जाता है उस धन से कुल का नाश होता है और मरने पर भी नरक यातनायें भोगता है। यह छह मतों के शास्त्रों का कथन है। इस प्रकार रेणुका ने अमृत के समान हित करने वाले और पथ्य वचन कहे परन्तु जमदग्नि ने एक न मानी और राजा का निमन्त्रण करने के लिये वह चला ही गया सो ठीक ही है। क्योंकि जिस पुरुष को कोई रोग होन हार होता है तब उसकी रुचि मुख का स्वाद और प्रकृति भिन्न प्रकार की हो ही जाती है।

अनेक राजा महाराजा जिसे नमस्कार करते हैं, ऐसा वह जमदग्नि ऋषि राजा सहस्रबाहु के समीप पहुचा, उसकी प्रदक्षिणा दी और उसके सामने खड़े होकर याचना की कि आज आप सब लोग मेरे घर भोजन करने के लिये पधारें।

जमदग्नि की यह बात सुनकर राजा सहस्रबाहु हंसा और हंसकर कहने लगा कि क्या आप भिक्षा भोजन ले आये हैं ? जो हमे भोजन करावेंगे।

इसके उत्तर में जमदग्नि ने कहा आपके पधारने के प्रभाव से सब भला ही होगा। इसलिये आप सबके साथ आकर भोजन करें।

जमदग्नि ने इस प्रकार की विनय, नम्रता, और आदरपूर्वक राजा को निमन्त्रण दिया और अपने घर लाकर आसनों पर पंक्ति रूपसे बिठाकर सबको भोजन कराया ॥९९॥

जमदग्नि ने राजा सहस्रबाहु को भोजन कराने के लिये अनेक प्रकार के पकवान तैयार कराये थे। दूध की खीर, घी आदि के तले हुए अनेक प्रकार के पदार्थ, स्वादिष्ट साग, गरम गरम पुए, लाडू, सुगन्धित चावल, तथा इक्षुरस के पदार्थों का सम्मानपूर्वक भोजन कराया। भोजन करते हुए राजा के हृदय में विचार और आश्चर्य उत्पन्न हुआ कि राजा महाराजाओं के घर भी भोजन किया, ऐसी सामग्री नही मिलती है, फिर भला तपोवन में रहने वाले तपस्वियों के घर में ऐसी सामग्री कहाँ से आई ? इसमे कोई कारण अवश्य है इसे ढूंढ़ना चाहिये। मालूम होता है यह सामग्री किसी देव की प्रसन्नता से प्राप्त हुई हैं। भोजन करने के बाद सहस्रबाहु के पुत्र कृतवीर ने एकांत में बैठकर अपनी माता की छोटी बहिन मौसी रेणुका से अपने मनकी सब बात पूछी।

जमदग्नि की मृत्यु कृतवीर द्वारा और कामधेनु हरण

दया परिणामी रेणुका उस कृतवीर की दुष्टता को नहीं समझ सकी इसलिये उसने कामधेनु विद्या प्राप्त होने आदि के सब समाचार कह सुनाये। सरल हृदयी मानव धूर्त मानवों के भेदभाव को नही समझ सकते। उस रेणुका ने आरम्भ से अन्त तक विद्या प्राप्त होने के सब समाचार कह सुनाये और फिर कहा कि मेरे घर में जो यह सब सामग्री दिखाई देती है वह सब कामधेनु का प्रभाव है। यह सुनकर अत्यन्त कृतघ्न वह राजकुमार कृतवीर उस कामधेनु को लेने के लिये तैयार हुआ तथा जिसकी मृत्यु समीप आ रही है। राजा सहस्रबाहु के समान चतुर मनुष्य की बुद्धि भी विपरीत हो जाती है। कहा है—विनाशकाले विपरीतबुद्धिः—देखो ब्राह्मण की कामधेनु गाय को हरण करने का उद्यम करने वाले राजा सहस्रबाहु का बहुत बुरा ही पराभव हुआ था।

तदनन्तर वह राजकुमार कृतवीर जमदग्नि से कहने लगा कि आप तो बहुत बुद्धिमान हैं आप जानते हैं कि भोजन करने के बाद उत्तम दक्षिणा भी दी जाती है। यह न्याय सब जगह फैला हुआ है। यदि यह अयोग्य है तो मैं आपकी स्त्री की बहिन का लड़का हूँ। इसलिये मैं आपसे इस गाय को मांगता हूं। कृतवीर की यह बात सुनकर रेणुका ने कहा कि ये तपसी हैं और वर्णाश्रम की अपेक्षा से गुरु हैं इसलिए याचना करना ठीक नही है क्योंकि गुरु और तपसी से याचना करना पाप का कारण है। किन्तु उस दुष्टहृदय कृतवीर ने रेणुका के वचनों को नही माना और क्रोध से कहने लगा—

हे रेणुका ! संसार में जो बहुमूल्य धन होता है वह राजाओं के ही योग्य होता है; कंदमूल खाने वाले तपस्वियों को ऐसी गाय से प्राप्त सामग्रियों का उपयोग करना कभी योग्य नही है। यदि कोई गधा दाखों को खाता हो तो ऐसा कौन पुरुष है जो उसे न रोके !

इस प्रकार कहकर और सामने खड़े खड़े रुदन करते हुए जमदग्नि को बड़ी शीघ्रता से मारकर राजकुमार कृतवीर जबर्दस्ती उस गाय को लेकर अपने घर को चला गया।

अथानन्तर:—जमदग्नि के दोनों पुत्र परशुराम और इन्द्रराम दाभ दूब आदि सामग्री लेकर वन से घर को आये। आकर उन्होने देखा कि पिता के प्राण निकल गये हैं और वे किसी के द्वारा मारे गये है।

उन्होंने अपनी माता को देखा। माता शोक से दुखी हो रही थी, अपना पेट पीट रही थी और हा देव ! हा देव ! कहकर रो रही थी। इस आश्चर्य करने वाली घटना को देखकर दोनों भाइयो ने पूछा कि क्या बात है। शोकातुर उस रेणुका ने राजा सहस्रबाहु के आने के समाचार और पति के मार देने के, उनको भोजन कराने के, कामधेनु के हरण करने के समाचार सब कह सुनाये।

उनको सुनते ही स्वाभाविक पराक्रम को धारण करने वाले उन दोनों भाइयों के हृदय शोक रूपी कीले से फट गये। वे दोनों ही शोक से व्याकुल हो गये और जलते हुए क्रोध से लाल हो गये। १२१। ५०

।। श्री ।। दिनांक १४-८-६८ राजभवन

पुरातत्व-विनाश का उत्तरदायी कौन है ?

आदरणीय श्रीमान् राज्यपाल महोदय,

मध्यप्रदेश शासन-भोपाल ।

विषय—मध्यप्रदेशान्तर्गत सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, पुरातत्वीय, राष्ट्रीय सम्पत्ति के विनाश का उत्तरदायित्व मध्यप्रदेशीय एवं केन्द्रीय पुरातत्व विभाग के अधिकारी एवं केयर टेकर पर है । क्यो ?

श्रीमान् जी,

उपरोक्त विषय में निवेदन यह है कि शासन ने जिन्हे संरक्षण के लिये अधिकार दिये हैं, क्षेत्र कार्य करने के लिये दिया है वह हैं संचालक उप संचालक, व प्रधान लिपिक, केअर टेकर, आदि क्यो ?

उत्तर—इन्हें जिन स्थानों को सुपुर्द किया, अधिकार दिये उन स्थानों की इन महाशयों ने अपनी **स्वार्थलिप्सा के कारण कोई रजिस्टर में ऐन्ट्री नहीं की है,** इस लिये कि **विदेशियों को मूर्तियाँ ऊँचे दामों में बेचकर स्वार्थसिद्धि** कर सकें। यह अधम कृत्य एक बड़े पैमाने पर हो रहा है। इनके साक्ष्य श्रीमान् के समक्ष मय फायलो के अवलोकनार्थ साथ लाया हूँ।

इस दुष्कृत्य का पता कैसे लगा ?

१-प्रार्थी विदिशा का मूल निवासी है और कई कलाओं से रुचि रखने वाला आर्टिस्ट धार्मिक व्यक्ति है। नाम राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक के नाम से प्रख्यात हुआ है। प्रार्थी ने एक संग्रहालय निर्माण के लिये विदिशा नगर, तथा राजधानी भोपाल और रायसेन में संग्रहालय निर्माण हो शासन के पुरातत्व विभाग प्रान्तीय और केन्द्रीय स्तर पर तथा मंत्रालयों में पत्र प्रेषित किये हैं। जिनके उत्तर जो प्राप्त हुए हैं कुछ सलग्न हैं।

प्रार्थी को विभागीय अधिकारी श्री हरिहर विट्ठल त्रिवेदी उप संचालक पुरातत्व विभाग म० प्र० शासन भोपाल ने जो कि वर्तमान मे रिटायर हो चुके हैं मार्गदर्शक के पद ५०-३-७० के ग्रेड में नियुक्त किया था।

और २१ मास तक आदेश क्र० ८५९ दि० १९-७-५७ से दि० ३१ मार्च सन् १९५९ तक शासकीय स्तर पर रहकर कार्य किया है। विदिशा के अन्दर कोई पुरातत्वीय संग्रहालय नही था। विदिशा जिले में अनेकों स्थान ऐतिहासिक पुरातत्व के भण्डार भरे पड़े हैं, जिनकी सूची प्रार्थी ने उप संचालक को प्रस्तुत की है और मौके भी दिखाये हैं। नियुक्ति के समय ४० मूर्तिया और १७५ ताम्र एवं रजत मुद्रायें जो कि शासन के लिये प्रार्थी के द्वारा दी गई हैं, उन्हे विभाग के अधिकारी श्री उप संचालक महोदय ने गदरबूद किया, हड़प जाने और शासन के संग्रहालय मे न रखने पर विनाश-कार्य को न देख सकने पर वैमनस्य बढा और शासकीय पत्र मासिक एवं साप्ताहिक मे आवक एवं जावक करके इनकी सेवा में प्रस्तुत किये और वरिष्ठ अधिकारियो तक पहुंवाये जिनका समाचार पत्रों में निरन्तर प्रकाशन भी होता रहा है। अवलोकनीय है, रिकार्ड साक्षी है।

२-नगरपालिका द्वारा विदिशा के पुरातत्व का विनाश हो रहा था। प्रार्थी ने आवेदनपत्र प्रस्तुत किये हैं और यहां तक कि यह क्षेत्र प्रार्थी के ही सतत् प्रयत्नो से मय नक्शे के ग्वालियर गजट दि० २० दिसम्बर सन् ४७, भाग १ पृ० १५६५ पर प्रकाशित है, प्रेषित कर विनती की थी किन्तु वैबानिक कोई कार्यवाही संरक्षण सम्बन्धी नही की। किन्तु जिलाध्यक्ष महोदय ने एक आदेश मेरे सतत् प्रयत्न करने पर आदेश क्र० १५८१४ दि० १८-९-५७ को प्रस्तुत किया है। इस सम्बन्ध मे प्रार्थी ने सतत् प्रयत्न किये है। इसी का प्रतिफल है कि विदिशा में संग्रहालय बन सका। जब बढ़ता हुआ प्रान्तोय सूर्य का उदय उपसंचालक न देख सके तो प्रार्थी को जाल मे फंसाने के लिये ५००) रु० मूर्तिया बेचकर मांगे गए। प्रधान लिपिक जगमोहन सारस्वत पुरा० विभाग द्वारा इसकी शिकायत भ्रष्टाचार विभाग मे प्रार्थी ने आवेदन पत्र ३ फर० सन् ५७ को शासकीय सेवा में रहते हुये ही की है, जिसका उत्तर पत्र क्र० १०२६।२०६।५७, २ भोपाल दि० ६ फर० ५७ को प्राप्ति का आया और न्याय में पक्षपात इसलिए किया कि जिसकी शिकायत उसी के पास भेजी गई और दबा दी गई, क्योकि स्वार्थ पर धक्का लगता था।

इस सम्बन्ध में विनाशकारियो के षड़यन्त्र बढे और प्रार्थी ने सचालक महोदय को पत्र लिखा जिस पर कोई ध्यान नही दिया और प्रार्थी नया रंगरूट होने, जालफरेव न जानने और किसी का सहयोग न मिलने से इन लोगों ने एक वातावरण खड़ा किया और दि० २७ मार्च सन् ५९ को आदेश क्र० ६८२ द्वारा सेवामुक्त कर दिया, किन्तु विना नोटिस दिये और विना अपराध को लगाकर। सम्बन्धित प्रकरण में प्रार्थी ने धारा ८० का नोटिस सी. पी. सी. का दिया जिसका उत्तर आज तक प्राप्त नही हुआ और बाद में प्रार्थी ने रजि० क्र० ६२९ दि० १२-१-५९ श्री चीफ सेक्रेट्री महा० म० प्र० शासन भोपाल। क्र० ६३० दि० १२-१-५९ मुख्य मन्त्री महोदय म० प्र० शासन भोपाल। क्र० ६३२ दि० १२-१-५९ संचालक पुरातत्व विभाग हरिहर विट्ठल त्रिवेदी भोपाल को और क्र० ६३१ दि० १२-१-५९ को इनके षड़यन्त्र विनाशकारियो के सम्बन्ध में तथा शासकीय सम्पत्ति हड़पने के सम्बन्ध में दिये हैं। जिनका परिणाम यह हुआ कि प्रार्थी ने विदिशा मे जो संग्रह विना शासन के द्रव्य खर्च किये इतना बड़ा संग्रहालय बनाकर दिया यह है प्रार्थी की लगन, उत्साह कार्य करने की क्षमता। और एक ओर देखिये कि:—

३—दिनांक २३ जून सन् ६८ को विदिशा जिले के सतपाड़ा थाने से कागपुर ग्राम के संरक्षित

क्षेत्र से ४ मूर्तियां चोरी गईं हैं जिन्हे व्ही० के० बाजपेई और पुरातत्व विभाग के एक गिरोह ने जो कि धर्म की आड़ मे चोरी मूर्तियों की करता आ रहा है वह है हिन्दुस्तान चेरिटी ट्रस्ट बिड़ला मन्दिर भोपाल बिड़ला ब्रदर्स प्राइव्हेट लिमिटेड भोपाल का चीफ रेजीडेन्ट आफीसर आर. एन. बाजपेई शिमला रोड सिव्हिल लाइन भोपाल की जीप द्वारा यह चोरी की गई है । तथा इस व्यक्ति को शासन ने एक लायसस श्री उप सचिव श्री व्ही० बी० विल्लोरे शिक्षा विभाग म० प्र० शासन भोपाल के नम्बरी २२४४ । २०४३ । १०.१० । सी० सी० दि० ७ जुलाई सन् ६० को बिड़ला मंदिर भोपाल मे संग्रहालय निर्माण के लिये मूर्तियां भोपाल क्षेत्र के आस पास की अरक्षित स्थानों की सग्रह करने की अनुमति दी थी किन्तु इस व्यक्ति ने नौकरों के द्वारा मूर्तियाँ उठवाईं और विदेशियों को बेची। इसी कारण से आज तक बिड़ला मन्दिर पर मूर्तियों का संग्रह नहीं हो सका। कागपुर की मूर्तिया मगवाई हैं ।

इसी काल में एक कार द्वारा देवराजपुर से भी २ जैन मूर्तिकां चोरी से उठवाई गईं हैं।

इस प्रकार से पुरातत्व विभाग के अधिकारी और पूरा स्टाफ मूर्तियों के चोर और विनाशकारी एवं अपराधी वेतनभोगी हैं इन्हे सांस्कृतिक निधियों की सुरक्षा, संग्रह, मध्य प्रदेश शासन के गौरव और धार्मिकता से कोई संबंध नही है ।

इसी प्रकार से बड़ोह के मन्दिर केन्द्रीय पुरातत्व विभाग ने क्यों लिये कि इनका कोई रजिस्टर जिनमें मूर्तियां लिखी हों नहीं रखा है और इन लोगों की यही चाल है कि आज तक यह इस प्रकार से चोरियाँ मूर्तियों की करते आये हैं और करते जा रहे हैं ।

इस सम्बन्ध मे प्रार्थी ने निरन्तर शासन का ध्यान आकर्षित किया और आज भी करता ही जा रहा है।

भोपाल की राजधानी में कोई पुरातत्वीय सग्रहालय नही हैं, ऐसा क्यों ? प्रार्थी की योजना को यदि श्रीमान् जी योगदान देवें तो प्रार्थी १ ही वर्ष मे एक विशाल संग्रहालय बनाकर देने की क्षमता और पुरुषार्थ रखता है, किन्तु उन स्थानो की सूची अब इसलिए देने मे असमर्थ हैं कि यह पुरातत्व विभाग और कमचारी विश्वास के पात्र नही हैं ।

यदि श्रीमान् अपने राज्य शासन काल को चिरजीवी बनाना चाहते हो, अपनी भारतीय सस्कृति पर गर्व और गुमान हो, तो प्रार्थी अरबों रुपयो का अमूल्य एव अप्राप्त पुरातत्वीय वस्तु-कला सग्रह लोकोपकार के लिये अपनी समिति के माध्यम से निर्माण कर सकता है । प्रार्थी ने एक विदिशा का वैभव नाम पुस्तक लिखी है और प्रार्थी ने वर्षों से मूर्तियाँ चोरी जा रहीं हैं इसके दीवालो पर बोर्ड लिखे हैं जो साक्ष्य के लिये बिड़ला मन्दिर की कटन मे लिखे जनता अव-लोकन करती है और प्रार्थी के नाम से शासक वर्ग भी सुपरिचित हैं । क्या सेवा ली जा सकती

है ? तो प्रार्थी अपने पुरुषार्थ, लगन, उत्साह, क्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण श्रीमान् जी के समक्ष रख कर अपनी विद्या, बुद्धि, कला को संसार में चिरजीवी बनाने का जिज्ञासु एक विद्याविलासी छात्र है ।

४—प्रार्थी का एक निजी पुरातत्वीय संग्रहालय भी विदिशा में है जिसे इस संग्रहालय में विलीन कर सकता है ।

५—प्रार्थी के पास २-४-५ हजार ताम्र एवं रजत मुद्राओं और विभिन्न भाषाओं के शिलालेखों आदि के अवशेष भी हैं । जिनका अवलोकन भू० पू० राजपाल महोदय ने भी किया और उनके रिमार्क दर्शक पुस्तिका मे हैं ।

६—प्रार्थी की विशेषता यह है कि प्रार्थी प्रत्येक मूर्तिका विश्लेषण मानव जीवन से तुलनात्मक रूप से करता है जिसे कोई पी० एच० डी० लंदन रिटर्न नही कर सकता है। यदि है तो परीक्षा के लिये समक्ष में खड़ा करके परीक्षा लेकर योग्यता का लाभ शासन जनता को क्यों नहीं लिया जावे ? ऐसी प्रार्थी की प्रार्थना है ।

अन्त में प्रार्थी का निवेदन है कि बडोह की मूर्तियों के विनाश के लिये उन अपराधियों को कड़ी सजा दिलाई जावे और प्रत्येक मूर्तिका फोटो लिया जावे रजिस्टर मे ऐन्ट्री कराई जावे, एक रजिस्टर केअर टेकर को दिया जावे, ताकि जनता समय समय पर देख सके। एक दर्शक पुस्तिका रखी जावे । एक कम्प्लेन बुक रखी जावे तथा इनका रिकार्ड एक मार्गदर्शिका के तौर पर प्रकाशित कराया जावे और जनता को सुविधापूर्वक रखने के लिये प्राप्त हो सके । १४-८-६८

विनीत प्रार्थी—
राजमल मड़वैया पुरातत्व अन्वेषक
विदिशा

卐

जिला विदिशा (म० प्र०) बड़ोह के दि० जैन बन मन्दिर की खड्गासन चौबीसी का विनाश !

[जैनमित्र मे प्रकाशित लेख दि० १९ दिसम्बर १९६८, वर्ष ७० अंक ८ से]

क्या भारत दि० जैन समाज, मालवा प्रांतिक सभा और कमेटियाँ इस ओर ध्यान देंगी ?

बड़ोह और पठारी—

यह दोनों ही ग्राम एक दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध पूर्व से रखते आये हैं । और आज भी बदस्तूर हैं । यह क्षेत्र मध्य रेलवे कुलहार और बामौरा से लगभग १२ मील के फासले पर है और बसें आती जाती हैं ।

पूर्व मे यह बडा भारी नगर रहा है। जैनियों की भी बड़ी भारी जनसंख्या को बतलाता है। वर्तमान के ऐतिहासिक पुरातत्वीय खण्डहर, भग्नावशेष साक्षी दे रहे हैं। नवाबी जुलमी शासनकी कृपा से जैनियो पर सकट आया और समाज के न रहने पर बीरान हो गया। वर्तमान में २० घर जैन के हैं। पठारी पूर्व मे एक स्टेट रही है। विध्वंस कार्य बडोह के मन्दिरों का हुआ है।

बडोह की आबादी वर्तमान में ५०० जनसंख्या की होगी। यह पूर्व में ग्वालियर राज्य का सीमा क्षेत्र रहा है। बडोह और पठारी के बीच में एक तालाब हैं उत्तर की ओर, दक्षिण की ओर भी एक तालाब है। उसके बीच मे एक गड़रमल मन्दिर है जिसकी शिखर मे कायोत्सर्ग लगभग ४ फीट की प्रतिमा जैनत्व को बता रही हैं। इसकी मूर्तियो का विध्वस और चोरी भयंकर रूप में हुई है। तालाब की पार के ऊपर जिन्हें हिन्दू मन्दिर कहते हैं वह है बाराह मन्दिर जो कि चारो पुरुषार्थों का प्रतीक है। विष्णु मन्दिर एक शक्ति का प्रतीक है। दशावतार मन्दिर अवतारो पुरुष का प्रतीक है। देखिये—

भगवत्‌जिनसेनाचार्य ने सहस्रनाम स्तोत्र मे कहा है—'दशावतार निर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर' और हनुमान जी का मन्दिर शुभोपयोग का प्रतीक है। कोली का मन्दिर ज्ञानपिपासुओं के लिये निर्माण कराये गये थे। तालाब के किनारे पर एक सभा मण्डप है जो कि स्वाध्याय भवन है। जिसे १६ खभी कहते हैं।

इसी सोलह खभी सभा मण्डप के निकट मे बन मन्दिर जिसे बनका देवालय कहते हैं, विद्यमान है, इसमे २४ तीर्थंकरो की, २४ कोठरियो मे कायोत्सर्ग सुन्दर प्रतिमायें हैं। इनमें से कुछ मूर्तियो को आतताइयोने स्वार्थवश व्यापार के लिये सिर काटे हैं। एक पत्थर पर सं० ११३० खुदा हुआ मिला है, बाहर का दरवाजा छोटा है और अन्दर बडा भारी चौक और सभा मण्डप हैं। मूल नायक की प्रतिमा का अभिषेक सीढी लगाकर ही होता था। प्रतिमा १५ फीटके लगभग होगी इस मूर्ति की नाक भी काट ली गई है। इस मन्दिर को पुरातत्ववेत्ता ८ या ९ वीं शताब्दी का बतलाते हैं। यदि समाज इस ओर ध्यान नही देतो या तीर्थक्षेत्र कमेटियां पुजारी आदि का प्रबन्ध नही करती तो यह करोडो रुपयों की इमारत का सर्वनाश हो जावेगा और हो ही गया है। जो कुछ भी बचा है उसकी रक्षा मे समिति को हाथ बटाना चाहिये।

शिल्पकलामे खजुराहो की तरह किन्तु बीतरागी भावों के ही कारण इसमे धार्मिकता प्रधान है। विलासिता की अपेक्षता वीतरागता की तुलना में श्रेष्ठ होने से इस मन्दिर को बडा देहरा के नाम से ख्याति प्राप्त हुई है। ऐसे अनुपम पूज्य और प्रात स्मरणीय प्रतिमाओं की तोड़फोड़ की अभी हाल ही मे जो भयकर घटना आतताइयो मूर्तिभंजक एवं धर्म और समाज तथा पुरातत्व कि दुश्मनो द्वारा घटी हैं उस सम्बन्ध मे जो अपराधी (विनाशकर्ता) छैनी हथौड़े और तोडी गई मूर्तियो सहित पकड़े गये हैं और जिनकी जमानतें न्यायालय बासौदा ने ली हैं। वह निम्नांकित हैं।

नं० (१) भजना काछी केअर टेकर, जो कि पुरातत्व विभाग का शासकीय कर्मचारी है और बड़ोह के इसी मन्दिर की रक्षा के लिये है। यह कभी भी शासकीय सेवा मे नही रहा। सम्भवतः इस केअर टेकर का स्वार्थवश सम्बन्ध अन्य अपरमार्थियों से है। नं० (२) गोपाल व नं०

(३) कृष्ण जाति का सुनार है। ये दिल्ली के व्यापारी हैं। राजस्थान के रहने वाले है। मूर्ति के विध्वंस और चोरी सम्बन्ध में गोलाकोट के मन्दिरों में मूर्तियां तोड़ते वह लोग खनियाधाना वालों के द्वारा पकड़े गये थे और इन्हें पिछोर न्यायालय से सजा भी हुई थी। इन्होने गुरीलागिरि व बूढ़ी चन्देरी के मन्दिरों की मूर्तियों की चोरी के सम्बन्ध में मुंगावली न्यायालय से सजा पाई है। इन लोगों से सम्बन्ध होने के कारण ४ दिन तक इस दुर्घटना की रिपोर्ट पुलिस में नहीं की। जब जनता ने मजबूर किया तब कहीं रिपोर्ट की गई है।

इस केअर टेकर के पास कोई दर्शक पुस्तिका, कम्पलेन्ट बुक, चार्जलिस्ट अथवा अन्य कोई आवश्यक सामग्री नही है।

निश्चयात्मक रूपसे इसमे बडा भारी गेग कार्य इसलिये कर रहा है कि प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक निधि को समाप्त कर ईसाहयत लाना चाहते हैं यह प्रतिक्रिया चल रही है। इस कार्य मे बतरा कं० व अन्य कम्पनियाँ गुप्तरूपसे कार्य रही हैं।

नं० (४) पठारीका रियाजखाँ (५) उस्मानखाँ (६) नरेन्द्रकुमार पाठक (शासकीय अध्यापक है) (७) ओमप्रकाश गौड़ (यह वर्क्सनेटर है) (८) लक्ष्मणसिंह बागड़ी (पत्थर फोड़ने का कार्य करने वाला एक कारीगर है) (९) बाबूलाल जोगी (कारीगरी और गुप्तचर है) ये मूर्तियाँ तोड़ने, चोरी करने अनधिकृत तौर पर मन्दिरों में चोरी करने के लिये जाने के अपराध में मय माल के व हथियारों के गिरफ्तार किये गये हैं। इन्हे जमानत पर रिहा किया गया है।

नं० (१०) खलीलखां (११) गनीखा व नं० १ गोपाल व नं० २ कृष्ण यह लोग फरार हैं। इन लोगो ने जैन और हिन्दू धर्म को व सास्कृतिक निधि को बडी भारी हानि पहुंचाई हैं।

संभवतः शासन ने अपराधी भजना को सस्पेन्ड इस लिये न किया हो कि उससे और अप्रेक्षित जानकारी मिल सकती हो।

नं० (१२) वह गाडीवाला है जो कि मूर्तियां व अन्य सामग्री जो चोरी गई है गाड़ी में रखकर किराये पर ले जाता था तथा तोड फोड आदि की समस्त जानकारी आदि रखता था वह भी फरार है।

वर्तमान समय में पुरातत्वीय सामग्री की रक्षा हेतु अधिक सतर्कता की अपेक्षा आवश्यक हैं और इस सम्बन्ध में केवल शासन के भरोसे रक्षा उचित नहीं है। इस ओर स्थानीय समाज, धार्मिक पुरातत्व, अनुसंधान, नगर और तीर्थक्षेत्र कमेटियो को अपनी ओर से एक चौकीदार की नियुक्ति करना आवश्यक है।

प्रार्थी (लेखक) इस पुरातत्वीय सांस्कृतिक अपूर्व और अमूल्य अप्रप्त निधियों की सुरक्षा; संग्रह और संग्रह और संग्रहालय-निर्माण के लिये समाज, शासन का ध्यान २५ वर्ष पूर्व से आकर्षित करता आ रहा है। ध्यान न देकर उपेक्षा करने का ही यह परिणाम है।

समितियों को आवश्यक है कि बची हुई निधि की सुरक्षा के लिये जनता में और समाज में जागृति उत्पन्न करें। यही एकमात्र उपाय हो सकता है।

बड़ोह और पठारी में जैन समाज के लगभग २० घर हैं जिन्हे धार्मिक या पुरातत्वीय, कोई रुचि नही है। उन्हे कमाने खाने, पेट भरने से ही फुरसत नही है। इस मामले मे वे अंगूठा छाप हैं।

पठारी पहाड की चोटी पर बसा है। पठारी और बड़ोह के बीच में एक तालाब है। बडोह पठारी से लगभग १॥ मील के ही अन्तर से पहाड़ी के किनारे पर बसा हैं। पठारी यह एक मुस्लिम स्टेट रही है। इस ग्राम ने बड़े बड़े उतार और चढाव देखे हैं। सन् १९५६ के पूर्व यह स्टेट गणतन्त्र राज्य मे विलीन करली गई और विदिशा जिले मे मिला ली गई है यह विदिशा जिले का सीमा क्षेत्र पूर्व से ही रहा है।

इसकी ऐतिहासिकता यह है कि यहा पर एक विशाल जिनालय-शिखरबन्द जिसके बीचमे पहाडी पर ही एक कुआ बना है। मन्दिर बडा भारी पत्थरो का बना हुआ जिसमे बडो बडो पत्थरो की छतें खम्भे और कलाकृतियो से शोभित हैं। इसकी सस्कृति लगभग ६०० वर्ष पुरानी मिलती है।

जैन मन्दिर में भगवान् आदिनाथ की १२ फुट की कायोत्सर्ग प्रतिमा सागोपाग है जिस पर सम्भवत. स० १६९२ फालगुन वदी ७ बुधे श्री मूलसघे सरस्वतीगच्छे कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भट्टारक श्री पद्मनन्दी देवा: तत्पट्टे भ० गुणकीर्तिदेवास्तत्पट्टे जसकीर्तिदेवाः तत्पट्टे रत्नकीर्तिदेवा: शहंशाह पातिशाह शाहजहाँ राज्ये अष्टशाखे तत् गोहिल गोत्रे सं० सरपव नरसिंह पाडे तत्पुत्र शाह राहोत्भार्या रुक्मनी तत्पुत्र सा० हल्के भार्या-रत्नदेव तत्पुत्र मगनीराज नित्यं प्रणमति चौ० रामचन्द्र बघोरा सं० खुदा है।

अष्टशाखे इस बात को प्रमाणित करती है कि परवार दिगम्बर जैन धर्मावलंबियों ने इस मन्दिर का निर्माण और प्रतिष्ठा कराई हैं और इस प्रांत व ग्राम और निकटवर्ती देहाती क्षेत्रोंमें परवार दि० जैन लोग ही बसे हुये हैं।

यदि श्रीमान् और धीमान् लोग एक पुजारी की व्यवस्था कर देवें तो इस क्षेत्र के जिनालय की रक्षा सम्भवत: हो सकती है।

आशा है कि उचित व्यस्था के लिये दान की रकम या मन्दिरोसे करने की कृपा करेंगे। ऐसा मेरा सुझाव है।

भगवान आदिनाथ की मूर्ति के अतिरिक्त पठारी के जिनालय में दो काले पाषाण की मूर्तियां सं० १४७१ मे भट्टारक रत्नकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठा कराकर विराजमान की गई थी तथा इसके अतिरिक्त लगभग ९३ मूर्तियां छोटी बड़ी करके और हैं। लगभग ५० ताबे पीलल के यत्र जिन पर भट्टारक एवं गृहस्थो की परम्परा संवत् आदि खुदा हुआ है। इससे यहां के इतिहास संशोधन की भी सहायता मिल सकती है। कुछ हस्तलिखित ग्रन्थ भी हैं जिनकी प्रशस्ति से भी शोध-कार्य भली प्रकार से हो सकना असम्भव नहीं है।

ग्राम के मध्य भाग में भीमगदा नामक एक लगभग ४० फुट लम्बा मानस्तंभ है जिसे रुगडध्वज भी कहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सौधर्म इन्द्रने इन्द्रभूति गौतम गणधरके मानभंग

के लिये निर्माण कराया हो। जिसके देखने से विद्याभिमानियों का मान चूर चूर होजाता है। यह भी एक जैनियों की कीर्ति का प्रतीक जैनाचार्यो के उपदेशामृत से जैन शासकों द्वारा निर्माण कराया गया था जिसका प्रमाण इसके शिलालेख से भली प्रकार मिलता है। स्तंभ निर्माण की परंपरा केवल जैन समाज में ही प्रचलित है।

इस मानस्तंभ को राष्ट्रकूटवंशी राजा परवल (परवार) ने अपनी विजय की स्मृति में चैत्र शुक्ला ६ सं० ९१७ में निर्माण कराया था।

स्तम्भ के अग्र भाग पर चार हाथियों की मूर्तियां काल की प्रतीक संकेत रूप में इसलिए बतलाई हैं कि जिस प्रकार हाथी भूमंडल पर बड़ा है उसी प्रकार से काल (समय) बड़ा बलवान है। काल (दिन-रात) के चार-चार पहर हैं उसी प्रकार से हाथी के चार चार पैर हैं। यह प्रतीकात्मक चिन्ह पूर्वाचार्यों ने संकेत किया हैं। सभी को काल ने खाया, तुझे भी काल खायेगा।

दूसरा भाव-राजा परवल के पितामह जेजा के बड़े भाई ने कर्णाटक राज्य के हाथियों की सेना के सेनापति जो कि हजारों की संख्या में थे परास्त कर पराजय देकर लौटाया था और राज्य प्राप्त किया था, उस काल की स्मृति में हाथी को मूर्तियां स्तम्भ के ही अग्र भाग पर स्थापित कर सकेत किया है जो शिलालेख स्तम्भ पर खुदा है उसके सातवें श्लोक में निम्न उल्लेख है—

जित्वा विविक्त करिघटा प्रभुतरा, कर्णाट भट सहस्रणी।
प्रथुलाटाख्य राज्यम् लब्धम् यस्याग्र जेना जो॥

स्तम्भ का शिलालेख शताब्दियों से आततायइयों के आक्रमणों का शिकार बना रहा है और अब भी बना हुआ है। सर्दी गर्मी, बर्षात् के कालचक्र की बात ही क्या कहना है, सर्वथा अपाठ्य सा हो गया है।

जनरल कनिंघम ने ए. पी. ग्राफी इंडियामें इस शिलालेख को प्रकाशित कराया है। शिलालेखकी भाषा साहित्यिक एवं प्रौढ है। इस प्रशस्तिके रचनाकार हर्ष कवि थे। कविकी लेखनी इस बातको प्रमाणित करती है कि स्तम्भके निर्माता जैन शासक ही थे। जैसा कि २६ वें श्लोकसे सिद्ध होता है।

हर्षेण पद्यैः रचिता प्रशस्तिः।
मुक्तः फलालि श्रियमातनोति.॥

प्रशस्तिके पद्योंका तुलनात्मक अध्ययन करनेसे ज्ञात होता है कि शिशुपाल वधके लेखक और माघ कवि समकालीन हों ऐसा कवियों का कहना और लिखना है। हर्ष कवि की इस प्रशस्तिको सूत्रधार साहिलने इस स्तम्भ पर अपना परिचय दिया है। जो ३१ वें श्लोकसे स्पष्ट होता है।

उत्कीर्णा सूत्रधारेण साहिलेन स्फुटकाक्षरा।
चित्रांग वागव्यग्रवर्णना सरस्वतीव भासते॥

स्तम्भ जीर्णशीर्ण होता जा रहा है। इसके निकटमें कई दर्शनीय व ऐतिहासिक प्राचीन स्थापत्य कलाके सुन्दर महत्वपूर्ण एवं शिक्षाप्रद स्थान विद्यमान हैं।

इन निर्जीव प्रस्तरखण्डों में सांकेतिक रूप से कलाकृतियों में प्रतिमा ज्वारभाटों की भांति उमड़ रही हैं।

भारतीय जैन संस्कृतिको पूर्व जैनाचार्यों ने जीवन प्रदान किया है और मनोवैज्ञानिक धर्म प्रचार की एक अद्वितीय प्रणाली थी। आध्यात्मिक-बौद्धिक ज्ञानका एक मार्ग दार्शनिकरूप से समाज और संस्कृति के लिये युग युगों तक चिरंजीवी रखने के लिए इन्हें निर्माण कराया था। वर्तमान और भावी सन्तति इसके लिए इनकी चिर-ऋणी रहेगी।

—राजमल जैन मड़वैया-विदिशा, (म. प्र.)
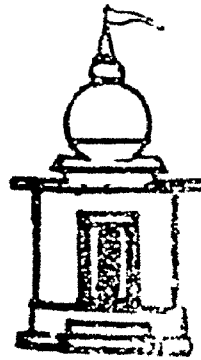
१—ग्यारसपुर में १० वें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ की तपोभूमि
२—श्रीमद् भट्टाकलंक देव द्वारा बौद्धों की पराजय
३—दर्शनीय स्थल-ग्यारसपुर ।

ग्यारसपुर

ग्यारसपुर इस विदिशा से २२ मील उत्तर-पूर्व २३—४०—उत्तर ७८—९—रेखा पर स्थित है। यह दर्रे पर स्थित है जिसमें से होकर मालवे से बुन्देलखंड का प्राचीन मार्ग था । इस पर तेरहवीं शताब्दी में मालवे के परमारों का अधिकार था। यहां पर एक गढ़ी है जिसमें एक बावड़ी है। पहाड़ी पर एक मालादेवी नामक विशाल जैन मन्दिर है जो भारत के मालवा प्रान्त के चार दर्शनीय चीजों में से एक यह भी अद्वितीय स्थान हैं।

—: चार दर्शनीय स्थल :—

(१) ग्यारसपुर की मालादेवी (२) उदयपुर का देहरा ।
(३) माचलपुर की बावड़ी (४) भोजपुर के खंभ ॥
यह चारों ही स्थान मध्य-प्रदेश में स्थित हैं ।

ग्यारसपुर में दर्शनीय स्थल (१) मालादेवी का जैन मन्दिर (२) बाजरा मठ (यह भी जैन मन्दिर है) (३) अठ खंभा संदेहात्मक है (४) झूला (५) मान सरोवर ताल (६) ढेकीनाथ (७) मैदोंन (८) ।

(१) मालादेवी का जैन मन्दिर :- पहाड़ी को काट कर बनाया गया है। यह वह स्थान है जहाँ भगवान शीतलनाथ १० वें तीर्थंकर के दो कल्याणक गर्भ और जन्म का इस विदिशा में हुआ था और जिस समय वैराग्य हुआ तो देवगण तप कल्याणक के लिये पालकी यहीं लाये थे। भगवान शीतलनाथ का प्रथम उपदेश यहीं हुआ था। तथा बौद्धों के घातक चक्र का भण्डाफोड़ आचार्य भट्टाकलंक देव ने यही किया था। जिसका इतिहास निम्न प्रकार से है:-

यहां के राजा की दो रानियां थीं । एक जैन धर्मावलंबी और दूसरी बौद्ध धर्मावलंबी उनकी यह प्रतिज्ञा थी कि पहिले हमारे धर्म का रथ निकले, किन्तु उस समय बौद्धों की राज्य सत्ता और प्रमुखता अधिक थी। जैनाचार्यों का अभाव था । उस काल भट्टाकलंक देव का जन्म हुआ इनके लघु भ्राता का नाम निष्कलंक था। यह दोनों भाई नालंदा विश्व विद्यालय में भेष बदल कर बौद्ध

धर्म के अध्ययन हेतु गये। उन्हे एकबार आचार्य जो भी बता देते थे वे जीवन भर नही भूलते थे और निष्कलंक दोबारा पढने पर किसी प्रकार यह दोनो भाईयो को वहा के आचार्य ने बन्दी बना लिया और प्रात: काल इन्हे फाँसी होना थी इसलिये यह सत खड़े पर कैद कर सायंकाल रखे गये किन्तु धर्मरक्षार्थ उपाय सोच यह एक खिड़की के मार्ग से अर्द्धरात्रि के समय छत्री के द्वारा जमीन पर आगये और भागना शुरू किया। जब प्रात: काल कैदी न मिले तो शोर मचादिया और चारो ओर सैनिको को उनका सिर काटलाने का आदेश देकर राजा ने आचार्य के आदेशानुसार भेज दिया। यह भागते जा रहे थे कि भानु उदय हुआ और कुछ धूल उडती दिखाई दी। यह ग्राम के निकट पहुँच चुके थे। वहाँ के एक रजक (धोबी) का लडका कपडे धोने जा रहा था कि उसने पूछा कि तुम कैसे भाग रहे हो। घबड़ाहट मे कहा कि शत्रु दल आ रहा है, जो सामने दिखता है उसका सिर काट लेते हैं। यह सुनते ही वह धोबी का लडका उन्ही के साथ भागा। इधर दोनो भाईयो ने आपस में बिचार किया कि आपसे अधिक लाभ हो सकता हैं अतएव आप इस तालाब के कमल पत्र मे छुप जावें, मैं आगे जाता हू। यदि जीवित मिला तो पश्चात् मिलूंगा। अब दोनो निष्कलंक और धोबी का लड़का भागते घुड़सवार जल्लादो ने इन दोनो वालको को देख कर घोड़े बढाये और इन दोनों बालको के सिर काट लिये। और सिर लेकर निर्भय होकर वापिस हो गये। पश्चात् भट्टाकलंक देव तालाब से निकल कर इस ग्यारसपुर के एक बटवृक्ष के नीचे दोपहरी के समय विश्राम कर रहे थे कि रानी के सिपाही ने आकर इन्हें जगाया। इधर रानी के साथ क्या घटना घटी इस ओर भी ध्यान दीजिए।

रानी का जब संघर्ष अधिक बडा और बौद्धाचार्य संघश्री ने अपने मान्त्रिक अभिमान पर एक शर्त इसलिये रखी कि न जैनाचार्य होगा न मैं हार सकता हूँ। जैनाचार्य का अभाव था रानी जिनालय मे जाकर अपनी प्रतिज्ञापूर्ति के लिये अन्न और जल का उस समय तक को त्यागकर दिया जब तक बाद मे विजय न मिल जावे। तृतिय दिवस चक्रेश्वरी देवी ने आकर कहा रानी मानसरोवर के किनारे बटबृक्ष के नीचे महान् धुरधर विद्वान श्री भट्टाकलक देव आये हैं वह तेरे इस संकट का निवारण करेंगे। अतएव देवी के कथनानुसार सिपाही भेजा और कहा गुरुवर आपका ही नाम भट्टाकलंक देव है। इस प्रकार अपरिचित स्थान मे नाम स्मरण करने वाला परिचित कौन है ऐसा विचार कर पूर्ण परिचय प्राप्त कर कहा चलो। जिस समय रानी के समक्ष पहुचे और समस्त कारण जानकर प्रथम ही बाद की भेरी बजवाई गयी और तिथि नियुक्त की गई। बाद प्रारंभ हुआ। जनता बाद सुनने आई किन्तु बाद दो प्रश्नो मे ही समाप्त हो गया। उस समय सघश्री ने कहा बाद अभी समाप्त नही हुआ पुन: होगा। अतएव सघश्री ने अपने मन्त्रबल से घड़े के अन्दर तारादेवी की स्थापना करके कहा मैं पर्दे की आड़ मे से बाद करूंगा। यह बात श्री आचार्य अकलक देव ने स्वीकार कर ली, इसलिये कि वह कलक रहित निर्मल स्वभावी थे। अतएव पर्दे की आड़ मे से ६ माह तक बाद हुआ और आचार्य अकलंकदेव को यह आश्चर्य हुआ कि यह मेरे सामने ठहरने की सामर्थ नही रखता फिर क्या कारण है? बिचार करने लगे उस समय चक्रेश्वरीदेवी प्रकट हुई और उसने एक उपाय इन्हे बताया कि देव एक बार कह कर उसकी पुनरावृत्ति नहीं करते। आप उसे पुनः पूछेंगे तो उत्तर नही मिलेगा। देवी भाग जायगी जो तुम्हारे से बाद कर रही है। वही हुआ। आचार्य ने पुन: पूछा, उत्तर न मिलते ही राजन् के सम्मुख कहा कि कोई उत्तर नहीं

मिल रहा है। बाद समाप्त किया जाता है और रानी की प्रतिज्ञा की पूर्ति की जावे। उस समय इस मालादेवी के जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा अकलंकदेव स्वामी द्वारा की गई और यहां मन्दिरों के निर्माण कराये गये। जिनेन्द्र भगवान का रथ चलाया गया। यह विवरण संक्षिप्त में लिखा है।

(२) बाजरा मठ :—इसका नाम बाजरामठ क्यों पड़ा ? इसलिए कि १५वें तीर्थंकर श्रीधर्मनाथ हैं और उनका चिन्ह बज्रदण्ड हैं। ऐसे धर्मधुरंधर तीर्थंकर का जहाँ निवास वह मठ कहलाता है। और बज्र का अपभ्रंश बाजरा है। अथवा यों कहना भी निरर्थक न होगा कि जिस प्रकार से बाजरा अनाज लघु धान है इसी प्रकार से यह मन्दिर लघु होने से भी बाजरा कहना अन्योक्ति नहीं।

काम क्रोधादि तो नष्ट हो सकते हैं किन्तु आत्मा का निर्मल स्वभाव धर्म जो दयामय हैं नष्ट नहीं हो सकता। वह बज्र के समान है इसलिए जैनाचार्यों ने जो नामोल्लेख किया बड़ी दूरदर्शिता से किया है। समझना मनन करना ही आवश्यक है। और इस मंदिर के तीन दर्वाजे हैं जिन पर कला में मूर्तियां उत्कीर्ण की हैं उनके अन्दर भी गूढ़ रहस्य छुपा है तथा इसके अन्दर देखिये जैन तीर्थंकारों की वही मूर्तियां विद्यमान हैं जिनका उल्लेख यथागुण के अनुसार किया है। यह धर्म क्षत्रिय वीर पुरुष ही धारण करते थे और यही कारण था कि जितने जैन तीर्थंकर हुए वह क्षत्रियों में से ही हुए हैं कोई बनियों में से नहीं। बनियों ने तो उस धर्म को अपनाया है और रक्षा की है जिसके लिये कुछ लोग जो अनसमझ जैसी बात करने वाले तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं यह उनकी सर्वथा भूल है। उसे यदि कायरता भी कहे तो बुराई इसलिये नहीं होगी कि :—

कुव्वत थोड़ी रोष घनेरा, यह लक्षण पिट जाने का।
आमद थोड़ी खर्च घनेरा, यह कारण मिट जाने का॥

चूंकि कायर पुरुष कमजोर होता है। उसे कमजोरी कहो या भूल अथवा अपराध। उसे मनुष्य छुपाने की कोशिश करता है किन्तु छुपती नहीं, इसकारण ईर्षाग्नि में रात दिन जलता रहता है कहा है :—

जलन की साधना संसार में सस्ती नहीं होती।
मधुर मुस्कान की कीमत, चुकाते अश्रु के मोती॥

इसलिए विद्वद्जन सम भावो से बुराइयों को छोड़ते हुए सद्गुण ग्रहण करेंगे।
यह है बाजरा मठ का संक्षिप्त इतिहास।

—: अठखंभा :—

इसे आठ खंभा ८ खंभे होने से कहते हैं। यह वास्तव में ८ खंभे सभामंडप के हैं शेष पिछला भाग नष्ट किया जा चुका है जो अति महत्वपूर्ण था इसमें विशेषता यह है कि इस में शिव-पार्वती का परिवार और संसार की दशा का चित्रण मूर्तिरूप देकर संबोधित किया है जिसका इतिहास शिव जी के इतिहास में देखिये। यह कला खजुराहे की कला से मिलती है। इसमें खभों

पर शिलालेख भी हैं जो परमार वंशी क्षत्रियों की परमारी भाषा के द्योतक हैं। इसमें निर्माणकर्तादि का परिचय है। यह सड़क के ही किनारे पर है। इस कला से ज्ञात होता है कि यह भी जैन मन्दिर ही था।

कटारमल (कालभैरव) ग्यारसपुर जिला विदिशा (मं० प्र०)

कामी क्रोधी कृपण खल, भिक्षुक व्यसनी जान।
इनके हृदय दया नहीं, हो कितनी ही हान ॥

इस प्रतिमा की लंबाई ८ फुट चौ० ४ फुट मो० २ फुट है। यह स्थान मोहनपुर के नाम से विख्यात है।

इस प्रतिमा के सामने के दृश्य में मूल प्रतिमा भैरों की है जो कि कटारमल कही जाती है और इसकी पूजा हरिजन जाति जो कि चमार कहे जाते हैं करते हैं। इस प्रतिमा के सिर पर सप्तफणी सर्प है जो कि सात वार रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि तथा सप्त व्यसन जुआ खेलना; मांस खाना, मदिरा पान करना, वैश्या सेवन करना; शिकार खेलना, चोरी करना; परस्त्री सेवन करना इन सातों पापों का जिसे व्यसन लग जाये को संकेत करती है। बार, प्रहार को कहते हैं।

यह सातों ही काल मृत्यु को आमंत्रित करने के संकेत हैं। जिन्हें अध्यात्मवादियों और महापुरुषों और विद्वानों ने हेय मानकर त्यागने का ही उल्लेख पुराणों मे किया है।

इन सातों मे आततायियों की यदि वक्र दृष्टि हो जाय तो केतु ग्रह और यह युद्ध करने में प्रवीण होने से अपने सिर की परवाह न करने वाले होने से राहु ग्रह इस प्रकार से नव ग्रहों को धारण करने वाला भी कहते हैं इन नव ग्रहों की वक्र दृष्टि भयकारक ही होती है। इस प्रतिमा के चित्र मे नव खाने इसी उद्देश्य को लेकर किये हैं कि यह नवग्रह भी हैं।

सिर पर सर्प क्रूर स्वभावी जिसके काटने का तो मन्त्र और औषधि मिल सकती है किंतु क्रूर और दुष्ट स्वभावी की न कोई दवा है और न मन्त्र ही है।

गुण और दोष हर वस्तु में होता हैं। गुणवान गुणों को ग्रहण करते हैं और आततायी कुसंगति मे फसा हुआ प्राणी दोषों मे अभी तक आनन्द मानता है तब तक उसे कोई जबरदस्त कोई सद्गुरु बालमीकि ऋषि को जिस प्रकार से प्राप्त हुआ था, दुष्कृत्यों को नही छोड़ता है। और न त्यागता ही है।

यह प्रतिमा उस समय का सकेत करती है। कमर की घन्टारो से घण्टारों के जिस प्रकार नाद से जागृति मिलती है उसी प्रकार से उसके विषयोन्मत्त कुकृत्यों से सतर्कता मिलती है।

यह प्रतिमा नग्न इसलिये है कि यह राग के वशीभूत है क्योकि इसके कमर से घुटनों तक मुंडमाल दाहिने हाथ की ओर नारी प्रतिमा को संकेत करती हुई है तथा इसके एक हाथ

में क्रूरता का प्रतीक मानव का सिर कटा हुआ हाथ में है जिसका खून कुत्ता पी रहा है और दूसरे हाथ में कृपाण है हिंसक भाव को बताती है।

नारी पुरुष के आधीन है क्योंकि:—

पलित जानवर भार्या, नौकर बंधुआ सोय।
पराधीन इतने रहें रंच न सुख इन होय॥

इनको सुख नहीं होता है। इस भैरों की प्रतिमा के कानों में विषैली बातों के सुनने का संकेत कानों में सर्प है। जिस प्रकार से वर्तमान मानव को विषयो का रोग लगा है। शासन का प्लान परिवार नियोजन से है। शासन इस दिशा मे अरबों रुपया व्यय कर रहा है किन्तु जब तक संयम नहीं रखा जाता है सब व्यर्थ है।

विषय भोग यह चर्म रोग है, सुखी न जीवन कोई।
सफल प्लान परिवार नियोजन, संयम बिन ना होई॥
विषय भोग का रोग लगा है, दानव वृत्ति छाई।
हो निदान अरु रोग चिकित्सा, संयम माँहि बताई॥

विषयों के रोगी में निर्दयता होती है वह गुण और कला धर्म, शील, विद्या, तप, दान से बंचित रहता है। वह वैश्या सेवन करता है। उसे अनेक प्रकार की गर्मी, सुजाक इत्यादिक रोग घेरते हैं, उन्हें कुष्ट रोग का सामना भी करना पड़ता है। वह चाहे जाति का ब्राह्मण ही क्यों न हो—

ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ, गले में डाला सूत।
ज्ञान दया दोनों नहीं, रहा भूत का भूत॥

ऐसा व्यक्ति अभिमानी, अहंकारी होता है और सभी जनता के सामने आंख का कांटा बन जाता है।

अति कठोर ऊंचो अधिक, मानयुक्त जिह बोल।
सो जन सब संसार की, लेत शत्रुता मोल॥

उसके पास न्याय नाम की कोई वस्तु नहीं रहती हैं और न अपनी प्रजा का दुख-सुख देखता है और न प्रजा को अपने पुत्रवत ही मानता है। राजा उसे कहते हैं जो—

दुख सुख परजा को लखै, सुत सम पालै ताह।
धर्म न्याय सब को करै, राजा कहिये ताह॥
है राज्य की शोभा प्रजा, राजा प्रजा का दास है।
राजा प्रजा में भेद हो तो, सर्व सत्यानाश है॥

ऐसे मानव जो कि विषयी हैं वहः—

रहते गुणों से तो सदा, हम लोग कोसों दूर हैं ।
पर लोक में अपनी प्रशंसा चाहते, भरपूर हैं ॥

क्योकि उन्हे विषय तृष्णा होती हैं और वह वैतरणी नदी हैः—

क्रोधो यम राजाश्च, तृष्णा वैतरणी नदी ।
विद्या काम दुग्धा धेनुः, संतोषो नंदनं वनं ॥
तृष्णा वैतरणी नदी, क्रोध पाप का कोष ।
कामधेनु विद्या कहिये, नन्दन वन संतोष ॥

महावीर किसे कहते हैं —

जो पाले दीन दुखियों को, उसे धनवीर कहते हैं ।
मुसीबत में सबर करले, उसे बलवीर कहते हैं ॥
बचाये लाज सतियों की, उसे रघुवीर कहते हैं ।
जो जीते अष्ट कर्मों को उसे महावीर कहते हैं ॥

यह कटारमल की मूर्ति नग्न क्यो है ? इसलिये कि यह राग नगा है, राग मे—रंग में लवलीन रहने वाला लक्ष्मीवान कृपण व्यक्ति, व्यसनो मे धन को पानी की तरह वहाने वाला मांस मदिरा का सेवन करने वाला, और भीख मॉगने वाला, इनके दया नहीं होती है। इस बात को इस कटारमल की मूर्ति का चित्र स्पष्ट कर रहा है।

इस मूर्ति के लक्षण देखिये कि बांये हाथ में भिक्षापात्र हैं। क्योंकि इस भिक्षापात्र का ध्येय घर घर फिर कर जनता से वोट मॉगना और उन पर अनेक प्रकार के सकट उत्पन्न करने वाले कानूनी दांव पेंच से टैक्सों के बधन मे बाधना जिसका वर्णन हम विदिशा वैभव के पृष्ठ ११ पर काग्रेसी राज्य के उन्नति के आकडे मे कर चुके हैं। देखें।

बाये नीचे के हाथ मे स्वामिभक्त सेवक कुत्ता एक कटे हुए सिर का खून पी रहा है। यह किसका सिर है ? जनता का आज का शासक वर्ग अथवा कोई ऐसा विभाग है जिसमे भ्रष्टाचार न हो ? स्वयं भ्रष्टाचार करते हैं और उनकी आड मे उनके मातहत और वरिष्ठाधिकारी भ्रष्टाचार करते हैं उन्हीं से ही बचे हुए मन्त्री गण हैं को संकेत करता है ।

दाहिने हाथ नीचे वाले में कृपाण है यह कृपाण व्होटों की भिक्षा को लेकर पाच वर्ष के लिये शासनारूढ होने को सकेत करता हैं। क्योकि चुनाव क्षेत्र में हजारों रुपया जो खर्च किया जाता है उसकी पूर्ति कहा से की जावे। वह इसी भ्रष्टाचार से पूर्ति होती है। जो कल भीख मागते थे जिनके घर मे भोजन का भी ठिकाना नही था वह आज कोठिया ताने और साठ-सत्तर हजार की कारो मे बैठे फिरते है कहा से आती हैं ? एक तो हुकूमत और दूसरे भ्रष्टाचार। सैया भये कोतवाल अब डर काहे का।

चौथा दाहिना हाथ कहता है कि देखो भाई मैं तो एक मदारी हूं। तमाशा दिखाता हूं। उसकी मजदूरी में इस प्रकार से तमाशा दिखाकर लेता हूँ।

यह मूल प्रतिमा जो सन्मुख है स्पष्टरूप से कह रही हैं। यह है नंगा रागी। जो कि समस्त सांसारिक भोग सामग्री होते हुए भी तृष्णा के वश कहता है कि मुझे दो क्योकि उसे विषय भोगों के भोगने का स्वार्थ लगा है जैसे वर्तमान शासनाधिकारी जनता से सहायता के नाम पर झोली खोल कर मागने के लिये आते हैं। नंगा ही भीख मागता हैं और नंगे ही भिखमंगे होते है और इन्हीं के दया नही होती है।

दूसरे राग का परित्याग करने वाले नंगे वीतरागी पुरुष जो कि—महान योगी परम तपस्वी अध्यातम ज्ञानी हैं उनके क्या लक्षण है, क्या अन्तर है? देखिये वीतरागी नंगे पुरुष कितने उदार, दानी, सब जीवो पर करुणा और दया से जिनका हृदय सदैव भीगा रहता है। वह गुरु कहलाते हैं—

गुरु कारीगर सारिखा, टांची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करै, पूजा लहै अपार॥

✸

रावण—और रावण ग्राम

जो चित्र आपकी सेवा में प्रस्तुत किया जा रहा है वह काल्पनिक नही है। अपितु यह मूर्ति ७॥ फुट लम्बी ३ फुट चौड़ी और ३ फुट मोटी है। जहाँ पर रावण की पाषाणमूर्ति विद्यमान है वह तालाब का किनारा है यह मूर्ति जमीन में आड़ी पड़ी हुई है। अनुश्रुति यह है कि यदि इस मूर्ति को खडी करते है तो गांव में आग लग जाती है। इसका यह स्पष्ट उत्तर है कि जो व्यक्ति कुमार्ग में लग जाते है उन्हे चिन्ता की अग्नि मे जलना प्रारंभ हो जाता है।

दूसरी अनुश्रुति यह है कि कोई भी मांगलिक या सामाजिक कार्य प्रारंभ के पूर्व रावण की पूजा की जाती है। यह बात भी इससे स्पष्ट है कि दुर्जन को पूर्व में ही नमस्कार किया है। यदि हम इस प्रकार की भूल करते हैं तो अनेकानेक व्याधियां संभवत. आती ही हैं।

रावण ग्राम विदिशा से लगभग १६ मील विदिशा अशोकनगर रोड—हिनोतिया ग्राम से पश्चिम—उत्तर के कौने में लगभग ५ मील जिला विदिशा टप्पा—शमशाबाद में विद्यमान है। भारत में यह सर्व प्रथम ग्राम है जहा रावण की पूजा होती है और रावण वही व्यक्ति है जिसके परिणाम सांसारिक भोग भोगने की आकांक्षा रखते हैं।

भोग व्यसन सुख ख्याल में, दई मानुष गति खोय।
ज्यों कपूत खा तात धन, विपदा भोगे सोय॥

क्षणभगुर नाशवान शरीर से ममत्व रखने वाले विषयभोगी को पूर्व आचार्यों ने मूर्खता-पूर्ण कार्य करने वाले को गधा कहा है और ऐसी ही प्रथा भी है। जिसका प्रतीक गधा रावण के सिर पर संकेत कर बताया है।

भारतीय वसुन्धरा पर जब-जब जिन महापुरुषों ने जन्म लिया वही अवतारी महापुरुष अपनी कला कृतियो, चरित्रों, मनोवैज्ञान; आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक जीवन के उतार चढाव और संघर्षों की भविष्य वाणी को कलाकृतियों में चतुर्मुखी प्रतिभा द्वारा मार्गदर्शन कराती हुई अनेकानेक मूक कथाओं को विद्वद् समाज के समक्ष प्रर्शित करती हैं।

इस प्रकार की अनेकानेक प्रतिमायें नदी और निर्जन स्थान, और खंडहरो में मिली हैं। जिनमें अध्ययन करने पर आत्मीय और पारमार्थिक जीवन की झांकी का सारभूत रहस्य दर्पणवत् ज्ञाननेत्र के सामने झलकने लग जाता हैं। और जिसे भावी संतति के अनुकरणीय समझ कर ही भारतीय जैनाचार्यों की परंपरा को जीवित रखने के प्रयास से यह सेवा विद्वद् समाज के समक्ष प्रेषित कर रहा हूँ।

अब कृपया आप देखिये और अपने जीवन तथा वर्तमान शासन से तुलना भी कीजिये कि जो गधे के मुख के नीचे चार मुख और बतलाये हैं वह क्या हैं? वह है क्रोध मान, माया और लोभ। इसमें माया के वशीभूत मानव लोभ मे फंस जाता है। जोकि मध्य मे बतलाया है वह है लोभ पाप का बाप।

लोभ पाप को बाप है, क्रोध क्रूर यमराज।
माया विष की बेलरी, मान विषम गिरि राज॥

क्रोध, मान, माया और लोभ यह दुर्गम पर्वत हैं। इन पर संयमी पुरुष ही चढ़ सकता है। सतोगुणी पुरुष ही विष्णु अर्थात् प्रजा की रक्षा करने वाला है।

लोभ पाप में नहि फस्यो, लगे न मन्मथ बाण।
क्रोधानल में नहि फंस्यो, सो नर विष्णु समान॥

इन चारो के नीचे जो चार मुख बतलाये हैं वह हैं चार पुरुषार्थ। किन्तु जो मध्य में प्रधान मुख कामान्धता को बतलाता है और उस मुख मे मृगी की विषयेन्द्रिय दबी हुई है वह काम वासना की प्रतीक है। प्रत्येक मानव इस पंचायती राज का रसास्वादन कर रहा है यानी पूर्ण रूप से भ्रष्टाचार पर उतारू है। यह कामवासना का प्रतीक है।

यह कामी पुरुष राज्यलक्ष्मी को कामिनी, जिसे मृगनयनी, अर्थात् नारी की मान्यता देकर प्रतीक बताया हैं कृपया ध्यान देकर पूर्णरूप से अवलोकन कीजिये।

इस मृगनयनी की टांगे यह नरभक्षी रावण जो कि पुरुष, सिंह मृग का शिकारी है उस शिकार के लिये अपने दोनों हाथो से इस राज्यलक्ष्मी रूप नारी मृगी की टांगें पकड़े है जिसका संकेत पूर्व आचार्यों ने समाजवाद, और कुर्सी का ममत्व प्रतीकात्मक रूप से बतलाया है। प्रत्यक्ष देख लीजिये। प्रत्येक राज्याधिकारी प्रजारूप नारी का प्रत्येक पहलू से शिकार करता ही जा रहा है। जिस आतंक से समूचे भारत में खाद्य सामग्री पर राशन वितरण में प्रचुर मात्र में भ्रष्टाचारियों का ही बोल बाला है। "भ्रष्टाचारी राज में शासक गण को चैन, रिश्वत के व्योपार की सीधी खुल गई लेन।" पूर्व राज्यों ने अपनी प्रजा पर इस प्रकार के अत्याचार और अन्याय नहीं किये जिस प्रकार से वर्तमान में किये जा रहे हैं। ध्यान रहे:—

जब अन्याय और अत्याचारों का अन्त आता है तो विनाशकाले विपरीतबुद्धि भी हो जाती है। जैसा कि राजमाता को मृगनयनी मानकर शिकारी रावण ने शिकार का तीर मारा हैं। किन्तु विदुषी नारीरत्न सिंहवाहिनी दुर्गा के रूप में अवतरित हुई हैं। जिनकी आठ भुजायें हैं। जिनके ८ प्रतीक क्रमशः समझिये।

(१) प्रथम हाथ में सर्प-- विषयोन्मत्त रावण काम के वशीभूत कामरूप सर्प जिसके सिर पर शरीर से लिपटा हुआ बतलाया है। काल के अर्थ निम्न हैं:—सर्प, समय, सिंह, हाथी, मृत्यु, अवधि। जो कि बार का अर्थ आक्रमण से है। जो सात फण का है खाने के लिये जीभ लपलपा रहा है। वार का अर्थ सात बार से है जो क्रमशः रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र; शनि से है। यह कालरूप हमारे सिर पर सर्प बन कर खाने को वैठे हैं।

(२) दूसरे हाथ में चक्र है:— चक्र का आशय नारी से है। जिस प्रकार से पृथ्वी गोल है, पृथ्वी पर रत्न पैदा होते हैं जो रत्नों की दात्री माता है। कामासक्त मानव इसे भोगने की लालसा से इसके चक्कर में फंस जाता है। यह माया है और माया तीन प्रकार की पूर्वाचार्यों ने बतलाई है वह क्रमश:—

धरा, कनक, अरु कामिनी, ये है कड़वी बेल।
बैरी मारै दाव दे, ये मारै हंस खेल॥

आशय यही है कि जिस प्रकार से यह वसुन्धरा रत्नों को उत्पन्न करने वाली माता है उसी प्रकार से नारी भी हमारी माता है। जो कि पुत्र व पुत्री रत्न की जन्मदात्री है।

इसलिये नारी के सर्वांग अंग, प्रत्यंग, आभूषण, वस्त्रादि सभी गोल इसलिये हैं कि जो जीवधारी इसके प्रसंग में आ जाता है उसका छुटकारा पाने वाले विरले संयमी वीर पुरुष ही होते हैं।

एक कनक अरु कामिनी, ये दो जग को खांय।
देखत ही ते विष चढ़ै, मरै नरक ले जाय॥

इसका नाम दौलत क्यों है ? इसलिये कि जब यह माया या महा माया हमारे हृदय मंदिर में आ विराजती है तो हम सीना तान कर चलते हैं, और जब इसका वियोग आता है तो हमारी कमर टूट जाती है। इस प्रकार से इसमें दो लते हैं। इसलिये इसका नाम दौलत पूर्वाचार्यों ने नामांकित किया है।

इस महामाया ने सभी देव और दानवों पर आक्रण किया है। यदि बच सके हैं तो केवल वही बचे हैं जिन्होने संयम धारण कर शरीर से भी ममत्व नही रखा हैं ऐसे विरले दिगम्बर साधु हैं।

कामेन विजितो ब्रह्मा, कामेन विजितो हरिः।
कामेन विजितो शम्भुः, शक्रः कामेन निर्जितः॥

(३) **तीसरा हाथ**--दुर्गा का इस बात का प्रतीक हैं कि इसके हाथ मे दुधारा नामक शस्त्र हैं। उस शस्त्र का आशय यह हैं कि ज्ञानीजन, विद्वत्समाज, जो चतुर हैं जिन्हें चतुरानन ब्रह्मा की श्रेणी प्राप्त हैं वह इसका सदुपयोग :—

दानाय लक्ष्मी, सुकृताय विद्या, चिन्ता परब्रह्म-विनिश्चयाय ।
परोपकाराय वचांसि यस्य, वंद्यस्त्रिलोकी-तिलकः स एकः ॥

और मूर्ख कामी पुरुष इसका दुरुपयोग इस प्रकार से करता हैं जिस प्रकार से इस राज्य लक्ष्मी का भोग वर्तमान शासम काल मे किया जा रहा हैं। यह क्षणभंगुर ५ वर्ष के जीवन काल मे भोगने के लिये प्राप्त किया गया हैं। यह भलाई और बुराई पुण्य और पाप नेकी और बदी आपके समक्ष मौजूद हैं:—

पण्डित मूरख दो जने, भोगत भोग समान ।
पण्ड़ित समवृति ममत विन, मूरख हरष अमान ॥

(४) **चौथे हाथ में त्रिशूलः**—इस बात का बोध कराता हैं कि यह मानव शरीर रत्नो का पिटारा हैं। इसके अन्दर १४ रत्न छुपे हैं। इसी मानव शरीर में देव और दानव भी हैं। जो लक्षण और प्रतीकात्मक चिन्ह देव और दानवो में मिलते हैं यदि आप गहराई से दृष्टि डालेंगे तो आप स्वयं अपने आपको कुछ समझ सकेंगे कि वास्तव में मैं कौन हूँ, इस मानव शरीर धारण करने का क्या महत्व हैं ? और मैं यह क्या भला और बुरा कर रहा हूँ ?

इन महान रत्नो से विभूषित शरीर का हम क्या उपभोग करते हैं ?

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खांन ।
ज्ञान सुखों की खांन है, दुःख खांन अज्ञान ॥

इन पांच वर्षो के बाद हमारी क्या गति होगी ? इस बात को जानता हुआ भी कामी राक्षसी बृत्ति धारक प्राणी अपने तन, मन, वचन का दुरुपयोग करता है। इसे बिद्वन्ता कहें कि मूर्खता ?

इस बात का बोध हमारी माता दुर्गा अपने त्रिशूल तीन-काटे से उस राक्षस का बध कर रही हैं। वह है सम्यक् दर्शन, सम्यक्ज्ञान सम्यक् चारित्र।

(५) **पाँचवें हाथ में** जो तलवार बतलाई है वह हुकूमत, अधिकार, तथा प्रभुत्व को बतलाती है। और इस बात का ज्ञान कराती है कि :—तीन चोजें तीन के बगैर नही ठहरती, ।

(१) इलम बगैर बहस के (२) हुकूमत बगैर दबदबे के (३) माल बगैर तिजारत के। बस समझ लीजिये कि हमारे वर्तमान शासकों ने अपने छल, बल, कपट, से जनता को विश्वास दिला कर जो घातक प्रहार जनता पर किया, जिससे आज पूरा भारत हा-हाकार कर रहा है आप के समक्ष साक्ष्य स्वरूप विद्यमान हैं। यह है इनकी इलमी लियाकत का नमूना। (२) क्या कभी काठ

की हुंडी दुबारा चढ़ सकती है। उत्तर मिलेगा नहीं। तो क्या कभी कठोरता से विजय मिल सकती है ? कठोरता बिकृत साधन है।

जन्म अन्ध कामान्ध नर, और महा मद धार।

स्वार्थ अन्ध मानव तथा, जगमें अन्धे चार ॥

इसे आंखों वाली सरकार कहें या अन्धी सरकार ? जो कि अपनी प्रजा के साथ न्याय के बदले में कठोरता से विजय प्राप्त करने के लिये दबदबा जमा रही हैं और हुकूमत कर रही हैं सत्य हैं ?

(३) जो व्यापार सरकार के द्वारा किया जारहा हैं वह क्या प्रजापालन की दृष्टि से उचित हैं ?

जो धन जुरे अनीति को, वर्ष दशक लो खाय।

वर्ष दशक के बाद में, जरा मूल से जाय ॥

इसलिये भावी भारत का भविष्य खतरे से खाली नहीं हैं। क्या यह असत्य हैं ?

आप देखिये आपके घर में हुकूमत किसकी ? आपकी नारी की। और आपके घर की यानी भारत की हुकूमत किसके हाथ मे ? प्रधान मन्त्राणी इन्दिरा गांधी अखिर एक नारी ही तो है।

(६) **छठवां हाथ है :**—इसका आशय यह हैं कि प्रजा आखिर सरकार की पुत्रवत् है। जब पुत्र भूख और प्यास से पीड़ित है और भूख प्यास से जान बूझ कर जब मछली की तरह तड़फाया जाता है तो स्वभावतः वह बालक उद्दण्डता करता है। इसमे दोष किसका ? माता का। माता अपने दोषों को छुपाकर जो घातक प्रहार करने को ५ वे हाथ में तलवार लिये बतलाई है वह हुकूमत की प्रतीक है किन्तु यह जो छटवां हाथ ढाल का बतलाया है वह इस बात को प्रमाणित करता ह कि प्रजा मेरी पुत्रवत है मुझे इसकी रक्षा करना है और प्रजा पर की गई इस गन्दी और अन्धी नीती का सर्वनाश चाहती है। जैसा कि हमारे भारत में महारानी लक्ष्मीबाई और दुर्गा वती कमलावती ने अपने जीवन की आहूती प्रजा पालन में देकर चतुर्मुखी कीर्ति प्राप्त की है और वर्तमान मे आज हमारी राजमाता विदुषीरत्न ने अपनी प्रजा के हितों में बाढ पीड़ितो की सहायता करने में, और अनेक प्रकार के जन हितैषी कार्यो में दान देकर इस माया का परित्याग किया है जो अपनी प्रजा को पुत्रवत मानकर सकट कालीन स्थिती का सर्वनाश करने के लिये, राक्षसी वृत्ति से टक्कर लेने के लिये समस्त राज्यो में श्रेष्ठ और विजय प्राप्त करने वाली वीरांगना माता विजया राजे सिंधिया आपकी सहायता के लिये रक्षा के लिये ढाल रक्षा की लेकर आप पर साया करने आई है किन्तु उन्हें सहयोगी साथ न देवें तो उस माता का क्या अपराध है ?

७-सातवें हाथ में घंटी है :—यह इस बात को प्रमाणित करती है कि अब गाफिल निद्रा का परित्याग कर सतर्क होजा। अब तेरा काल आ गया हैं। काल का अर्थ समय से और मृत्यु से भी। जो हमें अपने कर्तव्यों के पालन करने को जाग्रत करता है।

८-आठवें हाथ में शंख है, क्योंकि—मानव अपनी विषयोन्मतता मे उन्मत्त कामाधो

कालरूप हाथी की तरह जो दिन और रात हैं। ऐशो आराम मे रत रहकर समय का सदुपयोग नहीं करता। यह नहीं जानता कि इसके ऊपर भी कालरूप सिंह मेरा विदारण करने को उद्यत है ऐसा नही जानने वाला पढा लिखा विद्वान भी भयंकर विषैला विषधर नहीं तो क्या है? क्या अपनी भूल मान लेना विद्वत्ता और बडप्पन नही हैं तो क्या है? शंख हमारी मूर्खता का प्रतीकात्मक चिन्ह है।

अब देखिए इस रावण का बड़ा पेट क्यों है? और गणेश जी का बडा पेट क्यो है?

इसका उत्तर यह है कि गणेश जी अपने पेट में गुणो का संचय करते हैं। और राक्षसी वृत्ति वाले रावण के वशज दोषो को।

कमर क्यों कसी है।

इसे भी समझिये कि मेरी यह राजलक्ष्मी (कुर्सी) प्राण प्यारी कहीं कोई छीन कर न ले जावे क्योकि हमारे कर्म तो खाटे हैं। यह हमारे हाथ से छिन जायगी। इसलिये न्याय से तो हम इसका भोग नही कर सकते। इसलिये जो हमें वोट नही देते हमारे विरोधी हैं इनका निर्दयता-पूर्वक बदला नही लिया जायेगा। किसी प्रकार से भी जीवित नही रह सकते। यह माया है। जर जोरू, जमीन, झगड़े की जड तीन।

बन्धुवर! आप यह भली प्रकार से जानते ही हैं कि राजलक्ष्मी का भोगने वाला सिंह पुरुष ही होता है। जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारो ही पुरुषार्थ का साधन करता है। जो व्यक्ति धर्मात्मा है:—

धर्मातमा का निर्धन जीवन, विज्ञों ने उत्तम सदा कहा।
पर पापो धनी पुरुष का जीवन, भला किसी ने नहीं कहा॥

जिनका धार्मिक जीवन हैं सयम और नियम पूर्वक न्याय नीति से अर्थोपार्जन करते हैं आप जानते हैं कि—

धन भोगों की खांन है, तन रोगों की खांन।
ज्ञान सुखों की खांन है, दुःख खांन अज्ञान॥

द्रव्य क्यों एकत्रित किया जाता है? इसलिए कि—

विपति नाश हित जोड़ धन, धन से पालो नारि।
नारि और धन से सदा, निज रक्षा कर यार॥

शरीरं व्याधिमन्दिरं। शरीर रोगों का घर है।

देह धरे को दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भुगते ज्ञान से, मूरख भुगते रोय॥

ज्ञान यह मानव का तृतीय नेत्र है—

परख सकती नहीं रतनों को, हर इंसान की आँखें ।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो ना हों ज्ञान की आँखें ॥

यदि ज्ञान नेत्र से देखेंगे तो आत्मीय सुख का अनुभव हो सकेगा । और सांसारिक भोगों को निष्कण्टकरूप से भोगेगा । ऐसा पुरुष ही महापुरुष कहलाता है । और अन्त में राज्य वैभव को बिजली की भांति क्षणभंगुर मानकर और राज्यवैभव को त्याग कर भगवान के रूप में पुजने लग जाता है ।

अर्थोपार्जन कर विषयों की लालसा करने वाला कामीपुरुष सदैव जनता की आँखों में कांटों की तरह चुभता रहता है । उसे डाकिनी खाने लग जाती है । वह ६ है ।

तृष्णा चिन्ता दीनता माया ममता नारि ।
ये षट् डांकिनि पुरुष की, पीवत रुधिर निकार ॥

सिंहमुख इसलिए है कि सिंह पुरुष ही अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त कर सकता है । वह दो प्रकार एक शुभरूप और दूसरा अशुभरूप ।

ज्ञान दान गुण शील तप, विद्या धर्म सुजान ।
इन विन नर पशुरूप है, विचरत भू विन मान ॥

और जो कामी पुरुष हैं वह—

कुत्ता कातिक मास में, तजत भूख अरु प्यास ।
तुलसी विषयी नरन को, बारहुं कातिक मास ॥

इस प्रकार से रावण की व्याख्या का चित्रण श्रीमंत पूज्य राजमाता विजयाराजे सिंधिया के कर-कमलों में दिनांक २९ अप्रेल सन् १९६८ को गुना के उपचुनाव में सादर समर्पित किया गया था ।

वादिचन्द्र सूरि कृत

ज्ञान सूर्योदय नाटक की

एक साकारता ।

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देवगढ़--ललितपुर उ. प्र. में २० भुजी अनुप्रेक्षा

जिन शासन देवी-माता अम्बिका के प्रत्येक हाथों का परिचय ।

पूर्व काल मे जैनाचार्यों ने अपने विवेकपूर्ण ज्ञान और ज्ञान नेत्र से मानव मात्र के कल्याण कारी जैन साहित्य को जो साकारता दी है वह हैं २० भुजी जिनशासनी देवी माता अम्बिका। कहती है सौ सुनो ।

(चौबीसा)

तन तरवर सों सघन दुःख के, हिंस्र पशुन सों मांचा है ।
दुधि--जल--दिन सूखो, आशा की, निकट जलन मय बांचा है ॥
नाना कुनय मार्ग सौं दुर्गम, यह भव बन गुरु वांचा है ।
यामें पथदर्शक शरण्य इक, जिन शासन ही सांचा है ॥

मन—कुछ जीवन का भी उपाय है।

अनुप्रेक्षा—ज्ञान रूप गरुड ।

हे मन—इस अपवित्र शरीर मे प्रमोद क्यों मानता है। देख कहा है कि :—

रुचिर--मांस--रस--मेदा--मज्जा, अस्थि--वीर्यमय अशुचि अपार ।
घृणित शुक्र औ रज से उपमा, जड़ स्वरूप यह तन दुखकार ॥
इसमें जो कुछ तेज कान्ति है, समझ उसे चेतन्य विकार ।
इससे मोद मानना इसमें, सचमुच लज्जाकारी यार ॥

भ्रम में क्यों पड़ा हुआ है ?

ज्ञान सूर्योदय माता अम्बिका की मूर्ति का रहस्य ।

मोहादिक भाव सब उपाधिरूप नेतक के, दुखदाई जान वृथा चित्त न भ्रमाइये ।
ज्ञानादिक भाव ते तो आप ही के स्वभाव, तिनको हितकारी जान चित्त को रमाइये ॥
जिनवानी जोर विना ज्ञान की ना शक्ति कछू, तातें जिनवानी बिना परी बागमाइये ।
ताके अनुसार ध्यान धारि मोह को विडारि, केवल स्वरूप होय आप में समाइये ॥

—श्री भागचन्द्र कवि ॥

जैन आचार्यों ने अहिंसामय धर्म को वाममार्गी मांस भक्षी, निर्दयी, राक्षसी वृत्ति के धारक स्वार्थ एवं जिह्वालोलुपी कामी जनो को, जो कि देवमूर्तियों को जीवों की बलि चढ़ाते और हिंसा करते थे, बुद्धिबल द्वारा लोहा लिया था और उन्हें पराजय दी थी। दूध और पानी को हंस की भाँति राग और वैराग्य के दोनों पहलुओं को दर्पण के समान बतलाया था। देखिये माता अम्बिका अपने सिर पर दोनों हाथों से एक चक्र को पकड़े है। यह कालचक्र है संयमी और असंयमी दोनों के ही सिर पर अनंत काल से छाया हुआ है।

अनुपेक्षा—यह भोला संसार अनित्य पदार्थों को नित्य समझ कर अनन्तकाल से भ्रमण कर रहा है। फिर उसने यह बेचारा पराधीन जीव जिनेन्द्र भगवान के बतलाये हुए आत्मा के चैतन्य चितस्वरूप को कैसे देख सकता है?

(दोहा)

विद्युत वत अतिशय अथिर, पुत्र मित्र परिवार।
मूढ़ इन्हें लखि मद करत, बुधजन करत विचार॥

महा दुखद मरुभूमि में, देख दूर सों नीर।
भोले मृग ही प्यास वश, दौरि सहें बहु पीर॥

चंचल लक्ष्मी वय चपल, देह रोग को गेह।
तो हू इहि संसार में, स्वातम सों नहिं नेह॥

(राग खेमटा)

बतलाओ हे बुधिवान, विधि सों कौन बली॥ टेक॥
अणिमादिक वर महिमा मंडित, सुरपति विभव निदान।
ताको लंकापति ने मारयो, जानत सकल जहान॥ विधि०॥
पुनि तिहि रावण राक्षस को हू, रामचन्द्र बलवान।
पारावार अपार लाँधिके, मस्तक काट्यो आन॥ विधि०॥
किन्तु हाय वे रामचन्द्र हू, रहे न रघुकुल प्रान।
काल कराल व्याल के मुंह में, भये विलीन निदान॥ विधि०॥

इस कालचक्र का प्रतीकात्मक चिन्ह अम्बिका के सिर पर दोनों हाथों से पकड़ने का सूचक है।

ज्ञान सू० पृ० ८५-८६।

मेरी आज्ञा में रहें, छहों खंड के भूप।
मो चक्री कों हू ग्रसे, काल महा भयरूप॥

नारायण नरलोक में, महाशूर बलवन्त।
तीन खण्ड आज्ञा यहै, तो हू काल ग्रसंत॥

कालाष्टक, ब्रह्मविलास पृ० १४८

माता भवानी कहती हैं हे जीव :—

विक्रमशाली नर विना, बल निर्बल ह्वै जाय।
सैन्य सहित हू "करन" विर, जय न लही "कुरुराय"

इसलिए राजा मन की दो स्त्रियां हैं, जो नीचे खड़ी घुटनों के यहा हैं। एक कामिनी जिसका सकेत बायें हाथ नं० ८ मे सर्प जिसे विषधर या काम की सज्ञा दी है। पूंछ के द्वारा संकेत किया है कि काम पर विजय किसी ने नही पाई। यदि विजय पाई हैं तो केवल वीतरागी महापुरुषो ने, जोकि ऊपर तीन बतलाये हैं दो खडगासन और एक पद्मासन। यह तीनों तीर्थंकर तीन पदवी के धारी हुये हैं। अतएव कामिनी एक तीक्ष्ण धारा है। दूसरे दाहिने हाथ नं० ९ मे अग्नि को पकडने का सकेत मूर्तिका हाथ यह बतलाता है कि जो दाहिने घुटने के यहाँ एक स्त्री खड़ी दिखाई है वह अग्नि है—यह चिन्ता की ज्वाला है। काम के द्वारा उत्पन्न हुई संतति मोहादिक राग और द्वेष को उत्पन्न करते हैं यह दो धाराओ को ऊपर के दाहिने हाथ नं० २ में एक दोनों ओर नुकीला शस्त्र संकेत करता है वह ही दोधारा कहलाता है। संकटापन्न स्थिति पैदा करता है। वह है काल की सूचक टेलीफोन की घंटी जिसका संकेत बाँयें हाथ नं० २ में संकेत की है कि यह काम और क्रोध की अग्नि दोनो ही अतिशय दुखदायी हैं। इसकी विजय का साधन :—

हाथ न० ३ दाहना जिसमें एक कुल्हाड़ी है।

यह ज्ञान की सूचक अज्ञानता रूप काठ को काटने के लिए है। विवेकपूर्ण ज्ञान की कुल्हाड़ी है।

(कवित "३१ मात्रा")

कचकलाप जूं का निवास, मुख चाम--लपेट्यो हाड़ समूह।
माँसपिंड कुच, विष्टादिककी पेटी पेट, भरी बदबूह॥
जघन--जंत्र मलमूत्र झरन को, चरन थंभ तिहि के आधार।
घृणित अपावन कामिनि--तन यों, ज्ञानी लखहिं न यामें सार॥

मन एक उन्मत्त मतंग है। विषयो की लालसा से स्नेह करता है। पेट में भरी विष्ठा को शूकर और कौए खाने की ही अभिलाषा करते हैं। वीतरागी पवित्र–आत्मा जिसे हंस कहते हैं ऐसे पक्षियो की नही। इस प्रकार उत्कृष्ट विचार–बाण से कामदेव को धराशायी कर दिया।

वांया हाथ नं० ३ ढाल, यह क्षमा की है।

क्षमा क्रोध के सम्मुख निर्भय होकर आ गई। किन्तु क्रोध क्षमा को देख कर ललकार कर बोला–अरी क्षमा तू मेरे सामने से हट जा। मैंने तेरा कितने बार घात किया, कुछ स्मरण है? आज प्रबोध की सहायता से तू क्या वैक्रियिक शरीर धारण करके आ गई? तो सुन :—

(भुजंग प्रयात)

किती बार जीते नहीं मै नरेशा, किती बार प्रेरे न मैंने सुरेशा।
किती बार त्यागी तपाये नहीं मैं, किती बार लोप्यौ न धर्म यहीं मैं॥

इस प्रकार कहकर क्रोध क्षमा को मारने के लिए झपटा। उसके भय से क्षमा पलायन करना चाहती थी। त्यों ही शाति ने आकर धैर्य देकर कहा–"माता! यह डरने का समय नहीं हैं। तुम किसी प्रकार का भय मत करो।" और फिर हिंसा के सम्मुख होकर कहा–"हिंसा! आज इन तेजस्वी पुरुषों को देखते हुये इस समर भूमि में मेरे सामने आ। और अपना धनुष हाथ नं० ७ और बाण हाथ न० ८ बाँया (धनुष बाण) धारण करके उस प्रचंड बल को प्रगट कर, जिसे धारण करके तू मेरी बड़ी बहिन दया को मारने के लिए आई थी। क्या तू नहीं जानती है कि :—

(नरेन्द्र छन्द)

तौलों दुःख शोक भय भारी रोग महामारी है।
अदया अकृत दरिद्र दीनता, अरु अकाल जारी है॥
तौलों ही विष शत्रु भूत ग्रह डाँकनि शांकिनि डेरा।
जौलौ विमल बुद्धि बारे नर, जपैं नाम नहिं मेरा॥

यह हाथ नं० ५ दाहना जिसमें माला को संकेत किया है।

बस यह सुनते ही और शान्ति के हाथ में माला देख कर हिंसा भाग गई। बायां हाथ नं० ५ अंकुश संकेत करता है।

मन उन्मत्त मतंग (हाथी) है। इसे संयम के ही अंकुश से वश में किया जा सकता है। इस लिये अंकुश बांयें हाथ में है।

शरीर रूप विष्णु परिवार

(दोहा)

सत्य माता पिता ज्ञानं, धर्म भ्राता दया सखा।
शान्ति पत्नी, क्षमा पुत्री, येः षट् मम बांधवाः॥

शरीर रूप विष्णु के शत्रु–

क्रोध मानमाया धरत, लोभ सहित परिणाम।
ये ही तेरे शत्रु हैं, समझो आतमराम॥

इस चंचल मन ने कामदेव की कृपा से पूर्वकाल मे पद्मनाभि ने द्रोपदी के लिये अर्ककीर्ति ने सुलोचना के लिये, अश्वग्रीव ने स्वयंप्रभा के लिए, बड़े बड़े युद्ध किये।

ब्रह्माजी ने पुत्री सरस्वती के साथ, पाराशर महार्षि ने मछली के पेट से उत्पन्न हुई योजनगंधा के साथ, और व्यास जी ने अपनी भाई की स्त्रियो के साथ रमण किया था, यह सब कामवाण से ही पीड़ित होकर किया था, ऐसा शैवमत में कहा है। कामवाण से आहत होकर सूर्यदेव कुन्ती पर, चन्द्रमा अपने गुरु की स्त्री तारा पर और इन्द्र गौतमऋषि की स्त्री अहिल्या पर आसक्त हुआ था। अतएव हे चचल मन ! मनुष्य, और देवो के पराजय करने के कारण मैं त्रैलोक्यविजयी विवेकपूर्ण ज्ञानवीर हूँ। और प्रवोधादि के वश करने के लिए तो एक स्त्री ही बस हैं। यह कौन नही जानता कि :—

तबलों ही विद्या व्यसन, धीरज अरु गुरु मान।
जबलों वनिता नयन विष, घूठ्यो नहिं हिय आन ॥

बांया हाथ नं० ९ का सर्प अपनी मुंह से कामनी स्त्री की और संकेत करता है कि यह विषधर (नागन) है।

दाहिना हाथ न० ९ अग्नि को पकड़ने का संकेत करता है कि :—यह कामाग्नि को प्रज्वलित कर चिन्ता की ज्वाला में जीवनभर जलाती रहती है। जो अग्निरूप स्त्री दाहिने और चंवर धारिणी के रूप में खड़ी है संकेत कर रही है।

दाहिना हाथ न० ३ दोधारा, संकेत करता है कि :—

यह काम और कामाग्नि दोनो ही धारायें हैं। और शुभोपयोग मे :-दो धारायें यम और नियम का भी बड़ा भारी बल हैं। यह भी धारायें हैं। इस कामने अपने अतिशय प्यारे मित्र सप्त व्यसनों को साथ लेकर युधिष्ठिर को द्यूत व्यसन से, बक राजा को मांस खाने में, यदुवंशियो को मदिरा पान से, चारुदत्त को वैश्या सेवन से, राजा ब्रह्मदत्त को शिकार से, रावण को परस्त्री सेवन से नष्ट किया है। फिर सबके युगपत सेवन से तो ऐसा कौन हैं जो बचा रहेगा ? इससे हे मन ! तू खेद मत कर।

कनक तजे कामिनि तजे, तजे जाति को नेह।
एक मान को त्यागवो, तुलसी दुर्लभ येह ॥

अहंकार कहता है स्वामिन् !

राजा मोह से कहता हैं। आप आज कुछ चिन्तातुर जान पड़ते हैं। नीतिशास्त्र में कहा है कि, पुरुषों के लिये एक सत्य ही प्रशसनीय पदार्थ है। पक्ष का ग्रहण नही। देखो बाहुबली ने सत्य का अवलम्बन करके भरत चक्रवर्ती को पराजित किया था। सूर्य अकेला है उसके रथका एक ही पहिया हैं। सारथी भी एक पैर से लंगड़ा है। तो भी प्रतिदिन अपार आकाश से पार जाया करता है। इससे सिद्ध है कि महापुरुषों के कार्य की सिद्धि उनके (सत्व) तेज में रहती है। उपकरणों में

सहायक वस्तुओं में नहीं रहती है। अर्थात् जो सत्ववान (कीर्तिवान-तेजस्वी) होता है, वही अपने अभीष्ट की सिद्धि कर सकता है।

इसके सिवाय आप जिन लोगों को पक्षकार बनाने का प्रयत्न करते हैं, वे स्वयं निर्बल हैं। देखिये, मैं उन सब की कलई खोले देता हूँ। पहले कृष्ण जी को ही लीजिये। बेचारे जरासंध राजा के पुत्र काल यमन के डर से मारे सैन्य सहित सौरीपुर से भाग कर समुद्र के किनारे आरहे थे। और रुद्र महाराज तो उनसे भी बलहीन तथा शंख हाथ में लिये है क्यों ?' आपने एकबार सारी बुद्धि खर्च करके परमानंद को बरदान दे दिया था कि, तू जिस पर हाथ रखेगा वह तत्काल मर जावेगा। सो जब भस्मांगद ने पार्वती पर मोहित होकर आप ही आप वह कला आजमाने का प्रयत्न किया, तब बेचारे नादिया-गुदड़ी (कंथा)-और पार्वती को छोड़कर भागे और किसी तरह से अपनी जान बचा पाये। ब्रह्मा जी की तो पूछिये ही नहीं। एकबार ईर्षा से इन्द्रका राज्य लेने के लिये आपने वन में ध्यान लगाकर तपस्या करना प्रारंभ किया था। परन्तु इन्द्र की भेजी हुई रंभा तिलौत्तमा ने अपने हाव भाव विभ्रम विलासों से और सुन्दर गायन से क्षण मात्र में तप से भ्रष्ट कर दिया। भला, जब वे स्बयं अपनी रक्षा नहीं कर सकते हैं, तब दूसरों की क्या सहायता करेंगे ? इसलिये इनका भरोसा छोड़कर अपने सत्व का अवलंबन करना ही समुचित है। मैं अकेला ही उन प्रबोधादिकों के जीतने के लिये बहुत हूँ। सुनिये :—

(वीर सवैया ३१ मात्रा)

मेरे सम्मुख कौन निवाकर, कौन वस्तु है तुच्छ दिनेश।
राहु केतु की बात कहा है, गिनती में नहिं है नागेश ॥
सत्य कहूँ हे मोहराज ! नहिं डरूं जरा है कौन यमेश।
केवल भौंहों के विकार से, जीतों मैं सुर सहित सुरेश ॥

ऐसे प्रबल काम और क्रोध तथा अहंकार को जीतने के लिये संयम का अंकुश है। जो माता अम्बिका के हाथ में संकेत किया है।

भरत चक्रवर्ती विचार करते हैं कि :—

मैं चक्री पद पाय निरंतर भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनिक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे ॥
राज समाज महा अघ कारण, बैर बढ़ावन हारा।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल, याका कौन पतयारा ॥

यही तो रागद्वेष को पैदा करने वाला दोधारा है। जो द्वन्द मचाता है।

सुव्रत शील संतोष अरु, वर विवेक सुविचार।
तुव विन सारे विफल हैं, तुही सदा सुखकार ॥

ऐसा प्रबोध ने कहा।

दया कहती है— भाग्य उदय सों मनुज के, सुरगन होत सहाय।
तो के उलटे होत है, स्वजन हु दुर्जन राय॥

प्रभो! मैंने यहां से अयोध्या जाकर प्रातःकाल ही धर्मोपदेश रूपी प्रकाश के द्वारा जगत के जीवो का अज्ञानान्ध उड़ाने वाले श्री अरहंत भगवान का एकचित्र होकर इस प्रकार स्तवन किया।

(प्रभाती)

जगजन अघ हरन नाथ, चरन शरन तेरी।
एकचित भजत नित, होत मुक्ति चेरी॥ टेक०॥
होती नहिं विरद चारु, सरिता सम तुव अपार।
जनम मरन अगिनि शांति, होत क्यों घनेरी॥ १॥
कीनो जिन द्वेष भाव, तुम तें तिन करि कुभाव।
रवि सन्मुख धूलि फेंकि, निज सिर पर फेरी॥ २॥
शिव स्वरूप सुखदरूप, त्रिविध--व्याधिहर अनूप।
बिन कारण वैद्य भूप, कीरति बहुतेरी॥ ३॥

बांयें हाथ नं० ४ मे ढाल संकेत करती है।

यह ढाल क्षमा की है। विधाता के प्रतिकूल होने पर सुख कैसे मिल सकता है?

जानकी हरन वन रघुपति गमन औ, मरन नरायन को वनचर के बानसो।
वारिधि को बंधन मयक अक क्षयी रोग, शंकर की वृत्ति सुनो भिक्षाटन बानसों॥
कर्ण जैसे बलवान कन्या के गर्भ आये, बिलखे वन पांडुपुत्र जुआ के विधानसों।
ऐसी ऐसी बातें अविलोक जहा तहा, बेटी विधि की विचित्रता विचार देख ज्ञानसों॥

क्षमा कहती है बहिन दया का घात करने के लिये हिंसा को भेजा है। ऐसा सन्देश मिला है। इससे मेरा चित्त चिन्ता से व्यथित हो रहा है।

कापालिक धर्म स्मशान की भस्म शरीर से लपेटे हुए हाड़ो की माला का सुन्दर आभूषण बनाये हुये दोनो भुजाओ से आलिंगन करते हुये लाल नेत्र किये हुये भैरव का भक्त अपनी स्त्री से कहता है।

(मत्त गयन्द)

पीजिये प्यारी! मनोहर मद्य, मनोज की मौज बढ़ावत जोई।
खाइये खूब पराक्रमि मॉस, जवानी के जोर में उद्धत जोई॥

गाइये गान अनंग जगावन्न, वीणा बजाइये आइये दोई ।
बोलिये बात यही दिन रात कि, 'देह से भिन्न न आतम कोई' ॥

क्षमा (ढाल) कहती है, संकेत करती है।

यथार्थ में ये स्व एवं परात्म शत्रु तेरे तत्वों को नहीं समझ सकते हैं। इनके यहां दया का कोई प्रयोजन नहीं है। यह मत केवल इस लोक सम्बन्धी सुख भोगने के लिए बना है। यह तोते के समान तो राम-राम का जप करते हैं परन्तु वैसा मनोज्ञ आचरण नहीं करते हैं। मुख से राम और नेत्रों से रामा का दर्शन करते है परन्तु देव की ओर अथवा उनके पवित्र चरित्र और गुणों की ओर नही देखते हैं। ऐसे दन्ड से बचने के लिये यह ढाल का संकेत किया है।

वायें तीसरे हाथ में घन्टी काल (समय-टूंक काल) की सूचक है।

तनकंचन का महल है, तामे राजा प्राण ।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान ॥
यह तन हरियर खेत, तरुणी हिरणी चर गई ।
अजहूँ चेत अचेत, अधचर चरा बचायले ॥

यह शरीर सोने का आतमा का महल है। श्वाशोच्छवास इसमें राजा है। नेत्र इसकी खिड़कियां है और यह शरीर एक खेत है जिसे यौवनवती हिरणी कामिनी तेरे शील (ब्रह्मचर्य) को खाती जा रही है। ऐसे अचरे खेत को श्री अर्हंत भगवान की वाणी जिनशासनी देवी माता अम्बिका उपसर्ग दूर करने को सावधान करती है। दुःख समुद्र का तरंगों से निकल जा।

मृत्युकाल को संकेत करने के लिये यह घन्टी है।

दाहिना हाथ नं० ६ चक्र

(जोगीरासा: नरेन्द्र छन्द)

वज्र अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई ।
धर्मरत्न के चोर चपल अति, दुर्गति पंथ सहाई ॥
मोह उदय यह जीव आज्ञानी, भोग भले कर आने ।
जो कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन माने ॥

विषय विष चक्र अग्नि हैं। यह धर्मरत्न के चुराने वाले चंचल चोर हैं। प्रवल मोह के उदय से यह अज्ञानी जीव भोगों को भुजंग न मान कर भले ही करके मानता है। और यह भी जानता है कि विषय विष एक खुजली का रोग हैं। मृत्यु और संकटापन्न स्थिति को उत्पन्न करता है। यह मेरी आतमा के प्रवल शत्रु हैं, इसलिये :—

बाये हाथ नं० ६ में शंख मूर्खता का प्रतीक है।

जिस प्रकार से शंख का पेट फटा हुआ है उसी प्रकार से विषय लोलुपी को माता अम्बिका का उपदेश इस कान सुना और उसे पेट में न रखकर दूसरे कान से निकाल देना, गुणो का चिंतवन नहीं करना मूर्खता को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ८ खड्ग तलवार संकेत करती है।

दाहिने हाथ नं० ८ की तलवार का संकेत ऊपर बताते हैं। तीन पदवी के धारी तीर्थंकरों को जिनकी मूर्तियो के चित्र खड्गासन मे दो और पद्मासन मे एक है। यह चक्र पुरुषों को संबोधित कर यह प्रमाणित करती है कि शासन इन्ही का इस भरत क्षेत्र में प्रवर्त रहा है जिनको किसी भी जीव से राग-द्वेष नही है। सब के साथ समानता है। वृष का अर्थ धर्म और बैल से भी है। यह शिव जी का वाहन है। शिव का अर्थ कल्याण से है इसलिये कवि दौलतराम जी ने छहढाला मे कहा है—

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न तातें, शिव-मग लाग्यौ चहिये ॥

शिव-मग का अर्थ मोक्ष के मार्ग से है। यहाँ मोक्ष में आकुलता नही है। इसी में जहाँ आकुलता नही है वहीं सुख है। इसलिए बैल का संकेत किया है और सिंह पराक्रम का प्रतीकात्मक चिन्ह है। यह पुरुषार्थ को सकेत करता है। जो चक्रवर्ती पुरुष है, जिन्होंने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन किया है वही शिव कल्याणकारी हैं। उनमें किसी भी प्रकार का विरोधाभास नही है। इसलिए सिंह और बैल दोनों को एक घाट यानी जैनियो का प्रतीकात्मक चिन्ह झंडे में गाय और सिंह को एक ही पात्र मे पानी और भोजन करते दिखाया है। हिंसामय धर्म, धैर्य धर्मात्माओं का लक्षण नहीं किन्तु राक्षसी वृत्ति को संकेत करता है।

दाहिना हाथ नं० ७ मशाल संकेत करती हैं।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

मशाल-कीर्ति की द्योतक है। जिसकी कीर्ति संसार मे सूर्य के समान देदीप्यमान हैं। प्रकाश की सूचक एक मशाल है। वही विश्व का कल्याणकारी पुरुष जीवित है। एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति। कौरवों के सौ पुत्र और पांडु के पाँच पुत्र से आप तुलना कर लीजिये।

हाथ न० २ चक्र संकेत करता है कि :—

चक्र पुरुष ६३ शलाका के पुरुषो की ओर सकेत करता है। यह २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ प्रतिनारायण ११ रुद्र, १२ वलभद्र जो ६३ शलाका है पुण्य पुरुष हैं उन्ही की और सकेत करता हैं। इस प्रतिमा के चित्र मे चेतन, कर्म, और पुद्गल इनका वर्णन माता अम्बिका ने बताया है विशेष विवरण आचार्य वादिचन्द्र सुरि ने ज्ञानसूर्योदय नाटक जो कि जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय वम्बई मे छपा है पूरा उल्लेख पुरातत्व अनुसंधानको को मिलेगा।

हाथ बांया नं० २ जिसमें गदा है ।

गदा शस्त्र यह संकेत करता है कि तीन चीजों के वगैर तीन चीजें नहीं ठहरतीं । (१) विद्या बिना बाद विवाद के, (२) शासन बिना प्रभाव के (३) माल बिना व्यापार के नहीं ठहरता ।

भारत की भविष्यवाणी सम्राट चन्द्रगुप्त के १६ स्वप्न में यह स्पष्ट कर दिया है ।

विदिशा वैभव पृष्ठ १०८ देखिये ।

जो शासक धार्मिक प्रवृत्ति का है न्यायवान है सदाचारी है श्रावक के छह आवश्यक कर्मों का सदैव पालन करता है; परोपकारी और दानी है, विद्याविलासी है, उसी शासक की कीर्ति सदैवकाल चिरंजोवी रहती हैं और वह मरने के बाद भी जोवित रहती हैं । इसका प्रतीक गदा हैं ।

दाहिना हाथ नं० १०

दाहिने घुटने के यहां चक्र अग्नि को संकेत करता है ।

बांया हाथ का नं० १०

बांये घुटने के यहां चक्र काम को संकेत करता हैं । यह दोनों ही घुटनों के यहाँ बताये गये चक्र संसारचक्र से संबंध रखते हैं । जिसने संसार के स्वरूप को समझ लिया हैं और त्याग कर तपश्चरण कर मोक्षमार्ग में लग गया वही मुक्त जीव कहलाता है । उसी की दिव्य कीर्ति संसार में चिरजीवी रहती हैं ।

कामिनी और अग्नि के बीच में ज्ञानरूप गरुड़ है जिस पर कि भगवती अम्बिका बैठी है ।

कान में (दाहिने) कर्णफूल कानों का आभूषण है जो शास्त्र श्रवण सद्वचन सुनने के लिये संकेत करता हैं और बांये कान में जो शंख हैं वह मूर्खता को संकेत करता है कि मानव तूने गुरुओं के मुख कमल से सुनी वीतराग वाणी को इस कान सुना और दूसरे कान से निकाल दिया, मनन नहीं किया, मूर्खता की है; को संकेत करता है ।

मस्तक पर तृतीय नेत्र ज्ञान का हैं । हे मानव ! तु विवेकपूर्ण ज्ञान के नेत्र से देख । यह भाव हमें इस मूर्ति के दर्शन से अनुसंधान किये हैं ।

विद्वद् समाज से अनुरोध है कि किसी भी प्रकार की मूर्ति को आप जिसका कि किसी विद्वान ने भाव न समझ पाया हो कृपया उसका हस्तचित्र भेज कर पूरी जानकारी प्राप्त करें ।

इति दिनांक ३०-१०-६८

[लेखक-राजमल मड़वैया-पुरातत्व अन्वेषक विदिशा (म. प्र.)]

*

विदिशा नगर के अनोखे जैन कवि पं० खूबचन्द्र जी जैन परवार का

वंश-परिचय और साहित्य

अक्कलसार ग्रन्थ

(दोहा)

अष्टादश की साल में, अन्त छियालिस सार।
माघ वदी द्वादशी को, कही खूब परवार ॥

अक्कलसार ग्रन्थ के लेखक श्री खूबचन्द्र जी दिगम्बर जैन परवार जाति के रत्न थे। तत्कालिक समय मे श्रीमन्त महाराजा दौलतराव जी सिंधिया ग्वालियर नरेश थे। विदिशा नगर का पूर्व नाम भद्दलपुर, भद्रावती, भिल्लन-स्वामिन, भेलसा, आलमगीरपुर रहे। इनके राज्य काल मे पिडाराशाही विक्रम सं० १८८३ मे आपसी फूट कलह, विद्वेष एवं स्वार्थवश डांके कशी राहजनी और लूट पाट अधिक होती थी। रेल, तार, टेलीफोन आदि की कोई सुविधा नहीं थी। ऐसे संकटकाल में आपने एक कवित्त लिखा था:-

(कवित्त)

मूरख मों-जोरी करे, कहो तो गाली देत।
अन्धा नाचे खोय में, चोर बलैयां लेत ॥
चोर बलैयां लेत, बहुते फिर खुशी जो मानें।
जे अज्ञानी मूढ़, आप जो डेढ़ सयाने ॥
कहें खूब तज संग, चूहे पै बिल्ली घूरत।
ज्ञानी थोड़े रहें, बहुत से होंय जे मूरख ॥

(फूट)

सांझे फूटी ढोल जो, फूटो ताल की पार।
फूट कुटुम्ब में जब भई, होते हैं जब ख्वार ॥
होते हैं जब ख्वार, फौज में फूट बुरी है।
हो आपस में बैर, चलत तलवार छुरी है ॥
कहें खूब जे फूट, झूठ को कोई न मांजे।
कान आंख गये फूट, बुरी फूटी है सांझे ॥

इस प्रकार से अक्कलसार ग्रन्थ में श्री खूबचन्द्र जी ने अक्कल बुद्धिमत्ता की बातों का उल्लेख कविता, छन्द्र, सवैया, सोरठा आदि में उल्लेख किया है। यह ग्रन्थ हस्तलिखित और अप्रकाशित है।

अक्कलसार ग्रन्थ जैसे हजारों शास्त्र तो आलमगीर ने जलवा कर भस्मीभूत कर दिये। जो कि ३० जैनाचार्यों का शास्त्रभंडार था यह आचार्य पट्टाधीश इस विदिशा के हुये हैं। दर्पण के समान ज्ञान के प्रकाश को विकसित करने वाले थे जो गुण और दोषों का बोध कराते थे। कुछ परवार दिगम्बर जैन मन्दिर में भी है। ग्रन्थों के अप्रकाशितता के कारण निम्न हैं—

मन्दिर में पंचायती द्रव्य है किन्तु मूर्खतापूर्ण स्वार्थबर्बता चरम सीमा तक पहुँच चुकी है। न तो सत्ताधारी कुछ परमार्थ के काम करते हैं और न दूसरे गरीब जैन बन्धुओं या अन्यों के उपकार में ही लगाते हैं।

व्यवस्थापकों ने खजाने पर अधिकार जमा रखा है। मन्दिर के ट्रस्ट का रजिस्ट्रेशन क्यों नहीं हुआ ? इसलिये कि पुराने हिसाब का स्पष्टीकरण होगा और समस्त पौल खुलेगी। सालाना हिसाब देना पड़ेगा। स्वार्थपूर्ति के लिये एक मीटिंग दिनाक २४-८-१९३५ को स्थान—श्री दिगम्बर जैन मन्दिर स्टेशन माधवगंज पर बुलाई गई। और व्यवस्थापकों ने इस मीटिंग में यह तय किया कि बड़े मन्दिर में कोई बारी विधान न करे, सालाना पत्रज में कोई द्रव्य न देवे। आवश्यकता-नुसार दर्शन करे।

मन्दिर जी की उन्नति और धर्मप्रभावना के एक अंग (पर्यूषण पव में) पूजा विधान करने वालों के घर घर जाकर विधान की सामग्री को चंवर, छत्र, लिशान; छड़ी आदि लेकर सामूहिक जनसमुदाय के साथ जाते थे। उस प्रथा को सदैव को बन्द कर दिया।

लोकोपकारी सुकृतकार्य गरीबों की सहायता; सहानुभूति, मन्दिर की व्यवस्था, पंचायती न्याय पद्धति, समाज सुधार व अन्य नूतन धार्मिक जीवदया, पुरातत्व संरक्षणादि के लिये कोई ध्यान नहीं है। यही कारण है कि आज मूर्तियां हर जगह तौड़ी जा रही हैं। अपने घर की सामग्री को शासन में घुसे विध्वंसकों को सुपुर्द कर सदैव के लिये समाप्ति करने का उत्तरदायित्व लिया है। इस आशय का श्री स्वर्गीय सिंघई मूलचन्द्र जी के हाथ का पत्र मिला है। जिसमें दिनांक ७-९-३५ है।

आज भी ठाकुर भेरोंसिह जी की हवेली की दीवाल में नाली के ऊपर ७-८ फुट लम्बी भगवान पार्श्वनाथ की खडगासन प्रतिमा दबी हुई है। सभी को दिखाई भी जा चुकी है। किसी का ध्यान उस ओर नहीं है। यहां पर पूर्व में एक बड़ा भारी जिनालय था और उसकी गट्टी बनाई गई। यह है श्रीमानों का सांस्कृतिक प्रेम !

समाज के कर्णधारों के प्रतिभाशाली कार्य—

दिगम्बर जैन समाज विदिशा की पूर्व से यह परम्परा रही है कि—समाज के लावारिसों का माल (चल-अचल सम्पत्ति) राज्य में नहीं जाती थी और उसका उपयोग समाज के गरीब

बन्धुओं के लिये सहायतार्थ देने की सुविधा रही हैं। जिससे संस्था भली प्रकार से चल सकती थीं। बन्द कर दिया है।

और जो इतिहास से भरी हुई अपूर्व सामग्री धातु की कलापूर्ण को जिसकी वर्तमान में बड़ी कीमत मिल सकती थी स्वार्थपूर्ति के लिये चन्द कागज के लोभ में पानी की तरह बहा दिया।

लावारिसो के मकान दुकान, खंडहर, अचल संपत्तियों का हड़पना, वर्तमान मे मन्दिर की जायदाद कितनी और किसके अधिकार में है, उन्हो से मन्दिर को क्या आय है ? कोई वार्षिक रिपोर्ट पूर्व से आज तक प्रकाशित कर जनता के समक्ष नही लाई गई है। क्या कारण है ? वह हैं स्वार्थ।

द्रव्य का सदुपयोग सामाजिक उत्थान, अनाथों विधवाओं, और वेरोजगारो को आजीविका से लगाने, उनकी शिक्षा, स्वास्थ रक्षा, साहित्य प्रकाशन मे जीवदया आदि धार्मिक कार्यों में धर्मानुकूल सस्थाओं के संचालन मे जैसा होना चाहिये व्यय नही किया जाता हैं। और न यह भी बताया जाता है कि कितना द्रव्य ध्रुव फंड मे जमा हैं ? कितना वार्षिक व्यय हो रहा है !

श्रीमान सज्जन स्वयं के दोषो को छुपाते हैं दूसरो को दोषी बनाकर बहिष्कृत कर चकाचक लड्डू खाने के लिए दावतें लेकर अपनी मनमानी पंचायतो पच फैसले करते हैं और सदैव को विधर्मी बनाकर लाखों रुपयों का नुकसान करते हैं तथा जन, और धन से हाथ धो बैठते हैं। एक नमूना :—

श्री बट्टूलाल जी जैन परवार विदिशा निवासी को सुपुत्री श्रीमतो रज्जीबाई जी प्रधान अध्यापिका शाला विदिशा की १ लाख रुपये की चल और अचल सम्पत्ति को अन्याय और अत्याचारों से खो दिया जिसे बालकदास वैरागी ने खून कर हड़प ली।

तथा श्री छब्बीलाल जी परवार की धर्मपत्नी श्रीमती पूनाबाई जी, श्री कालूराम जी की सुपुत्री गजरीबाई, सिंघई छुट्टीलाल जी की धर्म पत्नी जिज्जाबाई जी इनके कत्ल हुए, कुर्की कराई, यह विधवायें थी। यह है जैन समाज के दानवीरो की दानवी। और देखिये :—

लेखक के काका जी श्री भगवानदास जी पुत्र श्री बशीधर जी जैन मड़वैया भेलसा निवासी ने निजी निवास गृह अन्दर किला कार्तिक चौक का विद्या दान मे परिषद के समय हाईस्कूल की स्थापना के समय दिया था। जिस दानकी रसीद नही दी और उस मकान को बेच डाला। जिस उदार दानी समाज मे ऐसे धर्मात्मा बडी लंबी पूजन करने वाले हों जिनके पास केवल :—

ईर्षा मद अविवेकता, निर्दयता धुन जान।
बहु अनर्थ इक ही करे, चारों मौत समान॥

यह चारों ही हो तो क्या ? वह समाज उत्थान पा सकेगी ? कदापि नहीं। समाज से चन्दा वसूल करना, ध्रुव फड बनाना, मोहरे मिलाना भूखे को भोजन नही देना, अपमानित करना, तथाकथित समाजसुधारक नेताओ का काम है। यह लेखक के साथ अनुभव मे लाई गई घटनाओ को तुलनात्मक रूप से समाजसुधारको को मार्गदर्शन कराया है। यही एक पतन का कारण हैं।

*

खामबाबा-हेलिओदर स्तंभ, विदिशा

शिलालेख—देव देवेस वासुदेवस गरुड़्ध्वजे संस्थापितः।
अन्य कारितं इय हिलिओदरेण तक्षशिलाकेन यवनदूतेन आगतेन ॥

इस शिलालेख की भाषा ब्राह्मी है, बोली प्राकृत है। स्तंभ पर लिपि उत्कीरित है। यह खामबाबा के नाम से विख्यात है। धोवर (भोई) मछली के शिकारी इसको पूजन करते हैं। और इसे आराध्यदेव मानते हैं। इसे विष्णु के मन्दिर के सामने हेलिओदर ने खड़ा कराया था। जैन संस्कृति में इसे मानस्तभ कहते हैं। गरुड़ ज्ञान को कहते हैं। ध्वज राज्यचिन्ह माना जाता है। इससे यह सिद्ध है कि ज्ञानीजन जो योगीपुरुष हैं वह मत्स्यावतारी कहलाते हैं, चूंकि उन्होंने मनरूपी मछली पर विजय पा ली है। चचल मन पर विजय पाने वाला हो वीर पुरुष होता है। और उसकी सुगंधि विश्व के प्रांगण मे फैल जाती है।

वह मरने के पश्चात् भी जीवित रहता है। ऐसा तक्षशिला का रहने वाला ग्रीक जाति का वीर पुरुष, पंजाब के अतिलिक्ति नाम के ग्रीक राजा की तरफ से मध्य प्रदेश के भागभद्र राजा के पास वकील था। उसने भागवत धर्म स्वीकार किया था।

यह खंभा स्तंभ २ हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। ईसा से १५० वर्ष पूर्व का बना है। इसका जीर्णोद्धार श्रीमंत महाराजा माधवराव जी सिंधिया ग्वालियर के आदेशानुसार पुरातत्व विभाग के अंतर्गत श्रीमान डायरेक्टर एम० बी० गर्दे के द्वारा सं० १९७७ में हुआ।

यह मन प्रधान मन्त्री है—

अभिमानं सुरापानं गौरवं घोररौवरं।
प्रतिष्ठा शूकरी विष्टा, त्रयं तिक्त्वा सुखी भवेत् ॥

इसलिए वीतरागी पुरुष रक्षामन्त्री हैं—

विन कषाय के त्यागतें, सुख नहिं पावै जीव।
ऐसे श्री जिनवर कही, वाणी मांहि सदीव ॥

अवतार १० हुये हैं, उनमें मत्स्य अवतार प्रथम है। नो चीजें चंचल होती हैं—

मन मर्कट मधुकर मरुत, मत्त मानिनी मीन।
मा अरु मन्मथ ये नवों, चपल मकार प्रवीन ॥

जिस प्रकार से मछली दुर्गंधित है उसी प्रकार से राक्षसी वृत्ति धारकों का भी मन दुर्गंधित है। हिंसक वृत्ति के धारी, मांसाहारी, शिकारी धीवर लोग होते हैं। भावों में शुद्धता आने पर एक ग्रीक जाति के वीर पुरुष ने भागवत धर्म स्वीकार किया, उसका यह स्मारक आज हजारों वर्ष तक चिर स्मृति बतलाता है। और एक ओर हमारे पुण्य कार्यो में रोड़े अटकाने वाले रिश्तेदार; पिता पुत्र का नाता रखने वाले गहरी चोट देते हैं। उनकी दानवीरता जोकि पृष्ठ ३०८ से संबंधित है ध्यान दिलाता हूँ। जबकि विदिशा मे मेवातियों द्वारा डाके डाले जाते थे। उनका एक साकार चित्रण—

लावनी

माह दिसम्बर है संवत उनसठ, जिला भेलसा में अवनी है।
सोर हुआ बागियों का ज्यादह, महाराज ने भेजी छावनी है॥
एक किस्म का था जोर उनका, न कोई बस्ती में आवे जावे।
अगर चपल भूला कभी जो निकला, तो अपनी खिस्ता खाल करावे॥
थी नाकेबन्दी इन्हों के हरदम, न कोई भेदों को उनके पावे।
जिधर को लूटे उधर को जावे, रिया को हरदम पै दम सतावें॥
शहर मुहम्मद अली सूवा थे, वो तो बागियों से बच गये।
कहां गये लश्कर गये, कानिस्टबिल सब मिल गये॥
नहीं हुआ इन्तिजाम जब तक, और जिलों की आई पुलिस।
भेलसे की ले गये, दूसरे जिले भेजे गये॥
धावा दिया जंगीर जुवट ने हाय कहें मेवातनी हैं।
जोर हुआ बागियों का ज्यादह, महाराज ने भेजी छावनी है॥
सुनो बागियों के नाम मुझ से, नामी गिरामी भी इसमें आया।
अलफ खां खूवाजू कमाल खां ने, गोल मेवातियों का बनाया॥
कड़ोरी मेंना दलीप हलका और गंगा कोरी कोरण का जाया।
नोम गर बाबा और चांद खां ने धनोरा पठारी में गुल मचाया॥
इनके लिये सरकार ने भेजा गया इश्तहार को।
जो करेगा मुखवरी वह पायगा इनाम को॥
इस गोल में थे कई बड़े बड़े मेवसी,
शोर गुल ज्यादह हुआ, जिन्होंने काटी नाक को॥
धावा दिया जंगीर जुवट ने हाय हाय कहें मेवातनी हैं।
जोर हुआ बागियों का ज्यादह, महाराज ने भेजी छावनो है॥
जिला भेलसा के दिन फिरे, जब सूवा बाजीराव साहब आये।
माशूक अली सुप्रिन्टेन्डेन्ट भी साहब साथ आये॥
तो कोशिस इन बागियों की साथ लाये।
सरदार खां अलावक्स, यह दोनों मुखबिर ही आप आये॥

इनाम पायगा वो ही जो आके इन बागियों का पता चलाये ।
हो गया सोर देखो बागी थे सो छुप गये ॥

मेवातनी और बच्चे जेल में भेजे गये । दूसरा इन्तिजाम जब तक हो गया । बागियों के सिर कटे सूवा साहब को दिखलाये गये । भेलसा के चारों रस्तों पर देखे टंगे सिर मेवातनी है । जोर हुआ बागियों का । इस घटना को अधिक समय नहीं हुआ है, देखिये पृष्ठ ३०८ से क्रमशः ।

卐

दानवीरों की दानवीरता

प्राचीन जैन और हिन्दू धर्म की मूर्तियों का जहाँ भंडार था वहां पर गिट्टी बनाई जा रही थी, उसकी रक्षा के लिये लेखक ने प्रयत्न किया और कुचला गया । इसी पर यह पुस्तक लिखी गई ।

विदिशा नगर का पूर्व नाम भेलसा था । इस नगर में रायसेन निवासी श्रीमान् सेठ छोटेराम जी परवार गरीब घर के थे, जो बैल लाद कर बंजी भोंरी करके उदर-पोषण किया करते थे । इनके एक पुत्र श्री सितावराय जी नामक थे । इनकी सगाई श्रीमती शक्करबाई जी से हुई और श्री सितावराय जी का भविष्य पलटा । और मेवातियों से इनका व्यापार शुरू हुआ । द्रव्य संचय हुआ । कुछ धर्म कार्यों में लगाया, बेदी बनवाई, वेदीप्रतिष्ठा कराई, भोज्य दिया, सराफी की दुकान खोली, समाज में व अन्य लोगों में सम्मान पाया । किन्तु भोगने वाली सन्तान का अभाव रहा । सेठ सिताबराय जी बीमार हुए और भेलसा के हासपीटल में उनका अंत हो गया । और वह घर ले जाये गये । वहाँ से इनकी अन्तिम यात्रा की तैयारी हुई ।

श्रीमती शक्करवाई जी दो बहिनें थीं । उनके दो पुत्र थे । बड़े भाई छुटकनलाल जी और छोटे (श्रीमंत सेठ) लक्ष्मीचन्द्र जी जो लेखक के सगे मौसिया (दोनों भाई) थे । श्रीमती शक्करबाई जी ने इन्हे गोद इसलिये लिया कि वह इनके यहां बरसो से रहते आये, पले पुसे थे, सारा कारभार सम्हालते थे । यह उत्तराधिकारी बनाये गये ।

इधर बाबू तखतमल जी और सेठ राजमल जी बड़जात्या ने दि० जैन परिषद का अधिवेशन भेलसा में कराया और उसमें हाईस्कूल की स्थापना को ५० हजार का दान घोषित करवाया । उसमें जनता का भी सहयोग मिला और १ लाख का चन्दा हो गया । नाम सिताबराय लक्ष्मीचन्द्र जैन हाई स्कूल रखा गया ।

पुरातत्वीय सामग्री धातु निर्मित जो पुरातत्व की दृष्टि से बेशकीमती थी वह पानी की तरह बहा दी गई ।

अब देखिये १६७२५०० रुपयों का दान—

परिषद के समय हाई स्कूल की स्थापना और अन्य दान	३५००००)
धर्मशाला की स्थापना एवं निर्माणकार्य लागत द्रव्य	१०००००)

जैन मन्दिर माधवगंज विदिशा की स्थापना लागत द्रव्य	५००००)
जैन कन्या माध्यमिक शाला	४००००)
जैन कालेज	६०००००)
जैन ओषधालय	२५००००)
जैन छात्रवृत्तियाँ	६५०००)
परवार सभा छात्र वृत्तिया	५०००)
जैन साहित्योद्धारक फड	३००००)
स्मशान घाट धर्मशाला शेड	१५०००)
दो गावों मे पाठशाला भवन को मकान खरीद कर दिये	२०००)
उदयगिरी गुफाओ के जीर्णोद्धार के दान में	३०००)
शासकीय चिकित्सा भवन के लिये शल्य चिकित्सार्थ टेवल	२०००)
गणेश वर्णी पाठशाला को आधा व्यय	प्रति मास १००)
गोपाल दि० जैन विद्यालय मोरेना को दान	२०००)
महावीर जी मे महिलाश्रम को	१५००)
जैन साहित्य प्रकाशन-अध्यात्मवाणी आदि में	५०००)
जैन छात्रावास	१०००००)
जैन मिडिल स्कूल	१०००००)
देवगढ के जैन मन्दिर व मानस्तभ जीर्णोद्धार	२०००)
टोटल—	१६७२५००)

श्रीमन्त सेठ जी की दान की यह राशि सराहनीय है।

✲

शिव-ताण्डव

भारतीय प्राचीन संस्कृति में प्रायः भगवान शंकर को सभी पूजते और मानते हैं। किन्तु यह नही जानते कि भगवान शंकर की प्रतिमा मानव से क्या कह रही है। वह हमें ऐसा कौनसा अद्भुत प्रसाद ज्ञान के रूप मे देती हैं जो हमारे मानव जीवन को सार्थक बनाती हैं ! और भगवान शंकर ने ताण्डव नृत्य क्यों किया और इसका मानव जीवन से क्या सम्बन्ध है ? जिसके ४ खाली हाथ क्या करते हैं ? शेष ८ हाथ सांकेतिक चिन्ह पकडे हैं।

भगवान शंकर कहते हैं कि देखो मेरी १२ भुजाओं का क्या कहना है ? दाहिना हाथ नं० १ ऊपर की ७ शिखाओं की ओर संकेत करता है। दाहिना हाथ नं० २ में वेद हैं और सर्प की पूंछ पकड़े हैं।
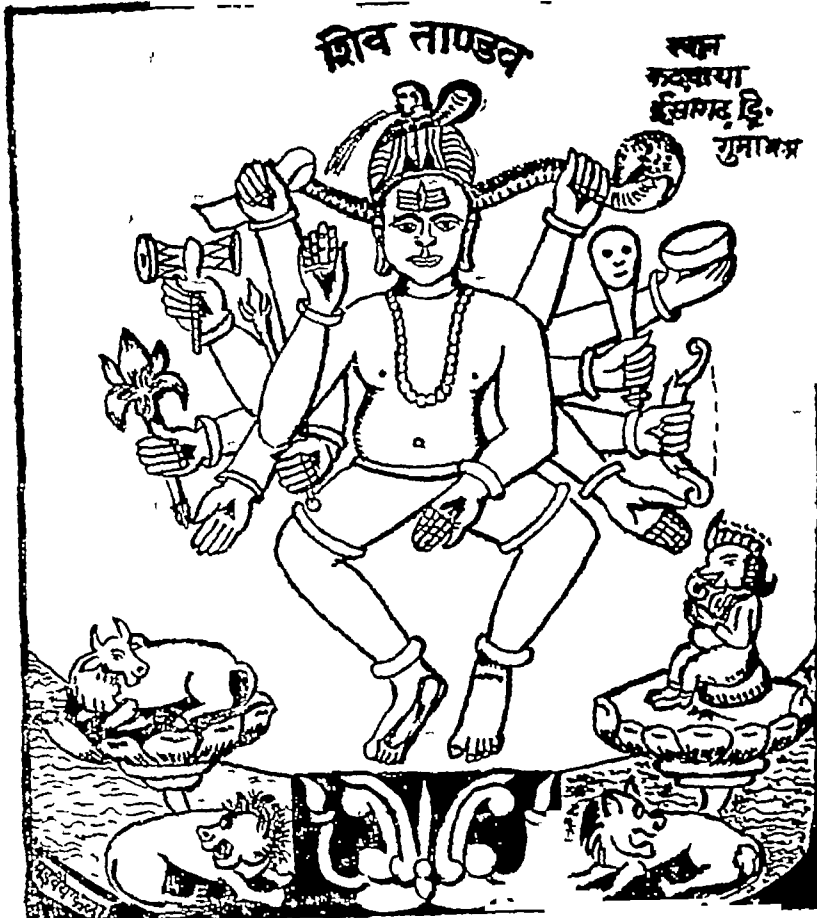
भावार्थ—हाथ में वेद मानव के विद्याभ्यास की ओर संकेत कर कहता है कि आप विद्याभ्यास के द्वारा ज्ञानोपार्जन कर नाना प्रकार के सुख, वैभव और आत्मरक्षा कर सकते हैं, किन्तु मूर्ख मानव और पशु दोनो ही अविवेकता के कारण न स्वात्मानुभव प्राप्त कर सकते हैं और न आत्मरक्षा ही कर सकते हैं।

सर्प की पूंछ पकड़ने का अभिप्राय: यह है कि देवो ने पूंछ इसलिए पकड़ी है कि राग, द्वेष और कषाय यह काल: (मृत्यु) को आमन्त्रित करते हैं। यह शीघ्र ही छूट जावें। जिससे जन्म और मरण का भय समाप्त हो जावे। आत्मकल्याण कर सकें।

मस्तक पर तृतीय नेत्र विवेकपूर्ण ज्ञान का सूचक है। कि बिना बिचारे कोई काम मत करो।

प्रथम ही जो सोच करके बात है कहता नहीं।
वह बिना लज्जित हुये संसार में रहता नहीं ॥

मस्तक पर त्रिपुंड:—

रजो गुण ब्रह्मा, तमो गुण शंकर, सतो गुण विष्णु अर्थात् अहं ब्रह्मास्मि-मैं ही ब्रह्मा हूँ।

शिवोऽहं-मैं ही शंकर हूँ। अहं विष्णुः मैं ही विष्णु हूँ। कैसे ? यह बात पूर्व में समझाई गई है। (देखिये पृ० ८४, ६२, ६५)

दोनो चर्मचक्षु कहते हैं -

इन नयनन का यही विशेख, मैं तोय देखूं तू मोय देख।
देखत देखत इतना देख, मिट जाय दुविधा रहि जाय एक॥

तन कंचन का महल है, तामें राजा प्राण।
नैन झरोखा पलक चित, देखो सकल जहान॥

पुद्गल परमाणुओ का पिंड यह मानवशरीर महल के रूप में नाशवान है। इसमें चैतन्य स्वरूप आत्मा जो कि—

नर–तन रथ सम जानिये, आत्मा सारथि जान।
इन्द्रिय गण घोड़े विलख, चढ़ पावें धीमान॥

को संकेत करता हैं। पुद्गल नाशवान वस्तु से राग विषय भोगों को भोगने में आनन्द और वियोग मे दुख मानकर द्वेष करता है। शुभ पुण्योदय से सयोग मे सुख और वियोग में पापोदय से चिंतित अर्थात् हर्ष और विषाद मानता है। जिसे हे भव्य तू अपनी इन चमड़े की आंखों से देखता है, को संकेत करती है। वह आंख तो दूसरी हैं—

परख सकती नहीं रत्नों को हर इंसान की आखें।
दिखाई ब्रह्म क्या देवे, जो न हों ज्ञान की आखें॥

सिर पर जटाओं में सर्प क्यो लिपटा है—

यह मृत्यु-काल को बतला रहा है कि तेरी मृत्यु इन विषयो के कारण इन सात वारों में है जो तेरे सिर पर कालरूप बनकर छाये हुये हैं।

जटाओं से गगा का बहना:—

यह एक वाणीरूपी गगा है। यह अथाह है। इसकी गहराई का किसी ने पता नही लगा पाया है। इनका सदुपयोग विवेकी मानव ही कर सकता है। मूर्ख मानव इसका दुरुपयोग करता है। इन सातो सकेतो को यह एक हाथ जोकि खाली है और ऊपर को सकेत कर रहा है।

हाथ न० ३--दाहिना जिस हाथ मे डमरू हैं। मानव इस संसार में एक रास्तागीर के तौर पर खेल तमाशा करने वाला मदारी है जोकि थोड़े से काल मे संसार के लोगों को अपनी शुभ और अशुभ रूपलीला क्रियाकलाप दिखा कर चला जाता है, को सकेत करता है।

दाहिना हाथ न० ४--मे कमल संकेत करता है कि (कमल लक्ष्मी का द्योतक है।)

या लक्ष्मी के काज तू, करत अनेक उपाय।
सो लक्ष्मी संग ना चले, काहे मूल्यो भाय॥

धन क्यों एकत्रित किया जाता है ? इसलिये कि—

विपति नाश हित जोड़ धन, धन से पालो नारि ।
नारि और धन से सदा, निज रक्षा कर यार ॥

अन्यायोपार्जित धन पर आचार्य कहते हैं—

जो धन जुरे अनीति को, वर्ष दशक लों खाय ।
दशक वर्ष के बाद में, जरा मूल से जाया ॥

यह लक्ष्मी मरने के बाद साथ नही जाती केवल यश ही मानव को अमर बनाता है ।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान ।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान ॥

धर्मात्मा का निर्धन जीवन विज्ञों ने उत्तम सदा कहा—पर पापी धनी पुरुष का जीवन; भला किसी ने नहीं कहा। को संकेत करता है।

हाथ नं० ५ जो खाली है और वृषभ-बैल की ओर संकेत कर कहता है-कि वृष का अर्थ बैल और नन्दि तथा धर्म से है, क्योकि धर्म—

धर्महि एक सुमित्र है, जो छोड़त नहिं साथ ।
मरन समय या काय संग, छोड़ देत सब हाथ ॥

इसलिए धर्म कहता है कि-बड़ा कौन है—

दया धर्म हिरदै बसै, बोले मोठे बैन ।
तिनको ऊचे जानिये, जिनके नीचे नैन ॥

मरना भला है उसका, जो अपने लिये जिये ।
जीता है वह जो मर गया, संसार के लिये ॥

वाण का हाथ नं० ६ कहता है कि-हे भव्य तुझे तो नैन बाण लगा है ।

वाण लगे तो काढ़िये, कीजे कोटि उपाय ।
नैन वाण जो हिय धसे, सो नहिं काढ़यो जाय ॥

इस पर तू विवेकपूर्ण ज्ञान का वाण ध्यान रूप धनुष पर चढा जोकि बाँये हाथ नं० ४ में है को संकेत कर रहा है। जोकि क्रमशः नैनवाण, कामवाण और वचनवाण हैं इन पर संयम रख। इनका ही पकड़ना तेरे लिये हितकर है। यह वर्णन दाहिने अंग का है।

✱

बामांग–वर्णन

बाया हाथ न० १––संसार का विषय भोगी मानव कामरूप सर्प को पकड़े है।

बाया हाथ नं० २––विषय भोगो के लिये कन्या को याचना करता है तथा स्वार्थ वासनाओं की पूर्ति के लिये तथा व्होट माग कर राज्याधिकार प्राप्त कर हर्षोन्मत्त होकर गाता और नाचता तथा दूसरो को व उनके साथ रासलोला करता है को संकेत करता है। भिक्षा पात्र द्योतक है।

बाँया हाथ नं० ३ जिसमें मुंड लिए है। साँसारिक भोगों के लिये नारी को ओर संकेत करता है।

बाया हाथ न० ४ धनुष –सांसारिक भोगी मानव का ध्यान संसार के भोगो की ओर है यही कारण है कि वर्तमान शिक्षा मे सप्त व्यसना को प्रधानता दो जा रही हैं। और गांधी जी की अहिंसा आदि पर अथवा उसकी आड मे विषयी मानव अपनी मनमानी करता जा रहा है। स्वय के नैतिक स्तर की ओर नही देख रहा है। क्या इसे उन्नति का पथ कहेंगे ? नही।

बाया हाथ न० ५–जोकि खाली हैं और गणपति जी को ओर संकेत कर रहा है कि हे भव्य ! तेरा ध्यान जैसा विषयो को ओर है वैसा अपने चैतन्य स्वरूप पवित्र आत्मा की ओर नही है। गणपति कौन हैं ?

गणमानव के शरीर की इन्द्रिया हैं और उसका पती चैतन्य स्वरूप आत्मा हैं जोकि इस मानव शरीर का स्वामी ब्रह्म है को संकेत करता है।

बाया हाथ नं० ६–जोकि खाली और नीचे दाहिने पैर की ओर संकेत कर कहते हैं कि तेरा अधःपतन हो रहा है क्योंकि तुझे धार्मिक अभिरुचि नहीं है। तू सज्जन पुरुषो के बीच बैठ कर धार्मिक शिक्षा प्रदज्ञान जिससे तुझे सत्संग का लाभ मिल सके योगसाधना नहीं करता हैं। इसलिए तेरा पतन अवश्य हैं। यह शिव जी का ताण्डव नृत्य मानव के जीवन मे किस प्रकार से छुपा हुआ हैं। विद्वद् समाज समझे मनन करे और भविष्य की सन्तानो को मार्गदर्शन कराकर शिक्षा के माध्यम को उन्नति के शिखर की ओर ले जावें, आशा है।

स्वामी-समन्तभद्राचार्य की मूर्ति-

मार्कण्डेय ऋषि के तथा शंकर के रूप में

यह प्रतिमा हमें एक श्वेत पाषाण पर उत्कीरित संगमरमर की मालियों के मार्कण्डेय के मन्दिर मोहल्ला तलैया में देखने का शुभावसर मिला।

इस प्रतिमा के दर्शनावलोकन, अध्ययन और अनुसंधान से यह पता लगा कि यह प्रतिमा स्वामी समन्तभद्राचार्य की है।

इसके प्रमाण

सोमनाथ शिवालय जोकि बेलूर तालुके के रामानुजाचार्य के मन्दिर के अहाते के अन्दर सोमनाथ मन्दिर की छत में लगे एक शिलालेख पाषाण पर उत्कीरित है लगा है। यह शिलालेख कनड़ी भाषा में है। इसका उल्लेख शिलालेख नं० १७ ई० सी० व्ही० में है और स्वयम्भू स्तोत्र स्वामी समन्तभद्र परिचय जो श्री पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार द्वारा दिल्ली से प्रकाशित है। पृष्ठ ९९ में आचार्य की सफलता के सम्बन्ध में लिखा है, मिलता है।

यह सभी विद्वानों, धर्मप्रेमी जिज्ञासुओं को विदित है कि स्वामी समन्तभद्राचार्य को भस्म व्याधि हुई थी और उसकी क्षुधा शांति राजा शिवकोटी बनारस के शिवालय के पुजारी बनकर रहे १। मन के प्रसाद द्वारा हुई थी। और राजा शिवकोटी को अपने तपस्या के चमत्कारिक योगबल द्वारा जिनधर्म का उपदेशामृत पान कराकर ही जिनदीक्षित किया था। इसका उल्लेख मंगलाष्टक गुर्वावली में निम्न प्रकार है—

स्वामी समन्तभद्र मुनिवर सों, शिवकोटी हठ कियो अपार।
बन्दन करो शम्भु पिंडी को, तब गुरु रच्यो स्वयम्भू भार॥
बन्दन करत पिंडिका फाटी, प्रगट भये जिन चन्द्र उदार।
सो गुरुदेव बसो उर मेरे, विघ्न हरण मंगल करतार॥

ध्यान देने की क्या यह बात नहीं है कि जैनाचार्यों ने आचार्य स्वामी समन्तभद्र को १ आचार्य २ कवि ३ वादिराट् ४ पंडित (गमक) ५ दैवज्ञ (ज्योतिर्विद) ६ भिषक् (वैद्य) ७ मांत्रिक (मंत्र विशेषज्ञ) ८ तान्त्रिक (तन्त्र विशेषज्ञ) ९ आज्ञा सिद्ध १० सिद्ध सारस्वत क्यों कहा है? इन उपाधियों से विभूषित किया है। देखना यह भी आवश्यक है कि यह प्रतिमा का यहाँ मिलना क्यों? यह क्षेत्र आचार्य स्वामी समन्तभद्र का पूर्व में वादस्थल रहा है। इसलिये इस प्रतिमा का मिलना असम्भव प्रतीत नहो होता है।

मूर्ति का आकार प्रकार निम्न प्रकार है—

स्वामी समन्तभद्र शिवलिंग की जिलहरी पर शंकर के रूप में चार भुजा धारण कर खड़े हैं। चारो भुजाओ में से एक हाथ मे ज्ञान का बाण दूसरे में मनरूप हाथी को वश करने के लिये

अंकुश हाथ में लिये हैं। क्यो गले मे सर्प १८ दोष जो जैन शासन में बतलाये हैं उनमें क्षुधा की भस्म व्याधि को सकेत करता है।

शिवलिंग जिलहरी मे रखा हैं। शिवलिंग पुरुष लिंग का द्योतक चिन्ह है। जिलहरी नारी की गुप्तांग की ओर ध्यान दिलाता है। यह मानव शरीर विषयो का धाम अर्थात् घर है। और विषयो को धारण करने से विषधर-सर्प को संकेत करता है। विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन में कहते हैं-

काम-नाग विष-धाम, नाश को गरुड़ कहे हो।

यह स्पष्ट रूप से ज्ञात कराता है।

इस कारण से यह मानवशरीर शिव अर्थात् कल्याण का घर है। राजा शक्तिशाली था। उसने अहभाव के कारण शिवलिंग पूजन के लिये करोड़ शिवलिंग निर्माण कराये थे इस कारण से शिवकोटी नाम से प्रख्यात थे। इसे कहते हैं यथा नाम तथा गुण। गुणों के अनुसार भारत में नामसंस्करण की प्रथा थी।

शिवालयों में जो शिवलिंग पर नागफण फैलाये है वह काम नाग को और जिलहरी से लिपटा हुआ सर्प कामरूप नागिन को संकेत करता हैं। और वह राजा शिवकोटी को शक्ति को पकड़ने का भाव प्रदर्शित करता है।

लिंग की आकृति गोल अन्डे के समान है। वीर्य एक जलबिन्दु अर्थात् एक शक्ति है जिसे ब्रह्मचर्य कहते हैं। इस की रक्षा करने वाले ही वीर पुरुष होते हैं। वीर भोग्या वसुन्धरा। जो पुरुष सदाचारी संयमी शीलवान (ब्रह्मचारी) हैं वह देवपुरुष कहलाते हैं। उनकी विश्व मे तेजस्वी प्रतिभा के जीवन मे किये गये आदर्श चिरजीवी बनाते हैं।

स्वामी समन्तभद्राचार्य के दो हाथों का भाव ज्ञान का बाण और संयम के अंकुश से ऊपर बताया है तीसरा हाथ शिवकोटी के सिर पर रखा है वह बताते हैं कि हे राजन् जैसा तुमने शक्ति: शाली विषय भोगों को पकड़ रखा है ऐसा सयम को पकड़ो। और चौथा हाथ जो शिवलिंग पर रखा है वह बतलाते हैं कि यह सृष्टि की रचना का है किन्तु असंयमी मानव अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर पतन की ओर जाता है। यह पचेन्द्रिय जनित विषय त्यागने ही योग्य हैं। क्योकि यह राग-द्वेष को पैदा करने वाले दुवारा हैं। तेरी अटलशक्ति संयम को पकडने में लगा।

वर्तमान मे परिवार नियोजन का रोग भारतीय हिन्दू समाज को किसने लगाया ? किस लिये लगाया ? यह बात सोचने और समझने की हैं।

हिन्दू समाज की जनसंख्या शक्तिशाली न बने, सयमी जीवन द्वारा उत्तम विचारशील पराक्रमी संतति उत्पन्न न हो, कामी पुरुष बनकर अपने ब्रह्मचर्य की रक्षा न कर सकें और अन्य विधर्मी आकर भारत पर अपना साम्राज्य जमा सकें इसलिये यह विधर्मियों का षड़यन्त्र रचा हुआ है, किन्तु इसे राजनैतिक रूप से चलाया गया है साथ में रुपयों का प्रलोभन दिया जाता है किन्तु भारतीयो ने इस ओर लक्ष्य नहीं दिया कि इससे जनता को शारीरिक, मानसिक, आर्थिक कितनी हानि है। अतएव बुद्धिमान जनसंयम का पालन करेंगे और जो विषयो की भस्मव्याधि का रोग लगाया गया है, सावधान होगे।

गणधर–प्रतिमा

यह सर्वविदित है कि विदिशा एक प्राचीन ऐतिहासिक नगरी पूर्वकाल से रही है। इस नगरी ने अनेकों उतार और चढाव देखे है।

इसके अंचल और भूगर्भ में अरबों रुपयों का बहुमूल्य अप्राप्त, दर्शनीय अध्ययनीय मानव जीवन को सार्थक बनाने वाला कलामय साहित्य का भंडार भरा पड़ा है। जोकि समय समय पर यत्र तत्र अकस्मात् ही अनजान व्यक्तियों के हाथ उपलब्ध होता हैं, मूढ़ता और स्वार्थ के वश उसके महत्व से अनभिज्ञ मूल्यांकन को न समझते हुए उपयोगिता को न समझते हुये स्वार्थ–बर्बरता के साथ विध्वंश करते हैं और विद्वेषमय भावनाओ को अमल में लाते हैं।

इसका उत्तरदायित्व उन जिम्मेदार अधिकारी शासकवर्ग पर है जिनके हाथ में सत्ता है। जो स्वार्थान्ध और विषयलोलुपी हैं।

शिलालेख

पट्ट २ व ३

स्थान—परिचय

निकट भविष्य मे ही इस परम पुनीत प्राचीन विदिशा नगरी में बहने वाली बेतवा नदी के किनारे अनेको टीले हैं जिनको पूर्व में खोदा जा चुका है। कुछ खोदे जा रहे हैं। इनमें कलामय आश्चर्यजनक ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है। इसमें निकली हुई सामग्री बहुतायत से कलक्टर के संग्रहालय मे तथा ग्वालियर के गूजरी महल के संग्रहालय में है। किन्तु विदिशा का महत्व क्या शेष रह जाता है, जबकि ऐसी विभूतियां बाहर चली जावें तो यह क्षेत्र श्मशान बना बनाया है।

इसके साक्ष्य स्वरूप यह तीन गणधरों की प्रतिमायें, जोकि भगवान महावीर के ११ गणधरों में से प्रधान गणधर थे। प्रथम गौतम स्वामी थे, यह जाति के ब्राह्मण थे। पूर्ण ब्रह्म के ज्ञाता थे। गो नाम इन्द्रियों का है और तम नाम अंधकार का हैं। इन्द्रियों के वशीभूत अज्ञानांधकार में फंसे हुए प्राणियो में सद्भावनायें जाग्रत करने के लिये ही इनका नाम यथानाम तथा गुण रखा गया था।

द्वितीय गणधर—

सुधर्माचार्य थे, जिनका प्रथम कर्त्तव्य वस्तु का स्वभाव (धर्म) क्या है ? वह है दयामय जिसे वृष कहते हैं और वृष का सकेत साकार रूप से बैल-नंदी को किया है। जो इन्द्रियो पर विजय प्राप्त करते हैं वही वीर पुरुष इस वसुन्धरा के स्वामी होते हैं। इसलिये वीर भोग्या वसुन्धरा कहा है। इसलिये द्वितीय गणधर का नाम सुधर्माचार्य संसार मे विख्यात है।

तृतीय गणधर श्री जम्बू स्वामी—

यह बात जगत्प्रसिद्ध है कि जम्बू स्वामी वेकुंठे जांय, तालो लगा कुंची ले जांय।

यह भगवान महावीर के तीनो गणधर भिन्न प्रकार के थे। इन तीनों ने तीन लोक, तीन अवस्थायें, तीन रत्नो की ओर संकेत किया हैं। जो इस मानवजीवन से सम्बन्धित है।

आपने जामुन का रसास्वादन किया है। जिस प्रकार से जामुन का स्वाद है उसी प्रकार से इस संसार का स्वाद है। जिस प्रकार से जामुन का वृक्ष कमजोर होता है उसकी डाल टूट जाती हैं, उसी प्रकार से यह मानवशरीर भी नष्ट हो जाता हैं। जिस प्रकार से जामुन का रंग श्याम है उसी प्रकार से यह मानव शरीर कलक काजल से भी अधिक काला है। जिस प्रकार से जामुन गोल है पृथ्वी गोल है इसपर अनन्त शासको ने अपनी करामातें बताईं। अन्त में काल ने इन्हें भी भक्षण किया है। उसी प्रकार से देश काल क्षेत्र के अनुसार अवस्था, स्वभाव, ज्ञान, गुण, रंग, रूप सभी बदल जाते हैं। इस कारण से इस क्षेत्र का नाम जम्बूद्वीप है। मानव शरीर रोगों का घर है। भारत कहते हैं विपत्ति को, यह गोल है, इसी प्रकार से विपत्ति भी गोल है। इसके पाँच म्लेक्ष खंड हैं, वह पांचो पाप हैं।

(१) हिंसा (२) झूठ (३) चोरी (४) कुशील (५) परिग्रह। इनकी सात सखियां सप्त व्यसन हैं।

जूआ खेलन मांस मद, वेश्या व्यसन शिकार।
चोरी पर-रमनी-रमन, सातों पाप निवार॥

जो इनका त्याग करता है वह वीतराग धर्म का अनुयायी है। उसी के भाग्य का सूर्योदय होता है; विरक्त हो जाता है। इन जम्बू स्वामी ने इनके त्याग का उपदेश दिया। इनका मोक्ष स्थान चौरासी मथुरा मे है। जब यह मोक्ष पधारे तो अपने ज्ञान की चाबी साथ लेकर ताला लगा कर ही गये हैं। इनके समान भगवान की बाणी का झेलने वाला इस भारत में नहीं हुआ।

ऐसे अपूर्व ज्ञान-गरिमा की (गणधरों) प्रतिमायें नदी बेतवा के किनारे पर एक टोले में

हजारीलाल सुनार विदिशा ने टेक्टरों से समथल भूमि करने के लिये चलाये थे उसमें यह प्रतिमायें निकली हैं। इनके शिरच्छेदन किये गये स्पष्ट दिखाई देते हैं। इनकी ब्राह्मी भाषा में प्रशस्ती खुदी हुई है। मूर्ति का निर्माण महाराजाधिराज श्री रामगुप्त के शासनकाल में हुआ। एक प्रतिमा पर आठवें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ और नवमें पुष्पदन्त का नाम लिखा है। मूर्तियों की शैली ईस्वी सन् चौथी शता० के अंतिम चतुर्थांश की कही जा सकती है। इन मूर्तियों में कुषाण कालीन ई० पाँचवीं शती० की गुप्तकालीन मूर्तिकला के बीच के युग के लक्षण दृष्टव्य हैं और मथुरा आदि से प्राप्त कुषाण कालीन बौद्ध और तीर्थंकर प्रतिमाओ की चरण चौकियों पर सिंहों जैसा अंकन प्राप्त होता है वैसा ही इन तीनो मूर्तियो पर एक मुख दो शरीर वाले सिंह लक्षित हैं।

प्रतिमाओं का अंगविन्यास तथा सिरों के पीछे अवशिष्ट प्रभामंडल भी अन्तरिम काल के लक्षणों से युक्त है। इनके उत्तर गुप्तकालीन अलंकरण का अभाव है। लिपिविज्ञान की दृष्टि से भी ये प्रतिमा लेख ई० चौथी शती० के ठहरते हैं। इन लेखों की लिपि गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के उन लेखों से मिलती है जो सांची और उदयगिरी की गुफाओं में मिले हैं।

रामगुप्त के नाम के पहिले उसकी उपाधि 'महाराजाधिराज' दी गई है। इस उपाधि से स्पष्ट है कि वह गुप्तवंशी सम्राट था। इस वंश के शासक चन्द्रगुप्त प्रथम ने सबसे पहिले इस उपाधि को धारण किया। उसके बाद समुद्रगुप्त चन्द्रगुप्त द्वितीय कुमार गुप्त, स्कन्दगुप्त आदि शासकों ने भी यह उपाधि धारण की।

पिछले वर्षों मे पूर्वी मालवा के विदिशा नगर में राजमल मड़वैया पुरातत्वान्वेषक ने श्री कृष्णदत्त जो वाजपेयी महोदय को प्रचुरमात्रा में सिक्के दिये हैं। उनमें रामगुप्त के भी सिक्के थे। कुछ सिक्के एरण नामक स्थान जोकि बीना मध्य रेलवे जंक्शन स्टेशन से लगभग ६ मील दूर है उत्खनन में प्राप्त हुये हैं। जिनपर गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि में लिखा है। और गुप्त वंश का प्रमुख चिन्ह गरुड़ की आकृति बनी हैं। इसके ३ प्रकार के सिक्कों पर मिलती है-(१) गरुड़ (२) चन्द्र (३) तारक। पंक्ति के चिन्ह रामगुप्त के सिक्कों पर मिले हैं। इन प्रतीकों का अनुकरण इस वंश के अन्य गुप्त सम्राटों, चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमार गुप्त, स्कन्दगुप्त आदि ने किया है।

ऐसी अपूर्व गणधरो की अप्राप्य प्रतिमाओं की रक्षा के लिए हमारे विदिशा नगर के जिलाध्यक्ष महोदय श्री विष्णु प्रतापसिंह जी क्षत्रिय वीर पुरुष जिलाध्यक्ष महोदय यश के भाजन हे जिनकी अनुकम्पा से सुरक्षा के लिये तत्काल आदेश प्रदान किया गया है जोकि घटनास्थल पर रेवेन्यू के विभाग के गिर्दावर महोदय एव पुलिस कोतवाल सा० पुलिस कोतवाली विदिशा को लेखक की ही सूचना पर भेज कर रक्षा की।

और लेखक को हमारे सागर विश्वविद्यालय के अध्यक्ष महोदय प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति विभाग के श्री प्रोफे० डाक्टर कृष्णदत्त जी वाजपेयी ने पढ़ा और इसका उल्लेख हितवाद भोपाल दि० १०-२-६९, साप्ताहिक हिन्दुस्तान दिल्ली दि० ३१ मार्च १९६९, और सन्मति सन्देश मासिक पत्र वर्ष १४ अंक ६ माह जून सन् १९६९ के पृ० २४-२५ पर किया है। वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

卐

युगल-क्षुल्लक

शास्त्र स्वाध्याय से स्वात्मानुभूति जागती, मोक्षलाभ, पुण्य संचय, विपरीतावस्था मे अध पतन, दर्शक। मडवैया कला

विनाश के बादल

यह सर्वविदित ही है कि विदिशा के किले के सर्वनाशक विदिशा नगर के नगरपालिका के पार्षदगण वह है जो धर्म की दुहाई देकर चन्द दिन को राजा बनकर अपने भवन निर्माण के लिये, नगर की सड़को में गिट्टी तुड़वाने की आड मे कोट की दीवार तुडवाई है। क्या कभी पुरातत्व विभाग से आदेश प्राप्त किया है ?

यह इमारत ग्वालियर गवर्नमेण्ट गजट दिनांक २० दिसम्बर १९४७ भाग १ पृष्ठ १५६५ पर प्रकाशित एज्यूकेशन मिनिस्टर ग्वालियर गवर्नमेण्ट के आदेशों की ओर आकर्षित कर पुरातत्व विभाग के संरक्षण में घोषित किया है।

नगरपालिका के अध्यक्ष महोदय को जिलाध्यक्ष महोदय विदिशा ने आदेश दिया है कि उसमे मकान तथा खुदाई आदि की आज्ञा दी जाने के पहिले पुरातत्व विभाग की अनुमति की आवश्यकता है। वर्तमान मे उक्त क्षेत्र में जो दीवार या मकानात बनवाने हेतु आपके कार्यालय (नगरपालिका) द्वारा आज्ञा दी गई है उसके सम्बन्ध में पुरातत्व विभाग से अनुमति ली हो तो इससे इस कार्यालय को अवगत कराने का कष्ट करें। यदि न ली गई हो तो अब ली जावे तथा आज्ञा प्राप्त होने तक काम स्थगित रखा जावे।

खुदाई में जो मूर्तियां निकली हैं वे श्री राजमल मड़वैया (जो पुरातत्व विभाग द्वारा विदिशा में उनके प्रतिनिधि नियुक्त किये गये हैं) को सोंपकर इस कार्यालय को सूचित करने का कष्ट करें।

हस्ताक्षर
कलेक्टर भेलसा

जा० क्र० १५८१४ दि० १८-९-५७
प्रतिलिपि:—

श्री राजमल मड़वैया पुरातत्व विभाग गाईड विदिशा की ओर

हस्ताक्षर अंग्रेजी
कलेक्टर भेलसा

खेद है :—

इस प्रकार का आदेश जिलाध्यक्ष की ओर से अध्यक्ष नगरपालिका को दिया गया किन्तु दुर्भाग्य है कि उक्त क्षेत्र की न रक्षा हो सकी न पुरातत्व विभाग के अधिकारियों ने ध्यान दिया। क्या ऐसे शासक देश के हितचिन्तक हो सकते हैं ? कदापि नहीं।

क्षुल्लक प्रतिमा की प्राप्ति

इस किले की दीवार में अनेको प्रतिमायें मिली हैं किन्तु उनमें यह एक क्षुल्लक की प्रतिमा का भाग एक देशी पाषाण पर उत्कीरित मिला है और यह प्रतिमा क्षुल्लक की है। और यह कहती क्या है उसे आप ध्यान से देखिये और समझिये।

इसमें दो प्रतिमायें हैं और दोनों के दो दो हाथ हैं। यह चारों हाथों का संकेत क्या है।

दाहिने वाजू की क्षुल्लक प्रतिमा का हाथ हृदय पर है वह हैं दाहिना हाथ अंगूठा और अंगुली का संकेत उन तीन अगुलियो की ओर रत्नत्रय का ध्यान दिलाता है जो इनका मनन और चिन्तन करता हैं वह दूसरे बांयें हाथ की पांचों अंगुलियां पंचाणुव्रत की ओर संकेत कर कहती हैं कि यही हमें मोक्ष में पहुंचा सकती हैं।

द्वितीय क्षुल्लक की प्रतिमा का दाहिने हाथ में एक शास्त्र है। उसकी चारों अंगुलियां चारों गतियों मे भ्रमण कराने वाली चारो कषायो की ओर संकेत कर कहती हैं कि यह आत्मज्ञान जाग्रति में बाधक हैं। इसका अनुभव पूर्ण ज्ञान प्राप्त कराने को शास्त्र स्वाध्याय परम आवश्यक हैं।

द्वितीय बांया हाथ जो नीचे की ओर दिखा रहे है जिसमें शास्त्र है यह कहता हैं कि इस शास्त्र की जो अवहेलना करता है ज्ञानार्जन नही करता स्वाध्याय नहीं करता है उसकी अधोगति होती हैं। दो अंगुलियां जो नीचे की ओर दिखाई हैं वह राग और द्वेष को संकेत करती हैं कि जो मानव या जो जीव राग और द्वेष के वश हैं वह आत्मकल्याण नहीं कर सकते हैं, उनका अधःपतन होता है और उन्हें दारुण दुःख भोगना पड़ते हैं।

*

महाकीर्ति मुनि और विदिशा

इस परम पुनीत विदिशा नगरी में ३० जैनाचार्य पट्टाधीश हुए हैं। उनकी पट्टावलि जैन सिद्धान्त भास्कर आरा मासिक पत्र के पृष्ठ संख्या २५१ पर दी गई है। यह आचार्य पट्टाधीशों में सर्वप्रथम भट्टारक सं० ६८६ में हुए हैं।

इन श्री महाकीर्ति मुनि की मूर्ति का निर्माणकाल सं० १२८४ चैत्र वदी ८ को हुआ। इनका यह प्रतिष्ठाकाल का समय है।

प्रतिमा का लेख

स्वस्ति श्री नन्दि देवस्य शिष्यो महाकीर्ति मुनिः ते भ देव देवानांपदि संप्राप्य गुण पुन द्वादश विधेन तपसा उतंय सल्लेखना कृत्वा। आराधना कामण सन्यास विकाय आनाय को उतः ततः गुणपुनस्त्रि तस्य गुरो न प्रनम सु घ्यात।

वयनुनामेन मूर्ति निर्मा० करापित। महाकीर्तिमुनिः।

यह महाकीर्ति मुनि दोनो हाथ जोड़े हैं। उनके इन हाथो पर आड़ी पीछी रखी हुई है।

यह प्रतिमा कमलासन पर खड़ी हुई है। इनके सिर पर भगवान की पद्मासन प्रतिमा है। पीछी के भाग की ओर कमंडलु रखा है। पैरों के दोनों ओर कमल-नाल लिये हुये दो कुवेर अर्द्ध पद्मासन बैठे हैं।

वर्तमान मूर्ति स्थान

यह प्रतिमा श्याम पाषाण की है। ३ फुट लम्बी १॥ फुट चौड़ी ६ इन्च मोटी के लगभग है और श्री दिगम्बर जैन मन्दिर परवार साथ बड़ा मन्दिर विदिशा में सेठ सिताबराय जी की वेदी के उत्तर दिशा के आले में रखी है।

दाहिनी ओर—मूर्ति के चारों ओर जो चित्रांकित हैं वह आचार्य भद्रबाहु जी ने सम्राट चन्द्रगुप्त को प्रथम उपदेश उदयगिरी गुफा नं० १ पर दिया था। वह अर्द्ध पद्मासन हैं।

बांयी ओर—अर्ध पद्मासन में श्री स्वामी समन्तभद्राचार्य उपनाम लोहाचार्य ने लोहांगी पर बाममार्गियों से वाद-विवाद का लोहा लिया था और अपने चमत्कार द्वारा जिनधर्म की रक्षा की थी।

नीचे की ओर जो चित्रांकित है उसमें सुखासन पर बैठे हुये श्रीमद् भट्टाकलंक देव हैं और बाँयी ओर निकलंक देव दोनों भाई नवधाभक्ति करते बैठें हैं। यह प्रतिमा ग्यारसपुर के मालादेवी जैन मन्दिर में शांतिनाथ के चरणो में दोनों ओर बनी हैं।

नोट—किला अन्दर विदिशा में ठा० भैरोंसिंह जी की हवेली में एक खंडहर हैं, उसमें एक बड़ा भारी जिनालय था जिसमें २४ कोठड़ियाँ निकली थी। बड़े बड़े दरवाजे नक्शीदार थे। यह स्थान भी पुरातत्व विभाग की सीमा का है। इसका एक दरवाजा ठाकुर साहब ने काछी लोगों को बेचा है जोकि नदीपुरा में गनेशमढी के सामने तिराहे के पास है। पुरातत्व विभाग को अपने अधिकार में लेना चाहिये क्योंकि यह अवैधानिक तौर पर बेचा गया है यह पुरातत्व विभाग की सम्पत्ति है। इसी प्रकार से अनेकों ने पुरातत्व विभाग की सीमा के अन्दर बिना पुरातत्व विभाग की अनुमति के मकानात भी बनाये हैं। यह सब अवैधानिक कार्यवाही है। इस क्षेत्र में अपूर्व पुरातत्वीय सामग्री भरी पड़ी है। विशेष वर्णन इस पुस्तक विदिशा वैभव में दिया गया हैं।

卐

लोहांगी की पहाड़ी, विदिशा

यह पहाड़ी लोहांगी क्यों कहलाती हैं और कहाँ पर स्थित है? महानुभाव! आप जब रेलवे स्टेशन से उत्तर की ओर देखेंगे तो आपके सामने जो पहाड़ी दिखती है, वही लोहांगी की पहाड़ी है। और इसकी महानता यह है कि—

एक अशोक स्तंभ का शीर्षभाग बहुत बड़ा यहां पर रखा है, जिस पर केन्द्रीय शासन का एक साईन वोर्ड सुरक्षा के सम्बन्ध में भी लगा है। यह शासन के गौरव की सुरक्षा का केन्द्र भी है। शासकीय सम्पत्ति है, विदिशा का गौरव है। इस शीर्षभाग में शेर और हाथी बने हुये थे जो तोड़े गये हैं। क्यों बने थे? एक शंका है।

यह आप जानते ही हैं कि सम्राट अशोक एक प्रतापी और बहादुर सिंहपुरुष व्यक्ति था जिसका इतिहासों में नाम अमर है। उसके बनवाये हुये तालाब, बावडी, मन्दिर, स्तम्भ आदि भारत मे अनेकों स्थानो पर पाये गये हैं। दूसरी बात- (हाथी क्यों है) यह मन--मतग है।

इसका उत्तर यह है कि मन को मतंग कहा है जो मन मे आया वही करना। मन जिस प्रकार से चंचल है उसी प्रकार से हाथी भी है। नौ ९ चीजें चंचल होती हैं।

मन, मर्कट, मधुकर, मरुत, मत्त, मानिनी, मीन।
मॉं, अरु मन्मथ ये नवों, चपल मकार प्रवीन ॥

सम्राट का चंचल मन धर्म की ओर था। उनके स्वसुर जो जैन विदिशा के सेठ थे जिनकी एक सुपुत्री थी उससे सम्राट ने शादी की थी। उसकी स्मृति में आचार्य परम्परा को चिरजीवी बनाने के लिये ही यहां पर एक अशोक कीर्ति स्तम्भ निर्माण कराया गया था उसी का यह भाग है। जो आपके समक्ष स्तंभशीर्ष के रूप मे विद्यमान है।

सिंह क्यो है?

सिंह इसलिये है कि वह पुरुषार्थ का प्रतीक है। जो सिंहपुरुष होते हैं वही इस बसुन्धरा के स्वामी होकर प्रजा का पालन करते और विश्व के प्रागण मे चिरजीवी देदीप्यमान कीर्ति द्वारा अमर हो जाते हैं। जैसे सम्राट अशोक का महान कार्य है, मानव की पूजा नही किन्तु गुणों से ही मानव देव माना गया है और दोषो से मानव राक्षस मानव गया हैं। इस पाषाण का रंग सफेद और सॉंची के पत्थरों से मिलता है, जिनपर चित्रकला की गई है। कला वड़ी सुन्दर और मनमोहक है।

अब प्रश्न है कि क्या जैनियों का यहां पर कोई अस्तित्व भी रहा है? यदि वास्तव मे देखा जावे तो यह स्थान जैनियो के गौरव का तीर्थस्थान है। क्यो? इस शका का समाधान यह है कि—

यहां पर एक पहाड़ी मे जैन पद्मासन प्रतिमा उत्कीरित है। यह दिगम्बर जैन प्रतिमा है। उक्त प्रतिमा हमें प्रमाणित करती है। कि लोहागी नाम सार्थक है क्यों? इसका प्रमाण हमें जैन सिद्धांत भास्कर आरा के मासिक पत्र भाग १ किरण ४ अप्रेल से जून तक सन् १९१३ चैत्र से ज्येष्ठ वीर निर्वाण सं० २४३९ के पृष्ठ सं० १०९ मे अंडर लाइन करके एक नोट लिखा है—

सन् १२९५ में दिल्ली के राज्य--सिंहासन पर आलमशाह बैठे। उस समय उनके दो मन्त्री जाति के ब्राह्मण थे। यह मंत्रवादी थे। इन्होंने अपनी मन्त्रवादिता से आलमशाह पर अपना रुतवा जमा रखा था। आलमशाह को कहा कि मुसलमानो की सख्या बढाने के लिये यह घोषणा करावें कि हिन्दू धर्म वाले और अन्य धर्म वाले अपने अपने धर्म को जीवित रखने के लिए वाद विवाद का लोहा लेवें। हिन्दू धर्म की पुष्टि मे तो राघो और चेतन थे ही, किन्तु जैन धर्म की पुष्टि के लिये अभाव था, इसलिये यह सकटकालीन बादल जैनियो पर छा गये।

यह इतिहासप्रसिद्ध बात है कि गुरु गोविन्दसिंह के बच्चे को दीवार में किसने चुनवाया और बस्तर में मध्य प्रदेशातर्गत राज्य के मुख्य मन्त्री पं० द्वारिकाप्रसाद मिश्र के शासनकाल

में बस्तर महाराजा को महल के अन्दर गोलियों का शिकार बनाया गया था। विपरीतानुगामी सत्ताधिकारी व्यक्ति क्या अन्धा नहीं माना गया है। क्या स्वार्थी भयंकर अंधा नहीं है? और एक ओर देखा जावे तो जैनाचार्य भद्रबाहु स्वामी जैसों ने जोकि ब्रह्म के जानने वाले ब्राह्मण थे रक्षा भी की है। जिन्होंने रक्षा की वह देव और जिन्होंने सर्वनाश किया वह दानव कहलाने में शंका का स्थान रिक्त नही रखा है।

दिल्ली की जैन समाज में क्षोभ उत्पन्न हुआ और आपत्ति के बादलों ने आ घेरा। दिल्ली की जैन समाज के लोग जैनधर्म की रक्षा के लिए चारों ओर भारत के अन्दर चमत्कारी योगी पुरुष की शोध लगाते हुये इस विदिशा में आये। इन लोगों ने बादशाह से ६ महीने की अवधि मांगी थी उसमें इनके ३ मास विदिशा में आते आते समाप्त हो गये और उस समय पर इस विदिशा नगरी में दिगम्बराचार्य श्री महासेन स्वामी बिराजमान थे। उनने अपनी दुखद कहानी श्री आचार्य से कही। उत्तर में आचार्य ने आश्वासन के रूप में अच्छा कहा।

दिल्ली के श्रावकगणों ने इस विदिशा नगरी में जोकि पूर्व में भद्दलपुर नाम से विख्यात थी शेष ३ मास पूरे कर दिये, जब शेष १ दिन रहा तो आचार्य श्री महासेन स्वामी से कहा–गुरुवर! कल बादशाह के दरबार में हम लोगों को उपस्थित होना है। यदि हम समय पर वहां न पहुंचे तो जैन धर्म जीवित नही रह सकता। कल हमारी बादशाह के दरबार में उपस्थिति है। इस बात को आचार्य ने सुनते ही इस लुहांगी पर एक चादर बिछवा दी और कहा कि आप लोग आज यही पर सोना।

卐

आचार्य का चमत्कार

आचार्य के आदेशानुसार श्रावकगण इस लुहांगी की पहाड़ी पर बिछी हुई चादर पर सो गये। और आचार्य महासेन स्वामी के तपोबल, योगबल, मंत्रबल द्वारा अपने अपने घरों में श्रावकगण पहुँच गये। और आचार्य महासेन स्वामी श्मसान भूमि में ध्यानमुद्रा में पहुंच गये।

(यह प्रकरण जैन सिद्धांत भास्कर आरा जिसके बारे में हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। देखिये पृ० सं० ११२)

महासेन स्वामी के पहुँचते ही उसी दिन दिल्ली के एक नगर--सेठ के पुत्र को सर्प ने काट लिया था। वह अपनी नव विवाहता बधू के साथ पलंग पर सो रहा था। नववधू की चोटी पलंग से नोचे लटक रही थी। उस चोटी पर से सर्प ने चढ़ कर काटा था। सेठ--पुत्र को मृतक जान कर स्मशान में लाया गया था जिसमें महासेन स्वामी विराजमान थे।

उक्त स्थान पर महासेन स्वामी को एक अजनवी साधु देखकर लोग उनके पास जा बैठे और नमस्कार किया। महासेन स्वामी ने आशीर्वाद देते हुये पूछा कि आप लोग यहाँ पर क्योंकर आये हैं?

दर्शकों ने सेठ-पुत्र के सर्प-विष का कारण कहा। आचार्य ने तत्काल कहा कि वह बालक मरा नही, किन्तु जीवित है!

यह आश्चर्यजनक बात सुनते ही दर्शक भाग कर सेठ-पुत्र को देखने दौड पड़े और चिल्ला कर कहा कि वह लडका जिन्दा है। वह यह कह ही रहे थे कि वहां पर लड़का सोते से उठा और बातें करने लगा।

यह बात दिल्ली नगर में बात की बात में पहुँच गई। और जब लोग घरों में गये तो घर घर चर्चा महासेन स्वामी की होने लगी।

यह बात उन श्रावको ने भी सुनी जोकि अपने घरो मे पहुच चुके थे और अपने परिवार से बातें कह ही रहे थे कि महासेन स्वामी के समाचार मिल गये। अपार आनन्द हुआ और आचार्य श्री की जयजयकार होने लगी।

यह संवाद बादशाह तक पहुँच गया। श्रावकगण बादशाह के दरबार में यथासमय उपस्थित होकर कहने लगे-हमारे गुरु महाराज आ चुके हैं। जो आज्ञा हो!

आचार्य दरबार में आमन्त्रित किये गये तो राघो और चेतन दोनो मंत्रियों ने उपहास करते हुये कहा कि क्यों साधु! तू कमडल में मछली क्यो लाया है?

आचार्य ने समझ लिया कि यह मंत्रवादी हैं। महासेन स्वामी ने तत्काल कहा कि अय मंत्रियो! इसमे पुष्प हैं। कमंडलु दरबार मे देखा गया तो पुष्प ही निकले। यहाँ पर मंत्रियों का मान भंग हुआ। पश्चात् षट्मत पर वादविवाद हुआ, उसमें भी महासेन स्वामी ने मंत्रियों को पराजित किया और हिन्दू व जैन धर्म की महान रक्षा की और विधर्मी (मुसलमान) होने से बचाया। यह प्रकरण जैन सिद्धात भास्कर आरा के पृ० सं० ७८ में जहां पर नन्दो संघ की पट्टावलि का उल्लेख है कि महासेन स्वामी दक्षिण देशस्थ भद्दलपुर नाम से विख्यात नगर जिसे वर्तमान मे विदिशा नाम से पुकार रहे हैं यह भी प्राचीन नाम है। इसी नगर मे विक्रमी सं० १ में जैनाचार्य भद्रबाहु स्वामी द्वि० से सं० ६८२ तक २६ जैनाचार्य पट्टाधीश हुये हैं।

सं० १०७९ मे श्रुतकीर्ति, सं० १०९४ में भावचन्द्र, १११५ में महाचन्द्र और ११४० में माघचन्द्र आचार्य हुये।

जिसे भूपाल सी० पी० जोकि वर्तमान में मध्य प्रदेश है नगर के पट्टाधीश हुये हैं। ऐसा जैन सिद्धाँत भास्कर में पृष्ठ ७९ पर उल्लेख किया है। यदि शका हो तो देख लेवें।

महासेन स्वामी का शासकीय सम्मान

अलाउद्दीन और इनके बाद होने वाले सन् १३१५ में दिल्ली के राज्यसिंहासन पर बैठने वाले फीरोजशाह तुगलक ने दिगम्बर जैनाचार्यों को वस्त्र पहिनने के लिये बाध्य किया। उक्त दोनों बादशाहों ने इन जैनाचार्यो की भट्टारको की ३२ उपाधियां दी थो जोकि कोल्हापुर और नागौर के भट्टारकों के पास आज भी मौजूद हैं।

लोहाँगी नाम की ख्याति क्यों?

इसलिये कि महासेन स्वामी और स्वामी समन्तभद्राचार्य तथा अकलंक देव स्वामी आदि

ने बाममार्गियों से बादविवाद का लोहा लिया। अज्ञानांधकार में पडी हुई भोली जनता को सन्मार्ग दर्शन कराया। ज्ञान का दीपक दिखाया। हिंसामय भावनाओं को रोका। बाममार्गियों को पराजय दी। वादविवाद का लोहा लिया था। इस कारण से इस पहाड़ी को लोहांगी कहने लगे। यह संस्कृत में लोहांश्री ही कही जाती है और अपभ्रंश भाषा में लोहांगी।

शंका–निवारणार्थ स्पष्टीकरण

देखिये—अग्रवाल जाति का इतिहास, लेखक डाक्टर सत्यकेतु विद्यालंकार के पृ० सं० ११७ में लोहाचार्यो का वर्णन है।

(१) चन्द्रगुप्त मौर्य के समकालीन आचार्य भद्राबाहु स्वामी (२) महासेन स्वामी, जिनका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है (३) स्वामी समन्त भद्राचार्य।

स्वामी समन्तभद्राचार्य का वंश परिचय—

विदिशा वैभव के पृ० सं० २४४ में देखिये। इनके द्वारा जो जैन संस्थाओं को दान दिया गया है उनके दानपत्र हुलसी और वैजयन्ती के मुकामों पर प्राप्त हुये हैं। इन दानपत्रों से इनके राज्यवंश का पता चलता है। कदम्बवशी राजा प्रायः जैनी ही हुये हैं दक्षिण देश के राजा हुये। इनकी गुरुपरम्परा के अनुसार शुभ चन्द्राचार्य जोकि योगिराज भर्तृहरि के बड़े भाई थे जिन्हें काका महाराजा भुज ने मार डालने का षड़यन्त्र राज्यलिप्सा के कारण मंत्रियों को आदेश देकर किया था, किन्तु सुयोग्य किसी मन्त्री के द्वारा शुभचन्द्राचार्य को संवाद प्राप्त होते ही वैराग्य उत्पन्न हुआ। इस समय इनकी आयु केवल ८ वर्ष की थी। इनकी तपोभूमि समसगढ़, जोकि भोपाल के निकट है तथा चपावती नगरी जोकि भोपाल राज्य के भयावह जंगली स्थान में रहे हैं।

महाराजा योगिराज की तपोभूमि आशापुरी और भोजपुर शिवालय जोकि भारत के प्रसिद्ध दर्शनीय स्थानों में से हैं रही है।

इन शुभचन्द्राचार्य ने स्वामी समन्तभद्र को भारतभूषण, वादी, वाग्मी, कवि और गमक लिखा है। (देखिये पृष्ठ सं० २४४)

लोहाचार्य के सम्बन्ध में दूसरी शताब्दी का उल्लेख मिलता है और महासेन स्वामी ने अगरोहा (हिसार-पंजाब) में जाकर राजा दिवाकर को जैनधर्म में दीक्षित किया था। इसलिये जैनधर्मानुयायी जैन अग्रवाल हैं और इन श्री लोहाचार्य को अपना गुरु मानते हैं।

लोहा लेने के कारण लुहांगी की पहाड़ी पर उसी काल में पहाड़ी के कोने पर पद्मासनारूढ एक जैन प्रतिमा उत्कीर्ण कराई गई थी। इस साकार साक्ष्य के कारण यह लोहांगी की पहाड़ी जैन धर्मावलंबियों की प्रमाणित है।

इस परम पुनीत विदिशा में (श्री नयसेनदेव विरचित) कनड़ी भाषा का गद्य-पद्यात्मक धर्मामृत उत्तरार्द्ध हिन्दी भाषातरकार और व्याख्याकार आचार्यरत्न श्री १०८ विद्यालंकार देश-भूषण मुनि महाराज के पृष्ट स० ३४५ में-श्री धनद मुनि ने अवन्ती प्रांत के विदिशा नामक क्षुद्र

नदी (वेतवा की द्वितीय धारा) के किनारे एरण पर्वत पर (श्मसान भूमि लाखनटोल) टीन शेड के बरावरी में-जहां पर एक चबूतरा बना हैं उसमें एक शिलालेख उत्कीरित है, कमण्डलु और पीछी भी खुदी हुई है। आठों कर्मों को नष्ट करके मोक्षलक्ष्मी प्राप्त की। लिखा है यह क्षेत्र जैन धर्मावलबियों का तीर्थक्षेत्र है।

विदिशा पर मुगल साम्राज्यों के आतंक एवं उतार-चढ़ाव

ताजुल इकवाल तारीख भोपाल में प्रकाशित प्रकाशन सन् १२८९ हिजरी में लिखा है कि सन् १२२० में अफगानिस्तान से भाग कर भोपाल नवाब दोश्त मोहम्मद खा आये। और फौज में सिपाहियो के पद पर भर्ती हुये। फोज मे झगड़ा किया और फोज से भाग निकले। आगरा आकर महाद जी सिंधिया से मिले, उनसे भी झगड़ा किया और भेलसा वर्तमान विदिशा में आये। यह महाद जी सिंधिया की राजधानी का एक जिला था और फारूख नाम का सूबा इसकी देख रेख करता था उसे अपना मित्र बनाया और रास्ते में जो लूट का माल मिला था अमानत के तौर पर रख कर मेंगलगढ के राजा का सेनापति बन गया और लूटमार करने लगा। राजा मेगलगढ सोलंकी राजपूत मर गया था। रानी को माता बनाया और लूट का माल लाकर दिया इससे रानी प्रसन्न हो गई। और धीरे धीरे यह पता लगाया कि यहाँ के राजा शराबी है और लूटपाट करते फिरते हैं। यह लोग घरो को औरतो के सुपुर्द कर जाते हैं। ऐसे ही मौके का लाभ लेना चाहिये। और अपनी राजधानी बनाना चाहिये।

यही सोच कर बैरसिया जो एक कायस्थ सूबेदार के पास था उससे ठेके पर लिया और अपनी हुकूमत प्रारम्भ के लिये अड्डा बनाया। और अफगानियों को बुलाकर एक सेना बनाकर चारों ओर हमले करना शुरू कर दिये।

रानी कमलावती को दुश्मनों ने घेर लिया था। उस समय रानी कमलावती ने नवाब दोश्त मोहम्मद खां से सहायता मागी। उसने दुश्मन पर अपनी दगाबाजी से विजय पाई उसके उपलक्ष मे रानी से अपना मुआवजा मांगा। रानी ने गांव जागीर में देना स्वीकार किया किन्तु यह बात उसे स्वीकार न हुई। उसने रानी को अपनी बीबी बनाना चाहा। किन्तु वीर रानी ने अपने शील की रक्षा तालाब में कूद कर आत्मसमर्पण करके ही की।

इसके पश्चात् किसी ने फारूक से कह दिया कि दोश्त मोहम्मद खां बरेली की लड़ाई में मारा गया। उसने इनका माल सामान जोकि लूट का था जब्त कर लिया। और इधर दोश्त-मोहम्मद खां से कह दिया कि तुम्हारा माल फारूक ने जब्त कर लिया। जब दोश्त मुहम्मद खाँ मांगने गया तो इनकार कर दिया। बस इसी बात पर दोनो मे युद्ध हुआ और जम्वार वागरी मे फारूक व दोश्त मोहम्मद का एक भाई लड़ाई में मारे गये। पश्चात भेलसा लूटा गया।

अफगानियों ने राज्यो का बटवारा किया। नवाब दोश्त मोहम्मद खां और नवाब सा० कोरवाई, नवाब हैदरगढ, बासौदा ने रायसेन में लड़ाई हुई। दोश्त मोहम्मद खाँ मारे गये। राज्यो का बटवारा हुआ नवाब कोरवाई, नवाब हैदरगढ़, नवाब मोहम्मदगढ, नवाब सिरोंज (टोक) नियुक्त हुये, राजधानियां बन गईं।

रायसेन में जहां पर उर्स भरता है, नवाब दोस्त मोहम्मद खाँ की कब्र बनाई गई। किन्तु वह दफनाये गये हैं भोपाल के किले मे जहां पर हमीदिया हास्पीटल है।

बन गये तो अमीर, मिट गये तो फकीर।
और मर गये तो पीर हैं ही हैं॥

उस समय समाचार प्राप्त करने के लिये टेलीफोन और तार आदि की व्यवस्था नहीं थी भय रहा करता था कि कही से हिन्दू राज्य के राजागण पराजय न दे देवें इसलिये हिन्दुओं को दबाने के लिये हिन्दुओं के मकानों के बीच बीच में मस्जिदें बनवाई गईं और यह चौकियां नाम न रख कर मस्जिद नाम रखा गया। हिन्दुओ को मुसलमान बनाया गया। स्त्रियों को अपनी बीबियां बनाया गया। बच्चों के लिये यतीमखाने खोले गये। जो हिन्दू मुसलमान बने उन्हें जागीरदार बनाया गया। इस प्रकार से भोपाल की राजधानी मुगलो के हाथ लगी।

भोजशाला जामा मस्जिद क्यों बनी ?

भोपाल के बीच शहर में जहाँ पर जामा मस्जिद है वह पूर्व में महाराजा भोज की पाठशाला थी और यहीं पर एक विशाल मन्दिर भी था। मन्दिर की मूर्तियां सीढ़ियों में आज भी लगी हुई हैं, जो उलट कर लगाई गई हैं। जोकि दिखाई देती हैं।
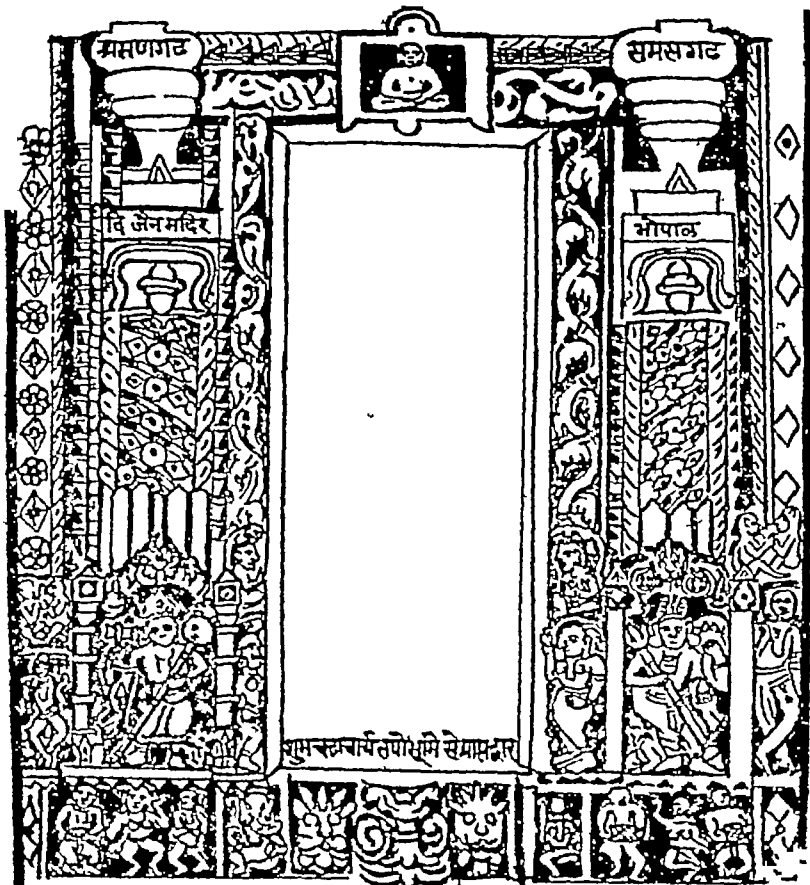
भोपाल के दि० जैन मन्दिर का कलामय भव्य द्वार

मोती मस्जिद भी एक विशाल मन्दिर था। इन स्थानों को पुरातत्व विभाग में लिया जाना अत्यन्त ही आवश्यक हैं और इस पर शोध कार्य होना अनिवार्य है। इसके सम्बन्ध में जैनियों के चौधरी श्री गुलाबचन्द जी बजाज चौक भोपाल के पास नवाबी शासन की फारसी मे सनदें हैं।

भेलसा पर नवाब टोंक का हमला

नवाब टोंक चार भाई थे—(१) आलमगीर जिसके नाम पर विदिशा का नाम आलमगीरपुर रखा गया था (२) अमीर खाँ भेलसे को लूट कर अमीर बने (३) चीतू-जिस प्रकार से चीता शिकारी धोखा देकर शिकार करता है उसी प्रकार से इस भेलसे को लूटा और चीता के द्वारा हो खाया गया (४) करीम खाँ इनका काम भी निराला ही था यह आपस में फूट डालने में बड़े प्रवीण थे, करामाती थे। इन चारों भाइयो ने इस भेलसे को ६ मास तक लूटा और हिन्दुओं को गरम तोपो पर नगा बिठाया। ३० जैनाचार्यों का शास्त्र भंडार जोकि विदिशा के पट्टाधीश थे जला कर भस्मीभूत बना दिया। विजय मन्दिर का वर्णन पृष्ठ २४१ में किया है। किले के चारो ओर मठ थे। दरबाजा बन्द होने पर यात्रियों को रात्रि विश्राम की सुविधा थी; नष्ट किये जा चुके हैं। उनके चिन्ह मात्र रह गये हैं। वह भी कालांतर में नही दिखेंगे।

मेवातियों द्वारा लूटा जाना

ग्वालियर राज्य के महाराजा माधवराव सिंधिया के राजकाल मे अजन खां, खूनाजी, कमाल खाँ, नीलगिर बाबा इन डाकुओ ने बड़ा भयंकर उत्पात मचा रखा था। प्रजा अत्यन्त दुखी थी। उस समय महाराजा विदिशा में आये थे और डाकुओं को जागीरें देने को कहा था किन्तु वह उद्दण्ड डाकू अपनी आदत से मजबूर थे। अत मे उनके सिर कटवा कर (१) हास्पीटल के किनारे पर पीपल का बड़ा भारी झाड था जहा पर बाबू लालताप्रसाद जी श्रीवास्तव सा० ने मकान बनाया है, पीपल के झाड़ पर सिर लटकाया था (२) देवी के बाग मे सडक पर एक बेरी के पेड़ की डाल पर (३) लुहागी के नीचे पुरानो अस्पताल के पीपल के झाड पर (४) लखेरे घाट की इमलियो में, इस प्रकार से चारो दिशाओं में सिर काट कर लटकाने की आज्ञा दी थी, लटकाये गये थे।

उसी समय महाराजा सा० ने उदयगिरी की गुफाओं को देखा था। पुरातत्व की सामग्री एकत्रित कराई थी और ग्वालियर किले में गूजरी महल में पहुँचाई गई।

इतिहासकारों ने मूर्तियों के नाम, काल, स्थानादि का तो परिचय दिया है किन्तु यह उल्लेख नहीं किया कि यह मूर्तियाँ क्या कहती हैं। कौनसा अनोखा ज्ञान सिखाती हैं। मानव-जीवन से कौनसा घनिष्ट सम्बन्ध है। धार्मिक, सास्कृतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक का क्या सम्बन्ध है। इनका राजनैतिक क्या सम्बन्ध है। नहीं बताया है। इस कमी की पूर्ति भी अत्यावश्यक है प्रत्येक मूर्ति के अग, मुख मुद्रा, आसन, वाहन, वेषभूषा और कलाकृतियों मे अर्थ निहित हैं निर्माण कराई गई है। यह सूझ बूझ किन किन आचार्यों की रही है यह उल्लेख बाकी रहा है, उसकी पूर्ति का यह सतत प्रयत्न है।

तथा शिलालेख जो भी सर्वत्र मिले हैं उन्हें बारीकी से निष्कपट भाव से नहीं पढ़ा गया। उनकी सही, प्रतिलिपियाँ उनकी अनुवाद शैली, भाषा, लिपियों आदि का उल्लेख नहीं किया। इससे जैन संस्कृति पीछे रह गई है।

जैन समाज ने इस ओर अपनी दृष्टि नहीं डाली। हानि लाभ को नहीं देखा, न समझा। जैनाचार्यों का क्या उद्देश्य रहा है? शास्त्रों में प्रशस्तियां क्या कहती है? शिलालेख क्या कहते हैं? इस बात की ओर किंचित भी ध्यान नहीं दिया इस ओर शून्य रहे हैं।

मानव शरीर को देव माना है। इन्हीं भावों में देव और इन्हीं के अन्दर राक्षस है। समस्त संसार के पाँच तत्वों, सप्त पदार्थों, सप्त व्यसनों, पांच पापों और पुण्य आदि का विवरण मिलता है। कहते हैं जिसकी सर्वत्र में जैनाचार्यों ने देश, काल, क्षेत्र के अनुसार भूत, भविष्य, वर्तमान काल में घटने वाली घटनाओं का साकार चित्रण मूर्ति रूप निर्माण कराया है। जिनका आज समझना कठिन है। इस प्रकार का कोई साहित्य भी प्राप्त नहीं है, जिससे मानव को पतन से उत्थान का मार्गदर्शन मिल सके।

विश्वविद्यालयों में नये नये रिसर्च तो होते हैं किन्तु इस ओर किसी भी विद्याविलासी का ध्यान नहीं है।

धनीमानी जैन समाज इस विषय में पिछड़ी हुई है। अपने गौरवमय साहित्य, कला की ओर अथवा उसकी रक्षा की ओर किंचित भी ध्यान नहीं दे रही है। शासन के अधिकारीवर्ग जो कुछ कर रहे हैं इस पुस्तक में उल्लेख किया जा चुका है। जो खेद का विषय है।

卐

लुहाँगी पर कीर्तिस्तंभ निर्माण की आवश्यकता, सुझाव

लुहाँगी पर कीर्तिस्तभ बनाया जावे। इसके चार पहलू रखे जावें—

(१) प्रथम पहलू में स्थानीय जैनाचार्यों की नामावलि। (२) द्वितीय में क्षेत्र अतिशय गुरु परम्परा दान दाताओं की नामावलि। (३) पर राज्यकाल खाद्य पदार्थों के भाव स्थानीय, निकटवर्ती क्षेत्रों की नामावलि तथा संक्षिप्त परिचय। (४) दान दाताओं का उल्लेख यदि किया जावेगा तो गणतंत्र राज्य की अमर स्मृति सूर्य के समान विश्व के प्रांगण में देदीप्यमान बन सकती है। सम्बन्धित प्रकरण में शासन को कई बार लिखा जा चुका है।

卐

नई शोध

विदिशा में सम्राट अशोक (वर) श्रेष्ठिपुत्री असंघिमित्रा (वधू) के वेष में

प्रसन्नता की बात है कि प्रधान मन्त्री जी महोदय भारत सरकार ने दिनांक १२ मई ६३ को लखनऊ में दिये वक्तव्य में बताया है कि हर गांव मे संग्रहालय निर्माण किये जांय। अतएव

सबसे प्रथम व्यक्ति अनुसंधानकर्ता राजमल मड़वैया विदिशावासी हैं। यदि पक्षपात और विद्वेषात्मक भावनाओं का त्याग कर सेवा का अवसर प्रदान शासन करे तो मध्य प्रदेश की राजधानी में संग्रहालय निर्माण के लिये समस्त प्रकार की सामग्री अर्पित करने को तैयार हैं। क्या शासन के वरिष्ठाधिकारीगण प्रधान मन्त्री जी के स्वप्न को साकार बनाने के लिये यह सेवा का लाभ लेना स्वीकार करेंगे ?

सामग्री में मूर्तियां, शिलालेख, ताम्रपत्र, स्तंभ, स्तंभशीर्ष; तोरण द्वार, मुद्रायें, चित्र, हस्तलिखित ग्रन्थ आदि की अनुसंधान एवं संग्रहीत की गई सामग्री समस्त ऐतिहासिक जानकारी के शासन को अर्पित करना चाहता हूँ। क्या शासन इस सेवा को स्वीकार करेगा ? यदि स्वीकारिता नहीं देते तो विनाश का उत्तरदायित्व क्या जिम्मेदार अधिकारीवर्ग पर नहीं है ? तो क्या है ?

अभी तक कहा करते थे कि सम्राट अशोक की ससुराल विदिशा में थी, कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला था। अब वह प्रमाण प्रत्यक्ष मे चित्र मे अवलोकन कीजिये। सम्राट अशोक वर और रानी असंघमित्रा वधू के वेष में खड़ी हैं। वधू, वर की प्रतिमा सांची मे लगे तोरण द्वार के पाषाण मे से है। रंग सफेद लं० ८ फुट चौ. ४॥। फुट मो० १॥ फुट स्थानान्तर करने में कोहनी से कोंचा तक हाथों का भाग टूटा हुआ है। तथा रानी की मूर्ति की लं० ५--३--१॥ क्रमशः है। स्तनों से नीचे और कमर के ऊपर का भाग टूटा है।

कलाकार ने अद्भुत कारीगरी की है जिस प्रकार लेखक अपनी कलम से और कलाकार अपनी कला मे मनोवैज्ञानिक भाव भर देता है जिनके अंग प्रत्यंग से जो भाव आदर्शपूर्ण प्रगट हो रहे हैं लेख में पढ़ने का कष्ट करेंगे। और चित्र मे लिखी गई कला से मिलान करेंगे।

चित्र–परिचय

सम्राट के चरित्र, वैभव, शक्ति, प्रभा, पुरुषार्थ, उदारता, गुणग्राह्यता, परोपकार, बुद्धि, विरागता और जीवन के आदर्श को सांचे मे ढाल कर अमर बना दिया है। यह सभी जानते हैं कि राज्य लिप्सा के पीछे एक दूसरे का प्राण घातक बन जाता है। अशोक ने भी राज्य लिप्सा के पीछे अपने १० बड़े भाइयों का घात किया। लाखो मनुष्यों को मौत के घाट उतार कर दिग्विजय की।

मानव की शुभ परिणति देव और अशुभ दानव कहलाती है। जो हिंसा करता है उसे पापी और दानव कहते हैं। यौवनावस्था मे मानव अन्धा बन कर, सत्कर्म या दुष्कर्म को नहीं देखता, यौवनावस्था अकेली जब विनाश का कारण बन जाती है।

धन, सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेकता यदि साथी बन जांय तो विनाश के कारण में कौनसी कमी बाकी रह जाती है? इसी यौवनावस्था में अशोक ने सुखानुभव किया था किन्तु कलिंग विजय में नरसंहार देख कर, शरीर की क्षणभंगुरता का चित्रपट सामने आया, विचारों में विरागता पुण्य प्रकृति ने ला दी और वापिस उज्जैन की ओर प्रस्थान कर दिया।

मार्ग में एक ब्राह्मण का बालक एक ग्राम में अपने पिता से कह रहा था कि पिता जी यदि अशोक मेरी बात सुन लेवे, तो मैं उसे विश्व का एक ऐतिहासिक महापुरुष बना सकता हूँ। किन्तु पिता उसे बुरी तरह से धमका रहा था। और कह रहा था कि वह बड़ा निर्दयी है जिसने वंश के वंश नष्ट कर डाले। क्या तू हमारे वंश का नाश कराना चाहता है?

यह बात एक किसी गुप्तचर ने सुनी और राजा को रात्रि में घटित ब्राह्मण के पिता पुत्र की घटना सुना दी।

सम्राट ने प्रातःकाल ही अपने दरबार में, उस पिता पुत्र ब्राह्मण को बुलाया। ब्राह्मण भय से कांप रहा था और सिपाही उसे सम्मानपूर्वक दरबार मे ले गये। बालक बड़ा साहसी और बुद्धिमान था। अशोक ने रात्रि के समय की वार्ता पूछी, बालक ने निर्भीकतापूर्वक कह सुनाई।

पाठको! यह वही बालक है जिसने सड़कों पर फलदार वृक्ष, धर्मशालायें, कुयें, बावड़ी, बाग बगीचे, स्तंभ तथा शिलालेखादि बनवाये थे। जो आज हमें यत्र तत्र सवत्र प्राप्त होते हैं और अपने वैभव की स्मृति दिलाते हैं।

जब अशोक ससैन्य विदिशा में आये तो गुप्तचरों ने एक वणिक् पुत्री जिसका नाम असंघ मित्रा था। रूप, लावण्य, धार्मिक-बुद्धि और पराक्रम की प्रशंसा कह सुनाई। अशोक ने श्रेष्ठि को बुलाया और कन्या की याचना की। श्रेष्ठि यह जानता था कि यह आतातई है, इससे रक्षा करना कठिन है, किन्तु साहस से बिगड़े कार्य भी बन जाते हैं। निर्भीकतापूर्वक श्रेष्ठि मिला और प्रश्न सुनने पर अपनी शर्त के साथ कन्या देना स्वीकार कर लिया।

यह शर्त थी कि यदि तुम दुष्कृत्यों को त्याग कर सत्कार्य करो, और कोई आदर्शपूर्ण कार्य करो, तो मै आपको अपनी कन्या दे सकूंगा। अशोक ने शर्त स्वीकार कर, सांची पर उस विवाह के उपलक्ष में यह बौद्ध विहार बनवाया।

राज्यवैभव का प्रतीक सिर पर ११ फण का सर्प राज्य के दबदबे का सूचक है। अष्टांग और त्रियोग जिन महापुरुष के न्याय नीति में अवतरित है। सिर पर पुण्य कार्यों में भाग लेने के लिये सेहरा (मुहर) जो विवाह समय बांधने की प्रथा है। रत्नजटित धर्मचक्र के सहित बंधा है। जिनका हृदय देवों की भांति नम्रीभूत है, सुशोभित है।

विनय दया अरु प्रेम से, जासु हृदय भरपूर।
नहिं मानुष वह देवता, गहहु तासु पद मूर॥

कानों में कुंडल, मुख की शोभा, हाथों के आभूषण, पैरों की पवित्रता कब है?

कान प्रभू गुण जो सुने, मुख जो प्रभु गुण गाय।
हाथ देय जो दान को, पग जो पर हित जाय॥

तथा- कम कहना सुनना अधिक, ये है परम विवेक।
याही तें विधि ने दये, कान दोय जिभ एक॥

हाथ में कमल लक्ष्मी का द्योतक है। असंघमित्रा के लेख में पढिये। यह संसार की अपूर्व वस्तु है, जिसके पीछे मानव बावला घूमता है। गले में रत्नगोप-परोपकार का सूचक है।

आभरण नर देह का, बस एक पर उपकार है।
हार को भूषण कहें, उस बुद्धि को धिक्कार है॥

एक मोती क्या कहता है?

मोती अकेला कान में या नाक में है झूलता।
मल द्वार का सेवन बना, कर जाति की प्रतिकूलता॥

सम्पूर्ण मोती क्या कहते हैं?

जब तक न माला में मिलेगा, वह न उर पर आयगा।
कर जाति का अपमान कोई, मान कैसे पायगा॥

कमर क्यों कसी है? धर्म, न्याय, नोति, दया, क्षमा, सतोष--धारण कर सत्कार्य करना और पूर्व मे किये गये अशुभ कर्मो की निर्जरा के लिये तथा सत्कार्यों को करने हेतु आगे बढ़ने के लिये कमर कसी है। जिन्होने अपने राजकोय गौरव को इतिहास के क्षेत्र मे चिरस्थाई बनाया है।

जाकी जग में कीर्ति है, ताको जीवित जान।
यातें यश संचय करहु, लोग करें सन्मान॥

✲

महारानी असंघमित्रा का चित्रपरिचय-

प्राचीन भारत मे यथा नाम तथा गुण के अनुसार ही नाम रखने की प्रथा थी। मनोवैज्ञानिक क्या भाव छुपे हैं? कौनसा ज्ञान मिलता है? योगीजनो ने ग्रन्थ के ग्रन्थ लिखे हैं। किन्तु पुरातत्वीय विद्वानो ने अपने अनुसंधानीय पाठ्य पुस्तको मे विवेचन नही किया हैं। जोकि ज्ञानार्जन की दृष्टि से आवश्यक था।

योगीजनो ने सासारिक विषय-भोग को त्यागने योग्य ही बतलाया हैं। और कहा है कि—

जो विषया संतन तजी, मूर्ख ताहि लपटात।
ज्यों नर डारत वमन सो, स्वान स्वाद सों खात॥

विषय भोग महान भयंकर सर्प है। परिणामों में अशांति पैदा कर कलह पदा करने में निपुण है। मन को समुद्र, बाणी को गंगा, चेतन को ब्रह्म, आत्मा और शरीर को क्रियाओं का कर्ता अर्थात् सृष्टि का रचयिता ब्रह्मा माना है। नारी को नागन विषय की पुतली होने से और क्रूर स्वभाव के कारण सिहनी भी कहा है। नारी को लक्ष्मी, और लक्ष्मी के चार पुत्र कहे हैं।

लक्ष्मी के सुत चार हैं, धर्म, अग्नि, नृप, चोर।
जेठे को आदर नहीं, तीन करें भड़ फोड़ ॥

लक्ष्मी, काया में रहने वाली नाड़ी, साँसारिक गृह में रहने वाली नारी का मद शराब की भाँति चढ़ता है। इसे दौलत भी कहते हैं। इसमे दो लते है। यह आते ही हंसाती और जाते ही रुलाती है। जिसमें ९ गृह रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि राहु, केतु हैं। विवरण समुद्रमंथन में पढ़ें।

नव युवती के भाल पर लगी हुई सिन्दूर।
यारो खतरा है यहाँ, रहना इनसे दूर ॥
विन्दी लाल ललाट पै, दई वाल यह हेत।
आवत देखें दृग पथिक, खतरा का संकेत ॥

सर्प के काटने की तो औषधि है तथा मंत्र है किन्तु विषय सुन्दरी के काटे की कोई औषधि नहीं है। यह हस हस के प्राण लेती है। संगति करने योग्य न होने से इसका नाम असंघमित्रा है। स्त्री की पाचो इन्द्रिया खतरे से खाली नही हैं। जिस प्रकार पतंगा दीपक पर गिर कर अपने प्राण गवां देता है। उसी प्रकार से मानव विषयों में आत्म समर्पण कर देता है।

जिस प्रकार से मार्ग में खतरे के स्थान पर लाल रंग का वस्त्र, रेल पर गार्ड की लाल झंडी भय का संकेत करती हैं उसी प्रकार से नारी के सिर पर लगी हुई लाली भय उत्पन्न करती हैं। जर, जोरू, जमीन झगड़े की जड़ तीन हैं।

नारी के उन्नत स्तन दूध कहलाते हैं। यह मासपिंड, रक्तादि से भरे होने पर भी कामीजन इन्हें मसलने और छूने में आनन्द मानता है। इसी का नाम समुद्रमंथन है। नारी का शरीर समुद्र है, नारी संसार का कल्पवृक्ष हैं, विषय भोग नाग हैं। काल हाथी है जो इस संसार को सूंड़ से पकड़ कर चतुगति रूप सर्पो के मुंह में डालना चाहता है।

नाग चतुर्गति मुंह फैलाये, काल करी ने खींचा है।
यह संसार वृक्ष है जिसको, सुख आशा ने सींचा है ॥
यौवन पाया धन जन पाया, सभी वृथा है पाना।
अगर नहीं दुनियां के हित में, अपना हित पहिचाना ॥

आचार्य ने क्षत्रचूडामणि मे कहा है—

नारी जघन रंध्रस्थ, विण्मूत्र मय चर्मणा ।
वाराह इव विड्भक्षी हन्त मूढ़ा सुखायते ॥

नारी के जघाओ और गुप्तेन्द्रियों के सम्बन्ध मे कहा है कि-चर्म से बनी, मल-मूत्र से भरी, रक्तादि बहने वाली नदी के समान घृणायुक्त अपवित्र वस्तु को योगी जनो ने निंदनीय माना है। कामीजन बार बार छूता, सघर्षण करता हुआ आनन्द मानता है। और शूकर अपवित्र वस्तु को खाने मे आनन्द मानता है। दोनो के एक ही मार्ग हैं। इसी लिये योगी जनों ने कामीजन को शूकर की समानता दी हैं। देखिये महारानी असधमित्रा का वाँया हाथ कमर पर रखा अधो भाग की ओर संकेत कर रहा है। चित्र मे दिखाया गया है--यथा नाम तथा गुण के अनुसार निषेध भी कर रही है।

१—सिर पर मुहर, २-मुहर में नाग समुदाय, ३-कमल पाखुरी, ४-बेंदा, ५-बोर। क्रमशः

(१) विवाह सत्कार्य का प्रतीक। (२) राज्यवैभव का। (३) लक्ष्मी का। (४) – (५) सौभाग्य का प्रतीक है। आचार्य कहते हैं—

यदि पाठकगण विचार करेंगे तो जो व्यक्ति शोक रहित है। आत्मीय, बलपराक्रम, बुद्धि, गुणग्राह्यता, व्यवहार, चरित्र, जिनका पवित्र है। अर्थात् जो राग--रहित हैं उन्हीं का नाम अशोक है। जो अन्तिम अवस्था मे प्राप्त की है।

इन्द्रियो पर विजय पाने मे श्रेष्ठ पुरुष राग परिणति को हरण करने वाले वीतरागी ही हैं। इन्ही सम्राट अशोक के एक पुत्र महेन्द्र नामक, और पुत्री सघमित्रा दोनो बहिन भाई चन्द्रमा और लक्ष्मी ने अपने भतीजे बुध को साथ लेकर अपनी विवेक बुद्धि से विदेशो मे धर्मप्रचार किया था।

General konsulat
der
Bundesrepublik Deutschland
Consulate General
of the Federal Republic of Germany
Gerhard Kunz, Consul
Az : (Bei Antwort bitte aggeben)

Bombay, 8th July, 1969 Indien
"Dugal House", Road No. 3
Backbay Reclamation
Fernsprecher : 29 60 23
Telegrammanschrift :
Consugerma Bombay.

Mr. RAJMAL JAIN MADVRIYA
Archaeological Research Scholar
B H I L S A (M. P.)

REGISTERED
(together with Book)

Dear Mr Jain maduriya,

On behalf of my wife, Mrs. M. Kunz, I am sending you a copy of a

book 'Monuments and Fountains of Germany' which has English sub-titles as well.

Please accept this book as a small token of appreciation and gratitude from my wife and Mrs. Rustemeyer, whom you so kindly showed the curiosities of your place.

With kind regards,

Yours sincerely,
(G. Kunz)

✳

जर्मनी से पुरस्कृत पुस्तिका के ३ चित्रों का भावदर्शन

जर्मन निवासी श्रीमती महिला रत्न एम कुंज एवं रस्टेमेयर महोदया का शुभागमन विदिशा दिनांक १-७-६९ को मड़वैया पुरातत्व संग्रहालय देखने का अवसर मिला उन्हें भारतीय प्राचीन मूर्तियां क्या कहती हैं यह बताया गया और शासकीय पुरातत्व संग्रहालय विदिशा तथा उदयगिरी की गुफाओं का अवलोकन उनका विश्लेषण मानव जीवन से सुसम्बन्धित अनेक प्रकार के भाव युक्त बताया। इसके उपरांत उन्होने अपने पतिदेव से मेरा परिचय दिया। इस उपलक्ष में रुचि अनुसार एक पुस्तिका डेम्कमेलर चैवूनेन इन डस्टकलेन्ड माउन्टेन्स् एन्ड फाउन्टेन्स इन जर्मनी लेखक डाक्टर एच० ए० ग्रीफी-टास्टबेग आवखायर्न नामक पुरस्कृत रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा प्रस्तुत की है। यह कौन्सुलेट जनरल आफ दि फेडरल रिपब्लिक आफ जर्मनी गरहार्डकुंज कौन्सल एज वी एन्टोर्ट विट एन्वेन इण्डियन डुगल हाउस रोड नं० ३ बेक रिलेशन्स फर्नस्पेचर बम्बई नं० २० का मैं अभिनन्दन करता हूँ।

(१) पुस्तिका के पृष्ठ संख्या १५५ पर रिंग आफ स्टेचू का मानव जीवन से या राजनैतिक आध्यात्मिक और धार्मिक क्षिशा प्रद क्या सम्बन्ध है।

इसके दोनों हाथ इस प्रकार से है जिस प्रकार से हम किसी व्यक्ति को सीने से लगाते हैं। भाव व्यक्त करती है।

यह नग्न मुद्रा में है। इसके दो भाव हैं। नग्न राग भाव को उस दिशा में माना जाता है जैसे कि वर्तमान के नेतागण वोटों की भीख मांगने आते हैं या भिक्षावृत्ति के लोग जो अपने ऐश आराम की वस्तुओं में प्रेम रखते है। दूसरे जिन्हें स्वयं आत्मा का ज्ञान हो गया है कि यह संसार की समस्त वस्तु क्षण भंगुर और नाशवान है यह समझ कर जिन की उदासीन वृत्तियाँ हैं वीतरागी भाव हैं। आत्म चिन्तवन में निरंतर लगे रहते हैं जिन्होंने भावों में मलिनता लाने वाले ऐश--आराम की चीजों का त्याग कर एकांत स्थान वन खण्ड में रहना पसंद किया है।

इसका दाहिना पैर आगे की ओर मुड़ा इसलिये है कि वन खण्ड की ओर जाने का संकेत है और सामने वन के वृक्ष भी संकेत कर रहे हैं।

संसार की असारता, पारिवारिक गृह कलह, इन्द्रियों की लोलुपता, स्वार्थ अनेक प्रकार की सुख सुविधाओ को, आय व्यय मे किया जाने वाला द्रव्य अज्ञानावस्था में किया गया कृत्य का दुष्परिणाम का बोझा गधे के भार से भी, अधिक वजनदार है। इसके भविष्य को चिन्तन करने में सलग्न को बताती है।

बृद्धावस्था मे शक्ति क्षीण होने पर बुद्धि में विकृति का आना और आत्म-चिन्तन करने में बाधाओं का आना विचारता है।

आयुर्नश्यन्ति पश्यतां प्रतिदिनं, यातोक्षयं यौवनं ।
प्रत्यांयांति गता पुनर न दिवसां कालो जगत भक्षता ॥
लक्ष्मी तोय रंग भंग चपला विद्युतचला जीवितं ।
तस्मानमां शरणागतं, शरणदत्तवं रक्ष रक्षाधुना ॥
लोभ की इच्छा दम्भबल, काम की केवल नारि ।
परशु बचन बल क्रोध के, मुनि जन करहिं विचार ॥

बृद्धावस्था मे आयु की क्षीणता यौवनावस्था का चला जाना, मृत्यु का निकट आना, बिजली के समान लक्ष्मी का आना ओर चला जाना, रंग मे भग उपस्थित होना यह सब संकेत-

जो इस चित्र के पीछे खड़ी अर्द्धनग्न स्त्री का चित्र है वह काम की पैदा करने वाली विषय सुन्दरी के लोभ की ओर सकेत पूर्वाचार्यो ने किया है यह लोभ को संकेत कर बुलाती हैं। और लोभ के कारण ही—

लोभात्क्रोधः प्रभवति, लोभात्कामः प्रजायते ।
लोभान्मोहश्च नाशश्च, लोभः पापस्य कारणम् ॥

लोभ के द्वारा काम, क्रोध, मान, माया, लोभ उत्पन्न होते है। परिणामो मे राग भाव उत्पन्न करते हैं। दुर्बुद्धि का मूल कारण है। ऐसा योगीजन विचार कर लक्ष्मी के त्याग मे अपना दाहिना पैर वन को ओर बढ़ा रहे हैं सकेत किया है। इसी कारण से लक्ष्मी का बाहन उल्लू बताया हैं यह उल्लू बना देती है।

इस नग्न मूर्ति के पीछे लक्ष्मी कि (अर्द्धनग्न स्त्री) साथ में जो दूसरी स्त्री बताई है वह सरस्वती है जो हाथ जोड़े हुये है और कहती है "हे नाथ इस चेतन (जीव) की दो स्त्रियां हैं।" एक सुमत, दूसरी कुमत। लक्ष्मी कुमत पैदा करती हैं और सुमत यशस्वी प्रतिभा और जीव को अमर बनाती है। पुण्य सचय का मार्ग बतलाती है। इसका बाहन सिंह हैं। जो सिंह पुरुष है वही अपनो इच्छित वस्तु मोक्ष सुख प्राप्त कर सकते हैं।

पूर्वकाल मे आचार्य चाणक्य जोकि सम्राट चन्द्रगुप्त के प्रधान मन्त्री थे। उन्होंने अपने लिखित ग्रन्थ हितोपदेश, चाणक्यनीति में स्पष्टीकरण दिया है। थोड़ा वर्तमान स्थिति राजनीति पर भी ध्यान दीजिये।

जो राज्य अपने प्रजावसियों पर अनेकों प्रकार के टकसों का भार गरीब भोली भाली जनता जोकि इस संकटकालीन स्थिति मे सपरिवार भूखों मर रही है। टैक्सों के भार से इस प्रकार से लादी जा रही है जो गधे के भी भार से अधिक वजनदार है। इस राज्य में पक्षपात, सभ्यता के साथ डाके डालने वाला व्यक्ति डाकू नहीं किन्तु चतुर माना जाता है। जो अपनी चतुरता के साथ लूटपाट करता है, भ्रष्टाचार करता है, अपने साथ कुत्तो को रखता है, जो निरन्तर जनता का खून पीने वाले चाटने वाले हैं, गृहकलह-फूट डालने मे प्रकांड विद्वान हैं साथ रखते हैं। इस चित्र पृष्ठ संख्या १५५ से सुसम्बन्धित पृष्ठ सं० १६३ का चित्र है।

गधे की पीठ पर कुत्ता

प्रत्येक वस्तु में गुण-दोष अवश्य होते हैं। गुणीजन—

गुण वालो संपति लहै, लहै न गुण विन कोय।
काढ़े नीर पाताल तें, जो गुणयुत घट होय ॥

गधा अर्थात् मूर्ख—जो मूर्ख मनुष्य हैं वह गधे की तरह उपरोक्त कथित गधे के भार से लदे हैं। जैसे—

थाक्यो भी बोझ बहै, शीत उष्ण नहिं भान।
संतोषी रहे तीन गुण, गर्दभ ही सो जान ॥

अत्यन्त थक जाने पर भी गधा बोझे को ढोता है। शर्दी और गर्मी का विचार नहीं करता। सन्तोषपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। यह तीन गुण हमें गधा सिखाता है। (चाणक नीति दर्पण २१)

लेकिन वह अपने सिर पर आई हुई विपत्ति को दूर नहीं कर सकता है। इसी प्रकार से जो मानव मूर्ख हैं वह भी अपने सिर पर आई विपत्ति को दूर नहीं कर सकते हैं। उन्हें प्रायः गधा कहते हैं।

जिस प्रकार से गधा भूख, प्यास, मारन, ताड़न, मानापमान को सहन करता है वही दशा एक मूर्ख मानव की होती है। इसी प्रकार से आज के शासकवर्ग अपनी स्वार्थमय भावनाओं की पूर्ति में, सांसारिक भोगोपभोग सामग्री को एकत्रित करने में जुटे हुये हैं। अर्थात् भार से लदे हुये हैं, उसे दूर नही कर सकते हैं। क्योंकि—

कुत्ता— **बहुभोजी स्वल्प सन्तोषी, निद्रारत हुश्यार।**
स्वामी सेवक शूर शठ, श्वानहि ते गुण धार ॥

अत्यन्त भूखे रहने पर भी थोड़े पर सन्तोष कर लेना, निद्रा करते रहने पर भी सावधान रहना, अपने स्वामी का सच्चा सेवक होना, शूरवीर (पराक्रमी होना) यह छह गुण कुत्ते से ग्रहण करना चाहिये (चाणक नीति २०)

कुत्ता ऋतु समय में ही विषय भोगादि करता है, मानापमान सहता है, मार खाता है, किन्तु मानव इसके बिल्कुल विपरीत है। मानव का जीवन श्वान से भी पतित है, क्योंकि असंयमी है। विषय भोगादि का कोई समय निश्चित नही है। विषय भोगादि की भस्म व्याधि का रोग लगा। असन्तोषी है। गाढ निद्रा मे सोया हुआ है। उसे अपने आत्मीय कर्तव्यो का ध्यान नही है। स्वामी के साथ छल करता है। प्राणघातक भी बन जाता है। मालिक पर विपत्ति आने पर धोखा देता है। अपनी स्वामी-भक्ती को चिल्ला कर कहता है, किन्तु अन्तरंग कुछ और ही है। यह बात उस गधे की पीठ पर कुत्ते के रूप में सम्बोधित किया है।

जिस प्रकार से कुत्ता कुतिया के पीछे विषयो के लिये दौडता है भटकता फिरता है, उसी प्रकार से मानव विषयलोलुपता के कारण विषयसुन्दरी के पीछे फिरता है। इसलिये भैराया होने से घर घर भटकने से भैरो का वाहन कुत्ता साकेतिक रूप से बताया है। इसका विवरण विदिशा वैभव" पृष्ठ २८६ मे पढिये। विषय लोलुपता एक महान भयंकर रोग है।

बिल्ली—कुत्ते की पीठ पर बिल्ली खड़ी है।

तिया भोग परतिय जुआ, भोजन खुजली रार।
मद पौरुष वा नींद नव, सेवें बढ़ें अपार॥

असंय मीपने से विषयभोग, परस्त्री सेवन करना, जुआ खेलना, असंयमित भोजन करना, बारंबार खुजाना, कलह, मद्य पीना, घमड करना, शक्ति का दुरुपयोग करना, आलसयुक्त गाढ निद्रा मे सोना। यह नौ असयमित दशा मे सेवन करने से बढते हैं।

भोजन दान विवेक धन, स्वाभिमान सन्मान।
कामी ये सब खोय अरु, खो देता निज जान॥

कामी पुरुष कुत्ते की तरह अपना भोजन, दान, विवेक, धनसंपत्ति, स्वाभिमान सम्मान सभी कुछ खो देता है।

कुत्ता और बिल्ली का आपस मे बेर है। कामो पुरुष कुत्ते के मानिन्द है। और बिल्ली का स्वभाव दुष्ट है। जिस प्रकार से बिल्ली चूहे के शिकार मे स्वभाव से चतुर हैं, वह क्रोध के आवेश मे अपने बच्चे को भी मार कर डाल देता है, उसी प्रकार से नारी भी—

तिय के दुष्ट विचार पर, ध्यान न दीजे यार।
पर से क्या वह निज शिशू, देय क्रोध में मार॥
तीव्र वायु के वेग को, कोई रोक न पाय।
तैसे चंचल नारि को, कोई न वश कर पाय॥

कुत्ते के तो एक ही मुख है किन्तु क्रूर नारि के तो स्वभाव में क्रूरता और क्रोध है। बिल्ली अपने बचाव के लिये कुत्ते पर झपटता है दो मुखी है। जो व्यक्ति अपना क्रूर स्वभावी और क्रोधी हैं वह बिल्ली के रूप मे है। वह दिन रात रूप दो चूहे जोकि आयु की डाल को

काट रहे हैं, समय को निकाल देते हैं। आत्मज्ञानी उसका सदुपयोग करते हैं और मूर्ख जो गधे पर सवार हैं वह कामी हैं, अपने ज्ञान का दुरुपयोग करते हैं। उन्हें—

बिल्ली की पीठ पर खड़ा मुर्गा चार बातें (शिक्षायें) सिखाता है।

उठनो लड़नो बन्धु जन, बाँट करन व्यौहार ।
हमलो करि के खावनो, यह गुण कुक्कुट चार ॥

प्रातःकाल उठना, उचित समय पर जागना, युद्ध-करना, बन्धुओं के भाग का बांटना, आक्रमण करके स्वयं खा जाना। यह चार गुण और दोष मुर्गे से सीखना चाहिये।

जो मानव उत्तम हैं वह उद्योगकर अपनी दरिद्रता को दूर करते हैं। जो आत्मचिंतन में संलग्न रहते हैं वह अपने पापो का क्षय करते है। जो अश्लील शब्दों का प्रयोग नहीं करते और लड़ाई झगड़े के समय मौन धारण कर लेते है, जो सदैव काम क्रोध, लोभ मोहादि आत्म गुण के चराने वाले हैं जागते रहते हैं। वही अपने ज्ञान धन को इन चोरों से बचा सकते हैं।

योगी कामी स्वान की, न्यारि न्यारि पहिचान ।
मृतक कामिनी मांस पुनि, एकहि वस्तु प्रधान ॥

तीन प्रकार के प्राणी, एक ही स्त्री को तीन प्रकार से देखते हैं। योगी पुरुष स्त्री को मुर्दा के रूप में, कामी पुरुष कामिनी के रूप में, कुत्ता उसे माँसपिंड के रूप में देखते हैं। इसलिये—

खल संगति को त्याग कर, साधु सुसंगति सेव ।
निश दिन संग्रह पुण्य कर, सदा पूजिये देव ॥

दुष्ट पुरुष, कुत्ता और बिल्ली इनकी संगति को त्याग कर सदैव साधु पुरुषों की संगति में रहना उचित है। दिन रात पुण्यो का सग्रह करना उत्तम है। सदैव भगवत् स्मरण करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है।

बकरी अपने पालक से क्या कहती है? बकरी अपने पालक से कहती हैं कि हे पालक! जो योगी पुरुष होते हैं जोकि चित्र न० १ में बताया है कि वह सदैव आत्मचिंतन में रत रहते हैं।

बकरी पाती खात है ताकी खींची खाल ।
जो नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल ॥

जब अपना उदर पत्ती और घास खाकर भरती हूँ और तुम्हे उत्तम स्वादिष्ट दूध देती हूँ। दूध से अनेक प्रकार के व्यंजन दही, घी, मठा, मावा, मिठाइयां आदि बनती हैं। मैं उपकार ही करती हूँ। और यह मिष्ठान्न देवताओं को प्रसाद के रूप में भोग लगाया जाता है। इस उपकार का बलदा खाल खींच कर लिया जाता है।

शीष कटै बोटी बिकै, खालन मढे नगाड़ ।
तऊ पाप बांकी रह्यो, परे खाल पर मार ॥

और सिर काटा जाता है, मेरे मांस की बोटी बेची जाती है, चमड़े का बाजा बनाया जाता है। जिसमे से अनेक प्रकार की ध्वनियां निकलती हैं। उसमें हे पालक ! तुम आनन्द मानते हो उस मरे हुये चमड़े पर भी मार पड़ती है। तो बताओ कि अब कौनसा पाप शेष रह गया है ? और आप इतने निर्दयी बन गये। उपकार को भूल जाने वाला क्या कृतघ्नी नही होता है ?

यह देश दयावानों, विद्वानों, बुद्धिवादियों, कलाकारों, पुरुषार्थियों और वीर पुरुषों का है । इसकी सूचक यह तीनो मान्यूमेंट्स हैं जिसके अन्दर ऐसी उत्तम शिक्षा अनुपम ज्ञान छिपा भरा पड़ा हैं ।

✱

यह अहिंसात्मक शिक्षा को जैनाचार्य जो वीतरागी पुरुष हैं अहिंसावादो हैं उन्हो की सूझ बूझ है जिन्होने इस प्रकार के भावों को इन पाषाण की मूर्तियों में निहित कर धर्म और संस्कृति को अजर अमर बना दिया हैं। साहित्यकार और लेखक हमारे देश के विद्वान पूर्वाचार्य ही रहे हैं। उनकी यह अनूठी प्रतिक्रिया शिक्षाप्रद है जिसको ऐतिहासिक विद्वान शोध कार्य करने मे असमर्थ रहे हैं। यह है कलाओं में वास्तविकता।

卐

निवेदन है कि हमे आप किसी भी देश की किसी भी स्थान की किसी भी प्रकार की कलामय मूर्तियाँ शोध कार्य के लिये दीजिये। उनमें कौनसा भाव छिपा है। आपके समक्ष अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार बिना किसी भेद भाव के विनामूल्य सेवा दी जावेगी।